Haridwar

113055

21

पौष, माघ संवत् १९९७

57

सम्मेलन पत्रिका

[भाग २८, संख्या ५, ६]

संपादक
श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल,
साहित्यमंत्री ।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन,
प्रयाग ।

वार्षिक
१)

एक प्रति ।)

विषय-सूची

१—भाषा की उत्पत्ति—[ले०—श्री राममूर्ति मेहरोत्रा, एम० ए०] १
२—'मानवी' का एक अध्ययन—[ले०—श्री चन्द्रभूषण उपाध्याय 'विशारद'] १०
३—श्रीकृष्ण का वास्तविक रूप—[ले०—श्री दिनेशनारायण उपाध्याय 'साहित्यरत्न'] १५
४—बांकीदास और उनके काव्य [ले०—श्री भगीरथप्रसाद दीक्षित 'साहित्यरत्न'] १८
५—सम्मेलन के पूना-अधिवेशन के सभापति श्री संपूर्णानन्द जी का भाषण २२
६—पूना-सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष श्री० ग० र० वैशंपायन का भाषण ३७
७—मंगलाप्रसाद पारितोषिक के निर्णायकों की सम्मतियाँ ... ४८
८—प्राप्ति स्वीकार—[ले०—श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल वैद्य, संग्रहमंत्री] ६७
९—स्थायी समिति का प्रथम अधिवेशन ७३

नियमावली

१—सम्मेलन पत्रिका प्रति मास प्रकाशित होती है।

२—हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आदर्शों की पूर्ति में सहायक होना पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।

३—पत्रिका का वार्षिक मूल्य १) तथा एक अङ्क का =) है।

४—पत्रिका के सम्बन्ध में पत्रव्यवहार साहित्यमन्त्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के पते से करना चाहिए।

५—पत्रिका संबन्धी पत्रव्यवहार में जवाब के लिए टिकट आने चाहिए; अन्यथा आवश्यक अनावश्यक का विचार कर पत्रोत्तर दिया जायगा।

113055

113055

सम्मेलन पत्रिका

भाग २८] पौष-माघ १९९७ [संख्या ५,६

भाषा की उत्पत्ति

[लेखक—श्री राममूर्ति मेहरोत्रा, एम० ए०]

भाषण प्राकृतिक क्रिया और भाषा अर्जित संपति है। भाषण शक्ति तो मनुष्य में प्रारंभ से ही थी, अतः सहज ध्वनियाँ निर्गत करना तो उसका स्वभाव ही था, परन्तु प्रश्न यह है कि वे सार्थक कैसे हुईं ? अर्थात् भाषा की उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? भाषा एक सामाजिक संस्था है, उसका प्रारंभ संसर्ग-ज्ञान से हुआ है, अतः उसकी उत्पत्ति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमें यह देखना चाहिए कि किसी शब्द का किसी अर्थ विशेष से प्रारंभिक संबंध कब और कैसे हुआ ? इसका निश्चित रूप से निर्णय करना असंभव है। परन्तु अनेक विद्वानों ने भिन्न भिन्न मतों द्वारा कुछ निर्णय करनें का प्रयत्न किया है। मुख्य मत (१) दिव्य उत्पत्ति (२) स्वाभाविक उत्पत्ति (३) सांकेतिक उत्पत्ति (४) अनुकरणात्मक उत्पत्ति (५) मनोरागात्मक उत्पत्ति (६) प्रतीकात्मक उत्पत्ति (७) औपचारिक उत्पत्ति (८) समन्वित उत्पत्ति हैं।

(१) **दिव्य उत्पत्तिः**—'ईश्वर ने मनुष्य के साथ ही साथ भाषा की भी उत्पत्ति की और उसे दैवी शक्ति द्वारा मनुष्यों को सिखा भी दिया।' इसी आधार पर भिन्न भिन्न धर्मानुयायी अपने प्राचीन धर्म-ग्रन्थों की भाषा को आदि भाषा मानते थे और उसे संसार की समस्त भाषाओं की जननी समझते थे। उदाहरणार्थ, ईसाई प्राचीन विधान की भाषा हिब्रू को, मुसलमान कुरान शरीफ की भाषा अरबी को, बौद्ध त्रिपिटक की भाषा पाली को और हिन्दू वेदों की भाषा संस्कृत को आदि तथा मूल भाषा मानते थे। इस मत के मानने में निम्न आपत्तियाँ हैं:—

(क) यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त होती तो वह प्रारंभ से ही पूर्णतया विकसित और पूर्ण होती और उसकी उत्पति का प्रश्न ही न उठता, परन्तु भाषा का इतिहास बताता है कि वह अपने मूल रूप में केवल कुछ धातुओं का समूह मात्र थी और आदिकाल से ही लगातार विकसित होती चली आने पर भी अभी तक पूर्ण नहीं हो पाई है।

(ख) मानव जाति की संस्कार-जन्य उन्नति का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिस प्रकार मनुष्य ने आवश्यकतानुसार भोजन बनाना, खेती करना, वस्त्र बनाना तथा पहिनना, गृह निर्माण करना इत्यादि सीखा, उसी प्रकार उसने समाज-बद्ध प्राणी होने के कारण विचार विनिमय की कठिनाई दूर करने के लिए भाषा का भी निर्माण किया। क्योंकि भाषा तथा वास्तु कला, मूर्ति कला, चित्र कला, लेखन कला, काव्य कला, इत्यादि की उत्पत्ति तथा विकास एक ही भाँति हुआ है। अतः भाषा भी एक कला है और वह भी अन्य ललित कलाओं की भाँति मनुष्य के मस्तिष्क अथवा बुद्धि की ही उपज है, ईश्वर प्रदत्त नहीं।

(ग) यदि भाषा दैवी होती, तो समस्त संसार एक ही भाषा बोलता, भिन्न वातावरण अथवा समाज में परिपोषित होने पर भी बच्चे एक ही भाषा सीखते और निर्जन वन का वासी जंगली मनुष्य भी सभ्य नागरिक की भाँति ही बोलता, परन्तु ऐसा नहीं है। संसार में सेमिटिक, हैमिटिक, चीनी, तुर्की, इत्यादि अनेक भाषाएं हैं। यदि हिन्दू शिशु कारणवश मुसलमानों द्वारा परिपोषित हो तो वह उर्दू सीखेगा, हिन्दी नहीं, इसी प्रकार यदि मुसलिम बच्चा हिन्दू समाज में परिपालित हो, तो वह हिन्दी बोलेगा, उर्दू नहीं। यदि कोई भारतीय बचा इंगलैंड अथवा अफगानिस्तान ले जाया जाय, तो वह अँग्रेज़ी अथवा पश्तो ही बोलेगा, भारतीय भाषा नहीं, तथा संयुक्तप्रान्त में रहने वाले पंजाबी, बंगाली, मद्रासी, मारवाड़ी, और मराठी बच्चे हिन्दी सहज ही बोलने लगते हैं; और 'राबिन्सन क्रूसो' का "फ्राइडे" तथा 'टेम्पेस्ट' का "कैलीबन" प्रारंभ में जानवरों की भाँति केवल कुछ अबोध्य ध्वनियाँ ही निर्गत करते थे; इसके अतिरिक्त मिश्र के राजा सम्मेटिकस, स्वाविया के सम्राट फ्रेडरिक, स्काटलैंड के राजा जेम्स चतुर्थ तथा भारत के एक मुगल सम्राट ने नवजात शिशुओं को मनुष्य-समाज से पृथक रखकर देखा है कि वे बड़े हो

कर या तो गूँगे रहे या केवल कुछ अवोध्य ध्वनियाँ निर्गत कर सके, जिन्हें भाषा नहीं कह सकते। अतः भाषा दैवी उत्पत्ति का फल नहीं हो सकती।

(घ) हिब्रू अरबी, पाली, संस्कृत, इत्यादि देववाणी मानी जाने वाली भाषाओं में संस्कृत का महत्त्व अधिक रहा है। अतः संस्कृत पर ही विचार करके देखना चाहिए कि यह कहाँ तक देववाणी तथा मूल भाषा हो सकती है। यदि वैदिक भाषा देववाणी होती, तो न तो भगवान् 'द्वि+दशति' जैसे स्पष्ट व्युत्पत्ति वाले शब्द के होते हुए 'विंशति' का प्रयोग करते और न उनके ऋग्वेद में विवृति नियम के विरुद्ध 'तितउ' जैसे शब्द पाये जाते फिर यदि संस्कृत मूल भाषा है तो twenty 'विंशति' से निकलना चाहिये, परन्तु संस्कृत 'व' का हो जाना ध्वनि नियम के प्रतिकूल है। अतः संस्कृत न तो देववाणी ही हो सकती है और न मूल भाषा ही।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भाषा की उत्पत्ति दैवी मानना ठीक नहीं है। हाँ इतना अवश्य है कि जिस प्रकार उड़ने की शक्ति केवल कुछ पक्षियों तथा कीड़ों में ही पाई जाती है, अन्य जीवधारियों में नहीं, इसी प्रकार भाषण शक्ति केवल मनुष्य में ही पाई जाती है, भाषा मनुष्य के लिए ईश्वर की देन विशेष है। परन्तु अनुभव से सिद्ध हो चुका है कि मनुष्य भाषा का उत्पादन नहीं कर सकता, वह उसका उसी प्रकार सहज ही अर्जन कर सकता है, जिस प्रकार पक्षी उड़ना सीख सकता है।

(२) स्वाभाविक उत्पत्ति—भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से पता चलता है कि भाषा का प्रासाद केवल कुछ मूल धातुओं पर खड़ा है। संसार की समस्त भाषाएँ इन्हीं मूल तत्वों से निकली हैं। यही कारण है कि भिन्न भिन्न भाषापरिवारों में अनेक शब्द ऐसे पाये जाते है जिनके रूप तथा अर्थ दोनों में सादृश्य है, उदाहरणार्थ सं० 'दानम्' लैटिन do-num सं० 'ददामि' लैटिन do ग्रीक di-do-mi यह सब एर्यन धातु 'दा' से निकले हैं। प्रारंभ में ये मूल तत्व ही धातु-शब्दों की भाँति प्रयुक्त होते रहे होंगे। इसके प्रमाण स्वरूप चीनी भाषा में, जो प्रारंभिक भाषा का नमूना मानी जाती है, अब भी धातु एक ही रूप में अनेक अर्थ-भेदों में प्रयुक्त होते हैं। उदाहरणार्थ, 'मु' (▯) के अर्थ विचार (संज्ञा), विचारना (धातु) विचार किया (क्रिया) इत्यादि 'ता' धातु-शब्द के अर्थ बड़ाई (संज्ञा); बड़ा होना

(धातु), बड़ा हुआ (क्रिया), बड़ा (विशेषण) बड़प्पन से क्रिया विशेषण, इत्यादि हैं। संभव है कि बाद में इन धातु-शब्दों के अर्थानुसार अनेक रूप हो गये हों। अतः उत्पत्ति समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि इन धातु-शब्दों का निर्माण किस प्रकार हुआ। अनुसन्धान से चार पांच सौ धातु भाषा के मूल तत्व स्वरूप शेष रह जाते हैं। मैक्समूलर ने इनकी व्याख्या की है जिसका आधार 'शब्द और अर्थ अथवा भाषा और विचार का अटूट संबंध' है। मैक्समूलर का मत है कि 'प्रकृति की प्रत्येक वस्तु में, आघात लगने अथवा अन्य वस्तु के सम्पर्क में आने पर, एक विशेष प्रकार की ध्वनि अथवा झंकार उत्पन्न होती है, उदाहरणार्थ पीतल, ताम्र, स्वर्ण, पत्थर इत्यादि पर आघात पड़ने से एक दूसरे से भिन्न ध्वनि निकलती है। फिर भला मनुष्य तो प्रकृति की सर्वोत्कृष्ट रचना ठहरी। वह इस प्राकृतिक नियम का अपवाद कैसे हो सकती है ! अतः मनुष्य में प्रारंभ से ही एक ऐसी विभाविका शक्ति थी कि उसका जैसी वस्तु से सम्पर्क अथवा संसर्ग होता था वैसी ही उसमें ध्वनि उत्पन्न होती थी, जो बाद में उसी वस्तु का प्रतीक बन जाती थी। वाह्य अनुभवों के प्रतीक वर्णात्मक शब्द इसी प्रकार बने होंगे। भाषा इन्हीं के आधार पर बनी होगी और उसके पूर्णतया विकसित हो जाने पर अन्य नैसर्गिक प्रवृत्तियों की भाँति आवश्यकता न रहने पर उसकी उत्पादक विभाविका शक्ति भी नष्ट हो गई होगी। संभव है प्रारंभ में ऐसे वर्णात्मक शब्द अधिक रहे हों, परन्तु बाद में कटते-छँटते थोड़े से रह गए हों, और भाषा का वर्तमान प्रासाद इन्हीं मूल तत्वों अथवा धातुशब्दों पर निर्मित हुआ हो।' इस मत में निम्नलिखित दोष हैं:—

(अ) भाषा का इतिहास इस बात का साक्षी है कि भाषा अपनी प्रारंभिक अवस्था में केवल कुछ धातुओं का समूह मात्र थी और वह नित्य प्रति पूर्ण और उन्नत होती जा रही है, परन्तु उक्त मत के अनुसार वह आदि काल में ही पूर्णतया विकसित हो चुकी थी और धातु-अवस्था को बाद में प्राप्त हुई। यह विकासवाद के विरुद्ध है।

(आ) भाषोत्पादक शक्तियाँ अनवरत भाषा का विकास करने में लगी रहती हैं, परन्तु फिर भी वह पूर्ण नहीं हो पाती। अतः यह समझ में नहीं आता कि कोई शक्ति आदि काल में ही अपना कार्य पूर्ण करके कैसे नष्ट हो गई।

(इ) नवीन भावों तथा विचारों के द्योतक शब्द नित्य प्रति बनते ही रहते हैं, परन्तु उनके निर्माण में कोई नैसर्गिक प्रवृत्ति कार्य करती हुई नहीं दिखाई देती। हाँ, मनोरागात्मक शब्द अवश्य स्वाभाविक ध्वनियों द्वारा बनते हैं। अतः यदि भाषोत्पादन नैसर्गिक प्रकृति द्वारा होता, तो भाषा का प्रारंभ मनोभावाभिव्यंजक शब्दों से होता न कि वर्णात्मक शब्दों से।

(ई) भाषा के चरम अवयव वाक्य हैं और उसका प्रारंभ वाक्यों से ही हुआ है, परन्तु उक्त मत में भाषा का प्रारंभ वर्णात्मक शब्दों से हुआ है, जो ठीक नहीं है।

(उ) उक्त मत का आधार 'भाषा तथा विचार का नित्य संबंध' है। परन्तु हम देखते हैं कि एक ही विचार स्थान भेद के अनुसार भिन्न-भिन्न शब्दों द्वारा प्रकट किया जाता है। इसके अतिरिक्त गूंगे में विचार तो होते हैं, जिनको वह इंगित द्वारा अथवा कागज पर प्रकट कर सकता है, परन्तु भाषा का अभाव होता है। इस प्रकार भाषा और विचार का सम्बन्ध अनित्य है। अतः यह मत निराधार है। संभवतः इन्हीं कारणों से मैक्समूलर ने भी बाद में इस मत की उपेक्षा कर दी थी।

(३) सांकेतिक उत्पत्तिः—'आदि काल में मनुष्य गूँगों की भाँति संकेत तथा इंगितों द्वारा काम चलाता था, परन्तु जब पारस्परिक सम्पर्क बढ़ गया और विचार-विनिमय में कठिनता होने लगी, तो एक वृहत सभा द्वारा कुछ ध्वनि संकेतों का निर्माण किया गया। वर्तमान भाषा इन्हीं का विकसित रूप है।'

इसके मानने में आपत्ति यह है कि जब भाषा ही नहीं थी तो उस सभा ने स्थिति पर विचार किस प्रकार किया। इस प्रकार तीनों मत निराधार हैं।

(४) अनुकरणात्मक उत्पत्तिः—एक बार चीन में एक अंग्रेज ने भोजन में नवीन प्रकार का मांस देख कर पूछा, "Quack Quack ?" उत्तर मिला, "Bow-Bow !" इसके अतिरिक्त हम देखते हैं कि बच्चे प्रायः पशु-पक्षियों की बोली की नकल किया करते हैं और उनको उसी नाम से पुकारते हैं। उदाहरणार्थ, वे बिल्ली को म्याँउ, कुत्ते को भौं-भौं, बन्दर को खों-खों; बकरी को में-में, चिड़िया को चूँ चूँ, कौवे को काँव-काँव अथवा कोयल को कू कू, बत्तख को क्वेक क्वेक, पिल्ले को पी-पी, इत्यादि कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि मनुष्य में अनुकरण की प्रवृत्ति नैसर्गिक है। इसी

आधार पर हरडर का मत है कि 'आदि काल में मनुष्य जड़ तथा चेतन प्रकृति की प्राकृतिक ध्वनियों का अनुकरण करता होगा और बाद में यही ध्वनियाँ उन पदार्थों तथा जीवों की प्रतीक बन गई होंगी। तदन्तर इन्हीं ध्वनि-संकेतों से अन्य शब्द बन गये होंगे, जैसे भौं-भौं से भोंकना भूँसना भौं-भौं करना, पी-पी से पिपियाना, में-में से मिमियाना, इत्यादि। अतः भाषा का प्रारंभ अनुकरणात्मक शब्दों से हुआ है। यही कारण है कि प्रायः जानवरों तथा निर्जीव पदार्थों के वाचक शब्द उनकी स्वाभाविक ध्वनियों से मेल खाते हैं और भिन्न-भिन्न भाषाओं में एक ही अथवा समान रूप में मिलते हैं। उदाहरणार्थ, 'म्याँउ' चीनी, मिश्री तथा भारतीय भाषाओं में एक ही रूप में प्रयुक्त होता है; सं० गो अं० Cow ग्री० Kuh, अं० Cat लै० Catus ज० Katze, सं० कुक्कुट अं० Cock, हि० भौं-भौं अं० Bow-Bow, सं० कोकिल ग्री० Kokkyx, इत्यादि के रूप में समानता है; तथा म्याँउ-म्याँउ mewing. काँव-काँव cawing, बबूला Bubble, बलबलना babbling, भन-भन Buzzing हिनहिनाना फ्रे० Hennir, फड़फड़ाना flapping, कड़कड़ाना crackling, गड़गड़ाना thundering इत्यादि और भी अनेक इसी प्रकार के अनुकरणात्मक शब्द हैं।'

क्योंकि भाषा में वाह्य जगत के आधार पर बने हुए अनुकरणात्मक शब्दों के अतिरिक्त मनोभावाभिव्यंजक, प्रतीकात्मक, औपचारिक इत्यादि और भी अनेक प्रकार के शब्द पाये जाते हैं, जिनकी इस मत द्वारा व्याख्या नहीं हो सकती। अतः यह मत केवल आंशिक रूप में ही सत्य है।

(५) मनोरागात्मक उत्पत्ति :—कांडिलक आदि कुछ विद्वानों का मत है कि 'मनुष्य ही क्या पशुओं तक में यह नियम पाया जाता है कि हर्ष, भय, शोक, आश्चर्य आदि मनोरागों तथा छींकना, खाँसना, फुंकारना आदि अनैच्छिक क्रियाओं के आवेग के समय उनके सुख से 'आह, उह, तथा छींह, फूँह, इत्यादि कुछ स्वाभाविक ध्वनियाँ सहज ही निकल पड़ती हैं। संभव है कि बाद में इन मनोभावाभिव्यंजक ध्वनियों में से कुछ उन्हीं मनोरागों तथा क्रियाओं की द्योतक हो गई हों और उनसे अन्य ध्वनि संकेत निकले हों, जैसे धिक से धिक्कार, धिक्कारना, दुर दुर से दुरदुराना, छिः छिः से छीछी, छिया, छीं छी, वाह वाह से वाह वाही, बच्चे की goo-goo से good, god

तथा छींह अथवा अः छिंह से छींक, छीं छीं करना, छींकना, सर्प आदि पशुओं की फूँह फूँह से फुंकारना, फुंकार, फूँकना, फुँकनी, फूह, खूँह खूँह अथवा खह खह से खाँसना, खखारना, खाँसी, कफ़, cough, फुस्स से फुसकी, फुसफुस, फुसकारना, डकार से डौं डौं उद्गार, हुचकी से हुच हुच, हुचकना, इत्यादि।' इस मत में निम्नलिखित दोष हैं:—

(क) विस्मयादिबोधक अव्यय भाषा के अंग नहीं कहे जा सकते, क्योंकि मनुष्य उनका प्रयोग केवल उस समय करता है जब उसको बोलने में कष्ट होता है अथवा वह बोलना नहीं चाहता है। अतः इनका प्रारंभ भाषा की समाप्ति पर होता है।

(ख) भिन्न भिन्न जाति तथा देशों के विस्मयादि बोधक अव्ययों में समानता नहीं है, जैसे शोक के समय भारतवासी 'हाय' अंग्रेज Alas, हर्ष के समय भारतीय 'आहा' अंग्रेज Hurrah, दुःख के समय भारतवासी आह उह, अंग्रेज oh, फ्रेंच 'अहि' जर्मन 'औ', निरादर के लिए भारतवासी 'धिक् धिक्' अंग्रेज Fie-Fie इत्यादि करता है। अतः विस्मयादि बोधक अव्यय स्वाभाविक न होकर सांकेतिक अथवा परंपरागत हैं और भाषा के मूल तत्व नहीं हो सकते।

यदि हम विस्मयादि बोधक अव्ययों को भाषा के अंतर्गत न भी मानें, तो भी प्रत्येक भाषा में उनके आधार पर बने हुए अनेक ऐसे शब्द पाये जाते हैं जिनको भाषा का पद प्राप्त है; इसके अतिरिक्त अनैच्छिक क्रियाओं से बने हुए शब्द तो भाषा के अंग हैं ही; परन्तु इस प्रकार के शब्द बहुत थोड़े हैं। इस प्रकार इस मत द्वारा समस्त शब्द-भंडार की व्याख्या नहीं हो सकती, अतः यह भी केवल आंशिक रूप में ही सत्य कहा जा सकता है।

(६) प्रतीकात्मक उत्पत्ति:—स्वीट का मत है कि मनुष्य जड़ तथा चेतन प्रकृति की प्राकृतिक बोली, उसके स्वाभाविक गुणों द्वारा उत्पीदित ध्वनियों तथा अपनी और अन्य पशुओं की अनिच्छित क्रियाओं तथा मनोरागों के आवेग के समय वाह्य इन्द्रियों द्वारा निर्गत स्वाभाविक आवाजों के अतिरिक्त अपनी तथा अन्य पशु पक्षियों आदि की साधारण क्रियाओं अथवा घटनाओं में होने वाली स्वाभाविक ध्वनियों का भी अनुकरण करता होगा और उनके आधार पर भी ध्वनि संकेत बनते होंगे। प्रत्येक भाषा में ऐसे शब्द मिलते हैं जो उनमें होने वाली क्रियाओं अथवा घटनाओं के प्रतीक अथवा संकेत हैं।

उदाहरणार्थ, अरबी 'शरब' अं० sherbet हि० 'शरबत' सं० पिबति, हि० पीना, लै० बिबेरे; चूसना; गटकना; कटकटाहट, किटकिटाहट, कड़कड़ाहट, किचकिचाहट, गपकना, dive डुबकी, इत्यादि अपनी क्रियाओं के प्रतीक हैं। इसी प्रकार आदि काल में जब भाषा का अभाव था और मनुष्य गूँगे की भाँति हस्तादि इंगितों द्वारा विचार-विनिमय करता था, वह किसी वस्तु अथवा प्राणी की ओर संकेत करते समय इ-इ अ अ आ, उ-उ, इत्यादि कुछ ध्वनियों का भी प्रयोग करता रहा होगा। बाद में यह ध्वनियाँ ही उनकी प्रतीक बन गई होगीं, जैसा कि इससे स्पष्ट है कि ग्रामीण तथा असभ्य भाषाओं में 'यह' और 'वह' की जगह अब भी 'इ' और 'उ' प्रयोग होते हैं। यह, वह, तू, this, that, thou ग्री० to इत्यादि सर्वनाम इसी प्रकार स्वर-भेद से बने होंगे। जैस्पर्सन के अनुसार मामा, बाबा, पापा, इत्यादि भी इसी भेद के अंतर्गत आते हैं।

इस मत द्वारा भाषा के बहुत से शब्दों की व्याख्या हो जाती है परन्तु औपचारिक इत्यादि कुछ शब्द फिर भी शेष रह जाते हैं। अतः यह भी अपूर्ण है।

(७) **औपचारिक उत्पत्तिः**—आज कल सादृश्य नियम का महत्त्व अधिक है। कुछ विद्वानों ने परंपरा प्राप्त शब्दों का समाधान उपचार द्वारा करने का प्रयत्न किया है जिसका आधार ज्ञात द्वारा अज्ञात की व्याख्या करना है। इसकी पुष्टि इससे होती है कि बच्चे प्रायः अज्ञात वस्तुओं के नाम ज्ञात के आधार पर सादृश्य नियम के अनुसार रक्खा करते हैं। जैसे वायुयान की आवाज सुन कर, अँगुली उठाकर, 'मोटर मोटर' चिल्लाते हैं, केंचुए को साँप, इत्यादि कहा करते हैं। इसी प्रकार माली अनेक नए विदेशी पौदों के नाम रक्खा करते हैं। गुल मेंहदी 'मेंहदी' की समानता पर बना हुआ इसी प्रकार का नाम है। ज्योतिष, रेखागणित, गणित, विज्ञान आदि के नाम तो सभी औपचारिक हैं। क्योंकि औपचारिक शब्दों के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के शब्दों की व्याख्या इस मत से नहीं हो सकती, अतः यह भी पूर्ण नहीं कहा जा सकता।

(८) **समन्वित उत्पत्तिः**—हम देखते हैं कि उक्त मतों में प्रथम तीन तो निराधार हैं परन्तु अंतिम चार अपूर्ण होने पर भी अंशतः ठीक अवश्य हैं। क्योंकि इनमें से किसी से भी पृथक तथा समस्त भाषा भंडार की व्याख्या नहीं हो सकती, अतः व्यष्टि रूप से कोई भी प्रर्याप्त नहीं है। फर्रार ने अनुकरणमूलकता वाद तथा मनोभावाभिव्यंजकता वाद का एकीकरण करके और

स्वीट ने भाषा को अनुकरणात्मक, मनोभावाभिव्यंजक तथा प्रतीकात्मक भागों में विभाजित करके समन्वित वादों द्वारा भाषा की उत्पत्ति समझाने का प्रयत्न किया है। इनकी व्याख्या भिन्न भिन्न आधारों पर निर्धारित है, परन्तु उनका कोई मूल आधार नहीं है। अतः इन मतों में समष्टि में भी व्यष्टि है। यदि हम अंशतः सत्य मतों के आधारों के एकीकरण द्वारा एक मूल आधार ज्ञात करके समन्वय करें, तो एक निरापद मत निकल सकता है। अनुकरणमूलकतावाद में मनुष्येतर प्राणियों तथा निर्जीव पदार्थों की प्राकृतिक ध्वनियों का मनोभावाभिव्यंजकतावाद मनोभावों तथा अनिच्छित क्रियाओं में होने वाली स्वाभाविक ध्वनियों का, प्रतीकवाद में मनुष्य तथा अन्य प्राणियों की साधारण क्रियाओं द्वारा उत्पन्न ध्वनियों का और उपचारवाद में ज्ञात शब्दों का, अनुकरण होता है। इन सब के मूल में काम करने वाली प्रवृत्ति अनुकरण है। अतः इन सब मतों का मूल आधार 'अनुकरण' ही है। परन्तु केवल अनुकरण द्वारा उत्पादित भाषा पशुपक्षियों की भाँति कुछ निरर्थक ध्वनियों का समूह मात्र होगी, जिनका ईश्वर प्रदत्त बुद्धि द्वारा सांकेतिक तथा संबंधित होना नितांत आवश्यक हैं। यह संसर्ग अथवा संबंध सादृश्य नियमानुसार होता है। अतः भाषा वह सामाजिक तथा सांकेतिक संस्था है जो संसर्गज्ञान का फल है और जिसकी उत्पत्ति "जड़ तथा चेतन प्रकृति की प्राकतिक बोलियों तथा उनकी क्रियाओं में होने वाली स्वाभाविक ध्वनियों और उनके द्वारा बने हुये ध्वनि संकेतों के, सादृश्य नियम के अनुसार बुद्धि पूर्वक अनुकरण मात्र से हुई है।

उक्त अनुकरणात्मक समन्वित मत सर्व श्रेष्ठ होने पर निर्दोष नहीं कहा जा सकता। इसमें भाषोत्पत्ति के पूर्व मनुष्य मूक अथवा पशुवत् ठहरता है। जो विकासबाद के विरुद्ध है। क्योंकि भाषण-शक्ति तो मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार है, वह निरर्थक कैसे रह सकती है? अतः मनुष्य आदि काल में भी किसी न किसी प्रकार का भाषण अवश्य करता रहा होगा। इसके अतिरिक्त इससे भी समस्त भाषा-भंडार की व्याख्या होने में संदेह है। अतः अभी, जैस्पर्सन की भाँति बच्चों तथा असभ्य भाषाओं के अनुशीलन तथा उपलब्ध प्राचीन भाषाओं के इतिहास के अध्ययन द्वारा और अनुसन्धान करने तथा सत्य की खोज करने की आवश्यकता है।

'मानवी' का एक अध्ययन

[लेखक—श्री चन्द्रभूषण उपाध्याय 'विशारद']

खड़ीबोली के सुप्रसिद्ध कवि ठाकुर गोपालशरण सिंह ने 'मानवी' की रचना करके स्त्री-समाज का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। इस ग्रन्थ के प्रत्येक पहलू में, नारीत्व की दुर्बलता के प्रति मानव जाति का अंहभाव, मानवी के जर्जरित हृदय का उत्पीड़न और स्त्री-समाज की सामूहिक रूप से विवेचना ही कवि का प्रधान ध्येय है। कवि ने मानवी की "कौमार्य, पत्नीत्व एवं मातृत्व" तीनों अवस्थाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

कवि की दृष्टि में मानव और मानवी का वर्तमान सम्बन्ध अत्याचारमय और अनुचित सा प्रतीत होता है। उसकी सम्मति में आजकल की 'दुलहिन' "है एक अपरिचित जन को जीवन धन अर्पण करती।" इसलिये कवि गान्धर्व सम्बन्ध का समर्थक है। दोनों की प्रेम-भावना को परिपक्व होने के लिये पूर्ण अवसर प्राप्त होना चाहिये। एक की सन्तुष्टि के लिये दूसरे की मनोभिलाषाओं को कुचल देना अन्याय है। अतः उसे यह अत्याचार सा प्रतीत होता है कि मानवी अपनी अभिलाषाओं की बलि देकर एक अपरिचित पुरुष को जीवन-धन सदा के लिये अर्पण कर दे। वह दुलहिन के वास्तविक रूप का वर्णन कलात्मक ढंग से करता है—

"शृङ्गार छिपा है उर में, करुणा है भरी नयन में।
है शोक भरा मृदु मन में, लावण्य लोक है तन में॥"

दुलहिन के हृदय में शृङ्गारिक क्रीड़ा की गूढ़तम अभिलाषा छिपी है, अपनी भावुकता के बलिदान होने से नयनों में करुणा है और भविष्य की दुःखमय चिन्तन से मृदु-मन में शोक भरा है। कवि के ही शब्दों में मुग्धा के मनोगत भावों में अभी सुख की लिप्सा है, परन्तु अब दिन प्रतिदिन वह नारीत्व की ओर अग्रसर हो रही है। उसे अपनी प्रौढ़ता में होने वाली अनिश्चित भावनायें शोक और करुणा से परिप्लावित कर देती हैं।

कवि 'पत्नीत्व' का भी एक सुन्दर विश्लेषण करना प्रारम्भ कर चुका है परन्तु अभी वह 'पत्नीत्व' को 'परदे में' ही रखना चाहता है। यह भी मानव-

समाज द्वारा किये गये अत्याचारों का एक नमूना है। वह इसमें इस बात को स्वीकार करता है कि—"परदे में सुख का घर है सम्पदा स्वयं है चेरी" परन्तु साथ ही साथ यह कहने में लेशमात्र भी नहीं रुकता कि—

"कितनी ही कोमल कलियाँ, मुंह को भी खोल न पातीं।
हो दलित कठोर करों से मुरझा कर हैं झड़ जातीं॥"

इतना ही कहकर वह भाग्यवादी बनना भी नहीं चाहता। उसे यह बात कभी भी स्वीकार नहीं कि मानवी का दुःख भाग्य का परिणाम मानले। उसे पूर्ण विश्वास है कि ये मानव समाज के अत्याचार हैं। इसके द्वारा उसकी मनोनीत साधना में उसे पूरी सफलता मिलती है। इसीलिये वह इन बातों को सन्देहात्मक न रखकर एक पग आगे बढ़ जाता है और इस बात को स्पष्ट कर देने के लिये कहता है—

"कोयलें क़ैद पिञ्जर में, सिर धुन धुन कर हैं रोतीं।
सुमनों की सुख शय्या पर, हैं विरह व्यथायें रोतीं॥"

इन अर्थों में वह परदा प्रथा का विरोधी है। परदा उसके शब्दों में 'पिञ्जर है' जिसकी रूपरेखा उसकी कविताओं से स्पष्ट झलकती है। कवि के ही शब्दों में—

"रजनी में दिन रहता है, दिन में रजनी है काली।
परदे में छिपी हुई है दुनिया ही एक निराली॥"

कवि मानव और मानवी के सम्बन्ध में भूत में उल्लिखित कुछ कथा भागों पर प्रकाश डालता है। वह उदाहरण स्वरूप सर्व प्रथम 'ब्रजवालाओं' को ही लेता है। इनका प्रेम माधव के प्रति सच्चा और चिरस्थायी था फिर भी इनके जीवन में भी विरहकाल आता है। माधव की अनुपस्थिति में ब्रजवालाओं के सम्मित अधरों पर किसी अज्ञात विषाद की रेखा कवि को दिखलाई पड़ती है। वह मूक भाषा में कहता है कि वे किसी की स्मृति में बेचैन हैं और उसे वे भुला नहीं पाती हैं। कवि के अपने शब्दों में वे 'उदास' और 'मतवाली' हैं। कवि कुछ आगे बढ़ता है और अपनी कला को व्यञ्जात्मक न रख कर सारी बातें साफ़ साफ कह देता है। परन्तु इससे उसकी कला पर किसी तरह का आघात नहीं पहुंचता है क्योंकि उसके व्यक्त करने और कहने का ढंग निराला है—

"जो कुञ्ज गली में तुझको कंकड़ी श्याम ने मारी।
क्या कसक रही वह अब भी तेरे उर में सुकुमारी?"

प्रेम की कसक कितनी गहरी और स्थायी होती है; इसी से वह स्पष्ट रूप से सहसा राधा से पूछ बैठता है—

"आता था जो तेरे घर, होता था जहां सबेरा।
वह वेणु बजाने वाला गोपाल कहां है तेरा?"

इस तरह से वह सुख की बीती हुई बातें उनके स्मृति-पथ में लाता है और ऐसी 'गवेषणा पूर्ण अभिलाषा' से याद दिलाता है कि गोपियां फूट फूट कर अवश्य रो उठती होंगी—

"क्या कभी भूल सकती तू पनघट का आना जाना।
रस सागर नटनागर का, गागर का वहां गिराना?"

वह उन्हें सलाह देता है कि वे कवि और कलाकार बनें और अपना सन्देश काव्य और कला का सामञ्जस्य करके एक नवीन प्रणाली से माधव के पास भेजें—

"कहदे यमुना से जाकर, तेरा सन्देश सुनादे।
उलटी बह कर मथुरा से शुभ समाचार भी लादे॥"

फिर कवि की अन्तर वेदना जाग उठती है। वह कभी भी इस एकाङ्गी प्रेम से सन्तुष्ट नहीं होता। वह ब्रजबालाओं को उनकी मूर्खता पर दुत्कारता है और उनसे पूछता है—

"ब्रज वल्लभ को भी तेरी, क्या याद कभी है आती?
तू व्यर्थ निदाघ लता सी है नित्य सूखती जाती॥"

इस सच्चे प्रेम में भी उसको अत्याचार और कोमलता का अनुचित लाभ दीख पड़ता है। उसे बहुत कष्ट होता है यह देखकर कि मानवी, मानव सुख के लिये अपने सुखों का बलिदान कर दे। वह कुछ थोड़ा हताश होकर मानवी के प्रति कहता है—

"परवशता ही है तेरे जीवन की करुण कहानी"

इसके सिवा कवि नारी जीवन के प्रधान पहलू पर अपनी अभिरुचि प्रकट करता है और देवदासी की विचित्र अवस्था पर आश्चर्य करते हुए कहता है—

"तू ने ली है मोल दासता, करके निज सर्वस्व दान।
रो उठता है हृदय, देखकर, यह तेरा विचित्र बलिदान॥"

साथ ही कवि नारी जीवन के दूसरे पहलू को भी उठाता है। 'भिखारिन' को बहुत बड़ा महत्व देता है और उसे करुणा और दया की मूर्ति कहकर पुकारता है। फिर सीता और राम के पारस्परिक प्रेम की विवेचना करता है। वह राम जैसे आदर्श पुरुषों के प्रति कुछ थोड़ी सी सहानुभूति रखता है। राम के वन वन भटकते फिरने में और रो रो कर "सखे बताओ छिपी जनकजा, है किस कुंज भवन में" पूछने पर वह थोड़ा सा बिना आँसू बहाये ही रो लेता है।

अब कवि मानवी की तीसरी अर्थात् मातृत्व-अवस्था की विवेचना करते हुए इस पर मुग्ध हो जाता है। वह मातृ प्रेम में ओत प्रोत होकर कहता है— "है करुणा की कालिन्दी तू, वत्सलता की सुरसरि धारा"। और "है अशीष पवित्र हृदय का, तेरा अनुपम प्यार दुलार"। 'उच्छ्वास' शीर्षक कविता में कवि को आह से युक्त मानवी की पुकार सुनाई पड़ती है। और अनेक प्रयत्नों के बाद भी वह भाग्यवादिता की ओर झुक जाता है और अन्त में मानवी को 'अभागिन' की उपाधि देकर आगे बढ़ता है क्योंकि उसकी दृष्टि में—

"सुचि विफल प्रेम की ज्वाला में तू प्रतिपल जलती रहती है।
अपने मृदुभाव प्रसूनों को तू नित्य कुचलती रहती है॥"

कुछ भी हो कवि शकुन्तला और अनारकली आदि ज्वलन्त उदाहरणों को देखकर 'प्रेम की जीत' में ही विश्वास करता है।

'मानवी' में नारी का बलिदान, मानव समाज का अत्याचार और प्रेम की विभूति चारों तरफ दिखाई पड़ती है। उसे विवाह में भी अत्याचार की आभा मिलती है।

"आत्म समर्पण करती शशि की कला राहु को आज।
यह अचरज विलोक विस्मित है नभ नक्षत्र समाज॥"

कवि अपने युग का प्रतिनिधित्व करता है। पराधीनता की जटिल जंजीर में जकड़ी भारतमाता के उद्धार के लक्षण उसे पतित समाज के उत्थान में ही

दीख पड़ते हैं। एक कलाकार के नाते उसके हृदय में अपनी मातृभूमि के प्रति प्रगाढ़ प्रेम भी है। उसका समाज सुधार भारतीय स्वाधीनता का आधार मात्र है। वह सहसा उस सच्ची और हृदयगत भावना की मस्ती में पागल होकर, आह भरी अपनी मातृभूमि की पुकारों को सुनता है और अपने समाज सुधार की सारी व्यवस्थाओं को भूलकर चीख उठता है—"भारत लक्ष्मी बन्दीगृह में कब तक बन्द रहेगी" ?

कवि निसन्देह कला का उपासक है; इसकी उपासना में रसास्वादन की छिपी हुई चाह है, इसकी चाह में मानव के पीड़ित हृदय के टुकड़ों के प्रति सहानुभूति है; इसकी सहानुभूति में मानव जाति के विरुद्ध विद्रोह की जलती हुई ज्वाला है; इसकी भभकती हुई ज्वाला में नारी के बलिदानों की स्मृति है; और इस स्मृति में देश भक्ति की शान्ति, सहनशीलता और सान्त्वना है।

सबकी बोली (वार्षिक १-४-०)

(राष्ट्रभाषा प्रचार का मासिक)

हर महीने की ता० १५ को प्रकाशित होता है।

सम्पादक—श्री काका कालेलकर

इसमें राष्ट्रभाषा प्रचार संबंधी सब प्रकार की बातें आती हैं।

हिंदी प्रेमी, राष्ट्रभाषा प्रचारक, राष्ट्र संगठन में दिलचस्पी रखनेवाले सेवक और खास करके राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षाओं की तैयारी करने वाले विद्यार्थी तथा सब के काम की चीज है।

पारिभाषिक शब्दों के गढ़ने में भी यह मासिक अपनी ओर से यथाशक्ति प्रयत्न करेगा।

हिंदुस्तान भर के राष्ट्रभाषा प्रेमी इसके द्वारा अपने विचार तथा अनुभव राष्ट्र के सामने रख सकेंगे। लिखो:—

व्यवस्थापक,
सब की बोली वर्धा।

श्रीकृष्ण का वास्तविक रूप

[लेखक—श्री दिनेशनारायण उपाध्याय 'साहित्यरत्न']

कृष्ण की व्यापकता ने एक सर्वतोमुखी रूप ग्रहण किया था, यह सर्व मान्य है। बालकृष्ण का ही च रत्र इतना कौतूहलास्पद था कि सूर ऐसे महाकवियों ने उतना ही अपने काव्य के लिए पर्याप्त समझकर आगे हाथ नहीं बढ़ाया। पर सूर की इस भावना का रूप रीतकालीन कवियों के समक्ष न रहा, और कवियों ने कृष्ण के युवक रूप का चित्र अपने समक्ष करके राधा कृष्ण को सामान्य प्रेमि-प्रेमिकाओं के रूप में ग्रहणकर लिया। यह सामान्य रूप नये-नये दुर्विचारों का केन्द्र हुआ और इसका फल यह हुआ कि कृष्ण के चरित्र की महानता का पूर्ण लोप-सा हो गया। उनका अलौकिक प्रेम लौकिक हो गया, उनका विश्व व्यापक रूप केन्द्रीभूत हो गया। भागवत में कृष्ण उद्धव से अपने भक्तों या प्रेमियों के प्रति क्या श्रद्धा दिखाईहै यह सब भूल गये।

"न तथा में प्रियतम आत्मयोनिर्नशङ्करः।
न च सङ्कषर्णों न श्रीनैवात्मा च यथा भवान्।"
भागवत ११।१४।१५

अर्थात् हे उद्धव मुझे ब्रह्मा, सङ्कषर्ण, लक्ष्मी, और अपनी आत्मा ये भी उतने प्रिय नहीं जितने तुम जैसे व्यक्ति।

अब ऐसे व्यक्ति के प्रति जिसका प्रेम सर्वभूतानि के प्रति हो उसको कुञ्जों तक ही रखना निंद्य है। कृष्ण और गोपियों का प्रेम वास्तव में क्या था इसका सर्वप्रथम हमें विचार करना चाहिये।

गोपिकाओं का प्रेम जीवात्मा का परमात्मा के प्रति जो अनुराग होता है—उस प्रकार का प्रेम था। उनका कृष्ण से जो प्रेम था वह—

"सर्वथा ध्वंसरहितं; सत्यपि ध्वंस कारणे।
यद्भावबन्धन यूनोः स प्रेमा परिकीर्तितः।"

के आदर्श का प्रेम था। गोपियाँ और कृष्ण दोनों ही यह समझते थे कि उनका प्रेम का आदर्श सनातन है, उसका नाश न कभी हुआ था और न हो सकता है।

यही कारण है कि उन्हें—"जित देखौ तित स्याम मई है।" का ध्यान आता था। कृष्ण का प्रेम सात्विक था उसमें वासना का नाम भी न था। कृष्ण अर्जुन से स्वयम् कहते हैं कि—

"निजाङ्गमपि या गोप्यो ममेति समुपासते।
ताभ्यः पर न मे पार्थ निगूढ़ प्रेमभाजनम्।"

गोपियों ने अपने शरीर की रक्षा मेरे लिये की है, वास्तव में इन्हें छोड़ मेरा निगूढ़ प्रेम पात्र कोई नहीं है। आगे भी उद्धव से गोपियों के विषय में कृष्ण कहते हैं—

"तामन्मनस्का मत्प्राण मदर्थे व्यक्त देहिकाः।
ये त्यक्त लोकधर्माश्च मदर्थे तान विभर्म्यहम्॥"

अर्थात्—हे उद्धव गोपियों ने अपना प्राण और मन मुझे अर्पित कर कर दिया है, अपने सर्व सुखों को छोड़ मुझ में अनुरक्त हो रही हैं। मैं ही अब उनके सुख-जीवन का आधार हूँ। ऐसे भक्तों के प्रति कृष्ण कहते हैं कि "अनुव्रजाम्यह नित्य यूयेपेत्यऽङ्घ्रिरेणुभिः" अर्थात् मैं ऐसे भक्तों की चरणरज से अपने को पवित्र करने के लिए उनके पीछे घूमता हूँ। ऐसे स्नेही कृष्ण का कौन सत्कार न करता, और ऐसे निशकाम व्यक्ति के पीछे कौन अपनी "कुल कानि" की लज्जा न छोड़ देता। यह सत्य है कि कृष्ण का रूप एक जादूगर से कम न था और उसका सब पर प्रभाव भी पड़ता था। भागवतकार ने बालकृष्ण को किस रूप में देखा है।

मापात पन्थाः पथि भीमरथ्या, दिगम्बरः कोऽपि तमाल नीलः।
विन्यस्त हस्तोऽपि नितम्ब विम्वे धूतः समाकर्षति चित्तवित्तम्॥

गोपियां कहती हैं—हे पथिको, उस गली से न जाना वहाँ नीले रंग का नंगधड़ङ्ग बालक जो अपने वक्ष पर हाथ धरे खड़ा है, वह सबके मन को मुग्ध कर लेता है। कितने सुन्दर विचार हैं पर क्या हमें यही मर्यादा आगे मिली है—यह प्रश्न है?

जब कृष्ण विषय में इस प्रकार के विवाद उठते हैं तो मुरली, चीर हरण और रास का प्रसंग भी अनिवार्य रूप से विचारणीय होजाता है। कृष्ण की मुरली ने तो गोपिकाओं को मोहित किया क्योंकि उन्होंने उसे सौत के रूप

में ग्रहण कर लिया था पर यह बात वास्तव में तो थी नहीं—"वा मुरलीधर की मुरली अधरानधरी अधरानधरोगी" की भावना रीत काल में ही आई क्योंकि पहले तो कृष्ण की वंशी परमात्मा की पुकार थी "निशम्यगीतं तदनङ्गवर्धनं ब्रज-स्त्रियः कृष्ण गृहीत मानसाः" अर्थात् कृष्ण की मुरली ध्वनि अखंड ब्रह्मांड में व्याप्त थी और ब्रज की बालाओं का मन उसने हर लिया था और वे उनसे मिलने के लिए आतुर हो रही थीं। इसी प्रकार कृष्ण का चीरहरण भी आत्मा का परमात्मा में मिलने की एक लीला है। गोपियों का वस्त्र तो मानसिक दुर्बलता का आवरण था जिसे उन्होंने हटाया था। उसके द्वारा उनके मोह का नाश हुआ था। कृष्ण ने तो स्पष्ट शब्दों में स्त्रियों को पति सेवा के लिए आदेश दिया है। उनका विचार तो यह था कि उनके ध्यान तथा गुण श्रवण करने से उनका प्रेम अधिक प्राप्त किया जा सकता है।

"श्रवणाद्दर्शनाद्ध्यानान्मपि भावोऽनुकीर्तनात्।
न तथा सन्निकर्षेण प्रतियात ततो गृहान्।
(भागवत)

यह सर्वमान्य है कि कृष्ण में अलौकिक प्रतिभा थी और उससे उन्हें उन कार्यों के सम्पादन में सहायता मिलती थी जो सहज साध्य नहीं हैं। कंस-वध, कुवलयापीड वध इत्यादि उनकी अलौकिकता के प्रमाण हैं। पर रास-लीला का विषय भी उसी प्रकार का है जैसा चीरहरण इत्यादि। आत्मा का परमात्मा के प्रति आकर्षण। रास में गोपियाँ कृष्ण के साथ तो थी हीं पर अपने पतियों के साथ भी थीं क्योंकि रास होते समय गोपियों के पतियों ने उन्हें अपने पास ही देखा।

"रमेरमेशो ब्रज सुन्दरीभिः यथार्भका स्वप्रतिबिम्बविभ्रम"।
भागवत १०।३३।

कृष्ण का व्यक्तित्व एक अलौकिक व्यक्तित्व था उसमें महानता, सृजनता, का स्रोत प्रवाहित होता था।

* * *

बांकीदास और उनके काव्य

[लेखक—भगीरथप्रसाद दीक्षित 'साहित्यरत्न']

राजपूताने में प्राचीनकाल से डिंगल की कविता का प्रचार रहा है, उसमें कई उच्चकोटि के कवि और विद्वान् भी हो गये हैं। परन्तु इस समय उनका कुछ अभाव सा प्रतीत होता है।

गत चैत्र-वैसाख सं० ९७ वि० की 'सम्मेलन पत्रिका' में मेरा "बांकीदास और उनके काव्य" शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ था। उसमें आदि से अन्त तक चारण कवि बांकीदास की रचना की सहानुभूति-पूर्ण आलोचना की गई थी। इसमें कवि की रचना के २५-३० छन्द उत्कृष्ट नमूने के रूप में देकर उनका अर्थ भी समझाया गया था। ग्रंथ के सम्पादन की भी प्रशंसा की गई थी। अन्त में ६-७ शब्दों की अशुद्धियां दिखलाकर सम्पादक से अगले संस्करण में संशोधन की प्रार्थना की गई थी। इस पर श्री मोतीलाल मेनोरिया ने मेरे लेख का प्रतिवाद 'सम्मेलन पत्रिका' के गत अंक में करते हुए लिखा है कि मैंने कई भ्रमपूर्ण बातें भी अपने लेख में लिखी हैं। किन्तु पहले मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैंने कभी डिंगल काव्य के पाण्डित्य का दावा नहीं किया और न उसका विद्वान् कहलाना ही मेरा अभिप्राय है। हां, डिंगल में वीर काव्य का प्राधान्य होने के कारण हमें उससे प्रेम अवश्य है। इसी भावना से प्रेरित होकर अवकाशानुसार वीर काव्यों का अध्ययन भी करता रहता हूँ। साहित्य की हितकामना से ही प्रेरित होकर अपनी आलोचना में मैंने बांकीदास ग्रंथावली के कुछ शब्दार्थ की भूलें दिखलाई थीं। वे भूलें निम्नलिखित हैं—

(१) बांकीदास ग्रंथावली प्रथम भाग में निम्नलिखित दोहे का अर्थ इस प्रकार दिया हुआ है :—

नहीं गया माचै मुवा रवि मंडल रै राह।
जूझ मुआ रण में जिकै गत पंचमी गवाह ॥ (सूर छतीसी)
माचै=खाट, जो खाट में मरे नहीं।

मैंने इसका अर्थ इस प्रकार दिखलाया था—

जो खाट में पड़कर मरे वे सूर्य मंडल को बेधकर मोक्षगामी नहीं हुए और जो युद्ध भूमि में मारे गये वे ही मोक्ष को प्राप्त हुए।

(२) ग्रंथावली के पृष्ठ ३७ पर—'धुर का अर्थ अगाड़ी।' दिया है।
आलोचना में लिखा गया है—"धुर = अन्त तक" होना चाहिये।

(३) ग्रंथावली के पृष्ट ३३ पर—"वलता = पीछे लौटना है।"
इसका अर्थ मैंने बतलाया था—"वलता = व्यर्थ।"

(४) पृष्ठ ४२ पर—"चहीले चालतां = मार्ग में चलते" लिखा है।
आलोचना में—"चहीले चालतां—कीचड़दार गड्ढों में चलते।" अर्थ होने की आवश्यकता है।

(५) ग्रंथावली में—"आड़े के अंक = परावधि" है।
इसका संशोधन—"आड़े के अंक = शरीर मोड़कर" दिया गया है।

(६) पृष्ठ ४७ पर—"मन्न = मन' लिखा है।
मेरा कथन—"मन्न = मानो' करने के पक्ष में है।

(७) पृष्ठ ६१ पर—"माझी मरण—चारपाई पर मरना" लिखा है।
संशोधन में—"माझी मरण = मुखिये की मृत्यु" किया गया है। इन सात अशुद्धियों में से मेनारिया जी ने केवल दो संशोधनों पर विचार किया है छंद नं० (३) के 'वलता' और (६) के "मन्न" शब्द पर।

अब श्री मेनोरिया जी की आलोचना पर पाठकों को ध्यान देना चाहिए। प्रथम "वलता" शब्द को ही लीजिये—

दोहा यह है—भलाँ पधारो भीचड़ा गरक सिलह में गात।
केहर वाला कलहरी 'वलता' की जौ बात॥

इसका मेनोरिया जी ने यह अर्थ दिया है—

"हे सुभटो! हथियारों में डूबे हुए (खूब सजे हुए) अपने इस शरीर से अभी तो (लड़ने के लिए रण क्षेत्र में) जाओ। सिंह के साथ जो तुम्हारा युद्ध हुआ है उसकी कहाँनी पीछे लौट कर कहना।"

इस दोहे का अर्थ करते हुए आपने "इस शरीर के अभी तो" शब्द अपनी ओर से मिला दिये हैं। दोहे में कहीं भी इनका पर्यायवाची शब्द नहीं है। इसमें 'अभी तो' शब्द इसीलिये जोड़ा गया है ताकि "पीछे लौटकर" अर्थ की संगति बैठ जाय।

इस दोहे का ठीक भावार्थ समझने के लिए 'भींचड़ा 'गरक' और 'केहर वाला कलह' शब्दों पर विशेष ध्यान देना चाहिये। 'भींचड़ा' शब्द ब्रजभाषा के 'भींचू' शब्द का डिंगल रूप है। ब्रज, राजपूताना गुजरात और महाराष्ट्र सर्वत्र यह शब्द इसी भाव का द्योतक है। और 'कायर' के अर्थ में लिया जाता है। इसका 'वीर' अर्थ केवल व्यङ्ग रूप में ही लिया जा सकता है। यह दोहा है भी व्यङ्ग प्रधान !

कवि कहता है—हे वीर ! (आन्तरिक कायरता से युक्त) अपने शरीर को कवच आदि में छिपाकर तथा हथियारों से सुसज्जित होकर (रणस्थल में) भले ही जाओ (परन्तु तुमसे विजय की आशा नहीं। तब सिंह से युद्ध करने की गर्व पूर्ण जो बात तुम कहते हो वह तो व्यर्थ ही प्रतीत होती है।

इस दोहे में प्रयुक्त 'बलता' शब्द भिन्न-भिन्न रूप में उत्तरी भारत के सब प्रांतों तथा कुछ दक्षिणी भाग में प्रचलित है। महाराष्ट्र में भल्ती, हाड़ौती वल्ती (भल्ती) तथा ब्रजभाषा में भद्दी रूप में उक्त शब्द 'व्यर्थ' के लिये ही प्रयुक्त होता है। इस दोहे में भी उक्त शब्द 'व्यर्थ' के अर्थ में ही आया है। जैसा कि ऊपर दिखलाया गया है। तभी 'भीचड़ा' 'गरक' व 'केहर वाली कलह' की सार्थकता सिद्ध होती है। एक ही शब्द प्रयोगानुसार भिन्न भिन्न अर्थ अवश्य ग्रहण करता है परन्तु संगति बैठनी चाहिए।

मेनोरिया जी ने इस 'वलता' शब्द की धातु 'वलृ' बतलायी है परन्तु यह शब्द 'वल्' धातु रूप में पाया ही नहीं जाता। हां, 'वल्' धातु अवश्य है जिसका प्रयोग शक्ति, सेना, मोड़ना, अवरोध आदि अर्थ में किया जाता है। अवरोध का अर्थ व्यर्थ भी होता है। अतः 'वलता' का अर्थ व्यर्थ लेना अनुचित नहीं वरन् युक्ति युक्त है, मुड़ने का अर्थ 'लौटना' कदापि नहीं किया जा सकता। यदि कोई करता है तो उसे खींचातानी ही कहना पड़ेगा। 'ढलती-वलती' का प्रयोग दोहरे प्रयोग के कारण हा हुआ। जैसा कि कुछ प्रान्तों में प्रचलित है।

इसके पश्चात् आप-ने नं० ६ के शब्द 'मन्न' पर विचार किया है। दोहा यह है—

ज्यादा मोटा भाग जग मोटा किर तब 'मन्न'।
बाहंदी आसा करै खैराती खट अन्न ॥

अर्थ—संसार में जिनका भाग्य बड़ा होता है उनके कर्तव्य (काम) भी बड़े माने जाते हैं। उनसे कुछ प्राप्त करने की आशा ब्राह्मण-चारण-आदि छः वर्ण के लोग करते हैं।

मेनोरिया जी ने इस दोहे में प्रयुक्त 'मन्न' शब्द का अर्थ 'मन्न' माना है। मेरा कथन है कि इस प्रसंग में 'मन्न' का 'मन' अर्थ करना अनुचित है, क्योंकि क्रिया की अपेक्षित भावना बाध्य करती है कि 'मन्न' का अर्थ 'माने जाते हैं' ही लेना चाहिए। फिर कर्तव्य के पीछे 'मन' के प्रयोग के लिये कोई स्थान ही नहीं रहता। उससे पूर्व 'मन्न' शब्द आने पर कुछ 'मन' की भावना ली भी जा सकती थी। भाग्यशाली के कर्तव्य (दान) पर ही ब्राह्मणादि षट्वर्ण आशा कर सकते हैं, उसके मन से नहीं। इस पर विशेषता यह है कि दान का कार्य उदार मन की भावना का परिणाम ही है, अतः 'मन' अर्थ लेना व्यर्थ हो जाता है

इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि सात शब्दों में से जिन दो शब्दों को लेकर मेनारिया जी ने लेख लिखा है वे दोनों ही भ्रमात्मक हैं।

आपने यह भी लिखा है कि मैंने कविराजा मुरारि दान को जसवन्त सिंह प्रथम के आश्रय में समझ लिया है। बांकीदास ग्रन्थावली के सम्पादक ने केवल जसवन्त सिह का उल्लेख मात्र किया है। उन्होंने यह नहीं दिखलाया कि कविराजा किस जसवन्त सिंह नरेश के आश्रित थे। जब एक ही वंश में एक ही नाम के कई राजा होते हैं तो उनके नाम के साथ प्रथम द्वितीय आदि नम्बर लगा दिये जाते हैं, परन्तु ग्रन्थावली मे इसका कोई उल्लेख नहीं है। ऐसी दशा में स्वभावतः तथा पाठक का ध्यान प्रसिद्ध व्यक्ति की ही ओर जाता है। यह निश्चित है कि औरंगजेब के समकालीन जसवन्त सिंह दूसरे जसवन्तसिंह की अपेक्षा कहीं अधिक प्रसिद्ध, वीर और योग्य व्यक्ति थे। अतः एक ही नाम से प्रथम जसवन्त सिंह की ओर ध्यान जाना युक्ति संगत है। अच्छा यह होता कि मेनोरिया जी सम्पादक का ध्यान भूल की ओर आकर्षित करते।

अंत में मेनारिया जी से निवेदन करूँगा कि वे निष्पक्ष रूप में इस संबंध में विचार करते तो अधिक अच्छा होता।

पुस्तकालय 113055 गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

सम्मेलन के पूना-अधिवेशन के सभापति श्री संपूर्णानंद जी का भाषण

स्वागताध्यक्ष महोदय और मित्रो,

सम्मेलन के सभापति पद पर आसीन करके आपने मुझे जो सम्मान प्रदान किया है उसके लिये मैं आपका ऋणी हूँ। हिन्दी जगत् किसी को इससे बड़ा सम्मान नहीं दे सकता। जब मैं उन लोगों की सूची पर दृष्टि डालता हूँ जो आज तक इस गद्दी को सुशोभित कर चुके हैं तो फिर नतमस्तक होकर आपको चुपचाप धन्यवाद देने के सिवाय मेरे लिये और कुछ सम्भव नहीं रह जाता।

सम्मेलन का सभापति यदि अपने इस गौरव पर गर्व करे तो उसका ऐसा करना सर्वथा अक्षम्य न होगा। मुझ को सम्मेलन के पहिले अधिवेशन में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। तब से आज तक इसने जो उन्नति की है वह हमारे सामने है। इसने प्रत्यक्ष रूप से या अपनी शाखा और सम्बद्ध संस्थाओं के द्वारा हिन्दी की जो सेवायें की हैं, जिस प्रकार विद्वानों और लेखकों ने इसे पल्लवित किया है, जिस भाँति इसको देश के गण्यमान्य नेताओं का सहयोग प्राप्त हुआ है, उसे देखकर किस हिन्दी प्रेमी को हर्ष न होगा ! हिन्दी के वाङ्मय भण्डार में जो कमियाँ हैं उनको हम जानते हैं, फिर भी यह उत्कृष्ट कोटि की रचनाओं से भर रहा है, इतना तो सब को ही स्वीकार करना होगा। हिन्दी पत्र पत्रिकाओं और प्रति वर्ष प्रकाशित होने वाली पुस्तकों तथा परीक्षाओं में हिन्दी लेने वाले छात्रों की संख्याएँ इस बात को सिद्ध करती हैं कि कृत्रिम बन्धनों के हटने पर हिन्दी अपने नैसर्गिक स्थान पर फिर आ रही है। सम्मेलन की परीक्षाओं में बैठने वालों की संख्या भी इस प्रमाण को पुष्ट करती है। आज जिस प्रकार दक्षिण भारत में हिन्दी का प्रचार कार्य हो रहा है वह राष्ट्रभाषा के उज्ज्वल भविष्य का पुकार पुकार कर परिचय दे रहा है। इस सारी प्रगति को सम्मेलन ने सम्भव बनाया है, इसलिये यदि वह व्यक्ति जो सम्मेलन का सभापति चुना जाय कुछ गर्व करे तो उसका ऐसा करना अनुचित नहीं कहा जा सकता।

पर मैं यह भी जानता हूँ कि यह पद केवल प्रतिष्ठा ही नहीं, कर्तव्य भी प्रदान करता है। सम्मेलन के सभापति को हिन्दी की सेवा करने का अनुपम अवसर मिलता है। सम्मेलन आज पूना में हो रहा है। यह नगर हमारे देश

का एक प्रतिष्ठित विद्यापीठ है। हमारे राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। बहुत पहिले की बात जाने दीजिये, पिछले सौ वर्षों में, अंग्रेज़ी शासन के मध्याह्नकाल में, ही इस नगर ने जिन विभूतियों को जन्म दिया है उनकी छाप हमारे इतिहास पर अमिट रहेगी। कोई उनकी सारी कार्य्य-शैली, उनकी समग्र विचारधारा, से सहमत हो या न हो पर उनकी एकनिष्ठा, लगन, अध्यवसाय तो हम सब के ही लिये आदर्श हैं। एक लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक का नाम ही पूना की ख्याति को अमर करने के लिये पर्य्याप्त होता। उनकी विद्वत्ता, उनका धैर्य्य और साहस, उनकी दूरदर्शिता, उनका तप और त्याग—भारत इन बातों को कभी भूल नहीं सकता। हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानकर उन्होंने इस क्षेत्र में काम करने वालों को जो स्फूर्ति दी वह आज भी हमें प्रभावित कर रही है। आज लोकमान्य का पाञ्चभौतिक शरीर हमारे बीच में नहीं है पर इसमें कोई सन्देह नहीं है कि उनकी आत्मा का आशीर्वाद हमको सतत् मिल रहा है। ऐसे स्थान में सम्मेलन का होना उसके कार्यकर्ताओं को स्वभावतः कार्य्यक्षमता प्रदान करता। फिर आज हिन्दी एक विशेष परिस्थिति में से होकर निकल रही है, जब उस पर चौमुख प्रहार हो रहा है, तब तो और भी कार्य्यकुशलता की आवश्यकता है। मैं नहीं कह सकता कि मैं कहाँ तक सेवा कर सकूँगा। आपको यह विश्वास तो दिलाता हूँ कि अपनी ओर से पूरा प्रयत्न करूँगा परन्तु सम्भव है कि राजनीतिक परिस्थितियाँ मुझे कुछ भी न करने दें। ऐसी दशा में आप से पहिले से ही क्षमायाचना करता हूँ।

सब के पहिले तो मैं अपनी ओर से और आपकी ओर से उन ज्ञात और अज्ञात साहित्य सेवियों की सेवा में श्रद्धाञ्जलि अर्पित करना चाहता हूँ जो इस साल हमारे बीच से उठ गये हैं।

मैं सोचता हूँ कि आप के सामने किस विषय पर निवेदन करूँ। सम्मेलन के मञ्च से बहुत से विषयों पर बोला जा सकता है और सभी विषय अपना अपना महत्त्व रखते हैं पर इन सब के लिये न मुझमें योग्यता है, न आपके पास समय। इन पर तो हमारी परिषदों में अधिकारी विद्वान् प्रकाश डालेंगे। यहाँ तो मैं कुछ बातों का दिग्दर्शन मात्र करा सकता हूँ।

मैंने अभी पहिले कहा है कि हमारा वाङ्मय भण्डार उत्कृष्ट कोटि के

ग्रन्थों से भरता जाता है । यह बात सत्य है पर जिस गति से यह बात हो रही है वह सन्तोषप्रद नहीं है । मैं जानता हूँ कि कई विषय ऐसे हैं जिन पर यदि पुस्तक लिखी जाय तो उसकी खपत होना कठिन हो जाता है । मुझे स्मरण है कि जब आज से कई वर्ष पहिले अन्तर्राष्ट्रीय विधान पर मेरी पुस्तक निकली थी तो एक विद्वान समालोचक ने कहा था कि स्वराज्य होने पर इस सुन्दर पुस्तक की परख होगी । सम्भव है, ग्रंथकार भवभूति की भाँति कालो ह्यनन्तो, विपुला च पृथ्वी समझ कर अनागत गुणग्रहण की बात सोचकर सन्तोष कर ले पर प्रकाशक तो इस भरोसे रुपया नहीं लगा सकता । खेद की बात है कि अभी विज्ञान या दूसरे विषयों की उच्चकोटि की पुस्तकों की माँग नहीं है । दूसरों की तो बात ही न्यारी है, हिन्दू विश्वविद्यालय ने भी इस ओर ध्यान नहीं दिया है । नैपाल स्वतंत्र राज है और प्राचीन भारतीय संस्कृतिका संरक्षक माना जाता है । उसको चाहिये था कि अपनी सीमा में एक विश्वविद्यालय स्थापित करता और राष्ट्र भाषा हिन्दी को शिक्षाका माध्यम बनाता । कश्मीर और बड़ौदा तथा दो एक और राज भी ऐसा कर सकते हैं । यदि उनका ध्यान उधर जाय तो उनकी प्रजा में शिक्षा का प्रचार बढ़े, संस्कृतिका विकास हो और हिन्दी वाङ्मय की वृद्धि और उन्नति हो । मैं समझता हूँ कि यदि हिन्दी विद्यापीठ एक पढ़ाने वाला विश्वविद्यालय बन सके और कुछ ऐसे ही और भी विद्यालय खुलें तब भी इस दिशा में कुछ काम हो सकता है । परीक्षाओं की लोकप्रियता तो इस प्रयास की सफलता का सूचक चिह्न है । पर जहाँ मांग की कमी है वहाँ यह भी मानना पड़ेगा कि प्रकाशक अपने कर्तव्य का पालन नहीं कर रहे हैं । भारत, विशेषतः हिन्दू समाज, में दार्शनिक विषयों के अध्ययन के प्रेमियों की बहुत बड़ी संख्या है परन्तु दुःख की बात है कि पाश्चात्य को कौन कहे प्राच्य दर्शनों पर भी अच्छी पुस्तकों का अभाव है । भारतीय गणित और ज्योतिष, धर्मशास्त्र और आचारशास्त्र, कला और वाङ्मय के सम्बन्ध में विदेशी भाषाओं में बड़े सुन्दर ग्रंथ मिलते हैं । भारतीय दृष्टि और भारतीय आधारों पर समाजशास्त्र पर पुस्तकों के लिखे जाने की आवश्यकता है । अंग्रेज़ी तथा अन्य यूरोपियन भाषाओं में बच्चों की ज्ञान वृद्धि के लिये जैसी पुस्तकें मिलती हैं वैसी केवल हिन्दी जानने वाले प्रौढ़ों को भी उपलब्ध नहीं हैं । मेरा विश्वास है कि यदि

इन विषयोंपर अच्छे ग्रंथ प्रकाशित किये जायँ तो उनके लिये ग्राहकों की कमी न रहेगी। केवल काम चलाऊ पुस्तकों को निकालकर प्रकाशक कुछ पैसे भले ही कमा लें पर हिन्दी को उनसे कुछ अधिक आशा रखने का अधिकार है।

हमको अपने कवियों की रचना पर उचित अभिमान है गद्य भले ही बहुत पुराना न हो पर पद्य रचना की परम्परा तो सैकड़ों वर्षों से अविच्छिन्न रूप से चली आरही है। उसने समय के साथ अपने रूप में भी परिवर्तन किया है। उसने अस्ताचल पर क्षण भर के लिये टिके हुए भारत के स्वातंत्र्य सूर्य्य को अपने सामने डूबते देखा है; आर्य्य और अनार्य्य संस्कृति का संघर्ष उसकी आंखों के सामने हुआ; उसे उन दर्बारों में आश्रय मिला था जहाँ भोग बिलास में डूब कर अपनी खोयी हुई आत्मा की स्मृति भुलायी जाती थी; और आज भारत का स्वराज आन्दोलन तथा पृथ्वी पर नवयुग का प्रसव अपनी आंखों देख रही है। कवि के कानों में जगती के शोषितों और दलितों का क्रन्दन है, उसकी आंखों के सामने एक ओर अपमानित भारत का क्लान्त कलेवर और कोटि कोटि नंगों भूखों के कङ्काल और दूसरी ओर कारखानों की गगनचुम्बी चिमनियाँ और श्रीमानों के नन्दनकानन प्रतिस्पर्धी विलासगृह हैं उसका हृदय इन बातों से बिताड़ित होता है, विचिलित होता है। सच्चा कवि इस पृथ्वी को छोड़कर भाग नहीं जाता। वह रोता है पर आँसुओं की झड़ी के पीछे उसे आशा की किरणों भी देख पड़ती हैं। उसकी आँखों के सामने भविष्य का चित्र भी नाच जाता है। वह योगी न सही, पर उसको भी सत्य की अतीन्द्रिय झलक देख पड़ती है। वह इसीलिये कविता कर सकता है कि उसे सत्य का साक्षात्कार हुआ है और सत्य ही सुन्दरम् है। जो सच्चा कवि है कला को जीवन से पृथक् करने की बात नहीं करता। सत्य केवल सुन्दर नहीं है, वह शिव भी है अतः सत्कवि की वाणी में तृषित उत्पीड़ित मानव जाति को सन्देश और उपदेश मिलना चाहिये।

मैं आधुनिक कविता को देखता हूँ। मुझे यह भरोसा है कि वह इस युग का प्रतीक बनने का प्रयत्न कर रही है। उसमें निराशा, खोज, शंका, अश्रद्धा, अतृप्ति, संघर्ष, विप्लव, वेदना—वह सब भाव जो आज सहस्त्र सहस्त्र भारतीय नर नारियोंको उद्वेलित कर रहे हैं—मिलते हैं पर अभी उसके स्वर में आशा भरी दृढ़ता नहीं है, उसके पास सन्देश नहीं है। मुझे विश्वास है, कि शीघ्र ही

यह अभाव भी दूर होगा और कवि नवयुग का पथ-प्रदर्शक बनेगा। पर इसके लिये उसको तपस्या करनी पड़ेगी। सत्य बिना आयास के नहीं मिलता। तपस्या के साथ त्याग भी चाहिये। व्यास और वाल्मीकि ने जिस मार्ग को प्रशस्त किया है उस पर त्याग, तपस्या और निर्भयता का ही पाथेय काम देता है। जो ऐसा कर सकता है वही समाज का पथ-प्रदर्शक बन सकता है उसी की वाणी अमर होगी।

अपने लेखकों से एक निवेदन और करना है। मैं भी उनमें से एक हूँ, इसी नाते ऐसा साहस करता हूँ। वह युगधर्म पहिचानें। हम कहते हैं और ठीक कहते हैं कि जो साहित्य दर्बारों के दूषित वातावरण में पला था वह स्वयं दूषित था—उसमें जनता के हृदयोच्छ्वासों की ध्वनि नहीं थी। पर यही दोष उस साहित्य में भी है और होगा जिसकी सृष्टि आज के मध्यम वर्ग के कृत्रिम वातावरण में होगी। यह वर्ग जनता—सच्ची जनता से बहुत दूर है। इसकी अनुभूतियाँ इसकी आकांक्षाएँ, जनता की मानस उथल पुथल की छाया से दूर हैं। दो चार दिन किसी गाँव में बैठकर ग्रामीण जीवन पर रचना करना, उसकी दयनीयता दिखलाना, उसकी हँसी उड़ाना है। दया और भिक्षा के टुकड़ों से ही तो धनिकवर्ग और उसके पीछे चलकर पूँछ हिलाने वाला मध्यमवर्ग दलितों, शोषितों, पीड़ितों को धोखा देना चाहता है, उनकी मूक अशान्ति को उभरने से रोकना चाहता है। यदि आप उनके साथ तन्मयता प्राप्त करके उनके साथ सह अनुभूति नहीं कर सकते तो उन पर दया दिखलाकर उनका अपमान मत कीजिये। आपको प्रगतिशीलता का यश तो मिलता है पर आप पाप के भागी बनते हैं। हम और आप इसी मध्यवर्ग से निकले हैं पर जब तक हम अपने अर्धसुप्त वर्गभाव को जीत नहीं सकते तब तक हमारी रचना में से खरी मुद्राकी टङ्कार नहीं निकल सकती।

दो शब्द इस सम्बन्ध में और कहना चाहता हूँ। न मैं कवि हूँ न मैंने काव्य का अध्ययन किया है, अतः जो कुछ कहता हूँ वह यह समझकर कि उसमें कोई अधिकारिता नहीं है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि आधुनिक पद्य काव्य की धारा के कुछ बहँक जाने का डर है। पुराने कवियों की रचनाएँ प्रायः पढ़ी नहीं जातीं। यह भूल जाता है कि उनके द्वारा भी भारतीय आत्मा की ही अभिव्यक्ति हुई थी। रीतिकाल और दर्बारी कविता जैसे गाली के

शब्द हो गये हैं। उनमें भी कुछ मनोविज्ञान की सामग्री है ऐसा स्वीकार नहीं किया जाता। पुराने छन्द आधुनिक भावों को व्यक्त करने में सर्वथा अक्षम मान लिये गये हैं। परिणाम यह हुआ कि परम्परा भग्न हो गयी है। आजकल की कविता जैसे शून्य में उद्भूत हुई है। इसमें मुझे दो डर देख पड़ते हैं। प्राचीन काल का प्रत्येक कवि तुलसी, सूर या कबीर नहीं हो सका; आज का प्रत्येक कवि प्रसाद पन्त या निराला न हो सकेगा। फलतः जहाँ उस समय भावों की मुक्त धारा रुक गई थी वहां इस समय भी कविता के प्रवाह के कुछ थोड़े से भावों और संस्कृत के दुरूह शब्दों के मरुस्थल में खो जाने की आशङ्का है। दूसरा डर यह है कि जो कवि इस देश की पुरानी परम्परा से अलग हो गया है, वही विदेशी स्रोतों से स्फूर्ति लेता देख पड़ता है। ऐसी उपमायें दी जाती हैं जिनका हमारे जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। उर्दू के कवि ने कमल और भ्रमर को छोड़कर ईरान के गुलाब और बुलबुल को अपनाया, जिनको न उसने देखा था, न उसके श्रोताओं ने। जिस भारत में मांस खाना कुछ बहुत अच्छी बात नहीं समझी जाती, जो भारत अपने पूर्वजों के पवित्र सोमरस का पान छोड़ चुका था और सुरापान को निंद्य मानता था उसके सामने उन्होंने कबाब और सीख़, शराब और साक़ीका राग अलापा। यह रचना चाहे कितनी ही श्रुति मधुर हो पर हमारे समाज की आत्मा के अनुकूल न थी, अतः मुट्ठी भर लोगों तक ही रह गयी, लोकप्रियता प्राप्त न कर सकी। मैं चाहता हूँ कि हमारे उदीयमान कवि इस बात को न भूलें।

मैंने प्रकाशकों का ऊपर ध्यान इस ओर दिलाया है कि वह गम्भीर विषयों पर अच्छी पुस्तकों के लिखाने का आयोजन करें चाहे पैसा कुछ कम भी मिले। यह काम उन विषयों के ज्ञाताओं से ही कराना होगा। मैं जानता हूँ कि बहुधा किसी ऐसे व्यक्ति को जो अंग्रेज़ी जानता है और कुछ हिन्दी लिख लेता है ऐसे विषयों की पुस्तकों के अनुवाद करने (और कभी कभी स्वतंत्र पुस्तक लिखने) का काम सौंपा जाता है जिनका उसने कभी भी अध्ययन नहीं किया। वह स्वयं जिस बात को नहीं समझ पाता उसे दूसरों को क्या समझायेगा? यह प्रबन्ध प्रकाशक के लिये सस्ता पड़ता है पर हिन्दी वाङ्मय पर, जिसके नाम पर प्रकाशक कमाता खाता है, कुठाराघात होता है। सच तो यह है कि बहुत से प्रकाशकों ने इस व्यवसाय को केवल धनोपार्जन का साधन

समझा है और इसमें भी उन्हीं उपायों से काम लेना चाहते हैं जिन्होंने पूंजीशाही को सर्वत्र तिरस्कृत बना रक्खा है। मैंने सुना है कि आठ आने फ़र्मे पर पुस्तकें लिखायी जाती हैं, आठ आना पृष्ठ तो जैसे बहुत बड़ी बात हो गयी। उपन्यास कहानी हां सही पर जो लेखक भूखकी ज्वाला पर छींटे देने के लिये इन शर्तों पर लिखना स्वीकार करता है वह कलाकार नहीं हो सकता। सब लोग प्रेमचन्द नहीं हो सकते पर ऐसी परिस्थिति में प्रेमचन्दों का पनपना भी कष्टसाध्य है। ग्रंथकारों को इन बातों से कष्ट होता है पर अभी वह सतर्क नहीं हुए हैं। सरस्वती का उपासक शान्त होता है, सन्तोषी होता है परन्तु यदि वह इस प्रकार अपनी लेखनी को थोड़े से लोगों की स्वार्थसिद्धि का उपकरण बनने देता है तो वह वाग्देवता की अप्रतिष्ठा करने का अपराधी है। यदि स्थान स्थान में लेखक संघ स्थापित हो जायं तो हिन्दी की सेवा हो, सुरुचि का प्रसार हो और लेखकों के स्वत्वों की भी रक्षा हो।

मैं दो शब्द पत्रकारोंसे भी कहने की धृष्टता करता हूँ। उनको जिन कठिनाइयों का सामान्यतः सामना करना पड़ता है उनसे मैं अपरिचित नहीं हूँ। आज तो उनपर ऐसा प्रबल प्रहार हो रहा है कि जीवन मृत्युका प्रश्न उपस्थित होगया है। वह जिस धैर्य्य और साहससे इन परिस्थितियोंका सामना करते हैं उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। परन्तु मुझको यह शिकायत है कि वह बहुत सन्तोषी हैं। साधन तो कम हैं ही; पर हमारे पत्र एक दूसरेको ही आदर्श मान लेते हैं, अंग्रेज़ीके पत्रों की बराबरी करने की महत्त्वाकांक्षा भी उनको कम ही रहती है। सम्पादक अग्रलेख लिखने तक ही परिसीमित रह जाता है। पत्रिकाएँ भी अपनेको अभी इस दोष के ऊपर नहीं उठा सकी हैं। पृष्ठ भरे तो जाते हैं पर जिस चीज़से भरना है उसकी ओर पर्य्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। अच्छी सामग्री देनेमें व्यय तो होगा पर इसके विना पाठकों की सुरुचिपूर्ण सेवा हो भी नहीं सकती। समालोचना का प्रबन्ध तो बहुत ही कच्चा है। बहुधा ऐसे लोगोंको यह काम सौंपा जाता है जो आलोच्य पुस्तक के विषय से सर्वथा अनभिज्ञ होते हैं। उनकी आलोचना पुकार पुकार कर इस बात का प्रज्ञापन करती है। अधिकारी आलोचना कराने में व्यय तो होगा पर ऐसी ही आलोचना अच्छे बुरे की परीक्षा कर सकती है और लेखक, प्रकाशक तथा पाठक के लिये उपयोगी हो सकती है।

अब मैं उस विषय की ओर आता हूँ जो आज हिन्दी के प्रत्येक प्रेमी के हृदयको क्षुब्ध कर रहा है। मैंने आरंभ में ही कहा था कि हिन्दी पर चौमुख प्रहार हो रहा है। हम इस प्रहारसे डरते नहीं। पिछले सौ डेढ़सौ वर्षों में हिन्दी को राजाश्रय नहीं मिला उलटे उसे राजकी उदासीनता और विरोधका सामना करना पड़ा है। आपत्तियोंकी गोद में वह पली है। हमको विश्वास है कि वह आज की परिस्थिति को भी झेलने में समर्थ होगी। अमर भारती की इस लाड़ली के स्वरों में भारत की राष्ट्रीय आत्मा बोलती है; उसे कोई कुचल नहीं सकता।

फिर भी परिस्थिति को समझ तो लेना ही चाहिये। सरकार की हिन्दी और नागरी पर कभी कृपा नहीं रही। जिस लिपि को कोटि कोटि भारतवासी अपनी पवित्र लिपि मानते हैं उसको भारत की मुख्य मुद्रा-रुपये-पर स्थान नहीं है। आप उसे रुपयेके नोट पर न पायेंगे। सरकार का रेडियो विभाग तो हिन्दीके पीछे हाथ धोकर पड़ा है। कहनेको तो वह अपनेको हिन्दी उर्दू से अलग रख कर हिन्दुस्तानी को अपनी भाषा मानता है पर उसकी हिन्दुस्तानी उर्दू का ही नामान्तर है। मैंने शिकायतें सुनीं हैं कि टाक्स में संस्कृत के तत्सम शब्दों पर क़लम चला दी जाती है। यह हो या न हो,उसकी हिन्दुस्तानी के उदाहरणतो हम नित्य ही सुनते हैं। यदि 'मृग' जैसा शब्द भी आ गया तो 'यानी हिरन' कहनेकी आवश्यकता पड़ती है पर 'शफ़क़', 'तसव्वुर' 'पेशकश' 'तख़य्युल' जैसे शब्द सरल और सुबोध माने जाते हैं। रेडियो विभाग समझता है कि साधारणतया हिन्दू मुसलमानों के घर यही बोली बोली जाती है। रेडियो का 'अनाउंसर' कभी नमस्कार नहीं करता, उसकी संस्कृतिमें 'आदाब अर्ज़' करना ही शिष्टाचार है। संस्कत शब्दों के शुद्धउचारण न करने की तो शपथ खा ली गयी है। नामों तक की दुर्गति कर दी जाती है। आचारिया, बिकरमाजीत, इन्दर, यह सब तो इनके बायें हाथके खेल हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार ने हिन्दी भाषा को बिगाड़ने और जनता में उस संस्कृति का, जिसकी यह भाषा प्रतीक है, विकृत रूप उपस्थित करने के लिये ही इनको नौकर रख छोड़ा है। हिन्दू त्योहारों पर अरबी फ़ारसी शब्दों से लदी ऐसी भाषा में भाषण सुनने में आये हैं कि कुछ कहा नहीं जाता। इन भाषणों को देनेवाले हिन्दू भी होते हैं; स्यात् इनका चुनाव ऐसी बोली बोल सकने की

योग्यता के ही कारण होता है। हमको इस ओर सतर्क रहना है। जो लोग रेडियो सुनते हैं उनको संगठित होना चाहिये। मुझे यह जानकर हर्ष होता है कि लखनऊ में एक लिसनर्स असोसिएशन स्थापित हुआ है और आकाशवाणी नाम की एक पत्रिका भी निकाली गयी है। केन्द्रीय व्यवस्थापक सभा के सदस्यों को सरकार पर दबाव डालना चाहिये और हिन्दी पत्रों को भी इस ओर ध्यान देना चाहिये।

मेरे मित्र पं० कालीदास चतुर्वेदी ने मेरा ध्यान उस आदेश की ओर आकर्षित किया है जो बुन्देलखण्ड और युक्तप्रान्त में जन गणना करने वालों को दिया गया है। उनसे कहा गया है कि यदि कोई हिन्दी या उर्दू को अपनी मातृभाषा बतलाये तो तुम हिन्दुस्तानी लिखो। देखने में तो इसमें अकेले हिन्दी के विरुद्ध कोई बात नहीं है पर जहाँ पञ्जाब और हैदराबाद जैसे प्रदेशों में उर्दू बोलने वालों की संख्या लिखी जाय वहाँ ऐसे प्रान्तों में जिनकी भाषा हिन्दी है हिन्दी का नाम न लिखा जाना उर्दू के साथ खुला पक्षपात है। मुझे बतलाया गया है कि यह बात १९२१ से होने लगी है। मैं नहीं कह सकता कि पहिले इसका विरोध किया गया या नहीं। अब समय थोड़ा रह गया है, फिर भी इसके लिये पूरा आन्दोलन करना चाहिये।

अब मैं हिन्दी उर्दू और हिन्दुस्तानी के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता हूँ। मेरी निज सम्मति से आप परिचित नहीं हैं आप में से बहुतों ने वह पत्र-व्यवहार देखा है जो पारसाल मुझ में और महात्माजी में हुआ था। मेरा अब भी विश्वास है कि मैंने जो सम्मति प्रकट की थी वह समीचीन है। हमारी भाषा का नाम हिन्दी इसे कतिपय मुसलमान लेखकों ने दिया पर हमने इसे अपना लिया। यह नाम हमको प्यारा है, और इसमें साम्प्रदायिक या अन्य किसी प्रकार का दोष नहीं है। इसे उर्दू नाम से पुकारने का कोई कारण नहीं है। पृथ्वी पर भारत ही तो एक देश नहीं है। दूसरी जगहों में भाषा का नाम देश के नाम पर होता है। फ्रांसीसी, अंग्रेजी, जापानी अरबी, ईरानी—यह सब नाम देशों से सम्बन्ध रखते हैं। हिन्दी भी ऐसा ही नाम है पर उर्दू में यह बात नहीं है। यह नाम इस देश के नाम से सम्बम्भ नहीं रखता। अब यह प्रश्न उठाया जाता है कि राष्ट्रभाषा को न हिन्दी कहा जाय, न उर्दू प्रत्युत हिन्दुस्थानी नाम से पुकारा जाय। मैं स्वयं तो उन लोगों में हूँ जो इस बात

को मानने को प्रस्तुत हैं। यदि हिदुस्थानी कहने भर से काम चल जाय तो यह समझौता बुरा नहीं है। यह देश हिन्दुस्थान भी कहलाता ही है पर मुख्य प्रश्न नाम का नहीं, भाषा के स्वरूप का है। विवाद ऊपर से भले ही नाम के लिये किया जाता हो पर उसके भीतर भाषा के स्वरूप का विवाद छिपा है। इस बात को समझकर हमको अपना मत स्पष्ट कर देना है।

हिन्दी (या वह हिदुस्थानी जिसकी मैं कल्पना करता हूँ) जीवित भाषा है और रहेगी। वह मुट्ठी भर पढ़े लिखों तक ही परिसीमित न रहेगी। उसके द्वारा राष्ट्र के हृदय और मस्तिष्क का अभिव्यंजन होना है। उसको दार्शनिक विचारों, वैज्ञानिक तथ्यों और हृद्गत भावों के व्यक्त करने का साधन बनना है। हमको भारत के बाहर से आये हुए शब्दों का प्रयोग करने में कोई लज्जा नहीं है। अरबी फ़ारसी के सैकड़ों शब्द बोले जाते हैं, लिखे जाते हैं। यह बात आज से नहीं, चन्दबरदाई और पृथ्वीराज के समय से चली आ रही है। सूर, तुलसी, कबीर, रहीम सब ने ही ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है। अंग्रेजी के शब्दों को भी हमने अपनाया है। योगी को सुषुम्ना नाड़ी में प्राण ले जाने पर जिस दिव्य जोति की अनुभूति होती है उसका वर्णन करते हुए आज से दो सौ वर्ष पहिले चरणदासजी ने लिखा था 'सुखमना सेज पर लम्प दमकै।' पर यह सब शब्द चाहे जहाँ से आये हों हमारे हैं। आगे भी जो ऐसे शब्द आते जायँगे वह हमारे होंगे। हम उनको हठात् कृत्रिम प्रकार से नहीं लेंगे। वह आप भाषा में अपने बल से मिल जायँगे। पर उनके आ जाने पर भी भाषा हिन्दी ही है और रहेगी। जिस प्रकार पचा हुआ भोजन शरीर का अविभाज्य अङ्ग हो जाता है उसी प्रकार वह हिन्दी के अङ्ग हैं और होंगे। उनकी पृथक् सत्ता चली जायगी। जीवित भाषाएँ ऐसी ही करती हैं। हम संस्कृत के शब्दों को भी इसी प्रकार अपनाते हैं, उनको हिन्दी शब्द बना लेते हैं। इसका बड़ा प्रमाण यह है कि वह हिन्दी में आने पर संस्कृत के व्याकरण को छोड़ देते हैं, हिन्दी व्याकरण के अधीन हो जाते हैं। राजा का बहुवचन राजानः, भुवन का भुवनानि, स्त्री का स्त्रियः नहीं किया जाता। कोई लेखक ऐसे प्रयोग करने का दुःसाहस नहीं करता। संस्कृत व्याकरण के विरुद्ध होते हुए भी 'अन्तर्राष्ट्रीय' हिन्दी में व्यवहृत है। मैंने शुद्ध रूप चलाना चाहा पर सफल न हुआ। पर शुद्ध उर्दू लेखक सुलतान का बहुवचन सलातीन,

मुल्क का मुमालिक, खातून का ख़वातीन लिखता है। यह शब्द अपना विदेशीपन नहीं छोड़ते और इन्हीं विदेशी पन के अभिमान से भरे हुए शब्दों में ही उर्दू का उर्दूपन है, अन्यथा क्रिया, सर्वनाम, उपसर्ग, अव्यय—वह सब शब्द जो भाषा के प्राण हैं—हिन्दी उर्दू में एक ही हैं। हम ऐसी कृत्रिम भाषा को, जो जनता में फैल ही नहीं सकती, हिन्दी या हिन्दुस्थानी नहीं मान सकते। वह हमारे किसी काम की न होगी। मैं फिर कहता हूँ कि हमको अरबी फारसी के शब्दों से चिढ़ नहीं है। गुजराती, मराठी, बंगला सब में ऐसे शब्द हैं। ऐसे बहुत से घराने हैं जिनके यहाँ पूजा पाठ में, विवाहादि उत्सवों में, अरबी फारसी के शब्दों का प्रयोग होता है। बिना बनावट के उनके मुँह से ऐसे शब्द निकल जाते हैं। यह नहीं हो सकता कि आज यकायक एक वेदपाठी ब्राह्मण और एक हाफ़िज़ की भाषा में पूर्णतया साम्य हो। पर जो स्वाभाविक वैषम्य होगा उससे हमारी कोई हानि नहीं होती। हम तो कृत्रिम भाषा के, जिसमें व्यर्थ अरबी फारसी शब्द ठूँसे जाते हैं, विरुद्ध हैं। मेरा तो यह विश्वास है कि यदि हमारी भाषा में स्वाभाविक प्रकार से एक ही अर्थ के द्योतक दो तीन शब्द—एक संस्कृत का, एक अरबी या फारसी का,—आ जाय तो उससे भाषा का भण्डार भरता है और वाङ्मय में सुन्दरता आती है। अंग्रेजी को लीजिये। एक ही अर्थ में क्वेरी, क्वेश्चन, इण्टरोगेशन इण्टर्पेलेशन जैसे शब्द आते हैं। इनमें क्रमशः थोड़ा-सा सूक्ष्म प्रयोग भेद हो गया है। ऐसा हमारे यहाँ भी क्यों न हो? एक अर्थ में बार बार ही एक शब्द क्यों प्रयुक्त हो?

पर इसके साथ ही एक और बात भी स्पष्ट हो जानी चाहिये। हम प्रचलित शब्दों को निकालना नहीं चाहते। जो नये शब्द स्वाभाविक रूप से पूर्णतया हमारे बनकर आ जायँगे हम उनको भी अपनायेंगे। जो बर्ताव तुर्कों ने अरबी के साथ किया हम उसका अनुकरण नहीं करना चाहते। परन्तु यह भी निश्चत है कि हमारी भाषा में अधिकतर स्वदेशी अर्थात् संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्द रहेंगे। यदि इस भाषा को राष्ट्रभाषा कहना है, यदि इसको सीमा प्रान्त ही नहीं वरन् बंगाल और गुजरात, महाराष्ट्र और मालाबार में भी बरता जाना है तो न केवल वाङ्मय प्रत्युत साधारण बोलचाल और लिखावट में भी इस सिद्धान्त को मान लेना होगा। दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

बार बार यह कहा जाता है कि कम से कम युक्तप्रांत की तो मातृभाषा उर्दू है। मैं ऐसा नहीं मान सकता। हमारे सामने कुछ हिन्दू मूर्तियाँ खड़ी कर दी जाती हैं और उनके मुँह से यह कहला दिया जाता है कि उनके घरों की भाषा उर्दू है । होगी । हमारे लिये यह हिन्दू मुसलमान का प्रश्न नहीं है। हमने कबीर, जायसी, रहीम, रसखान या मीर और अजमेरी को साहित्यकार और हिन्दी प्रेमी की दृष्टि से देखा—उनके धार्मिक विचारों से हमसे कोई सरोकार नहीं । पर सरकारी अदालतों के चारों ओर मंडराने वाले मुट्ठी भर व्यक्तियों की सम्मति प्रामाणिक नहीं हो सकती। युक्तप्रांत में और लोग भी रहते हैं। जहाँ दिल्ली और लनखऊ अदबी मरकज़ हैं, वहाँ मथुरा, आगरा, प्रयाग और काशी भी साहित्यिक केन्द्र हैं।

पर प्रत्यक्ष रूप से उर्दू, या अप्रत्यक्ष रूप से कृत्रिम असार्वजनीन हिन्दुस्थानी, के नाम पर हिन्दी का विरोध करनेवाले तर्क से बहुत दूर हैं। हैदराबाद की भाषा इसलिये उर्दू है कि वहाँ का राजवंश मुस्लिम है और कश्मीर की भाषा इसलिये उर्दू है कि वहाँ की प्रजा में अधिक संख्या मुसलमानों की है। पंजाब में उर्दू इसलिये पढ़ानी चाहिये कि वहाँ ५५ प्रतिशत मुसलमान हैं और बिहार में इसलिये पढ़ानी चाहिये कि वहाँ मुसलमान १२ प्रतिशत भी नहीं हैं। यह भाषा का नहीं साम्प्रदायिकता का प्रश्न है। हम सब को इस बात का अनुभव है कि किसी भाषण में जहाँ कोई संस्कृत का तत्सम शब्द आया वहीं उर्दू के हामी बोल उठते हैं कि साहब, आसान हिन्दुस्तानी बोलिये, हम इस जुबान को नहीं समझते परन्तु हिन्दी प्रेमी क्लिष्ट, अरबी फारसी शब्दों की बौछार को प्रायः चुपचाप सह लेते हैं। हिन्दुस्थानी नाम धारी उर्दू के समर्थकों का द्वेषभाव कहाँ तक जा सकता है उसका एक उदाहरण देता हूँ। अभी थोड़े दिन हुए राष्ट्रपति अबुलकलाम आज़ाद को प्रयाग विश्वविद्यालय के छात्रों की ओर से एक मानपत्र दिया गया। उस पर उर्दू के समर्थकों के मुखपत्र हमारी जुबान ने एक लम्बी व्यंगमयी टिप्पणी लिखी। उसने उन शब्दों को रेखांकित किया जो उसकी सम्मति में हिन्दुस्थानी में न आने चाहिये। यह कहना अनावश्यक है कि यह सब शब्द संस्कृत से आये हुए थे। यह बात तो कुछ समझ में आती है। यह भी कुछ कुछ समझ में आता है कि इन लोगों की दृष्टि में अरबी फारसी से निकले

हुए दुरूह शब्द सरल और सुबोध हैं। पर विचित्र बात यह है कि मानपत्र का अंग्रेजी का कोई शब्द भी रेखांकित नहीं है। यह द्वेष भाव की मर्यादा है। जिस हिन्दुस्थानी में अंग्रेजी का स्थान हो पर संस्कृत के शब्द छाँट छाँट कर निकाल दिये जाने वाले हों, वह कदापि इस देश की राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती।

यह सज्जन हिन्दी के विरुद्ध जैसा निराधार प्रचार करते हैं उसका विस्तृत विवरण देना तो आपका समय नष्ट करना है। केवल एक उदाहरण देता हूँ। हमारी ज़ुबानके १६ जुलाई १९४० के अंक में हिन्दीवालों पर यह आरोप किया गया है कि वह प्रचलित अरबी फ़ारसी शब्दों को निकाल कर नये शब्द गढ़ कर चलाना चाहते हैं। इसके कुछ उदाहरण दिये गये हैं, जैसे

सूबै मुत्तहिदा	की जगह	जुट प्रान्त
मुद्दई	,,	झगड़ा पेलडू
एलान	,,	घोंषड़ा

इसके पहिले भी ऐसा आक्षेप किया गया है। पर यह कितना झूठा है यह आप जानते हैं। मैंने किसी एक भी ऐसे व्यक्ति को जो हिन्दी के साहित्यिक जगत् में कोई भी स्थान रखता हो इन शब्दों को बोलते या लिखते नहीं पाया। फिर भी यह झूठ दुहराया जाता है और बारबार दुहरा कर इसको सत्य का पद देने की चेष्टा की जाती है।

हिन्दी के साथ एक और खेल खेला जाता है। अपनी हिन्दुस्थानी में कुछ ऐसे शब्द गढ़ लिये जाते हैं जो देखने में हिन्दी से प्रतीत होते हैं। उनका प्रयोग करके यह दिखलाया जाता है कि हमको हिन्दी के सरल सुबोध शब्दों से कोई द्वेष नहीं है। इसके साथ ही हिन्दी की असाहित्यिकता भी प्रदर्शित हो जाती है। जैसे—'रस्मुलख़त' हिन्दुस्थानी है। इसके पर्याय में 'लिखी' शब्द को जगह दी गयी है। मैं नहीं कह सकता यह 'लिखी' कहाँ से आया। हम आप तो 'लिपि' बोलते हैं। मैंने सुना है 'टिकट' की जगह 'घरघुस' हमारे सिर मढ़ा जानेवाला है। यह भी हिन्दी के भोंडेपन का प्रमाण होगा।

मैं समझता हूँ कि अब इस सम्बन्ध में मुझे कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। मैंने ऊपर जो कुछ कहा है वह मेरी निजी सम्मति है परन्तु राष्ट्र भाषा के स्वरूप के सम्बन्ध में कोई विचारशील और निष्पक्ष व्यक्ति कोई दूसरा मत नहीं रख सकता। मुझे इस बात का हर्ष है कि श्री

बा० ग० खेर, श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, श्री शरत्चन्द्रबोस जैसे लोक नायकों ने मेरे मत का समर्थन किया था। अवश्य ही यह साहमत्य मूल सिद्धान्त के साथ था, ब्योरे की बातों को तो समय ही निश्चित करेगा। स्वयं महात्मा जी ने उस समय जो लिखा था उसे आप भूले न होंगे:—'आपने लिखा है वह सब मुझे मान्य है। कांग्रेस ने भाषा का नाम संस्करण किया है, और कोई कैद रखा नहीं है।'

मैं फिर कहता हूँ, हमको हिन्दी नाम प्यारा है, हम इसे छोड़ना नहीं चाहते। फिर भी यदि केवल इतनी ही बात होती तो हम हिन्दुस्थानी नाम को सहर्ष मान लेते। पर यहाँ तो प्रश्न भाषा के स्वरूप का है और इस सम्बंध में हम अपना मत स्पष्ट कर देना चाहते हैं। भाषा भाव और संस्कृति का प्रतीक होती है। हम भारतीय संस्कृति का—उस संस्कृति का, जिसको हिन्दू और मुसलमान दोनों ने मिलाकर बनाया है, जिसकी धारा ऋग्वेदकाल के पहिले से अजस्ररूपेण चली आ रही है,—और उस भाषा को—जिसको हिन्दू और मुसलमान लेखकों ने मिलकर पुष्ट किया है, जो देववाणी, पाली और प्राकृत की उत्तराधिकारिणी है, जिसकी जड़ों को अनेक वाग्धाराओं ने सिंचित किया है—कुछ प्रमत्त साम्प्रदायवादियों और उनकी भोलीभाली कठपुतलियों के हाथों नष्ट न होने देंगे। हिन्दी ने ऐसे बहुत से आघातों को झेला है। अब भी झेल जायगी, इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं है।

हिन्दी को किसी भी प्रांतीय भाषा से प्रतिस्पर्धा नहीं है। मेरा तो विश्वास है कि प्रांतीय भाषाओं की उन्नति हिन्दी उन्नति में सहायक होगी। इतना ही नहीं मेरा तो ऐसा विचार है कि ब्रजभाषा, अवधी, बुन्देलखण्डी, पूर्वी, मैथिली आदि बोलियों की वृद्धि भी हिन्दी की उन्नति में साधक होगी।

मैंने ऊपर बार बार राष्ट्रभाषा शब्द का प्रयोग किया है, मेरा तात्पर्य स्पष्ट है। यों तो बोलचाल और लिखने की भाषा में कुछ अन्तर होता ही है पर मैं राष्ट्रभाषा, साहित्य की भाषा और बोलचाल की भाषा—ऐसी तीन भाषाओं की कल्पना नहीं करता। भाषा तो एक ही है और रहेगी।

भाषा के साथ ही दो शब्द लिपि के सम्बन्ध में कहना है। आजकल लिपि के सुधार का प्रश्न उपस्थित हो गया है। मैं भी समझता हूँ कि कुछ परिशोधन की आवश्यकता है परन्तु ऐसा न होना चाहिये कि केवल छापे की सुविधा के नाम

पर हम सारी पुरानी परम्परा से नाता तोड़कर एक नये प्रकार की ही लिपि का निर्माण कर डालें। देवनागरी लिपि भारत के सभी कोनों में न्यूनाधिक प्रचलित है और बिना प्रबल कारणों के उसमें यों ही परिवर्तन न करने चाहियें।

हमको एक बात का कुछ प्रबन्ध करना चाहिये। हमारे देश में अभी वह दिन नहीं आया है जब ग्रन्थनिर्माण और पत्रकारी से कोई धनोपार्जन कर सके। हम आये दिन देखते हैं कि अच्छे साहित्य सेवी उठ जाते हैं और अपने परिवार को निराश्रय छोड़ जाते हैं। कितनों को अपनी रुग्णावस्था में औषध और पथ्य तक के लिए प्रबन्ध करना दूभर हो जाता है। इन लोगों की सेवा करना हमारा कर्तव्य है। व्यक्तिगत रूप से कोई धनीमानी सहायता कर दे वह तो ठीक ही है पर यदि सम्मेलन के पास इसके लिये कोई कोष हो और वह इसका प्रबन्ध करे तो बहुत अच्छा हो।

यह तो आप निश्चय करेंगे कि अगले बारह महीनों में सम्मेलन क्या करेगा। दो एक निवेदन करना चाहता हूँ। एक तो मैंने अभी एक विशेष काम के लिये कोष संचय करने की बात आपके सामने रखी है। यों भी सम्मेलन के साधारण कामों के लिये कोष संग्रह होना चाहिये। सम्मेलन को प्रचार की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये। हिन्दी पर जो चारों ओर से प्रहार हो रहा है उसका सामना करने के लिये अधिक जागरूक और क्रियाशील होने की आवश्यकता है। थोड़ी सी देर हो जाने से कितनी ही अच्छी बातें भी अपनी उपयोगिता खो बैठती हैं। एक बात और। मैं चाहता हूँ कि सरकारी काग़ज़ों की पूरी छानबीन करके एक प्रामाणिक पुस्तक इस विषय पर निकाली जाय कि जिस समय फ़ारसी सरकारी भाषा के पद से हटी उस समय जो सर्कारी आज्ञाएँ निकलीं उनकी किसने और किस प्रकार अवहेलना की और वर्तमान उर्दू के समुदाय में फोर्ट विलियम का कहाँ तक हाथ रहा है।

बस मैं और कुछ अधिक नहीं कहूँगा। यदि हम और सतर्क रहें और अपने हिन्दीप्रेम का व्यावहारिक परिचय देने और इसके लिये कुछ त्याग और तपस्या के लिये सन्नद्ध रहें तो हम सम्मेलन को सफल बना सकते हैं। भगवती भारती हमको ऐसा आशीर्वाद दे, यह उसके चरणों में मेरी विनम्र प्रार्थना है।

पूना-सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष

श्री ग० र० वैशंपायन का भाषण

प्रत्येक भारतवासी अपनी प्राचीन परंपरा और विचार-सरणिपर दृष्टि रखता हुआ 'अखंड भारत' की उपासना में ही अपनी राष्ट्रीयता और राष्ट्र-प्रेम का परमोत्कर्ष मानता आया है। कैलास के उत्तुंग शिखर से उतर कर जब वह कन्या कुमारी के श्यामल अंचल तक पहुँचता है, तब विंध्याचल के आर पार के विस्तृत भूखंड के कण-कण में, उसके पत्ते पत्ते में, उसके समस्त अरण्य निर्झर, पहाड़ और जलाशयों में वह अपने पावन स्वदेश का अनंत स्मृतिमय दर्शन पाकर पुलकित तन, उच्छ्वसित मन और आलोडित भाव-राशि को न सम्हाल सकने के कारण, प्रति पग पर अपनी कभी न समाप्त होने वाली श्रद्धा, आस्था-निष्ठा और प्रेम तरंग को उछालता भक्ति कुसुमांजलि बिखेरता, अणु-अणु को अपने भाल पर चढ़ाता, नतमस्तक होता, एक विचित्र हार्द्य भाव को प्राप्त होता है।

अपने स्वदेश की इस अखंडोपासना में राष्ट्रभाषा के सर्वांगीण व्यापी शीतल स्पर्श का सुखद अनुभव उसे मंद समीरण के झूले पर चढ़ा देता है। वह देखता है, एक समय गंगा-यमुना की पवित्र भूमि में उत्पन्न मध्यदेश और ब्रह्मदेश की देववाणी 'संस्कृत' ने किस तरह विंध्य की दुर्गम घाटियों को पार कर समस्त दक्षिण, पश्चिम और पूर्व भारत के हृदय को एक सूत्र में गूँथ दिया था। शंकर, रामानुज, माधव, वल्लभ ऐसे धर्माचार्यों ने अपने मातृभाषा को वहीं छोड़ किस अनुराग से संस्कृत के बलपर सारे भारत में अपने विचारों का प्रसार किया। हृदय को मथने वाली भावराशि को न रोक सकने वाले कवि-बाल्मीकि, व्यास, कालिदास, भारत की विभूति भवभूति, भास्कर के समान भास, स्वर्गीय संगीत के रचयिता जयदेव, आदि शतशः साहित्याराधना करने वाले न जाने भारत के किस कोने में पैदा हुए थे। आज उनकी आत्मा उनके काव्यों में मुखरित होती 'अखंड भारत' की मंत्र साधना की प्रतिष्ठा कर रही है। कौन प्रांत कहे कि वे उसी के गोद के लाल थे। नहीं, वे तो संपूर्ण भारत के अपने हैं!

फिर वह देखता है कि युगावतार महात्मा बुद्ध आते हैं और संपूर्ण भारत को एक सूत्र में बाँधने वाली उसी मध्य देश की भाषा 'पाली' का पाठ पढ़ाते हैं और देश के कोने-कोने से पाली के असंख्य प्रेमी पैदा हो जाते हैं।

फिर वह देखता है कि विजयी यवन आते हैं और अपनी मातृभाषा को वहीं रेगिस्तान में छोड़कर संस्कृत-पाली-प्राकृत की पुत्री एक भारतीय भाषा को अपनाते हैं। उस पराभव के दिनों में भी अपने जातीय-जागरण का 'अलख' जगाने वाले संत कवियों ने भी अयोध्या और वृन्दावन की बोली में अपने हृदय के तार को छेड़ा और फलतः सारे भारत के हृदय की एकता का राग अलापते हुए कबीर, नानक, सूर, तुलसी, मीरा आदि शतशः महान आत्माएँ अवतरित हो गई। बंगाल, महाराष्ट्र, उड़ीसा, आसाम और दक्षिण का स्वर—सहयोग तथा मुसलमानों की रागिनी भी उस रस-वर्षा में अछूती नहीं रही।

फिर वह सगर्व देखता है कि आधुनिक परतंत्रता के युगारम्भ में ही गुजराती भाषा-भाषी स्वामी दयानन्द ने अपनी मातृभाषा को एक ओर रखकर अखंड भारत की उपासना में उसी मध्यदेशीय हिन्दी भाषा को अपनाया, काशी के भारतेंदु हरिश्चन्द ने उसी भाषा में 'भारतदुर्दशा की विकल रागिनी सुनाई, उसी महान सकल्प से प्रेरित होकर बुंदेलखंडी मैथिली शरण गुप्त ने 'भारत भारती' में अपनी लेखिनी को अद्भुत ढंग से जगाया—

> "री लेखिनी हृत्पत्र पर लिखनी तुझे है यह कथा।
> दृक्कालिमा में डूबकर तैयार होकर सर्वथा।
> स्वच्छंदता से कर तुझे करने पड़े प्रस्ताव जो।
> जग जायँ तेरी नोक से सोए हुए हों भाव जो॥"

फिर वह देखता है कि बड़ौदा के महाराज स्व० सर सयाजीराव 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के सभापति बनते हैं, गुर्जर-गौरव महात्मा गांधी उसी भाषा का सारे दक्षिण में प्रचार करने का कार्य प्रारम्भ कर देते हैं, वही भाषा आज आसाम उत्कल, बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात, सिंध— सभी प्रान्तों में राष्ट्रभाषा का महिमामय पद पाती है और सारा देश उसी के स्वर में अपने

विचार व्यक्त करने को व्यग्र हो उठता है तब उसके अनुराग की सीमा नहीं रह जाती है।

भारत हमारा अखंड है। हम अखंड भारत के उपासक हैं। न हम भारत के उन्नत भाल हिमालय के अंग-भंग देख सकते हैं न उसकी पुण्य सलिला गंगा-यमुना, कृष्णा-कावेरी का ही विनाश सह सकते हैं और न परंपरा-प्राप्त उसकी राष्ट्रभाषा का ही विच्छेद उसे सह्य होगा। जिस भाषा-स्रोत को विद्यापति, सूर, तुलसी, कबीर, जायसी, रहीम, रसखान, भूषण, मीरा आदि की जीवंत, ऊर्ज्वास्वित एवं रस-सिक्त वाणियों ने अपने अनंत रसस्राव से सींचा हैं, जिसके अक्षय कोश में प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, मैथिली शरण आदि सहस्रशः लेखक और कवि अपने भाव-रत्नों का समावेश करते आ रहे हैं, जिस भाषा की अमिट छाप सारे भारतीय हृदय पर शताब्दियों से पड़ती आ रही है, जिसकी आत्मा सारे भारतीय साहित्य की आत्मा से एक सूत्रता रखती आयी है, उस राष्ट्रभाषा हिंदी का अंग भंग, उसकी चीर-फाड़ उसके प्राणों में हलाहल का मिश्रण होता देख कोई भी सजीव भारतीय चुप नहीं रह सकता है—उसकी अखंडता के लिये वह प्राणों की बाजी लगा देगा।

हिंदी केवल अपनी सरलता, मधुरता, ओजस्विता, आदि से ही भारत को मोहित नहीं करती है, प्रत्युत उसका विशाल प्राचीन साहित्य भी अपने गौरव की ओर हमें संकेत देता है। हम उसके साहित्य पर भी अनुराग करते हैं। हम जब उसके कबीर, तुलसी, सूर, जायसी आदि के काव्यों में अवगाहन करते हैं, हम जब प्रेमचंद, प्रसाद और मैथिलीशरण की कृतियों का अवलोकन करते हैं, तब हमें अपनी मातृभाषा का गौरव स्मृत हो आता है, हम उसके रस में आकंठ डूबकर भावमग्न हो जाते हैं, उनमें हमें अपने ही प्रवाह, अपनी ही संस्कृति, अपनी अमूल्य निधियों के उज्ज्वल दर्शन होते हैं। हृदय के इस राग का संबल 'हिंदुस्तानी' कहां से जुटा सकेगी?

भारत की अखंडोपासना का यह अत्यंत नाजुक समय उपस्थित हो गया है। देश की सर्वांगीण उन्नति में राष्ट्रभाषा का पद वही प्राप्त कर सकती है जिसमें उच्च शिक्षण, विज्ञान की परिभाषा, व्यापार की व्यापकता, एक सामान्य भारतीय साहित्य के माध्यम होने की क्षमता मौजूद हो। जिसमें समस्त भारतीय भाषाओं की शब्दावली से अधिकांशतः एकता का बीज वर्तमान हो,

जो अपने प्रकृत स्वरूप में परदेशी पन की गंध से दूर हो और जो एक अखंड आंतरिक तथा बाहरी व्यापक सम-सूत्रता अपनी परपरा में रखती आयी हो, जो सुनने, समझने और बोलने-लिखने में सिर्फ सरल ही न हो, हमारी रागात्मक प्रियता भी प्राप्त करती हो—हमसे अपने पन का नाता भी जोड़ती हो—वही भारत की अखंडोपासना में राष्ट्रभाषा का पद पा सकती है और वह गुण हिंदी को छोड़कर 'हिंदुस्तानी' किस बूते प्राप्त कर सकेगी ?

हमारी मान्यता है कि भाषा गढ़ी नहीं जा सकती है, उसमें सहज विकास हो सकता है। कोई भी महान से महान व्यक्ति, या कोई भी शक्तिशाली संस्था कोई नई भाषा गढ़ नहीं सकती है। भाषा का संस्कार संभव है, पर एक दम नये सिरे से उसका सृजन असंभव है राजनीतिक दाँव पेंचों से भाषा कभी बनाई नहीं जा सकती, है, वह बिगाड़ी अवश्य जा सकती है। आपका यह सम्मेलन अधिवेशन अपनी भाषा को उसी बलात विकृति से बचाने का महान आयोजन है। राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रेमियों के लिये यह ज़बरदस्त ललकार है—क्या वे अपनी राष्ट्रभाषा का स्वरूप बिगड़ने देंगे ? इसी प्रश्न के उत्तर में इस सम्मेलन की सफलता और महत्त्व का पर्यवसान है। हमारा तो विश्वास है कि हिन्दी में इतना ओज, इतना प्राण, और इतनी शक्ति है कि कोई भी प्रहार उसे आहत नहीं कर सकेगा प्रतिध्वनि इसका उत्तर ले आवे।

तूफ़ान के शांत हो जाने पर भी उसकी यादगारी के कुछ चिन्ह शेष रह गये हैं। इस तूफान के कारण महाराष्ट्र के साहित्यिक तथा कुछ राजनीतिक संस्थाएँ, (जो आज तक हिन्दी के आंदोलन की तरफ़ उदासीन थीं और यह मानती आ रही थीं कि राष्ट्रभाषा प्रचार तो काँग्रेस का ही काम है, इस हिन्दी के प्रश्न में ख़ूब दिलचस्पी लेने लगी हैं। दूसरा चिन्ह हिन्दुस्तानी के पक्षपातियों की वह पुकार है, जो साहित्य सम्मेलन में भी स्थान पाना चाहते हैं। पर इन दोनों बातों से हिन्दी साहित्य सम्मेलन को लाभ ही पहुँचा है। यह तो सभी संस्थाओं का अनुभव है कि कल के दोस्त आज उदासीन या दुश्मन बन जाते हैं और आज के शत्रु और उदासीन कल के सब से अधिक शुभचिंतक और हितैषी। इस प्राकृतिक प्रक्रिया में उस संस्था का बीज रूप से विकास ही रहता है।

हिन्दी प्रान्तों में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन होता है, तब

हिन्दी भाषा के गुण अवगुण, साहित्य के विविध अंगों की सूक्ष्म समीक्षा आदि बातों का बाज़ार गर्म रहता है। पर जब अहिंदी प्रान्तों में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हो, तब तो अधिवेशन को अखिल भारतीय महान् उद्देश को सामने रखकर अहिन्दी भाषा भाषियों के विचारों से अधिक और प्रत्यक्ष रूप से परिचित होना, राष्ट्रीय भावों को वहन करने की हिन्दी भाषा की शक्ति की परीक्षा करना, इसी शक्ति को आवश्यक प्रोत्साहन देने के उपायों का सोचना आदि बातें ही प्रधानतया सामने रहेंगी। इसी दृष्टि से मैं आपके सामने कुछ विचार रखता हूँ।

राष्ट्रभाषा के नाते जब हम हिन्दी के साहित्य को देखते हैं, तो हमें एक कमी बहुत खटकती है। हिन्दी मातृभाषा विचारक, अध्ययनशील पंडित, और राजनीतिक नेतागणों के समय समय पर और भिन्न भिन्न विषयों पर जो भाषण होते हैं, हिन्दी समाचार पत्रों में उसकी यथातथ्य रिपोर्ट नहीं छपती, न ऐसी कोई पुस्तक प्रकाशित हुई है। लिखित भाषण पढ़े जाने से शब्द रचना का कौशल निबंध रूप में पाया जाता है। उसमें भाषा की सहज सजीवता, भिन्न भिन्न उपमा अलंकार, समय की सूझ और खासकर स्वाभाविक शब्द रचना आदि नहीं मिलते। समाचार पत्र ऐसे महत्त्वपूर्ण व्याख्यानों को शीघ्र लेखकों से लिखवाकर छापा करें, तो अहिन्दी प्रांतवालों को उसी प्रकार के विचार प्रकट करने के लिये अनुकरण का एक साधन मिल जायगा। और इससे भी बढ़कर राष्ट्र भाषा के स्वरूप का निर्णय करने में एक शक्तिशाली आधार मिल जायगा। गरमागरम बहस के समय बड़े बड़े नेताओं के भाषण जैसे के तैसे छप जायँ, तो उसमें भाषा की कृत्रिमता न रहेगी, और किन किन पराई भाषाओं के शब्दों के प्रति शब्द हिन्दी में गढ़ने की जरूरत है, उसका भी प्रत्यक्षीकरण हो जायगा। महाराष्ट्र के और दूसरे अहिन्दी प्रान्तों के भी गण्यमान्य नेताओं के हाथ में ऐसे भाषणों की पुस्तक रख दी जाय तो बहुत ही जल्द वे हिन्दी बोलने लग जायगे। मैं विश्वास करता हूँ कि सम्मेलन इस बारे में अवश्य ध्यान देगा।

राष्ट्र भाषा हिन्दी के नाते हिन्दी का प्रचार शीघ्रातिशीघ्र और अधिक से अधिक होने की दृष्टि से हिन्दी में ऐसे नाटकों की आवश्यकता मालूम होती है जो आधुनिक नाट्यकला के अनुसार रंगमंच के योग्य लिखें गये हों

और जिनमें आधुनिक राजनीतिक समस्याओं का विचार अप्रत्यक्ष रूप से किया गया हो। हमें हिन्दी के ऐसे बहुतेरे नाटक अच्छे साहित्यिक आदर्श रूप में मिल जाते हैं, लेकिन उनमें अभिनययोग्य और एक ही प्रधान तत्त्व को लेकर भिन्न भिन्न चरित्रों का चित्रण हमें नहीं मिलता है ? उनमें व्याख्यान की तरह ही अनुकरण करने की भाषा मिलती है।

अब मैं उस प्रश्न को उपस्थित करता हूँ जिसके कारण हिन्दुस्तान के हर एक प्रान्त में आज एक अशांति पैदा हो गयी है। अशांतिका मूल कारण चाहे एक हो, परन्तु उसका अलग अलग कारण बताने का बीड़ा ही उठाया गया है। कोई उसे हिन्दी उर्दू का झगड़ा बताता है। कोई उसे हिंदू मुसलमान समझौते का, तो कोई केवल प्रान्तीय अभिमान का, कोई राजनीतिक दुर्बलता का, तो कोई राजनीतिक दलबंदी का, या आपस के द्वेष का चिन्ह कहते हैं। इन भिन्न भिन्न मतों का निचोड़ एक ही नाम में आ जाता है—"हिंदी हिन्दुस्तानीका झगड़ा"। हिन्दुस्तानी के विरुद्ध चिल्लाने वाले कहते हैं कि यहाँ हिन्दुस्तानी के नामपर उर्दू का प्रचार हो रहा है। हिन्दुस्तानी पक्षवाले कहते हैं हम तो ऐसी भाषा का निर्माण करने जा रहे हैं जो आमफ़हम हो और जिसमें किसी भाषा के शब्दों का बहिष्कार न हो। हिन्दी और हिन्दुस्तानी में कोई फ़र्क नहीं है; यह तो केवल नाम का झगड़ा है। ऊपर से तो हिन्दुस्तानी-हिन्दी का झगड़ा सचमुच केवल नाम का मालूम होता है, पर इस नाम के झगड़े में भी कुछ सार अवश्य है।

हिन्दुस्थान के बहुसंख्यक लोग हिन्दी समझते हैं, इसी कारण हिन्दी को राष्ट्रभाषा पदपर आरूढ़ कर दिया गया है। १९१८ से जब कि हिन्दी के प्रचारक, अहिन्दी प्रान्तों में हिन्दी की प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले, भारतवर्ष का महान गौरव महात्मा गांधीजी की प्रेरणा से मद्रास में हिन्दी प्रचार का कार्य शुरू हुआ और १९३६ में जब वहाँ साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हुआ, तबतक हिन्दी नाम के लिये न किसी ने शिकायत की, न खुद स्वयं गांधीजी ने भी किसी और नाम का आग्रह दिखाया। आज चार साल के भीतर इस चार अक्षर वाले हिन्दुस्तानी शब्द ने एक तहलका मचा दिया है। प्रश्न यह है कि क्या अठारह साल तक दक्षिण भारत में जो प्रचारकार्य हुआ वह भी पूज्य गांधीजी की अध्यक्षता में—क्या वह 'राष्ट्रभाषा प्रचार' नहीं था ? क्या उसका नाम हिन्दी होने के कारण

उसके साथ और किसी 'भी' को न रखने से क्या उसकी राष्ट्रीयता नष्ट हो गयी ? नहीं, बिलकुल नहीं। गत चार सालों में हिन्दी की वर्तमान शक्तिको देख कर कुछ लोगों के पेट में चूहे कूदने लगे कि कहीं हिन्दीके कारण हिंन्दुत्व का जोर न बहुत बढ़ जाय । और इसीसे हिन्दुस्थान में बसनेवाले कुछ लोगों ने नाम की शिकायत की । यह केवल नाम का झगड़ा नहीं है । इसकी तह में भाषा का स्वरूप, धर्माभिमान, तथा अन्य बातें भरी हैं । अगर यह भी मान लिया जाय कि यह तो केवल नाम का ही झगड़ा है तो भी आमफ़हम अर्थ में नाम के झगड़े का निर्णय प्रकृति ने ही कर रखा है । उत्तर भारत में दो पवित्र नदियाँ एक ही स्थान से निःसृत होकर सबको पवित्र करती चली जा रही हैं । गोकुल में पूर्णावतार श्रीकृष्णचन्द्र ने कालिन्दी के कूल पर कदंब की छाया में कितनी ही क्रीड़ायें की हैं । इस पुनीत स्मरण को लेकर यमुना इठलाती हुई जब प्रयागराज में आकर धवल जलवाहिनी गंगाजी के साथ टकराती है, तब नामका झगड़ा उठ खड़ा हुआ । किन्तु आर्योंकी पवित्रता की परंपराका प्रकट चिन्ह श्री गंगाजीका ही नाम संगम के बाद भी चलता रहा है और काशी क्षेत्र की गंगा में जमुना के रंग को देखकर भी जमुना का नाम लोगों के मुख में नहीं आता । जब कोई पंचत्व प्राप्त करता है, तब प्रयाग का शुद्ध गंगाजल ही उसके मुख में दिया जाता है । ठीक इसी तरह यह प्राकृतिक निर्णय हमारे नाम के झगड़े में भी संकेत करता है । हिन्दी की विशुद्ध गंगा जो संस्कृत की हिमालय से निकली है, परतंत्रता के मृत्युपाश से मुक्त करने के लिये हमें जलप्रदान करने चली और जिसकी प्रारंभिक अवस्था में मुसलमानों ने भी जिसके चरणों पर अपने कोमल भावों की सुमनांजली चढ़ाई है और जो आज अपने प्रबल प्रवाह में धावित हो रही है और उस मूल धारा में शुद्ध उर्दू का संगम हुआ है, तो आमफहम नाम तो उसका हिन्दी ही रहेगा । यह प्राकृतिक निर्णय ध्यान में रखकर नाम के झगड़े को तो अब दफना ही देना चाहिये ।

और जैसा कि मैंने कहा है यह केवल नाम का झगड़ा भी तो नहीं है। इसकी तह में कुछ और विचार हैं ।

मेरी मान्यता है कि आज भारतवर्ष में दो प्रबल विचार धाराएँ काम कर रही हैं । एक तो वह सिद्धांत कि हिन्दू और मुसलमान दोनों शक्तियाँ जबतक इकट्ठी नहीं होतीं, तबतक हिन्दुस्थान स्वतंत्र नहीं हो सकता । और जब कि

हम हिन्दुस्थान की स्वतंत्रता के लिए छटपटा रहे हैं तो हर एक का कर्तव्य हो जाता है कि दूसरी कौम के लिये अधिक से अधिक त्याग करे। एक दूसरे के त्याग से ऐसी एका हो जायगी कि दुनिया भर की प्रचंड राक्षसी शक्ति भी इसके सामने ठहर न सकेगी। दूसरी विचारधारा इस सिद्धांत पर कायम है कि यह देश हिंदुओं का है। सारी दुनिया में यही देश है जिसको हिंदू अपना कह सकते हैं। इस पवित्र पुण्य भूमि में हिन्दुओं के सारे इतिहास का सृजन हुआ है, इसी कर्मभूमि में उनके रामकृष्णादि खेल चुके हैं और इसी मातृभूमि के सम्मान को सुरक्षित रखने के लिये हिन्दुस्थान को स्वतंत्र करने के लिये वे व्यग्र हो रहे हैं। हिन्दूराष्ट्र की एकता के लिये, चाहे जो त्याग करना पड़े वे इसके लिये कटिबद्ध हैं। किन्तु वे अपनेपन को, हिन्दूपन को, अपनी परंपरा को नहीं छोड़ना चाहते। इन दो विचार धाराओं का संघर्ष इस हिंदुस्तानी के झगड़े की जड़ में है। इन सिद्धान्तों को सामने रखकर ही इन बेढंगी विवाद की गहराई को स्पष्ट देख सकते हैं। दोनों पक्ष के विचारक पवित्र आत्मायें हैं, और इसी से इस विवाद को इतना महत्व प्राप्त हो गया। मैं तो मानता हूँ कि वह समय नजदीक आ रहा है जब कि मुसलमान हिंदुस्तानी शब्द का विरोध शुरू करेंगे और हिंदी को ही ठीक समझेंगे। क्योंकि हिन्दुस्थानी शब्द में इस स्थान पर का हिन्दुओं का अधिकार मान लेना पड़ता है। ऐसा अगर है तो हमारा दिया हुआ हिन्दी नाम ही ठीक है। मतलब इस झगड़े का निर्णय जैसा कि मैंने पहले बताया है, गंगा-यमुना के संगम के दृष्टांत में भी मिलता है! अपने बल पर, स्वतंत्र रूप से, अपने राष्ट्र के लिये एक भाषा को राष्ट्रभाषा के नाते जो चुनी गयी है वह है हिन्दी। इसके स्वरूप के बारे में भी एक विचार प्रमुख रहता है कि पहले तो हिन्दी और उर्दू दोनों एक ही थीं और आज भी सिंपल उर्दू, हिन्दुस्तानी, राष्ट्रभाषा सब कुछ एक ही है। सज्जनो, अगर यह बात सच होती तो शायद ही इसमें कोई झगड़ा पैदा होता।

कहावत सुप्रसिद्ध है "वर्तमानेन वर्तन्ते नराः पंडित बुद्धयः" आज जिस प्रकार का मनोमालिन्य, जिस प्रकार की संकीर्णता हिन्दू मुसलमानों में है, उसे ध्यान में रखते हुए यह बात माननी पड़ेगी कि वह सिंपल उर्दू या सरल हिन्दी या सहज हिन्दुस्तानी, सबकी बोली, चाहे कुछ भी कहे, अपने अपने विचारों

को और मनोभावों को भी प्रकट करेगी। और भावों की पवित्रता भाषा को भी पवित्र रक्खेगी। भावों में यदि गड़बड़ी है, अनिश्चितता है, तो भाषा भी उसी प्रकार गड़बड़ और अनिश्चित रहेगी। इस प्रकार इन दो विचार धाराओं के अनुयायिओं को चाहिये कि एक दूसरे से सहयोग करते हुये भी राष्ट्रभाषा पद पर हिन्दी को कायम रक्खें।

अहिन्दी प्रान्तों की दृष्टि से राष्ट्रभाषा के बारे में प्रमुखतया जो विचार सामने आते हैं, मैंने उन्हें आपके सामने रखे हैं। मेरा काम तो आपके विचारार्थ एक दृष्टिकोण उपस्थित कर देना मात्र है! ऐसे गंभीर प्रश्नों के विचारार्थ आप सब यहाँ उपस्थित हुये हैं। अतः मैं अनुराग भरे हृदय से आपका बराबार स्वागत करता हूँ।

महाराष्ट्र और हिन्दी की एकता की परंपरा का कुछ उल्लेख मैं पहले कर आया हूँ। यहाँ एक महत्वपूर्ण बातकी चर्चा आवश्यक प्रतीत होती है। अंतरात्मा को झंकृत करके उसे दिव्य लोक की ओर उन्मुख कर देने वाली अपनी संगीताराधना की ओर जब हम गौर से देखते हैं, तब एक और आश्चर्य हमें अपने में निमग्न कर देता है। संगीत-शिक्षण की प्रणाली में अधिकांश साहित्य, पद और स्वर-शब्दावली हिन्दी की पुण्य भूमि की स्वर-साधना से आई हुई दृष्टिगोचर होती है।

'पिया मिलन की आस'—इस पल्लवी पर महाराष्ट्र के संगीत प्रेमी न जाने किस भाव में विभोरे हो जाया करते हैं। यही नहीं आज से क़रीब ६०—७० साल पहले महाराष्ट्र में एक नाटक मंडली थी जो आंध्र देश में जाकर हिन्दी भाषा में नाटक खेला करती थी।

फिर जब हम अपने सर सयाजीराव, लोकमान्य तिलक, स्वांतंत्र्यवीर सावरकर, माधवराव सप्रे, बाबूराव पराड़कर, काका कालेलकर, प्रभाकर माचवे—आदि शतशः महाराष्ट्रियों के हिन्दी प्रेम की याद करते हैं, तब भारतीय एकता की इस महान योजना में अपनी परंपरा भुक्त निष्ठा पर हमें गर्वोल्लास हो आता है—हम तो बहुत पहले से 'महाराष्ट्र' के महत्व की सार्थकता सिद्ध करते आ रहे हैं!

परन्तु आज की अपनी इस स्वागत—संस्थिति को देख कर हमें याद आ जाता है कि एक हमारा वह स्वर्णिम युग भी था जब हमने राष्ट्रभाषा हिन्दी के कवियों को हाथी पर चढ़ाकर, लाख-लाख रुपये का दान देकर

उनकी राष्ट्रोद्दीपनी कविता का जहाँ मान किया था और इस प्रकार अपनी गुणग्राहकता का वैभव बहुल परिचय दिया था (महाकवि भूषण की जीवनी इस बात की साक्षी दे रही है) वहाँ, आज हम आप के सेवा सत्कार में इतने असमर्थ हो गए हैं कि माँग पेश करने पर भी हम कवियों का मार्ग व्यय न दे सके और न उनकी सामान्य सुविधाओं का ही उत्तम प्रबन्ध कर सके—तब हमें एक तीव्र ग्लानि सी हो आती है !

किंतु जब हमें याद आता है कि हमारी यह स्थिति किस तरह अचानक बदल गई, हम सचमुच ही कैसे भीषण-संग्राम के युग में पहुँचा दिये गए, और तब युद्धकाल की हमारी प्राचीन परंपरा (घोड़ों की पीठ पर चढ़े, थैली में से हरे चने, ज्वार-बाजरे के दाने चबाते और भालों की नोक में मक्के के भुट्टे भोंककर हम खाया करते थे और विजयोल्लास में आगे ही बढ़े चले जाते थे) हमें याद आती है, तब हमें कुछ संतोष हो आता है। सचमुच हम इस समय युद्ध की भीषण गंभीरता में आ पड़े हैं जिसकी उत्तेजना ही तो आप सब महानुभावों को इतनी दूर से, इतने परिश्रम से और इतनी कष्ट-सहिष्णुता के साथ खींच लाई है। फिर मैं यह आशा करके निश्चिन्त क्यों न बन जाऊँ कि समस्या के महत्त्व के सामने आप स्वागत की त्रुटियों पर विशेष ध्यान नहीं देंगे।

हमें आपको यह सूचित करते हर्ष होता है कि महाराष्ट्र के कोने कोने से हिन्दी-प्रेम की एक अद्‌भुत लहर उठती चली आ रही है। हम केवल 'राष्ट्रभाषा कोविद, होकर ही संतुष्ट होना नहीं चाहते। हम तो सम्मेलन की उत्तमा की सीढ़ी तक पहुँचकर दम लेना चाहते हैं। यही नहीं हमारा तो संकल्प है कि आपके कबीर, सूर, तुलसी, जायसी, प्रेमचन्द, प्रसाद, मैथिलीशरण आदि को हम आत्मसात कर लें और अपने ज्ञानेश्वर, गोरोपंत, वामनपंडित, मुकतेश्वर, सावरकर, कविगोविंद, केलकर, ना० सी० फड़के, खांडेकर, वरेरकर आदि को राष्ट्रभाषा में प्रतिष्ठित करके प्रतिबिंबित कर दें, और फिर एक अदंड समिलित शक्ति के आह्वान से हमारा महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा हिन्दी में ऐसे मौलिक साहित्य का सृजन करे जो सचमुच महाराष्ट्र के महत्व को विश्वव्यापी बनाकर राष्ट्रभाषा का मस्तक संस्कृत और अंग्रेज़ी के सामने उन्नत बना दे। विश्वात्मा हमें आशीर्वाद दे।

आप को एक बात सूचित करते हमें अत्यंत आल्हाद होता है कि महाराष्ट्र में हिन्दी का प्रेम देवियों के दिल में जैसा जाग्रत हुआ है, वह सचमुच उज्ज्वल भविष्य की स्वर्णिम प्रभा की शुभ सूचना है। महाराष्ट्र के किसी भी हिन्दी-केन्द्र में आप चले जाइए वहाँ आपको देवियों की संख्या देखकर आश्चर्यमिश्रित आनन्द हुए बिना नही रहेगा। जहाँ की माताओं ने इस अप्रतिम अनुराग से राष्ट्रभाषा को अपनाया हैं, फिर उसके सौभाग्य पर किसे ईर्ष्या न हो आएगी ! सुनता हूँ पंजाब में भी देवियों की भाषा हिन्दी ही है। दूर दक्षिण में भी हिन्दी के प्रति देवियों का अनुराग उत्तरोत्तर बढ़ता ही सुना जाता है। फिर अनति दूर में राष्ट्रभाषा हिन्दी की जो प्राणप्रतिष्ठा होगी, उसकी कल्पना से हम थोड़ी देर झूम क्यों न जाएँ !

सम्मेलन दीर्घजीवी हो। वह भारत की एक ऐसी महान सस्था बने जो भारतीय वाङ्मय के विविध अंगों के विकास में ऐसी सार्वभौम नीति का अवलम्बन करे जिससे सारा भारतीय साहित्य एक स्वर में बोलकर अपने स्वतंत्र अस्तित्व, व्यक्तित्व, वैचित्र्य और वैशिष्ट्य से सिर्फ भारत के आकाश को ही नहीं, सारे दिङ्मंडल को भी गुँजा दे। और उस उन्नत स्वर का माध्यम बने भारत के भाल की बिन्दी—हिन्दी !

'पुरुषोत्तम' की कृपा और उसका बरदहस्त अगर सम्मेलन को अविचल रूप से प्राप्त होता रहा, तो हमारी कामना अवश्य ही कल्पवृक्ष के नीचे पहुँच जायगी !

मुझे दुख होता है कि हिन्दी के कट्टर पक्षपाती और राष्ट्रीयता के उपासक हमारे माननीय मनोनीति सभापति श्रीमान् संपूर्णानन्दजी यहाँ पर प्रत्यक्ष रूप से शुभासीन नहीं हो सके। परातंत्र्य की शक्तियों ने उनको जेल में ठूँस दिया है। उनकी अनुपस्थिति हमारे लिये एक ऐसी कमी है जिसकी पूर्ति असंभव है। मैं अपनी ओर से और आप सब की ओर से श्रीमान् संपूर्णानन्दजी पर श्रद्धांजलि चढ़ाता हूँ और जेल से भी इस महान् दायित्व के कार्य्य को संचालित करते रहने की प्रार्थना उन तक पहुँचाता हूँ ! मुझे विश्वास है कि वायुदेव इन विचार लहरियों को उनके पास जल्द से जल्द पहुँचा देंगे। मैं फिर एक बार आप सज्जनों का हृदय से स्वागत कर अकृत्रिम प्रार्थना करता हूँ कि स्वागत समिति की ओर से जो त्रुटियाँ हों, उन्हें आप उदार हृदय से क्षमा करें।

मंगलाप्रसाद पारितोषिक

इतिहास-विषय की पुस्तकों के निर्णायकों की सम्मतियां

(१)

आपकी भेजी हुई सूची के अनुसार इस पारितोषिक के निर्णय के लिये १२ पुस्तकें मिलीं। मैंने सभी पुस्तकों को ध्यानपूर्वक पढ़ा और नियमों के अनुसार प्रतियोगिता की दृष्टि से विचार किया। मेरी सम्मति में नीचे लिखी पुस्तकों ने क्रम से प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया है:—

प्रथम—भारत की चित्रकला
द्वतीय—गुप्त साम्राज्य का इतिहास
तृतीय—वृहत्तर भारत

भारत की चित्रकला—लेखक का अपने विषय पर साक्षात् अधिकार है। सामग्री का संकलन पद-पद पर स्वानुभव और स्वयंकृत विश्लेषणात्मक अध्ययन का परिणाम है। विषय के यच्च यावत् क्षेत्र पर लेखक की अभिज्ञता प्रगट है। प्रतिपादन में तुलनात्मक दृष्टि कोण की प्रधानता है। शैली संक्षिप्त, सारयुक्त एवं अर्थ बहुल है। भाषा में पारिभाषिक शब्दों का भरभूर समावेश है जो नितान्त मौलिक अध्ययन और खोज का फल है। विषय पर अधिकार, प्रतिपादन क्षमता, और भाषा शैली तीनों दृष्टियों से ग्रन्थ प्रथम स्थानीय है।

गुप्त साम्राज्य का इतिहास—लेखक को अपने विषय का अच्छा परिचय है, परन्तु जो गहरी पैठ प्रथम लेखक को है सो नहीं। ग्रन्थ विशेषतः वर्णनात्मक है, यद्यपि तुलनात्मक दृष्टि का भी उपयोग पाया जाता है। ग्रन्थकार कृत भूरि परिश्रम है, और सामग्री का संचय भी सावधानी से किया गया है। परन्तु जो अधिकार पूर्वक विवेचन प्रथम ग्रन्थ में है, वह उसी मात्रा में यहां अपेक्षित है। भाषा शैली सुन्दर है, परन्तु जो ओज और परिपाक प्रथम ग्रन्थ में हैं वह अपेक्षाकृत कम है। तो भी भाषा और विषय में साम्य है।

बृहत्तर भारत—लेखक ने हिन्दी साहित्य में एक नये विषय का सूत्रपात किया है। पर यह विषय बहुत विस्तृत है। उन सब पर लेखक का अधिकार नहीं है। सामग्री के संचय में ऐतिहासिक दृष्टि कोण की अपेक्षा यदृच्छा अधिक लक्षित है। इस विषय से सम्बन्ध रखनेवाली सामग्री के साथ लेखक का साक्षात् परिचय नहीं है। तभी ईरानी सम्राट् कुरुश, कम्बुजिआदि के नाम उनके अंग्रेजी रूप में लिखे गये हैं। ग्रन्थ परिचय अध्ययन का परिणाम प्रगट न होकर समाचार पत्रों से चलतू संकलन जैसा जान पड़ता है। भाषा शैली शब्द बहुल पर अर्थवत्ता में न्यून है।

फाल्गुन कृष्ण १४,
संवत् १९९६

वासुदेवशरण अग्रवाल

(२)

आपकी भेजी हुई सूची के अनुसार इस पारितोषिक के निर्णय के लिये १२ पुस्तकें मिलीं। मैंने सभी पुस्तकों को ध्यानपूर्वक पढ़ा और नियमों के अनुसार प्रतियोगिता की दृष्टि से विचार किया। मेरी सम्मति में नीचे लिखी पुस्तकों ने क्रम से प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया है:—

प्रथम—भारत की चित्रकला

द्वितीय—{ मालवा में युगान्तर
बृहत्तर भारत } दोनों का समान स्थान है।

तृतीय—गुप्त साम्राज्य का इतिहास

मेरे निर्णय की पुष्टि में निम्नलिखित कारण हैं।

इस वर्ष मंगलाप्रसाद पारितोषिक के लिये जो भी पुस्तकें प्राप्त हुई हैं, प्रायः सभी उच्च कोटि की हैं। उनमें यह निर्णय कर सकना वस्तुतः कठिन है, कि कौन सी पुस्तक सर्वोत्कृष्ट है। विशेषतया किस कसौटी से सर्वोत्तमत्ता को निश्चय किया जाय,' यह निर्धारित करना बहुत ही कठिन है। मेरी तुच्छ सम्मति में केवल मौलिकता को हम अपने निर्णय का आधार नहीं बना सकते। यद्यपि मौलिक खोज बहुत महत्व की बात है, पर केवल मौलिकता के आधार पर इस विषय का अन्तिम निर्णय करना मुझे समुचित प्रतीत नहीं होता। मैंने मौलिक खोज, विषय की प्रतिपादन शैली, भाषा का सौष्टव और

विषय का महत्त्व व हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि इन चार आधारों पर अपना निर्णय देने का प्रयत्न किया है। केवल मौलिक खोज को महत्त्व देने से हमारे विद्वानों में यह प्रवृत्ति होगी, कि किसी अज्ञात विषय को लेकर (चाहे हिन्दी साहित्य की दृष्टि से उसका महत्त्व कितना ही कम क्यों न हो) उस पर मौलिक निबन्ध लिखें। इस प्रकार के निबन्ध प्रायः डाक्टर परीक्षाओं के लिये लिखे जाते हैं। उनका महत्त्व मैं स्वीकार करता हूँ। पर हिन्दी में अभी ऐसे ग्रन्थों की बहुत अधिक आवश्यकता है, जिनमें अन्य भाषाओं में विद्यमान ज्ञान भण्डार को हिन्दी में लिखकर हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि की जाय। इस प्रकार के ग्रन्थों की महत्ता को हम अपनी आँखों से ओझल नहीं कर सकते।

मौलिकता का क्या अभिप्राय है इस सम्बन्ध में भी मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ, कि नई ऐतिहासिक सामग्री की खोज और विद्यमान सामग्री का ऊहापोह पूर्वक प्रयोग ये दोनों बातें हमें अपनी दृष्टि में रखनी चाहियें।

इस प्रकार मेरी सम्मति में 'भारत की चित्रकला' का प्रथम स्थान है। इस पुस्तक में मौलिकता है, भाषा का सौष्ठव है और इसकी प्रतिपादन शैली बहुत ही सजीव तथा ऐतिहासिक शैली के अनुकूल है। यद्यपि पुस्तक में नवीन ऐतिहासिक सामग्री अधिक मात्रा में उपस्थित नहीं की गई है पर विद्यमान सामग्री का आलोचनात्मक दृष्टि ने उपयोग किया गया है। मैं इस पुस्तक को सर्वोत्तम स्थान देता हूँ।

'बृहत्तर भारत' और 'मालवा में युगान्तर' के बराबर अंक आये हैं। इन दोनों का द्वितीय स्थान है। तृतीय स्थान 'गुप्त साम्राज्य का इतिहास' ने प्राप्त किया है।

९-५-४०

—सत्यकेतु विद्यालङ्कार
डी० लिट्०

(३)

आपकी भेजी हुई सूची के अनुसार इस पारितोषिक के निर्णय के लिये १२ पुस्तकें मिलीं। मैंने सभी पुस्तकों को ध्यानपूर्वक पढ़ा और नियमों के अनुसार प्रतियोगिता की दृष्टि से विचार किया। मेरी सम्मति में नीचे लिखी

पुस्तकों ने क्रम से प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया है:—

प्रथम—गुप्त साम्राज्य का इतिहास (१)+(२)
द्वितीय—भारतीय चित्रकला
तृतीय—राजा भोज

नियमावली १ के अनुसार देखते हुए मुझे गुप्त साम्राज्य का इतिहास और भारत की चित्रकला इन दोनों ग्रंथों में मौलिकता कुछ प्राप्त हुई। बाकी ग्रंथ बहुतांश संकलित या अनुवादित ही हैं। 'राजा भोज' एक ऐसे विस्तृत चरित्र-रूप में प्रथम ही न केवल हिंदी संसार के सामने बल्कि अखिल संसार के सामने आता है इसलिये ग्रंथ का एक विशेष गौरव सा मालूम पड़ा।

सिद्धान्त दृष्टि से रूप में छोटा होकर भी 'भारत की चित्रकला' ग्रंथ मुझे सरस लगता है। नये सिद्धान्त धैर्य और प्रमाण से आगे रक्खे हैं और भाषा भी बहुत सुंदर है। कुछ नयी दृष्टि अभ्यासकों को प्राप्त होगी इस कला-इतिहास ग्रंथ से। इसलिये राय कृष्णदास प्रशंसापात्र हैं।

गुप्त साम्राज्य का इतिहास प्रभावमंडित और सर्वस्पर्शी हुआ है॥

मार्ग शुक्ला १३, १९९७ **दत्तोवामन पोद्दार**

[४]

आपकी भेजी हुई सूची के अनुसार इस पारितोषिक के निर्णय के लिये बारह पुस्तकें मिलीं। मैंने सभी पुस्तकों को ध्यानपूर्वक पढ़ा और नियमों के अनुसार प्रतियोगिता की दृष्टि से विचार किया। मेरी सम्मति में नीचे लिखी पुस्तकों ने क्रम से प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया है:—

प्रथम—गुप्त साम्राज्य का इतिहास-उपाध्याय कृत
द्वितीय—हर्षवर्धन—गौरीशङ्कर चटर्जी
तृतीय—मालवा में युगान्तर—डा० रघुवीर सिंह

रामप्रसाद त्रिपाठी
निर्णायक

(५)

आपकी भेजी हुई सूची के अनुसार इस पारितोषिक के निर्णय के लिये बारह पुस्तकें मिलीं। मैंने सभी पुस्तकों को ध्यानपूर्वक पढ़ा और नियमों के अनुसार प्रतियोगिता की दृष्टि से विचार किया। मेरी सम्मति में नीचे लिखी पुस्तकों ने क्रम से प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया है :—

प्रथम—गुप्त-साम्राज्य का इतिहास
द्वितीय—मालवा में युगान्तर
तृतीय—बृहत्तर भारत

गुप्त साम्राज्य का इतिहास—बहुत परिश्रम से लिखा गया है—भाषा 'लच्छेदार है सामग्री प्रामाणिक ग्रंथों से ली गयी है और लेखक ने अपनी सम्मति भी दी है कई एक स्थानों में जिससे स्वतंत्र विचार शक्ति का भास होता है।

मालवा में युगान्तर—अच्छी छान बीन की है, सप्रमाण परामर्श हैं, भाषा भी अच्छी है, विचार धारा में अनुकरण सा भासता है।

बृहत्तर भारत—कोई नवीन बात नहीं है तथापि सामग्री जो अन्यान्य, लेखकों ने छाप दी है पाठकों के सामने प्रस्तुत कर दी है—अपने ढंग से उसके पढ़ने से पाठकों को लाभ ही होगा।

अन्य पुस्तकों में कोई विशेष मौलिकता नहीं देखी। साधारण सी हैं। पारितोषक के योग्य नहीं।

हीरानन्द शास्त्री
निर्णायक

(६)

आपकी भेजी हुई सूची के अनुसार इस पारितोषिक के निर्णय के लिये १२ पुस्तकें मिलीं। मैंने सभी पुस्तकों को ध्यानपूर्वक पढ़ा और नियमों के अनुसार प्रतियोगिता की दृष्टि से विचार किया। मेरी सम्मति में नीचे लिखी पुस्तकों ने क्रम से प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया है:—

प्रथम—हर्षवर्धन।

द्वितीय—गुप्त साम्राज्य का इतिहास, भाग १, २

तृतीय—बौद्ध पूर्व भारत का इतिहास, भाग १, २.

मेरे निर्णय की पुष्टि में निम्नलिखित कारण है—

ऐतिहासिक अनुसंधान की दृष्टि से श्रीयुत् गौरीशङ्कर चटर्जी कृत हर्षवर्द्धन एक प्रशंसनीय ग्रन्थ है। इस महान् सम्राट् के जीवन तथा राज्य पर अभी तक हिन्दी में कोई विद्वतापूर्ण पुस्तक नहीं थी। ग्रन्थकर्त्ता ने समस्त ऐतिहासिक सामग्री को बहुत अच्छे ढङ्ग से इकट्ठा करके अपने विचार स्वतंत्र रूप से स्थिर तथा प्रगट किये हैं। उनकी भाषा व लेखनशैली भी अत्युत्तम है। प्रायः सभी उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर मैंने अन्य दो पुस्तकों को द्वितीय तथा तृतीय स्थान दिया है।

रमाशङ्कर त्रिपाठी

एम० ए० पी० एच० डी०

(७)

आपको भेजी हुई सूची के अनुसार इस पारितोषिक के निर्णय के लिये बारह पुस्तकें मिलीं। मैंने सभी पुस्तकों को ध्यानपूर्वक पढ़ा और नियमों के अनुसार प्रतियोगिता की दृष्टि से विचार किया। मेरी सम्मति में नीचे लिखी पुस्तकों ने क्रम से प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया है:—

प्रथम—भारत की चित्रकला।

द्वितीय—मालवा में युगान्तर।

तृतीय—चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य।

आप के भेजे पार्सल में से आपके लिखे अनुसार १२ पुस्तकें—दो पुस्तकों के दो दो भाग, कुल १४ अदद पोथियां—ठीक ठीक निकलीं। इनमें से अनेक मेरी पूर्व परिचित थीं। जो नई दिखाई दीं उन्हें भी पहले एकबार सरसरी नज़र से देख गया। उस ऊपर ऊपर के देखने से ही ये सब चार ढेरियों में बंट गईं।

सबसे पहली ढेरी में वे पुस्तकें आईं जो इतिहास-विवेचन की आधुनिक विज्ञान सम्मत पद्धति के अनुसार लिखीं नहीं जान पड़ीं।

दूसरी ढेरी उन पुस्तकों की बनी जो तैयार इतिहास नहीं इतिहास की सामग्री हैं ।

तीसरी ढेरी में वे पुस्तकें रक्खी गईं, जिनका रंगरूप वैज्ञानिक पद्धति का बनाने की कोशिश की गई है, पर जिन्हें देखकर सन्देह हुआ कि उनमें उस पद्धति का पूरा निर्वाह न हो पाया होगा, तथा प्रचलित विचारों का संकलन मात्र होगा—कोई नई बात मुश्किल से मिलेगी ।

चौथी और अन्तिम ढेरी में वे पुस्तकें आईं जिनके लेखक इतिहास विवेचना-पद्धति में सिद्ध-हस्त जान पड़े, और जिनमें कुछ मौलिक विचार पाये जाने की आशा हुई । इसके बाद मैं एक ढेरी की पुस्तकों को लेकर ध्यान से देखता गया, अब उनका हाल क्रम से लिखता हूँ ।

१— श्री चन्द्रशेखर शास्त्री ने एक मनोरंजक विषय चुना है; पर न तो वे सच भूठ को अलग कर पाये हैं, और न घटनाओं का आपेक्षिक मूल्य ठीक आँकने में समर्थ हुए हैं—घटनाओं की तह में पैठकर उनकी भीतरी प्रेरणाओं को पहचानना तो दूर । अव्वल तो उन्होंने अपनी पुस्तक का नाम ही गलत रक्खा है । भारत में क्रान्ति आन्दोलन के आरम्भ कर्ताओं को अंग्रेज़ी साम्राज्य के पिट्ठू पहले-पहल अराजक कहा करते थे, क्योंकि उनकी दृष्टि में दुनिया में अगर कोई राज था तो ब्रिटिश राज, और उस राजको जो न माने वह अराजक ! कुछ वक्त बाद जब इस शब्द से दुनिया की आँखों में धूल झोंकना सम्भव नहीं रह गया, तब उन्होंने उन्हें त्रासपन्थी या आतंकपन्थी कहना शुरू किया । अवश्य ही क्रान्तिकारियों ने कई बार त्रास का मार्ग पकड़ा है, और बहुत से क्रान्तकारी प्रतीत होने वाले लोग त्रासपन्थी से बढ़कर कुछ नहीं हैं । पर चन्द्रशेखर शास्त्री की दृष्टि में सन् १९१७ का "गदर का आयोजन" भी आतंकवाद की अभिव्यक्ति थी सन् १८५७ का विद्रोह भी आतंकवाद का पहला रूप था !

दूसरे, पुस्तक की प्रस्तावना से ही जान पड़ता है कि इसके लेखक निष्पक्ष ऐतिहासिक की दृष्टि लेकर नहीं चले । जिन्हें वे आतंकवादी कहते हैं उनकी वीरता को बढ़ा-चढ़ा कर बताना तथा उनके मार्ग को अन्ततः ग़लत कह कर अहिंसामय आन्दोलन की सार्थकता दिखलाना उन्होंने पहले से ही अपना ध्येय मान लिया है ।

तीसरे, शास्त्री जी का आलोचनात्मक ऐतिहासिक विवेचन कैसा है, उसके कुछ नमूने ये हैं। सन् ५७ के विद्रोह के बाद आप कूका विद्रोह उल्लेख करते हैं; पर वहाबी आन्दोलन का आपको पता ही नहीं है।

जिस मराठा सरकार से अंग्रेज़ों ने भारत का शासन लिया, उसे चितपावन सरकार कहकर आज भी ब्राह्मण अब्राह्मण का झगड़ा बनाये रखने में अंग्रेजों का स्पष्ट स्वार्थ है राउलट कमेटी ने कहा कि भारत का क्रान्ति का आन्दोलन उन चितपावनों ने शुरू किया जो चितपावन सरकार के गिर जाने पर बड़े बड़े पदों से वञ्चित हो गये थे। भारत में प्लेग आने पर अंग्रेज़ों ने जनता के भले के लिए सफ़ाई आदि के कुछ नियम बनाये। मूर्ख चितावनों ने, जो प्रतिगामी हिन्दू थे, उन अंग्रेज़ हाकिमों को मारने के तुच्छ षड्यन्त्र किये जिन पर उन नियमों के पालन कराने का दायित्य था। यों भारत के क्रान्ति आन्दोलन की मूल प्रेरणा प्रतिगामी हिन्दुत्व है। जस्टिस राउलट और उसके साथियों के ऐसी बातें लिखने का कारण स्पष्ट था। उन लोगों को भारत की मालगुजारी में से जो बड़ी बड़ी तनख्वाहें और भत्ते दिये गये थे, वे अंग्रेज़ी सरकार का प्रचार करने के लिए ही दिये गये थे। भारतीय आलोचकों ने राउलट रिपोर्ट प्रकाशित होते ही इन बातों का प्रतिवाद किया। उनका कहना था कि क्रान्ति-आन्दोलन का आरंभ स्वदेशी आन्दोलन के साथ साथ ही हुआ माना जाता रहा है; और सन् १८९७ की प्लेग की घटनाओं में यदि उसका बीज टटोला जाता है तो फिर सन् १८७२ में लार्ड मेयो की हत्या से ही क्यों न उसका आरंभ माना जाया! पर हमारे मित्र चन्द्रशेखर शास्त्री यह न समझकर कि जो कुछ वे लिख रहे हैं उसका क्या अर्थ निकलता है, आँख मूँद कर राउलट रिपोर्ट की नकल कर गये हैं।

२. श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार ने वृहत्तर भारत पर मोटी पोथी लिख डाली है, पर उनका बिस्मिल्ला ही गलत हुआ जब उन्होंने यह समझ लिया कि वृहत्तर भारत की बुनियाद बुद्ध के धर्म चक्रप्रवर्तन से पड़ी; और गलत दिशा में मुंह कर खड़े होने के बाद वे बराबर गलत रास्ते पर बढ़ते गये हैं। भारत के बाहर आर्यावर्ती उपनिवेश-स्थापना की मूल प्रेरणा आर्थिक और राजनीतिक थी, धर्म प्रचार से उसका शुरू में कोई भी सम्बन्ध न था। बुद्ध के जन्म से भी पहले चम्पा (भागलपुर) और वाराणसी के व्यापारी पूरवी समुद्र को पार

कर सुवर्ण भूमि के रास्ते टटोलना शुरू कर चुके थे, और उधर जो उपनिवेश पीछे स्थापित हुए उनके पहले निवासी प्रायः सब शैव थे, बौद्ध नहीं। पर चन्द्रगुप्तजी के दिमाग पर धर्म का भूत ऐसा सवार है कि वह उन्हें सहज बुद्धि से कोई बात सोचने ही नहीं देता। सिंहल पर युरोपियन प्रभुता स्थापित हो जाने पर भी यह स्वाभाविक प्रश्न उनके मन में नहीं उठता कि सिंहल के भारतीय क्यों जहाज़ रानी में युरोपियनों से पिछड़ गये। बजाय इसके उनके सामने यही प्रश्न आता है कि "उस समय लंका में बौद्ध धर्म की दशा कैसी थी ?" (पृ० ६१)

३. मित्रबन्धु के "भारत वर्ष का इतिहास, प्रथम भाग" को मैंने प्रायः १४ वर्ष पहले पढ़ा था, और तभी के संस्कारों के आधार पर मैंने उसे पहली ढेरी में रख दिया था। लेकिन इस बार वह ग्रन्थ "बुद्ध पूर्व का भारतीय इतिहास" बन कर नये रूप में आया है, और उसकी भूमिका के पृ० ४ अन्तिम पैरे से पृ० ६ दूसरे पैरे तक लेखकों ने इतिहास-लेखन का जो आदर्श अंकित किया है, उसे पढ़कर मैं बहुत प्रभावित हुआ। उक्त दो पृष्ठों का लेख हमारे साहित्य की स्थायी रचनाओं में गिना जाना चाहिए और उसका जितना भी प्रचार किया जा सके थोड़ा। इसे पढ़ कर इसमें सन्देह नहीं रहता कि मिश्रबन्धु ने निष्पक्ष सत्यान्वेषण को अपना आदर्श रक्खा है। यह प्रश्न बाकी रह जाता है कि उस आदर्श को पाने में उनकी विवेचना पद्धित कहां तक सफल हुई है। निम्नलिखित नमूनों से इसका कुछ अन्दाज़ हो सकेगा।

"वायु पुराण का कथन है कि भूत, पिशाच, नाग और देव उत्तर से भारत को आये। भूतगण भूत स्थान (भूटान) में बसे।" (पृ० ६८) "प्रियव्रत ने राज्य अपने पुत्रों में बाँट दिया। अग्नीध्र को जम्बू द्वीप (शायद एशिया) मिला ··। भव्य को शक द्वीप (शायद यूरोप)।···अग्नीध्र के नौ पुत्र थे··। नाभि को हिम वर्ष मिला जो हिमालय से अरब समुद्र पर्यन्त कहा गया है। हरि को··· हरिवर्ष (रूसी तुर्किस्तान), इलाव्रत को इलावर्ष (पामीर), रम्यक को चीनी तातार, हिरण्यमय को मंगोलिया, कुरू को कुरू वर्ष (साइबेरिया), किम्पुरुष को उत्तरी चीन···।" (पृ० ७३)

"रैवत मन्वन्तर ···में बैकुण्ठ निर्माण कहा गया है।···इससे जान पड़ता है कि यह पृथ्वी पर कोई स्थान था।" (पृ० ७९)।

इस पद्धति का कायल मैं नहीं हो सका। मिश्रबन्धु हिन्दी साहित्य सेवियों के बुजुर्ग हैं। आशा है कि "पुत्रापिच्छेत्पराभवम्" की पुरानी नीति के अनुसार उन्हें यह देखकर प्रसन्नता ही होगी कि सत्यान्वेषण का जो आदर्श उन्होंने अपने सामने रक्खा था उसे पाने की क्षमता में उनके बाद की पीढ़ी उनसे आगे निकल गई है।

त्रिपुरी का इतिहास भी पहले पहली ढेरी में रक्खा गया था, पर कुछ ध्यान से देखने पर मैंने उसे तीसरी में रख दिया।

४-५ दूसरी ढेरी में "प्रयाग-प्रदीप" और "कुमाऊँ का इतिहास" आते हैं। इन दोनों ग्रन्थों पर ईमानदारी, लगन और सच्ची मेहनत की स्पष्ट छाप है।

'प्रयाग-प्रदीप' के लेखक यदि विद्यमान व्यक्तियों और हर छोटी-मोटी संस्था का ब्यौरा देने के बजाय जनता के शिल्पों और कृषि की दशा की अधिक तफ़सील देते तो अच्छा होता। उन्होंने इतिहास का अंश भी वस्तुतः अकबर से ही शुरू किया है, पर प्रयाग का पहिला इतिहास भी आज बहुत सुलझे रूप में पेश किया जा सकता है।

'कुमाऊँ का इतिहास' हमारे देश के एक अंधियारे कोने पर रोशनी डालता है, और उससे हमें अमूल्य सामग्री प्राप्त हुई है। यदि तैयार इतिहास का कोई ग्रन्थ इस बार मंगलाप्रसाद पारितोषिक के लायक न होता, तो मैं इसी ग्रन्थ को पुरस्कृत करने की सिफ़ारिश करता। तीसरी ढेरी के अनेक ग्रन्थों से यह अच्छा है।

६—तीसरी ढेरी में सबसे पहले हम त्रिपुरी के इतिहास को ले लें। इस पुस्तक का प्रकाशन शायद स्वयं एक ऐतिहासिक घटना बन जाय, क्योंकि राष्ट्रीय कांग्रेस के अवसर पर अपने प्रान्त का इतिहास पेश करने का जो रिवाज इसने चला दिया है, यदि वह जारी रहा तो हमारे ऐतिहासिक वाङ्मय को बढ़ावा मिलेगा, और तब इस पुस्तक की सदा याद की जायगी। लेकिन जल्दी में लिखे जाने के कारण यह त्रिपुरी के इतिहास का कच्चा मसौदा ही हुआ है, परिपक्व इतिहास नहीं हो सका। त्रिपुरी के बहाने लेखक ने समूचे चेदि प्रान्त का इतिहास देने की कोशिश की है, पर उसका सब से गौरवपूर्ण अंश—वाकाटक-युग उनके ध्यान में ही नहीं आया।

७. श्रीयुत विश्वेश्वरनाथ रेऊ लिखित "राजा भोज" में धार के सुप्रसिद्ध राजा भोज और उसके वंश के सम्बन्ध में सब तरह की बातें हैं—लेकिन सब एक दूसरे से असम्बद्ध, बिना किसी क्रम और तरतीब के। भोज के समय की भारत की दशा का वर्णन पहले आ गया है, तो भोज के समय का निर्धारण पीछे हुआ है! बीच बीच में ऐसे नमूने भी हैं–

"आज से पच्चीस सौ वर्ष पूर्व गान्धार (कन्धार) से···मालवे तक का··· भूभाग सोलह राज्यों में बँटा हुआ था। इनमें से कुछ का प्रबन्ध राजसत्ता के अधीन था और कुछ पर जातियाँ ही अपना अधिकार जमाये हुए थीं। ऐसे ही एक जाति का राज्य अवन्ति प्रदेश (मालवे) पर था जो मालव जाति के नाम से प्रसिद्ध थी।" (पृ० ३३)

गांधार और कन्दहार! प्राचीन भारत में कुछ प्रजातंत्र भी थे, यह कहने की रेऊजी की हिम्मत नहीं होती; इससे वे कहते हैं 'कुछ पर जातियां ही अपना अधिकार जमाए थीं।' सोलह महाजनपदों के युग में तो क्या, उसके आठ सौ बरस बाद तक भी अवन्ति प्रदेश मालवा न कहलाता था। मालव जाति महाजन पद युग में पंजाब में मुलतान के उत्तर-पूरब रहती थी। अवन्ति प्रदेश पर तब राजा चण्ड प्रद्योत का राज्य था।

८. श्री वासुदेव उपाध्याय का "गुप्त साम्राज्य का इतिहास" गहरी मेहनत का फल है। ऐसे तरुण लेखक का स्वागत। किन्तु उनके विचार अभी अपरिपक्व हैं और लेखन शैली में बचपन है।

गुप्त युग के इतिहास के प्रत्येक अंग पर उन्होंने ध्यान दिया है, पर अंगों पर उनकी दृष्टि इतनी उलझ गई है कि अंगों को नहीं पहचान सके। यही कारण है कि कई अत्यन्त महत्व की बातें उनकी नज़र से चूक गई हैं। गुप्त युग में ही खोतनी और तुखारी भाषायें भारतीय लिपि में लिखी गई यह बात उनके ध्यान में नही आई। गुप्त युग के वैष्णव मन्दिरों की शैली के एक एक अंग का वर्णन वे करते हैं; पर उस शैली के बहाने समूचे भारत में जो एकता की एक नई लहर दौड़ गई थी उसे वे नहीं देख पाये। सुदूर नेपाल के भातगाँव में सड़क के एक तरफ़ खड़ा हुआ शैव मन्दिर जब नेपाली शैली में है तब उसी के सामने खड़ा वैष्णव मन्दिर क्यों गुप्त शैली में है इस बात पर विचार करने से वह लहर समझ में आ गई होती।

सबसे बढ़कर गुप्त युग के भारत का समकालीन जगत् में क्या स्थान था इस पर वे ध्यान नहीं देते। इस सबका कारण यही है कि वे शाखाओं में उलझे रहकर उस तने को नहीं पा सके जिसे पकड़ लेने से सब शाखाएँ स्वयं दीख पड़तीं।

घटनाओं के तारतम्य या आपेक्षिक महत्त्व को आँकना, फ़िज़ूल की बातों को लाकर चित्र को धुंधला न बनाना, और परिपक्व निर्णय-बुद्धि ये सब चीजें अभी वासुदेवजी को सीखनी हैं। यदि वे छापेखाने में जाने की जल्दबाज़ी करने के बजाय एक अरसे तक किसी अच्छे उस्ताद के शागिर्द बनकर रह सकें तो हिन्दी वाङ्मय उनसे बहुत कुछ आशा कर सकता है।

९. इसी प्रसंग में श्री गंगाप्रसाद मेहता के चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य पर विचार करलेना सुविधाजनक होगा। मेहताजी की लेखन शैली परिपक्व है। उन्होंने प्रत्येक विषय को विचार कर और प्रत्येक विचार को सुलझाकर लिखा है और वे काफी सावधान लेखक हैं, इसके प्रमाण इस पुस्तक में जगह जगह हैं। भारतीय इतिहास के एक बड़े प्रश्न को सुलझाने में उन्होंने मदद की है। वह प्रश्न यह था कि चौथी शती ई० में बंगाल से बलख तक जीतने वाला वह राजा चन्द्र कौन था, जिसकी कीर्ति महरौली की लाट पर खुदी है। हार्नली, स्मिथ तथा ओझाजी ने उसे चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य माना था। मेहताजी उन पूर्व-सूरियों के मत का उल्लेख नहीं करते, तो भी उन्होंने उनके पक्ष में नये प्रमाण देकर उस प्रश्न का निपटारा कर डाला है। यह उनकी मौलिक देन है।

यह तो हुआ उनके ग्रन्थ का अच्छा पहलू; अब दूसरा पहलू देखा जाय।

(अ) सैदपुर–भीतरी गांव, जहाँ स्कन्दगुप्त का विजयस्तम्भ खड़ा है, बनारस से करीब २५ मील पर है। मेहताजी ने उसे देखने का कष्ट नहीं किया और वे अंगरेज़ी ग्रंथों में उसका नाम पढ़कर उसे भिटारी लिखते हैं।

(इ) डवाक देश समुद्रगुप्त का करद राज्य था। पृ० ३२ पर मेहताजी उसका अर्थ करते हैं—बोगरा, दीनाजपुर, राजशाही ज़िले। लेकिन दामोदरपुर के ताम्रपत्रों से सिद्ध हो चुका है कि उत्तर बंगाल का यह प्रदेश गुप्तों का करद राज्य नहीं, प्रत्युत उनकी भुक्ति (सीधा शासित प्रान्त) था। स्वयं मेहताजी ने पृ० ८९ पर उन ताम्रपत्रों का उल्लेख किया है, और पृ० ५५ पर उन्होंने डवाक का ठीक अर्थ दिया है। लेकिन पृ० ३२ और पृ० ५५-८९

की असंगति को वे नहीं पहचान पाये। स्पष्टतः पृ० ३२ की गलती इस कारण हुई है कि दामोदरपुर ताम्रपत्र पाये जाने से पहले वाले अंग्रेज़ी ग्रन्थों का आँख मूँद कर अनुसरण किया गया है।

(उ) राजा चन्द्र ने बाल्हीक देश को जीता था। ऐलन ने वाल्हीक का अर्थ किया बलोचिस्तान। यह संस्कृत पढ़ने वालों की सदियों से चली आती जीवित परम्परा के खिलाफ़ है—हमारे देश के पण्डित सदा से उसका अर्थ बलख करते आये हैं। ऐलन शायद वाल्हीक और बलोच नामों की समानता से बहक गये हों; पर आज जो बलोचिस्तान है वह अरबों के सिन्ध जीतने तक बलोचिस्तान नहीं था—बलोच लोग वहाँ १२ वीं शती के बाद आये हैं। ऐलन के समान अंग्रेज़ लेखक, जिन्होंने किसी भारतीय गुरु से संस्कृत नहीं पढ़ी और जो संस्कृत-शिक्षा की परंपरा से अपरिचित हैं, ऐसी गलती करें तो क्षम्य है। पर एक भारतीय विद्वान् का आँख मूंदकर उस ग़लती का अनुसरण करना बहुत अखरता है।

आलोच्य ग्रन्थ की गलतियाँ दिखाना मेरा अभीष्ट नहीं है। जहाँ तक गलतियों की बात है, मैं कह सकता हूँ कि ऊपर जितने ग्रन्थों की आलोचना मैं कर आया हूँ, और आगे भी जिस एक की करने जा रहा हूँ, उन सब से कम गलतियाँ मेहताजी के ग्रन्थ में हैं—उपर्युक्त के सिवाय शायद दो-एक ही छोटी छोटी गलतियाँ और पकड़ी जा सकें। और मनुष्य की कौनसी कृति है जो गलतियों से मुक्त हो? किन्तु उक्त गलतियों की ओर मैंने इसलिए संकेत किया है कि वे सब एक ही प्रवृत्ति को सूचित करती है, और वह प्रवृत्ति है अपनी आँखों से न देखकर बड़े लोगों का अनुसरण करते जाने की। श्री गंगा प्रसाद मेहता में मौलिक चिन्तन की क्षमता है, लेकिन अपनी उस क्षमता को उन्होंने पनपाया नहीं है—अभी तक स्वतंत्र सीधा खड़े होने में उन्हें झिझक मालूम होती है।

उन्होंने कुल २८ ग्रन्थों की सूची दी है, जिनका अध्ययन कर उन्होंने अपना ग्रन्थ लिखा है। गुप्त युग के वाङ्मय पर भी उन्होंने एक अध्याय लिखा है। लेकिन इन दोनों प्रसंगों में उन्हें यह नहीं सूझा—वासुदेव उपाध्याय को भी कैसे सूझता कि नारद स्मृति गुप्त युग की रचना है, और उससे उस युग के इतिहास पर बड़ी रोशनी पड़ सकती है। क्योंकि अबतक किसी

पाश्चात्य लेखक ने या किसी बड़े हिन्दुस्तानी लेखक ने उस स्मृति का उपयोग गुप्त युग के इतिहास के लिए नहीं किया, इसलिए मेहताजी को भी वैसा करने की नहीं सूझी। यदि बड़े लोगों का रुख देखने के बजाय मेहताजी स्वयं इस कार्य को कर डालते—और यदि वे हिम्मत करते तो कर सकते थे—तब वे स्वयं बड़ों की गिनती में आ जाते।

१०—श्री गौरीशंकर चटर्जी का हर्षवर्द्धन भी बड़ी मेहनत से लिखा हुआ ग्रन्थ है। चटर्जी महोदय ने हर्ष के विषय में आधुनिक विद्वानों के करीब करीब समूचे वादविवाद को पढ़कर यह ग्रन्थ लिखा है। किन्तु इसके साथ ही यह भी कहना होगा कि इन वाद-विवादों में से जहाँ भुस को धान से अलग करने की ज़रूरत थी, वे नहीं कर पाये। इसके कुछ नमूने निम्नलिखित हैं—

(अ) वे कहते हैं कि हर्षवर्द्धन के ठीक पहले तक "हूण लोग थानेश्वर के आसपास के प्रदेश तथा उसके आगे भी आक्रमण किया करते थे" (पृष्ठ १७)। यह कल्पना आधुनिक लेखकों ने कन्नौज के मौखरि राजाओं और प्रभाकरवर्धन के हूणों से लड़ने की बात से की थी। जायसवालजी ने कहा कि मौखरियों की जो सेना हूणों से लड़ी थी वह यशोधर्मा के नेतृत्व में (५३३ ई० से पहले, ही लड़ी थी। इसके बाद यह कल्पना निरर्थक हो गई कि छठी शती के उत्तरार्ध में ही हूणों की चढ़ाइयाँ थानेसर के आगे तक हुआ करती थीं। गौरीशंकरजी अपने उक्त कथन के तीन पंक्ति बाद ही जायसवालजी का कथन भी सहमतिपूर्वक उद्धृत करते हैं, पर वे यह नहीं पहचान पाते कि दोनों में परस्पर विरोध है।

(इ) छठी शती में पिछले गुप्तों और मौखरियों का संघर्ष देर तक चला था। मौखरि राजाओं के नाम 'वर्मा' वाले होते थे। गुप्त राजा महासेनगुप्त ने ब्रह्मपुत्र के किनारे सुस्थितवर्मा को हराया, यह बात एक गुप्त लेख में है। इस सुस्थितवर्मा के विषय में हार्नली, स्मिथ और टामस ने अन्दाज़ किया कि वह भी मौखरि होगा। किन्तु हर्षचरित के अनुसार आसाम के राजा भास्कर वर्मा का पिता सुस्थिर वर्मा था, और पीछे भास्कर वर्मा के निधनपुर के ताम्रपत्र और नालन्दा की मुहर मिली जिनसे उसके पिता का नाम सुस्थितवर्मा असन्दिग्ध मालूम हुआ। हार्नली आदि की कल्पना तब निरर्थक हो गई। लेकिन उसके बाद भी श्री राधाकुमुद मुखर्जी तथा श्री चिं० वि०

वैद्य ने अपने ग्रन्थों में हार्नली की पुरानी कल्पना का अनुसरण करने की भद्दी भूल की। श्री गौरीशंकर चटर्जी निधनपुर ताम्रपत्रों का भी उल्लेख करते हैं फिर भी वे समझते हैं कि अभी तक इस विषय पर दो मत हैं (पृ० १८-१९)। आश्चर्य है कि राखालदास बनर्जी के उस लेख (ज० नि० ओ० रि० सो० १९२८, २५४ और आगे) की ओर उनका ध्यान नहीं गया जिसमें उस स्वर्गीय विद्वान् ने मुखर्जी और वैद्य की भूलें दिखाई थीं।

(उ) छठी शती के पिछले गुप्तों का राज्य मगध में था कि मालवे में, यह एक और कठिन प्रश्न रहा है। राधाकुमुद मुखर्जी ने उसे मालवे में माना और उसके पक्ष में एक यह युक्ति भी दी कि पिछले गुप्तों का पूर्वी मालवे पर बराबर आधिपत्य था—डभाला के परिव्राजक वंशी राजा गुप्तों को अपना अधिपति मानते थे। डभाला चेदि (बुन्देलखंड-बघेलखंड) का दूसरा नाम था, और परिव्राजक राजाओं के लेख उसके भी पूरबी भाग में नागौद रियासत में जो माणिकपुर, कटनी रेलपथ के किनारे लगी है, मिले हैं। राखालदास बनर्जी ने उक्त लेख में लिखा था कि राधाकुमुद मुखर्जी को नागोद को पूरबी मालवा कहते हुए शरम न आई! गौरीशंकरजी ने राखालदास के उस लेख के दस बरस बाद भी उसी भूल का अनुसरण किया है। और जब वे डा० रायचौधुरी का अनुसरण कर सात मालवा और तीन मालवा का प्रवचन शुरू करते हैं, तब प्रतीत होता है मानो त्रिवेणी पर कोई पंडाजी सरस्वती की गुप्त धारा का बखान कर रहे हैं। आधुनिक युग के भूअंकन में इस रहस्यवाद को स्थान नहीं मिल सकता।

सीमाप्रान्त में हज़ारा ज़िले का पुराना नाम उरशा है। उस उरशा को हमारे लेखक ने हिसार समझ लिया है। (पृ० ३३)

इस प्रसंग में इस बात की ओर भी ध्यान जाता है कि जहां फ़िजूल के उद्धरणों और तुच्छ बातों की विवेचनाओं से गौरीशंकरजी ने अपने ग्रन्थ को पाट दिया है, वहां जिस पते की बात पर प्रमाण की और विवेचना की ज़रूरत होती है ठीक वहीं वे चूक जाते हैं। सात मालवों की बात जिस लेख के आधार पर है उसे उद्धृत नहीं किया गया। ननिगोपाल मजुमदार से जहां वे अपनी असहमति कहते हैं (पृ० २०), वहां उसके कारण जानने की उत्सुकता

होती है, क्योंकि न० गो० मजुमदार जैसे विद्वान की बात यों ही टाली नहीं जा सकती; पर वहाँ कोई कारण बतलाया नहीं गया।

गौरीशंकरजी के ग्रन्थ में संस्कृत उद्धरणों की भरमार है, तो भी वे बुधगुप्त को बुद्धगुप्त, शर्ववर्मा को सर्ववर्मा, कर्कोटि को कारकोटा, उरशा को उरस, और भंडि को भांडी लिखते हैं। इससे सन्देह होता है कि उन्होंने स्वयं संस्कृत के मूल ग्रंथ पढ़े हैं, या किसी 'पंडित' से उद्धरण भरवा दिये हैं।

उपर्युक्त कारणों से श्री गंगाप्रसाद मेहता के 'चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य' को श्री गौरीशंकर चटर्जी के 'हर्षवर्धन' से ऊँचा स्थान देना होगा। मेहताजी ने स्वतंत्र निर्णय करने की योग्यता कुछ तो दिखलाई है। साथ ही उन्होंने जो कुछ भी लिखा है स्पष्ट सुलझी शैली में, फालतू उद्धरणों और व्यर्थ की विवेचनाओं से पाठकों पर झूठमूठ रोब जमाने की कोशिश नहीं की।

हमारी अन्तिम ढेरी में केवल दो पुस्तकें बचीं।

(११) 'मालवा में युगान्तर' एक सिद्धहस्त कारीगर की कृति है, जिन्हें अपने विषय के सब पहलुओं का पता है और जिनका हाथ खुलकर चलता है। कोई विवादग्रस्त मामला आने पर वे झिझकते नहीं, डगमगाते नहीं, कारण उन्होंने एक अत्यन्त प्रामाणिक उस्ताद (सर यदुनाथ सरकार) की आंखों के सामने अपने शिल्प का अभ्यास किया है। मालवे का अठरहवीं शती का इतिहास इधर शताब्दी भर से किसी ने न लिखा था, पर समूचे भारत के इस युग के इतिहास की विस्तृत छानबीन सरकार, इरविन, सर देसाई आदि अनेक विद्वानों ने की है, और कुमार रघुवीरसिंहजी की नई देन उसी अंश तक है जिस अंश तक वे हमारे ज्ञान को इन विद्वानों द्वारा बनाई सीमा से आगे पहुँचा सके हैं। यह नई देन करीब-करीब श्री गंगाप्रसाद मेहता की देन के बराबर है, तो भी कुमार साहब के ग्रंथ में वे त्रुटियां नहीं हैं जो मेहताजी के ग्रंथ में हैं, इसी से उसे उससे ऊँचा स्थान देना होगा।

(१२) राय कृष्णदास जी की 'भारत की चित्रकला' हमें एकदम एक और ही सतह पर ले जाती है। इसमें भारत के समूचे इतिहास के एक सांस्कृतिक पहलू का निरूपण है, और वह ऐसा उज्ज्वल है कि उससे हमारे इतिहास का समूचा पथ प्रकाशित हो उठा है।

बौद्धकला, ब्राह्मणकला, जैनकला आदि बाहरी रूप देखकर रक्खे हुए जड़ नामों को हटाकर भारतीय कला के भीतरी विकास और ह्रास की प्रवृत्तियों के अनुसार उसके विभिन्न रूपों का नामकरण और युगविभाग किया गया है। और उन प्रवृत्तियों की तह तक पाठक को इस प्रकार पहुँचाया गया है कि वह कला के इस आरोह-अवरोह में भारतीय राष्ट्र के जीवन-स्पन्दनों को सुन सकता है।

पिछले मध्यकाल की शैली पर जैन शैली, गुजराती शैली और पच्छिम भारतीय शैली आदि नामों से जो मकड़ी का जाला फैला हुआ था, उसे एक दम साफ़ कर उसका तात्त्विक नाम अपभ्रंश शैली कह देने से उसका आत्मा अभिव्यक्त हो उठा है। पाल और कश्मीरी शैलियों में अपभ्रंश की पूरी प्रवृत्तियां नहीं आईं, यह एक और पते की बात है। फिर मुगलशैली के उदय में ऊपर ले हिन्द और कश्मीर की शैलियों का कैसा प्रभाव हुआ, यह तो एक दम आंख खोल देने वाली सूचना है, जिससे प्राचीन और अर्वाचीन भारत के बीच की सुनहरी डोर चमक उठी है, और अनेक युगों के मध्य से भारतीय जीवन की धारा की परम्परा दिखाई देने लगी है। मुगल शैली की प्रक्रिया और परिभाषाओं का विवरण एक और नई देन है।

इनमें से प्रत्येक देन लेखक को अमर कर देने को काफ़ी होती। पर जिस रास्ते से रायकृष्णदास इन सचाइयों तक पहुँचे हैं, वह और भी निराला है। वह उनका खुद का बनाया हुआ और बीहड़ जंगल में से काटा हुआ है। बनारस की गलियों की धूल छानने वाले एक फटे हाल हिन्दुस्तानी कारीगर पर उनकी नज़र पड़ी। उसे पकड़कर, अपनी गाँठ से उसपर काफ़ी पैसा खर्च कर, बरसों वे उससे उसकी प्रक्रिया और परिभाषायें पढ़ते और पूछते रहे। इस प्रकार के कितने उस्ताद हमारी नष्ट कारीगरी के पुराने केन्द्रों में अभी पड़े मर रहे हैं! बनारस के राज, संगतराश, साड़ी बुनने वाले प्रत्येक किस्म के कारीगर से उसके शिल्प की प्रक्रिया सीखी-समझी जाय तो हमारी संस्कृति के इतिहास की कितनी सामग्री अभी बचाई जा सकती है! उस गहरे कुएँ से पानी खींचने के बाद उसे पाथेय बनाकर कृष्णदास जी भारतीय कला के इतिहास-पथ पर निकले। कुछ समय के लिए उन्हें भटकना पड़ा, पर धीरे धीरे उस ज्ञान के सहारे उस मार्ग की सब भूल भुलैयाँ सुलझती गईं। उनके पहिले ज्ञान ने

इन प्रयोगों में पड़कर नये विचारों को पैदा किया, वे विचार परिपक्व होकर अनुभूतियां बनते गये और उन अनुभूतियों के साँचे में उनका समूचा व्यक्तित्व ढल गया है। यही कारण है कि भारतीय चित्रकला के इतिहास को केवल १८० पृष्ठों में रख देने में वे समर्थ हुए हैं।

अक्तूबर १९३८ में सर यदुनाथ सरकार ने राय कृष्णदास का उल्लेख करके कहा था—"खेद की बात है कि इस ठोस विद्वान ने संकोच के कारण अपने ज्ञान के विशाल भंडार में से कुछ प्रकाशित नहीं किया। किन्तु यदि विद्यार्थी बनारस जाकर राय कृष्णदास की देख-रेख में काम करें तो प्रकाश के इस केन्द्र का कुछ उपयोग किया जा सके" (कामशेत इतिहास गोष्ठी का विवरण, पृ० १७)। उस खेद का एक अंश अब इस पुस्तक से मिट गया। और विशेष हर्ष की बात यह कि प्रकाश का वह श्रोत हिन्दी के माध्यम से प्रकट हुआ।

इस प्रकार आपकी भेजी १२ पुस्तकों में से पहली तीन ये हैं—

पहली—भारत की चित्रकला।
दूसरी—मालवा में युगान्तर।
और तीसरी—चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य।

मंगलाप्रसाद पारतोषिक हिन्दी वाङ्मय की प्रगति का मान बन रहा है। शायद इसलिए यह नियम रक्खा गया है कि पारतोषिक-समिति किसी ऐसी पुस्तक को भी विचारार्थ ले सकती है जिसे लेखक या प्रकाशक ने न भेजा हो। इस नियम के अनुसार राहुलजी के 'तिब्बत में बौद्ध धर्म' को इस बार विचारार्थ लेना चाहिए था। यदि उस ग्रन्थ को लिया जाता तो मैं उसे 'भारत की चित्रकला' से दूसरा स्थान देता। कारण संक्षेप में ये हैं—(अ) कला की भाषा तिब्बती भाषा से अधिक कठिन है (इ) राहुलजी ने अपने विषय का भारतीय और तिब्बती स्रोतों से अध्ययन किया है। इस इतिहास की सामग्री चीनी और अरबी ग्रन्थों में भी है। राहुलजी में इतनी योग्यता है कि वे चाहते और ध्यान देते तो चारों पहलुओं से अपने विषय का मनन कर सकते थे। पर चीनी और अरबी स्रोतों की ओर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। इसीसे, और जल्दी निपटा देने से, उनकी कृति जितनी परिपक्व

हो सकती थी उतनी नहीं हुई। (उ) 'भारत की चित्रकला' का क्षेत्र 'तिब्बत में बौद्ध धर्म', की अपेक्षा बहुत विस्तृत और व्यापक है।

आपकी भेजी पुस्तकों की आलोचना के बहाने हिन्दी के इतिहास-वाङ्मय की पिछले सात बरस की प्रगति की यह आलोचना सी लिखी गई है। उसके साथ यह भी याद रखना होगा कि पहले से पुरस्कृत लेखक भी सो नहीं गये है पर उनकी कृतियां इस आलोचना में न आ सकती थीं। 'भारत की चित्रकला' से हमारे वाङ्मय की सतह बहुत ऊँची उठ गई है इसमें सन्देह नहीं। उसके साथ जो अन्य पुस्तकें भी इस आलोचना में आई हैं, उन्हें देखते हुए यह कहा जा सकता है कि हमारा वाङ्मय अब प्रगति के पथ पर है।

जयचन्द्र

प्राप्ति स्वीकार

[ले०—जगन्नाथप्रसाद शुक्ल वैद्य, संग्रहमंत्री]

ग्रामीण हिन्दी—श्रीयुक्त डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा जी ने आधुनिक हिन्दी की ग्रामीण बोलियों, पड़ोस की बोलियों तथा उनके साहित्यिक रूपों के नमूने-परिचय-मानचित्र और व्याकरण की तालिकाएँ देकर इसका निर्माण किया है। बोलियों के नमूने भी बड़े मनोरंजक हैं। दाम लिखा नहीं।

स्वास्थ्य चर्चा—श्रीयुक्त सत्यव्रत जी ने स्वास्थ्य चर्चा पर पुस्तक लिखी है। स्वास्थ्य की प्रारम्भिक बातों का संक्षेप परिचय इससे हो जाता है। दाम ।~)

कवितावली—महाकवि तुलसीदास जी की कवितावली की पण्डित चन्द्रशेखर शास्त्री की लिखी हुई टीका है। शब्दार्थ, अर्थ और अभिप्राय लिखकर कविताओं का भाव अच्छी तरह खोला गया है। आरम्भ की प्रस्तावना अच्छी है। दाम २)

शालोपयोगी भारतवर्ष—विद्यार्थियों के योग्य भारतवर्ष का संक्षिप्त इतिहास मराठी में श्रीयुक्त गोविन्द सखाराम सर देसाई ने लिखा था। मराठी में इसका बहुत मान हुआ और प्रचार भी हुआ। यह उसी का हिन्दी अनुवाद है। दाम २॥)

नारी रत्नमाला—बाबू गिरजाकुमार घोष ने बंगाली होकर उस समय हिन्दी की सेवा की थी जब इसके सेवक हिन्दी वालों में ही कम थे। इसमें अहल्याबाई, रानी भवानी, पद्मावती, लीलावती, पद्मिनी, सती, दमयन्ती, लक्ष्मीबाई और नूरजहां का चरित्र दिया गया है। स्त्रियों के पढ़ने योग्य है।

प्रायश्चित—इसमें अबीलार्ड और हेलोज़ के प्रेम पत्र दिये गये हैं। इससे बारहवीं शताब्दी के ईसाई संसार के मानव विचारों और विचार विप्लव का अच्छा पता लगता है। अनुवादक श्रीयुक्त सत्यजीवन जी वर्मा हैं। मूल्य २)

मीरा-दया-सहजो—श्रीयुक्त वियोगी हरिजी ने मीराबाई-दयाबाई और

सहजोबाई के पद्यों का इसमें संकलन किया है। संग्रह बढ़िया है और हरि भक्ति तथा गुरु भक्ति उत्पन्न करने वाला है। दाम ।-)

अञ्जलि—प्रोफेसर रामकुमार वर्मा की कविताओं का इसमें संग्रह है। शब्द माधुर्य और प्रेम तथा सौन्दर्यका पुट कविताओं में अच्छा मिलता है। प्रकृति के रहस्य पूर्ण स्वरूप भी देखने को मिलते हैं। दाम लिखा नहीं।

स्वाधीन भारत—महात्मा गांधी ने होमरूल पर जो अंग्रेजी पुस्तक लिखी थी, पं० छविनाथ पाण्डेय बी० ए० एल० एल० बी० ने उसी का यह हिन्दी अनुवाद किया है। पुस्तक पढ़ने योग्य है। मूल्य १)

भारत में दुर्भिक्ष—कृषि प्रधान भारतवर्ष में अटूट अन्नराशि पैदा होने पर भी यहाँ बारम्बार दुर्भिक्ष क्यों पड़ते हैं, इसका विचार करते हुए यह पुस्तक लिखी गयी है। लेखक पं० इन्द्रदत्त शर्मा गौड़ हैं। पुस्तक पठनीय है। दाम १।।।)

आत्म विद्या—स्वर्गीय पं० माधव राव सप्रे बी० ए० ने सन् १९०९ से अपना शेष जीवन अध्यात्म चिन्तन में बिताया था। उसीके फलस्वरूप इस पुस्तक का निर्माण हुआ था। गहरे चिन्तन के बाद निकले हुए विचार पठनीय और मननीय हैं। दाम ३)

प्रफुल्ल—बंगाल के प्रसिद्ध नाटककार बाबू गिरीश चन्द्र घोषके प्रफुल्ल नामक नाटक का पं० रूपनारायण जी पांडेय का किया हुआ यह अनुवाद है। नाटक में सदाचरण और आदर्शवाद का अच्छा परिदर्शन हुआ है। दाम १=)

कन्याओं की पोथी—लड़कियों के पढ़ने योग्य और लड़कियों के पाठ्य क्रम में रखने योग्य यह पोथी बा० रामदास गौड़ने लिखी थी। स्वदेशी, स्वावलम्बन और राष्ट्रीय विचारों के परिपोषक पाठों का अच्छा संग्रह है। दाम १)

हमारे इतिहास निर्माता—रामायण, महाभारत तथा पुराणों और ऐतिहासिक काल के आदर्श पुरुष-स्त्रियों के जीवन-चरित्र दिये गये हैं। लेखक बाबू अवधविहारी लाल बी० ए० हैं। दाम १)

होमरगाथा—ग्रीक भाषा के प्रसिद्ध कवि होमर की गाथाओं का अनुवाद बाबू गिरिजाकुमार घोष ने हिन्दी में किया था । अब से कोई तीन हजार वर्ष पहले यूनान देश वासी धर्म और विचार में तत्कालीन हिन्दुओं से मिलते-जुलते थे । इसमें उसी का वर्णन है । दाम १)

नाम की महिमा—श्रीयुक्त प्रोफेसर ब्रजराज कृत पाँच कहानियों का इसमें संग्रह है । श्रीयुक्त विजय वर्मा के आग्रह से इन्हें आपने लिखा और अपने पुत्र चि० अशोक कुमार के आग्रह से छपने को दिया । शिष्य और पुत्र का आग्रह तो आपने पूर्ण किया । अब देखें अपने पूज्य पिताजी की आज्ञा का पालन (कोई पुस्तक लिखने के सम्बन्ध की) आप कब करते हैं । कहानियाँ अच्छी हैं । दाम ।)

दिव्यवाणी—इसमें योगी अरविन्द की दिव्य वाणियों का संग्रह है । संग्रहकर्ता श्रीयुक्त वियोगी हरि जी हैं । ये वाणियाँ राष्ट्रोत्थान में सहायक होने योग्य हैं । दाम ।=)

काव्यविनोद—बाबू रामदासजी गुप्त विशारद ने काव्य विषय में यह विचारणीय छोटी पुस्तक लिखी है । इसमें काव्य, काव्य के अंग, शब्दशक्ति, रसपरिचय, अलंकार, शब्दालंकार, अर्थालंकार छन्द परिचय, छन्द और उनके भेद, मात्रिक समछन्द, मात्रिक अर्ध सम छन्द मात्रिक विषम छन्द और वर्णिक छन्दों का विवेचन है । दाम ।।=)

शूलफूल—श्रीयुक्त नरेन्द्रजी विद्यार्थी दशा से ही अच्छी, ललित कविता करने में ख्याति पा चुके हैं । इसमें आपकी सुन्दर ३६ कविताओं का संग्रह है । कविता आपके अनुरूप मनोहर है । मूल्य ।।)

स्वदेशाभिमान—पं० विनायक कोंडदेव ओक मराठी के बहुत नामी लेखक हो चुके हैं, उन्हीं की सूक्तियों का इसमें संग्रह है । सूक्तियाँ स्वदेशाभिमान जागृत करने वाली हैं । मूल्य ।-)

गद्यसंग्रह—श्रीयुक्त प्रोफेसर ब्रजराज जी ने प्रयाग महिला विद्यापीठ के लिये १७ विषयों पर गद्य लेखों का संग्रह किया है । अधिकांश लेख त्रियोपयोगी हैं । ।।=)

आरोग्य दिग्दर्शन—महात्मा गांधी जी ने आरोग्य रक्षा के सम्बन्ध में जो प्रयोग किये हैं, उन्हीं को लेते हुए इसमें आरोग्यता का दिग्दर्शन किया गया है। मूल्य ।||)

वीर सतसई--जिस वीर सतसई पर श्रीयुक्त वियोगीहरि जी को मंगलाप्रसाद पारितोषिक मिला था, यह वही पुस्तक है। सौ-सौ दोहों पर एक शतक अलगकर धीर व्याख्या, वीर प्रतिज्ञा, युद्ध स्थल, देव वीर, ऐतिहासिक वीर, स्त्रीवीर आदि का वर्णन किया गया है। मूल्य ।||)

काव्य की उपेक्षिता—बाबू मैथिली शरण गुप्त की यशोधरा का इसमें आलोचनात्मक विचार है। विचार गम्भीर किन्तु सरल है। इसके लिखने में लेखक ने अच्छा अध्ययन किया है। लेखक हैं श्री रामदीन पाण्डेय एम ए०। मूल्य ।||)

गृह विज्ञान—पुस्तक पहले और दूसरे भाग में पूर्ण की गयी है। पहला भाग दो खंडों में और दूसरा भाग एक खण्ड में ही पूर्ण किया गया है। गृह विज्ञान और स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी बातें इसमें सरल तथा संक्षेप से अच्छी दी गयी हैं। श्रीयुक्त सत्यव्रत जी इसके लेखक हैं। मूल्य पहले भाग का ।=) और दूसरे भाग का ||) है।

मुसलमानों की हिन्दी सेवा—ठाकुर कमलधारी सिंह कमलेश ने छः परिच्छेदों में हिन्दी की सेवा करने वाले मुसलमान कवियों और लेखकों का इसमें वर्णन किया है। उनकी संक्षिप्त जीवनी और उनकी कृतियों का दिग्दर्शन कराया गया है। संग्रह महत्वपूर्ण हुआ है। मूल्य १||)

ऋण परिशोध—बंगला के बाबू काली प्रसाद दास लिखित सामाजिक उपन्यास का यह हिन्दी अनुवाद पंडित रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय ने किया है। अनुवाद स्वतंत्र है और अच्छा है मूल्य १||।)

कालरात्रि—अंग्रेज़ी की चुनी हुई ११ कहानियों का यह हिन्दी अनुवाद पंडित देवीदत्त जी शुक्ल ने सरस्वती के लिये किया था। कहानियां सब सुरुचिपूर्ण और अच्छी हैं। मूल्य ३)

चांदबीबी—प्रसिद्ध ऐतिहासिक वीर स्त्री चांद बीबी का वर्णन नाटक

रूप में तत्कालीन इतिहास की झलक के साथ बंगला लेखक बाबू क्षीरोद प्रसाद जी विद्याविनोद एम० ए० ने लिखा है। उसी का हिन्दी अनुवाद श्रीयुक्त रामचन्द्र जी वर्मा ने किया है। दाम १।।।)

निबन्धादर्श—श्रीयुक्त गोकुलचन्द्र शर्मा एम० ए० ने निबन्ध-रचना के लिये यह ग्रन्थ लिखा है। निबन्धों के संग्रह के साथ ही निबन्ध रचना के नियमों का अच्छा वर्णन है। दाम ।।।)

कपटी—पण्डित रूप नारायण पाण्डेय का लिखा हुआ यह उपन्यास है। मनुष्य प्रकृति और मनुष्यों की धूर्तता का इसमें अच्छा वर्णन हुआ है। दाम १।।)

राक्षस का मन्दिर—आजकल के कालेज के लड़के लड़कियों के उच्छृंखल वर्ताव तथा अन्य जिन लोगों के देश और समाज विरुद्ध आचरणों से भारत में राक्षस मन्दिर हो रहे हैं उनका दिग्दर्शन नाटक रूप में पं० लक्ष्मी नारायण मिश्र ने कराया है। लेखक एक आदर्श को अपनाये हुए हैं, उसके विरुद्ध व्यवहार की आप कटु आलोचना करते देखे जाते हैं। नये पुराने सभी विचारों की आलोचना है। दाम १।।)

मुक्ति का रहस्य—यह भी पण्डित लक्ष्मी नारायण मिश्र का लिखा हुआ नाटक है। नयी सभ्यता की जिन उच्छृंखल लहरों से भारतीय घर राक्षस मन्दिर हो रहे हैं, उस प्रवाह को किस प्रकार रोककर मुक्ति का रहस्य जाना जा सकता है, इसमें वही दिखलाया गया है। मूल्य १।।)

रश्मि—श्रीमती महादेवी वर्मा जी की कविताओं का इसमें संग्रह है। पुस्तक हिन्दी संसार में ख्याति पा चुकी है। मूल्य १।)

बलिदान—बंगला के स्वर्गीय महाकवि बाबू गिरीश चन्द्र घोष के करुणापूर्ण सामाजिक नाटक का यह हिन्दी अनुवाद बाबू रामचन्द्र वर्मा जी ने किया है। चरित्र चित्रण उत्तम है। दाम १।)

गल्प लहरी—स्वर्गीय बाबू गिरजा कुमार घोष की १५ कहानियों का इसमें संग्रह है। आज कहानी साहित्य का बहुत विकास हुआ; किन्तु २० पच्चीस वर्ष पहले की झांकी इसमें देखी जा सकती है। दाम १।)

नवीन पिंगल—श्रीयुक्त अवध उपाध्याय जी ने यह पिंगल की पुस्तक लिखी है। प्राचीन और कुछ नवीन बातों का इसमें अच्छा समावेश है। मूल्य ।।।)

हिन्दूपति प्रताप—महाराणा प्रतापसिंह का जीवन चरित्र व्याख्यान वाचस्पति पं० गणेशदत्त शर्मा और इन्द्रजी ने लिखा है। थोड़े में महाराणा के महत्वपूर्ण जीवन की बातें आ गयी हैं। मूल्य ।–) पता पुस्तक भण्डार लहरिया सराय।

सम्राट पंचमजार्ज—सम्राट पंचमजार्ज, उनके कुटुम्बीजन, उनकी चर्या, स्वभाव, देश भ्रमण, दिनचर्या आदि का वर्णन अच्छे ढङ्ग से हुआ है। लेखक श्री रामलोचन शरण विहारी जी हैं। दाम ।।)—पता पुस्तक भण्डार लहरिया सराय।

ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन—रायबहादुर श्री बेचूनारायणजी ने ब्रह्म समाज के आचार्य श्री केशवचन्द्र सेन का जीवन चरित्र लिखा है और अच्छा लिखा है। दाम ।।=) पता पुस्तक भण्डार लहरिया सराय।

कैलाशदर्शन—श्रीरामलोचन शरण विहारीजी ने इसका सम्पादन किया है। भूतपूर्व डिप्टी कलेक्टर श्री शिवनन्दन सहाय एम० ए० इसके लेखक हैं। लेखक ने स्वयं कैलाश की यात्रा कर अपनी यात्रा का मनोरंजक वर्णन किया है। दाम १।।) पता पुस्तक भण्डार लहरिया सराय।

माननीया श्रीमती पण्डित—माननीया श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित का इसमें जीवन चरित्र दिया गया है। पत्ररूप में बहुत मनोरंजक और कड़ी भाषा में उनके परिवार तथा उनके सार्वजनिक कार्यों का दिग्दर्शन बहुत अच्छा करा दिया गया है। लेखक हैं दारागंज प्रयाग के राय दुर्गाप्रसाद रस्तोगी "आदर्श"। आपसे ही १।।) में पुस्तक प्राप्त होगी।

नोट—पत्रिका के दूसरे, तीसरे अंक में स्त्री कवि कौमुदी से लेकर पृथ्वीराज तक और इस अंक में आरम्भ से लेकर नवीन पिंगल तक की सब पुस्तकें प्रयाग के साहित्य भवन लिमिटेड से प्राप्त हुई हैं। इसके लिये संस्था को अनेक धन्यवाद है।

स्थायी समिति का प्रथम अधिवेशन

स्थायी समिति की बैठक शनिवार, १३ पौष १९९७, तारीख २८-१२-४० को १२॥ बजे रात अधिवेशन स्थान नूतन मराठी विद्यालय हाईस्कूल, पूना में हुई। निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे—

१—श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी,	कलकत्ता
२—" उदयशंकर भट्ट,	लाहौर
३—" देवदत्त शास्त्री,	दिल्ली
४—" वाचस्पति पाठक,	प्रयाग
५—" नन्ददुलारे वाजपेयी,	"
६—" रामचन्द्र टंडन,	"
७—" शालिग्राम वर्मा,	"
८—" रामलखन शुक्ल,	"
९—" बाबूराम सक्सेना,	"
१०—" पुरुषोत्तमदास टंडन,	"
११—" जगन्नाथप्रसाद शुक्ल,	"
१२—" उदयनारायण तिवारी,	"
१३—" कृष्णदेवप्रसाद गौड़,	काशी
१४—" रामधन शर्मा,	दिल्ली
१५—" ललिताप्रसाद शुक्ल,	कलकत्ता
१६—" परमेष्ठीदास जैन	सूरत
१७—" दुलारेलाल भार्गव,	लखनऊ
१८—" सावित्री,	"
१९—" राजेन्द्रशंकर भट्ट	अजमेर
२०—" उपेन्द्रशंकर द्विवेदी,	इटारसी
२१—" गो० प० नेने,	पूना
२२—" ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल,	प्रयाग
२३—" वि० मा० देशमुख,	पूना

२४—श्री हरी शिवराम सहस्त्रबुद्धे	पूना
२५—" म० स० बर्वे,	"
२६—" सोनुताई काले,	"
२७—" दि० गो० दाण्डेकर,	"
२८—" ब० अ० गद्रे,	"
२९—" शंकर दामोदर चितले,	"
३०—" शंकर रामचन्द्र दाते	"
३१—" कालिकाप्रसाद दीक्षित,	इन्दौर
३२—" चन्द्रशेखर वाजपेयी,	प्रयाग
३३—" लक्ष्मीधर वाजपेयी,	कानपुर
३४—" गुलाबराय,	आगरा
३५—" भी० म० गुरू,	शोलापुर
३६—" रामबालक शास्त्री,	काशी
३७—" इंद्रशंकर मिश्र	"
३८—" रमाकान्त त्रिपाठी	प्रयाग
३९—" सत्यप्रकाश	"
४०—" रामनाथ शर्मा	ग्वालियर

१—सर्वसम्मति से श्री अम्बिकाप्रसादजी वाजपेयी ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

२—सम्मेलन के पदाधिकारियों के निर्वाचन का विषय उपस्थित किया गया। श्री पुरुषोत्तमदास टंडन जी ने प्रस्ताव किया कि पंडित अमरनाथ झा कार्यवाहक उपसभापति चुने जायँ।
श्री सीताराम चतुर्वेदी ने प्रस्ताव का समर्थन किया।
सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

३—श्री पुरुषोत्तमदास टंडन जी ने प्रस्ताव किया कि श्री अम्बिकाप्रसादजी वाजपेयी दूसरे उपसभापति चुने जायँ।
श्री ललिताप्रसाद शुक्ल ने प्रस्ताव का समर्थन किया।
सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

४—श्रीवाचस्पति पाठक ने प्रस्ताव किया कि अन्य सब पदाधिकारियों को चुनने का भार श्री अमरनाथ झा जी ही पर छोड़ दिया जाय।

श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ ने प्रस्ताव का अनुमोदन किया।

श्री ललिताप्रसाद शुक्ल तथा श्री सीताराम चतुर्वेदी ने प्रस्ताव का विरोध किया।

श्री बाबूराम सक्सेना तथा श्री भाई कोतवाल ने प्रस्ताव का समर्थन किया।

सभापति जी ने श्री पाठक जी के प्रस्ताव पर मत लिए। पक्ष में ८ मत और विपक्ष में इससे कहीं अधिक मत आये।

बहुमत से प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

५—प्रधान मंत्री के लिए श्री रामबालक शास्त्री ने डा० रामप्रसाद त्रिपाठी का नाम प्रस्तावित किया।

श्री सीताराम चतुर्वेदी तथा श्री ललिताप्रसाद शुक्ल ने प्रस्ताव का समर्थन किया।

सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

६—सर्वसम्मति से निम्नलिखित शेष अन्य पदाधिकारी निर्वाचित हुए—

अर्थमंत्री—श्री निरंजनलाल भार्गव
प्रबन्धमंत्री—श्री रामलखन शुक्ल
परीक्षामंत्री—श्री दयाशंकर दुबे
साहित्यमंत्री—श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल
प्रचारमंत्री—श्री रामनारायण मिश्र
संग्रहमंत्री—श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल
आयव्यय निरीक्षक—श्री राधाकृष्ण तिवारी

७—श्री सीताराम चतुर्वेदी ने अब तक के प्रधान मंत्री श्री डा० बाबूराम सक्सेना जी की सेवाओं तथा अन्य कार्यकर्ताओं के साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार के लिए धन्यवाद का प्रस्ताव उपस्थित किया जिसका अनुमोदन श्री ललिताप्रसाद जी शुक्ल ने किया।

प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

८—सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुआ—

"श्रीमन्त औंधनरेश ने अपनी राजकुमारी को सम्मेलन में कीर्तन करने

की जो अनुमति दी उसके लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थायी समिति उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करती है। राजकुमारी जी ने अपने कीर्तन द्वारा कला का जो प्रदर्शन किया उसका लोगों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा और लोगों ने उससे लाभ उठाया। समिति की कामना है कि राजकुमारी जी चिरंजीवी हों और उनकी प्रतिभा की दिन दिन वृद्धि हो।"

रामप्रसाद त्रिपाठी
एम० ए०, डी० एस्सी०
प्रधान मंत्री

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की पुस्तकों
तथा
'सम्मेलन पत्रिका'
का प्रचार करना प्रत्येक हिन्दी प्रेमी का कर्त्तव्य है।

एक प्रस्ताव

आपने बहुत-सा साहित्य पढ़ा होगा। पत्र-पत्रिकायें भी बहुत देखी व पढ़ी होंगी; पर अगर एक बार आपकी निगाह

'जीवन-साहित्य'

और

सस्ता साहित्य मण्डल

की राष्ट्रीय चेतनास्पद और जीवनोपयोगी पुस्तकों पर पड़ जाय तो आपके विचारों में उथल पुथल होने लगेगी आप अपने को एक नई दुनिया में पावेंगे। **'जीवन-साहित्य'** चार महीने के थोड़े से समय में हिन्दी साहित्य में अपना जो स्थान बना लिया है वह किसी भी मासिक पत्र के लिए गौरव और आनन्द की बात है। तथा मण्डल ने हाल ही में १, समाजवाद; पूंजीवाद २, मेरी मुक्ति की कहानी ३, खादी-मीमांसा ४, बापू ५, विनोबा और उनके विचार ६, सीख की कहानियाँ आदि जो नई पुस्तकें प्रकाशित की हैं, उनको हिन्दी जनता ने मुक्तकण्ठ से सराहा है इसी प्रकार मण्डल अब आगे पं० जवाहरलाल जी नेहरू की नई रचना

लड़खड़ाती दुनिया

पं० रामननेश त्रिपाठी की

मालवीयजी के साथ तीस दिन

तथा **दुनिया की शासन-प्रणालियों** पर नवीन पुस्तकें शीघ्र ही प्रकाशित करने जा रहा है। जो हिन्दी में अपने ढंग के अमूल्य प्रकाशन होंगे इन सबकी जानकारी के लिए तथा हिन्दी साहित्य की प्रगति से परिचित होने के लिए आपको

'जीवन-साहित्य'

अवश्य देखना चाहिए वार्षिक मूल्य २) है। मण्डल के ग्राहकों से इसका आधा मूल्य लिया जायगा।

सस्ता साहित्य मण्डल नई दिल्ली

शाखायें: दिल्ली, लखनऊ, इन्दौर

साहित्य संदेश के उपन्यास-अङ्क के कुछ लेख और उनके लेखक

उपन्यास—	श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी
उपन्यास का शरीर विज्ञान—	श्री गुलाबराय
उपन्यास का स्वरूप—	श्री विनोदशंकर व्यास
कथा-साहित्य का जीवन-पृष्ठ—	श्री शांतिप्रिय द्विवेदी
हिन्दी का कथा-साहित्य—	श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी
हिन्दी उपन्यासों का प्रवृत्ति-गत विकास—	श्री गोपालप्रसाद व्यास
हिन्दी उपन्यास का भविष्य—	श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त
हिन्दी उपन्यासों के कुछ अभाव—	श्री ताराशंकर पाठक
उपन्यासों का वर्गीकरण—	श्री रामचन्द्र शुक्ल

* * *

हिन्दी उपन्यासों के तीन अग्रदूत—१–श्री देवकीनन्दन खत्री, २–श्री गोपालराम गहमरी, ३–श्री किशोरीलाल गोस्वामी

प्रेमचन्द—	श्री गोपालप्रसाद व्यास
प्रसादजी के उपन्यास—	श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़
जैनेन्द्रकुमार: दो दृष्टिकोण से—	१–श्री नन्ददुलारे वाजपेयी २-श्री प्रभाकर माचवे
सियारामशरणजी उपन्यासकार के रूप में—	श्री गुलाबराय
उपन्यासकार कौशिकजी—	श्री शर्मनलाल अग्रवाल
भगवतीचरण वर्मा (उपन्यासकार)—	श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त
पं० भगवतीप्रसाद वाजपेयी के उपन्यास—	श्री उदयशंकर भट्ट
पं० चतुरसेन शास्त्री—	श्री बद्रीप्रसाद सारस्वत
निरालाजी के उपन्यास—	श्री गोपालप्रसाद व्यास
पंच-पात्र	१ श्रीनाथसिंह, २ उषादेवी मित्रा, ३ पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' ४ अनूपलाल मंडल, ५ राजा राधिकारमणसिंह

* * *

बंगला, मराठी, गुजराती तथा अंग्रेज़ी के उपन्यासों का विकास तथा उनका साहित्य

* * *

हिन्दी के प्रमुख उपन्यासकार—परिचय और उनके अनुभव—

इस अङ्क का मूल्य १) है। स्थायी ग्राहकों को मुफ्त पत्र का वार्षिक मूल्य ३) है। विद्यार्थियों से २) मात्र।

पता—मैनेजर, साहित्य-संदेश, साहित्य-रत्न-भण्डार, आगरा

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के नवीन प्रकाशन

बुद्ध चरित्र—रचयिता पं० रामचंद्र शुक्ल मूल्य २॥) महात्मा बुद्ध का उज्वल चरित्र, सुंदर ब्रजभाषा काव्य। इस पुस्तक की महत्वपूर्ण भूमिका में ब्रज, खड़ी और अवधी भाषाओं का व्याकरण विवेचन किया गया है।

सोवियत-भूमि—ले० महापंडित राहुल सांकृत्यायन, मूल्य ५) रूस के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिये हिंदी में अद्वितीय ग्रंथ।

मूर्तिकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) भारतवर्ष की मूर्तिकला की आदि से अंत तक तात्विक व्याख्या।

चित्रकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) चित्रकला पर सर्वोतम पुस्तक

बाल-मनोविज्ञान—ले० पं० लालजीराम शुक्ल, मूल्य १।) हिंदी में बाल-मनोविज्ञान संबंधी सर्वश्रेष्ठ रचना।

मआसिरुल् उमरा, भाग १ और २—अनु० बाबू ब्रजरत्नदास, मूल्य ४) प्रति भाग। मुगल शासनकाल के सरदारों की सबसे प्रामाणिक जीवनियां।

बिहार में हिंदुस्तानी—ले० पं० चंद्रबली पांडेय, मूल्य ।) बिहार प्रांत में हिंदी हिंदुस्तानी समस्या की तात्विक व्याख्या।

भाषा का प्रश्न—ले० पं० चंद्रबली पांडेय, मूल्य ॥) भाषा संबंधी प्रश्नों का विस्तृत और विवेचनापूर्ण उत्तर।

कचहरी की भाषा और लिपि—ले० पं० चंद्रबली पांडेय मूल्य ।॥) अदालतों की भाषा और लिपि का विस्तृत विवेचन।

मध्य प्रदेश का इतिहास—ले० रायबहादुर डा० हीरालाल बी० ए०, १॥)

हिंदी साहित्य का इतिहास—ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य ५) प्रवद्धित संस्करण हिंदी साहित्य का सबसे अच्छा और विस्तृत इतिहास।

रघुनाथ रूपक—संपादक महताबचंद खारैड, मूल्य २) डिंगल भाषा का अत्युत्तम काव्य।

नैपोलियन बोनापार्ट—ले० लाला राधामोहन गोकुलजी, मूल्य १)

सिक्खों का उत्थान और पतन—ले० पं० नंदकुमार देव, मूल्य १)

भीष्म पितामह—(जीवनी) ले० गणपति जानकी राम दुबे, मूल्य १)

आदर्श और यथार्थ—ले० बाबू पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव, मूल्य ।॥) काव्य में आदर्शवाद और यथार्थवाद का बहुत स्पष्ट और ऐतिहासिक विवेचन।

मालती माला—(कहानी) ले० श्रीमती मालती शर्मा, मूल्य ॥)

त्रिवेणी—ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य १) सूर, तुलसी और जायसी पर लेखक के आलोचनात्मक निबंधों के विशिष्ट अंशों का संग्रह।

मिलने के पते—प्रत्येक नगर के प्रतिष्ठित पुस्तक-विक्रेता
अथवा नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

यू० पी०, सी० पी०, बरार, भूपाल, अलवर, तथा बीकानेर आदि कितने ही देशी राज्यों द्वारा पुस्तकालयों तथा शिक्षा-संस्थाओं के लिए स्वीकृत

वार्षिक मूल्य २)

साधना

एक प्रति ।)

[विविध विषय विभूषित साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक मासिक पत्रिका]

सम्पादक—श्री० सत्येन्द्र, एम० ए०

सञ्चालक—गंगाप्रसाद एण्ड सन्स
पुस्तक प्रकाशक, आगरा

कार्यालय—दी एज्यूकेशनल प्रेस
बाँके-विलास, आगरा

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन (स्पीकर यू० पी० असेम्बली)

साधना के कई अङ्क मिले मुझको अच्छे लगे धन्यवाद आपका प्रयत्न सफल हो यह कामना है

श्री सम्पूर्णानन्द (भू० पू० शिक्षा-मन्त्री)

मैं आपकी साधना की प्रत्येक प्रति को आद्योपान्त अत्यन्त रुचि से पढ़ता हूँ इसमें जो सुपाठ्यसामग्री रहती है उसके देखते हुए इसका मूल्य भी अल्प है। आशा है प्रत्येक साहित्य-प्रेमी इस पत्रिका को अपनायेगा।

प्रताप (कानपुर)

इस अंक के लेखकों में ख्यातिनामा साहित्यिकगण हैं पत्रिका का मुद्रण और आकृति साफ़, सुदृश्य और आकर्षक है प्रथम अङ्क को देखकर पत्रिका होनहार मालूम होती है ऐसी सुन्दर पत्रिका निकालने के लिए हम इसके संचालकों को हार्दिक बधाई देते हैं।

देशदूत (इलाहाबाद)

'साधना' यह साहित्यिक मासिक पत्रिका पिछले दो महीने से प्रकाशित होने लगी है। अब तक जितने अंक प्रकाशित हुए हैं उन्हें देखने से यह स्पष्ट प्रकट होता है कि 'साधना' को अनेक प्रतिष्ठित लेखकों का सहयोग प्राप्त है। यह बड़ी सुबुद्धि और सुन्दरता के साथ सम्पादित हुआ है और हिन्दी के प्रेमियों के पढ़ने और मनन करने योग्य इसमें काफ़ी सामग्री रहती है।

नमूने का अंक मुफ़्त में मँगाने के लिए निम्न पते पर लिखिए:—

पता—साधना कार्यालय, बाँके विलास, आगरा।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा

प्रकाशित कुछ पुस्तकें

(१) सुलभ साहित्यमाला

१ भूषण ग्रन्थावली	२)
२ हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	॥)
३ भारत गीत	≡)
४ राष्ट्रभाषा	॥)
५ शिवाबावनी	≡)
६ सरल पिंगल	।)
७ भारतवर्ष का इतिहास भाग १	२॥)
८ ” ” ” ” २	२।)
९ व्रजमाधुरीसार	२॥)
१० पद्मावत पूर्वार्द्ध	१), १।)
११ सत्य हरिचन्द्र	।–)
१२ हिन्दी भाषा सार	।॥)
१३ सूरदास की विनय पत्रिका	≡)
१४ नवीन पद्यसंग्रह	।॥)
१५ कहानी कुञ्ज	॥=)
१६ बिहारी संग्रह	≡)
१७ कवितावली	।॥)
१८ सुदामा चरित्र	।)
१९ अलंकार प्रकाश	।=)
२० कबीर पदावली	।॥=)
२१ हिन्दी गद्य निर्माण	१॥)
२२ हिन्दी साहित्य की रूप रेखा	।)
२३ सती करुणाकी	॥)
२४ हिन्दी पर फारसी का प्रभाव	॥=)
२५ पार्वती मङ्गल	।)
२६ सूर पदावली	॥=)
२७ नागरी अंक और अक्षर	≡)
२८ हिन्दी कहानियाँ	१॥)
२९ ग्रामों का आर्थिक पुनरुद्धार	१।)
३० तुलसी दर्शन	२॥)
३१ भूषण संग्रह भाग	।–)
३२ भूषण संग्रह भाग	॥=)

(२) साधारण पुस्तकमाला

१ अकबर की राज्यव्यवस्था	१)
२ प्रथमालंकार निरूपण	≡)

(३) वैज्ञानिक पुस्तकमाला

१ सरल शरीर विज्ञान	॥), ।॥)
२ प्ररम्भिक रसायन	१)
३ सृष्टि की कथा	१)

(४) बाल साहित्यमाला

१ बाल पञ्चरत्न	॥)
२ वीर सन्तान	।=)
३ बिजली	=)

(५) ओझा अभिनन्दन ग्रन्थ

१६)

रजिस्टर्ड नं० ए०

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अभूतपूर्व साहित्य प्रकाशन

प्रेमघन-सर्वस्व

(प्रथम भाग)

'दो शब्द' लेखक, माननीय श्री पुरुषोत्तमदास जी टंडन

परिचय-लेखक, आचार्य पंडित रामचंद्र जी शुक्ल

आधुनिक हिन्दी के निर्माता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति स्वर्गीय उपाध्याय पंडित बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की सम्पूर्ण कविताओं का विशाल संग्रह-ग्रंथ । हिन्दी में प्रथम और अपूर्व काव्य । लेखक के चित्रों से सुसज्जित और सजिल्द । मूल्य ४॥)

बाल साहित्यमाला

बालभारती
श्रीयुत श्रीनाथसिंह
मूल्य ।=)

वीर शतमन्यु
श्रीयुत 'स्वर्णसहोदर'
मूल्य ।)

बालकथा
सौ० श्रीमती कमलाबाई किबे
मूल्य ॥)

छत्रपति शिवाजी
श्रीयुत गुर्ती सुब्रह्मण्यम् एम० ए०
मूल्य ।)

बाल कवितावली
श्री सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ
मूल्य ।)

साधारण पुस्तकमाला

चित्ररेखा
श्रीरामकुमार वर्मा एम० ए०
मूल्य १॥)

गोरख बानी
डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल एम० ए०,
डी० लिट्०

डिंगल में वीररस
श्री मोतीलाल मेनारिया एम० ए०
मूल्य १॥।)

आधुनिक कवि—१
श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए०
मूल्य १॥)

वीर काव्य संग्रह
श्री उदयनारायण तिवारी एम० ए०
श्री भागीरथप्रसाद दीक्षित 'साहित्यरत्न'
मूल्य २)

साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

मुद्रक—गिरिजाप्रसाद श्रीवास्तव, हिन्दी साहित्य प्रेस, प्रयाग ।
प्रकाशक—साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।

सम्मेलन पत्रिका

भाग २८] फाल्गुन, चैत्र १९९७ [संख्या ७, ८

पुणें के सम्मेलन में सभापति के आसन से श्री टंडनजी का भाषण

[पुणें के पिछले हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अवसर पर श्री सम्पूर्णानन्दजी की अनुपस्थिति के कारण श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने पहिले दिन सभापति का आसन ग्रहण किया था। श्री सम्पूर्णानन्दजी के लिखित भाषण के पढ़े जाने के बाद श्री टंडनजी ने एक मौखिक भाषण दिया। रिपोर्टरों ने कार्य विवरण के लिए उस भाषण को शीघ्र लिपि द्वारा लिखा। जिस रूप में उन्होंने भाषण लिखकर दिया वह टंडनजी को दिखाया गया। उनके किए गये कुछ साधारण परिवर्तनों के बाद वह भाषण नीचे प्रकाशित किया जाता है।—संपादक]

देवियो और भाइयो,

सम्मेलन का महाराष्ट्र में आना कोई नयी बात नहीं है। यह सम्मेलन यहां पहली बार नहीं आया है। सम्मेलन तो पहले नागपुर में हो चुका है, बम्बई में हो चुका है, इन्दौर में हो चुका है, और इसका फिर यहां आना प्रकट करता है कि हिन्दी से कितना गहरा नाता इस प्रदेश का है। वास्तव में हिन्दी राष्ट्रभाषा इसीलिए कही जाती है, और इसीलिए अन्यभाषाभाषी उसे राष्ट्रभाषा के स्वरूप में देखते हैं, कि हिन्दी एक ऐसी भाषा है जिसमें हमारे देश की सब भाषाओं का समन्वय है। यह अच्छी तरह से ध्यान देने की बात है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा क्यों है। इसलिए नहीं कि वह प्रयाग, काशी, लखनऊ, या देहली में बोली जाती है, बल्कि इसलिए कि दूसरी संस्कृतियां अर्थात् महाराष्ट्र संस्कृति, बंगीय संस्कृति, गुजराती संस्कृति, मद्रासी संस्कृति उस भाषा में अपने स्वरूप को भी देख सकती हैं। भाषा का सम्बन्ध संस्कृति से है और यह अच्छी तरह से विचार करने की बात है, विशेषकर उनके लिए जो राष्ट्रभाषा के प्रश्न का अध्ययन कर रहे हैं और भावी राष्ट्रभाषा का

स्वप्न देख रहे हैं, कि हम जिस भाषा को राष्ट्रभाषा का स्वरूप देना चाहते हैं, उसमें यह आवश्यक गुण होना चाहिये कि वह अन्य सब देशी भाषाओं के समीप हो। हमारी राष्ट्रभाषा का असली स्रोत हमारी राष्ट्रीयता ही है। यह बात मैं जानता हूँ, क्योंकि मैं इस काम में बहुत वर्षों से लगा हूँ, कि हमारी आधुनिक राष्ट्रीयता के उत्थान में राष्ट्रभाषा की गहरी सहायता है। जिस भाषा को हमारी जनता समझ नहीं सकती उससे हमें राष्ट्रीयता की प्रेरणा कैसे मिलेगी?

यहां पुणें में ही थोड़े दिन हुए मुझसे यह कहा गया कि यहां पर उत्तर भारतीय कांग्रेसी नेता आये और उन्होंने अरबी फ़ारसी मिश्रित भाषा में जो भाषण दिये वह लोगों की समझ में नहीं आये। किन्तु मेरे लिये यह सौभाग्य की बात है कि जब मैंने यहां भाषण दिया तो मुझसे यह कहा गया कि तुम्हारी भाषा हम लोगों ने अच्छी तरह समझ ली और अगर यह भाषा राष्ट्रभाषा होने जा रही है तो हमें कोई डर नहीं है। बात यह है कि कुछ वक्ता हिन्दुस्तानी के नाम पर ऐसी अपरिचित शब्दावली और मुहावरे का प्रयोग करते हैं जिसे हमारे देश के बहुत लोग बिल्कुल ही नहीं समझ सकते। यह बात केवल महाराष्ट्र वालों के लिए ही नहीं, बल्कि बंगालियों के लिए, मद्रासियों के लिए और सब अहिन्दी भाषियों के लिए लागू है। हमारी भाषा का स्वरूप ऐसा होना चाहिये जिसको सब साधारण भारतवासी अपने समीप देख सकें और ग्रहण कर सकें।

बहुत वर्षों से मैं इस बात का हामी रहा हूँ कि हमारी हिन्दी में दूसरी भाषा के शब्दों का समन्वय हो। राष्ट्रीयता की दृष्टि से यही उचित है कि हम लोग, जो देश भर में काम करना चाहते हैं और देश को एक सूत्र में बांधना चाहते हैं, दूसरी भाषाओं और उन भाषाओं की विचार शैलियों के साथ आदान प्रदान करने के लिए तैयार रहें। यह प्रेम से ही हो सकता है। बीस वर्ष से ऊपर की बात है जब संयुक्त प्रान्त में प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन आगरा में हुआ था। मैं उस सम्मेलन का सभापति था। मेरे निमन्त्रण पर वहाँ मौलाना हसरत मोहानी साहब भी उपस्थित थे। मैंने अपने भाषण में यह चर्चा की थी कि फ़ारसी और संस्कृत एक ही भाषा से निकली हैं, दोनों का स्रोत एक ही है, फ़ारसी और संस्कृत का कोई झगड़ा हिन्दी और उर्दू में न होना चाहिये क्योंकि फ़ारसी और संस्कृत शब्दों का बड़ी आसानी से समन्वय हमारी भाषा में किया जा सकता है। केवल इच्छा और लगन की

आवश्यकता है। फ़ारसी का नाम ईरानी है। ईरानी आर्य भाषा है।

एक बार जेल में एक फ़ारसी का काव्य पढ़ते समय मुझे यह जानने का कुतूहल हुआ कि फ़ारसी के कितने शब्द हैं जिनका कोई स्वरूप संस्कृत में इस समय भी मौजूद है। जेल में फुरसत से बैठा था। मैंने विश्लेषण आरम्भ किया तो मुझको मालूम हुआ कि फ़ारसी के ६० या ७० सैकड़ा शब्द संस्कृत शब्दों के समीप हैं। अगर ठीक प्रकार से प्रयत्न किया जाय, शब्दों का बहिष्कार न किया जाय, तो फ़ारसी और संस्कृत शब्दों का समन्वय होना कोई कठिन समस्या नहीं है। खुसरो ने यह काम किया था। रहीम ने किया था। अगर इस प्रकार का क्रम बराबर रहे तो फ़ारसी और संस्कृत शब्दों के समन्वय से हिन्दी का एक ऐसा स्वरूप हो सकता है जो सब को ग्राह्य हो। चत्वार, चहार और चार, वर्षा और वारिश, मेघ और मेह, सप्ताह और हफ्तह, असुर और अहुर, सिन्ध और हिन्द, हम इन सब शब्दों का प्रेम से अपनी भाषा में प्रयोग कर सकते हैं। हमसे 'सप्ताह' के साथ 'हफ्तह' का इस्तेमाल करने को कहा जाय तो ठीक है लेकिन यह ठीक नहीं हो सकता कि हमसे सिर्फ़ 'हफ्तह' कहने के लिए कहा जाय और 'सप्ताह' का बहिष्कार हो। दोनों शब्द चल सकते हैं। दोनों का स्रोत एक ही है। इस तरह आगे गंगा जमुना के मेल से एक धारा की तरह हमारी भाषा बह सकती है, लेकिन संगम करने के लिए प्रेम चाहिये।

आपको मालूम होगा कि पहले पहल हमारी भाषा के लिए 'हिन्दी' शब्द मुसलमानों ने दिया। कुरान का पहला अनुवाद जो हमारी भाषा में हुआ उसकी भूमिका में अनुवाद की भाषा 'हिन्दी' कही गयी थी। हैदराबाद और दक्खिन में फ़ारसी-अरबी मिश्रित ग़ज़लों की भाषा को भी पहले हिन्दी ही कहते थे। मैं अपने महाराष्ट्रीय भाइयों से, बंगीय भाइयों से, और गुजराती भाइयों से कहता हूँ कि राष्ट्रीयता के लिए आप हिन्दी को अपनाइये। जस्टिस शारदाचरन मित्र और जस्टिस कृष्णस्वामी अय्यर ने अपने अपने प्रान्त में इसको अपना कर चलाने का प्रयत्न किया था। यदि राष्ट्रीयता के नाते कोई चीज़ छोड़नी पड़े जिसके छोड़ने से राष्ट्रीयता बढ़ सके तो मुझे वह स्वीकार होगी। लेकिन यह एक तरफ से नहीं हो सकता। यह तो दोनों तरफ़ से होना चाहिये। अगर एक तरफ से तिरस्कार और बहिष्कार है तो भाषा का मेल संभव नहीं होगा। लखनऊ में उर्दू के एक कवि नासिख़ साहब हुए हैं। उन्होंने यहां तक किया कि हिन्दी के शब्दों की एक सूची तैयार की और

फैसला दिया कि उर्दू साहित्य में उन शब्दों का प्रयोग न हो। इन शब्दों को उन्होंने 'मतरूक' कहा। इस प्रकार से देशी शब्दों को छोड़ और विदेशी शब्दों को विशेष रीति से लाकर एक नक़ली ज़बान किसी दूसरे साहित्य ने नहीं गढ़ी। इन नासिख़ साहब को उनके एक शिष्य ने शीराज़ के सादी और हाफ़िज़ से भी बढ़कर बताया है। आपने फ़रमाया है—

"बुलबुले शीराज़ को है रश्क नासिख़ का सुरूर
असफ़हां इसने किये हैं कूचहाये लखनऊ।"

लखनऊ को भाषा की दृष्टि से ईरान का एक नगर बनाना इनको एक ऊंचा आदर्श दिखाई दिया। आज भी हमारे कुछ भाई इसी भावना से काम करना चाहते हैं। अगर यही भावना है तो समन्वय की चर्चा व्यर्थ है। मैं तो हिन्दू और मुस्लिम दोनों शब्दों को मिटाने के लिए तैयार हूँ, अगर आप अपने को केवल हिन्दी या हिन्दुस्तानी कहने लगें। मैं राष्ट्रीयता के नाम पर इसे स्वीकार करूँगा और उचित समझूँगा।

हिन्दी के द्वारा राष्ट्रीयता की भावना जागी है। कांग्रेस की पहुँच जनता के पास मुख्य कर इसी के द्वारा हुई है। पहले कांग्रेस में अंग्रेजी का ही जोर रहता था, केलकर साहब इसके गवाह हैं। कांग्रेस का कांस्टीट्यूशन, कांग्रेस के काग़ज पत्र, कांग्रेस की कुल कार्यवाही अंग्रेजी में ही रहती थी। प्रायः नेता लोग कोट-पतलून और हैट लगाकर आते थे और लच्छेदार अंग्रेजी भाषा में ठाट के साथ बोलते थे और वहीं पर उनके काम की इतिश्री थी। उस समय वहां केवल अंग्रेजी का ही बोलबाला था। मैंने कई बार यह यत्न किया कि वहां अंग्रेजी का बोलना बन्द हो जाय क्योंकि मुझे स्पष्ट दिखाई पड़ा कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए अंग्रेजी भाषा द्वारा काम करना हानिकर है। अंग्रेजी में अपने घर का काम कर आप स्वयं अपने मुँह से पुकारते हैं कि हम गुलाम हैं, गुलाम हैं। इस तरह से राष्ट्रीयता की आशा करना व्यर्थ है। राष्ट्रीयता फैलाने के लिए खाली प्रस्ताव पास करना नहीं है, बल्कि उसके लिए हृदय में एक चिघाड़ उठती है, एक प्रकार की जलन होती है कि हम जनता से उनके शब्दों में बातें करें, उन तक अपना सन्देश पहुँचावें।

मेरा भी नाम लेकर कुछ भाइयों ने कहा है कि मैंने 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग हिन्दी के अर्थ में किया है। यह तो अर्थ का अनर्थ करना है। कानपुर में मेरे प्रस्ताव पर कांग्रेस के कांस्टीट्यूशन में यह रखा गया था कि कांग्रेस का काम हिन्दुस्तानी में हो। वहां पर हिन्दुस्तानी शब्द का अर्थ

स्पष्ट था। वहां हिन्दी और उर्दू दोनों के रूप से मतलब था। उस समय विषय था अंग्रेजी के स्थान पर अपनी भाषा का प्रयोग। यह बात 'सब की बोली' में उद्धृत की गयी है। सच बात तो यह है कि कांग्रेस ने इस ओर कोई प्रयत्न नहीं किया कि अंग्रेज़ी हट जाय और हिन्दी और उर्दू उसका स्थान ले। महात्माजी के बारे में यह बात नहीं लागू है। किन्तु कांग्रेस में अब भी मुख्य काम अंग्रेजी में होता है। मैंने इसी अंग्रेजी को हटाने के लिए यह उद्योग किया था और यह शब्द 'हिन्दुस्तानी' धराया था। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है मैं सदा समन्वय के लिए तैयार हूँ। लेकिन यह दोनों ही तरफ़ से हो सकता है और अगर ऐसा नहीं हो सकता तो मैं हिन्दी के साहित्यिकों से कहूँगा कि अपने मार्ग पर आप आगे बढ़े चले जायँ, अपना कर्त्तव्य निबाहें, और हिन्दी की आन्तरिक शक्ति पर भरोसा करें।

अपने भाइयों को मैं सचेत करना चाहता हूँ कि वह मोम न बनें और आसानी से पिघल न जायँ। छोटी छोटी सी बातों के ही लिए हम अपनी भाषा को या संस्कृति को न बदलें। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि समय पर चीज़ें बदलती हैं—"समयभेदेन धर्मभेदः"। मैं समय की आवश्यकता को को देखकर परिवर्तन का पक्षपाती हूँ। हमारे यहाँ बहुत से संस्कार पुराने ज़माने से चले आते हैं और उनके विरोध में हमें मुंह खोलना भी मुश्किल हो जाता है, जैसे कुछ जातियों में विवाह शादी में लड़के का गदहे पर बैठाया जाना या कुम्हार का चकवा पुजाया जाना। मेरे कुटुम्ब में यह गदहा वाली रीत तो नहीं है पर कुम्हार वाली रीत अवश्य है। उसके विरोध में जब मैंने अपनी माता और स्त्री से कहा कि ऐसा न किया जाय तो उनका यह उत्तर होता रहा है कि हमारे यहाँ यह रीत परम्परा से चली आ रही है। उसका परम्परा से चला आना ही उनके लिए पर्याप्त दलील थी। मेरा निवेदन है कि हमें इन मूढ़ग्राहों से बचना चाहिये और बुद्धि और विवेक को अपने कामों में अधिक स्थान देना चाहिये। भाषा का भी स्वरूप बदलता रहता है। जो बालकृष्ण भट्ट की भाषा थी वह अब नहीं है। विचार और शैली दोनों में परिवर्तन हो रहा है। लेकिन दूसरों से घबड़ा कर या दुर्बलता के कारण हमको कोई परिवर्तन स्वीकार करना नहीं है। इसमें हीनता का भावमंडल बनना नहीं चाहिये। बुद्धि और विवेक से काम लेना है। हमारी भाषा में मराठी, तामील, तैलगू, गुजराती सब के शब्द आवेंगे और हमारी भाषा इन नये शब्दों से प्रौढ़ होती जायगी और उसकी

शक्ति बढ़ती जायगी । मैं तो यह चाहता हूँ कि हमारे हिन्दी मंच पर साम्प्रदायिक भावना न हो, कोई भी ऐसी भावना पैदा न हो जिससे हम राष्ट्रभाषा के उत्थान में हानि पहुँचे । इस दृष्टि से हम ईसाई, बहु मुसलमान, पारसी सब भाइयों का आदर करेंगे । अंग्रेजी भाषा का रू भी हर एक मुल्क में अलग अलग है । अमेरिका में तो उसमें बहुत अन्तर आ गया है । किन्तु अंग्रेजी वाले आज बड़े अभिमान से कहते हैं हमारी भाषा के १७, १८, करोड़ के लगभग बोलने वाले हैं । हमारी भ के बोलने वाले इस समय २४, २५ करोड़ हैं । यह संख्या बराबर बढ़ है । इस प्रस्ताव के कारण जो परिवर्तन आवश्यक हैं हम उनसे भय खायंगे । उसका हम स्वागत करेंगे । वे हमारी भाषा के प्यारे अंग और उसकी शक्ति बढ़ावेंगे । किन्तु परिवर्तन भय से या दबकर नहीं सकता । उसके पीछे दृढ़ विचार और भावना होने से ही वह सफल हो

परीक्षार्थियों को आवश्यक सूचना

संवत् १९९८ (सन् १९४१) की सम्मेलन परीक्षाओं के आरम्भ तिथि शुक्रवार, मार्ग कृष्ण ३, ता० ७ नवम्बर सन् १९४१ और उनके शुल्क तथा आवेदनपत्र स्वीकार करने की अन्तिम तिथि ता० १५ अगस्त १९४१ है । जो परीक्षार्थी परीक्षाओं में सम्मिलित होना चाहते हैं वे आवे पत्रों के छपे फॉर्म मई के प्रथम सप्ताह में सम्मेलन कार्यालय से मँगा लें।

परीक्षामं

सोरों में प्राप्त गोस्वामी तुलसीदास के जीवन-वृत्त से संबन्ध रखने वाली सामग्री की अंतरंग परीक्षा

[लेखक, डाक्टर माताप्रसाद गुप्त एम० ए०, डी० लिट्०]

['सम्मेलन पत्रिका' के गत श्रावण-भाद्रपद के अंक में 'सोरों में प्राप्त गोस्वामी तुलसीदास के जीवनवृत्त से संबंध रखनेवाली सामग्री की बहिरंग परीक्षा' शीर्षक खोजपूर्ण लेख प्रकाशित हो चुका है। इस लेख में इस संबंध की प्राप्त सामग्री की अंतरंग परीक्षा की गई है। हिन्दी संसार और विद्वानों के लिए यह लेख अत्यन्त महत्वपूर्ण है।]

अपने पिछले लेख में मैंने सोरों में प्राप्त गोस्वामी तुलसीदास के जीवन-वृत से सम्बन्ध रखने वाली सामग्री की बहिरंग समीक्षा की थी, प्रस्तुत लेख में उसकी अंतरंग परीक्षा का प्रयत्न करूँगा। यह परीक्षा स्वभावतः ऐसे ही उल्लेखों तक सीमित होगी जिनकी जाँच प्रमाणित साक्ष्यों के आधार पर की जा सकती है।

सोरों में प्राप्त कुल सामग्री में गोस्वामी जी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली तिथियाँ केवल तीन मिलती हैं: एक है विवाह-तिथि, दूसरी है द्विरागमन-तिथि, और तीसरी है गृहत्याग-तिथि। यह तिथियां हमें 'दोहा रत्नावली' के दो दोहों में मिलती हैं पिछली बार 'दोहा-रत्नावली' का परिचय देते हुए मैंने लिखा था "इस 'दोहा-रत्नावली' की विशेषता यह है कि इसमें हमें वे सभी दोहे तो मिलते ही हैं जो 'रत्नावली-लघु दोहा-संग्रह' में मिलते हैं, साथ ही नब्बे और भी ऐसे दोहे मिलते हैं जो 'लघु-दोहा-संग्रह' में नहीं हैं, और इन नब्बे दोहों में हमें गोस्वामीजी और उनकी स्त्री के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली बहुत सी ऐसी सामग्री मिलती है जो अन्यत्र नहीं मिलती।" वह दोहे जिनमें उपर्युक्त तिथियाँ मिलती हैं इन्हीं अतिरिक्त नब्बे में से हैं। दोहे इस प्रकार हैं।

बैस बारहीं कर गह्यो, सोरहिं गवन कराय।
सत्ताइस लागत करी, नाथ रतन असहाय ॥४१॥
सागर कर रस ससि रतन, संबत भो दुखदाय।
पिय वियोग जननी मरन, करन न भूल्यौ जाय ॥४२॥

पहले दोहे का आशय स्पष्ट है। दूसरे में 'सागर' से ७, 'कर' से 'रस' से ६ और 'ससि' से १ के अंकों का आशय लेने पर १६२७ की तिथि निकलती है। पता नहीं 'दोहा-रत्नावली' के सम्पादक ने[1] तथा भद्रदत्त जी वैद्य भूषण ने[2] किस प्रकार इस दोहे से १६२४ की तिथि निकाली है।

सं० १६२७ में रत्नावली सताईसवें में प्रवेश करती है, इसलिये उसका जन्म-सम्वत् १६०१ निकलता है। बारहवें में उसका पाणिग्रहण हुआ, इसलिए विवाह की तिथि सं० १६१२ होती है। इस पन्द्रह वर्षों के समय का कोई विस्तृत परिचय हमें 'दोहा-रत्नावली' में तो नहीं मिलता, पर मुरलीधर चतुर्वेदी कृत 'रत्नावली' में अवश्य मिलता है। उसको सुविधा के लिए नीचे उद्धृत किया जाता है।

कीन जथाविधि बिधि बिबाह। दीनबन्धु भरि उर उछाह ॥७८
तुलसी कर में सह विधान। रत्नावलि को दयो दान।
रतनावलि गई तुलसि गेह। तासु बढ़्यो पति पदनु नेह।
रतनावलि सी नार पाइ। तुलसी घर सुख गयो छाइ।
पितामही बहु दुख उठाइ। पोसे तुलसी कर लगाइ।
दंपति सेवा सों सिहाइ। सुरग गई कछु दिन बिताइ।
नंददास अरु चंदहास। रहहिं रामपुर मातु पास।
दंपति बसि बाराह धाम। लहत मोद आठोहु याम।
कबहुँ करत विद्या बिनोद। लहत सबद चातुरि प्रमोद।
संध्या बंदन आदि कर्म। करत सकल नित गृही धर्म।
रखत राममूरति सुगेह। उभय संधि पूजति सनेह।
बात बात श्री राम राम। तुलसी मुख लागइ ललाम।
भक्तनु घर बाँचहिं पुरान। तुलसी लहहिं धन और मान।
रत्नावलि तिहि चख चकोरि। मधुर बचन बोलत निहोरि।
कबहुँ न अप्रिय कहति बात। कबहुँ न सो पति सो रिसाति।
मींजति निज पति पाँय पीठि। नितहिं न्हवावति प्रेम दीठि।
पति वियोग नहिं छिन सुहात। जाति कबहूँ मुख उतरि जात।
करति सोइ जो पतिहि चाह। पति सेवा मन अति उछाह।

---

[1] —'दोहा-रत्नावली' का विषय-प्रवेश
[2] —'सनाढ्य-जीवन', तुलसी-स्मृति-अंक, पृ० १०

कबहुँ जातहू पति खिझाइ। पाइंन परि लेतहि मनाइ।
जो मन सोई बचन कर्म। पतिहिं लुकावति कछु न मर्म।
तारापति नामक सपूत। भयो तासु बुधि बल अकूत।
गयो दैवगति सुरगधाम। बिलपति रतनावली बाम।
भयो पुत्र को अधिक सोक। धरी धीर पतिमुख बिलोक।
तुलसीहू बहु करत प्यार। रतनावलि भइ हृदय हार।
ताहि न चाहत आँखि ओट। ओट होति हिय लगति चोट।
सिथिल परी प्रभु भजन रीति। बाढ़ी तिय में अधिक प्रीति।
ब्याह भये दसपंच वर्ष। इकदुख तजि बीते सहर्ष॥ १०५॥

इन पंक्तियों के बाद आने वाली पंक्तियों में गृहत्याग की कथा कही गई है, इससे यह स्पष्ट है कि इन पंक्तियों में आया हुआ 'पंचदश वर्ष' का विवरण उन्हीं पन्द्रह वर्षों का है जो 'दोहा-रत्नावली' के अनुसार भी विवाह और गृहत्याग के बीच में पड़ते हैं। सोरों में प्राप्त शेष सामग्री से इस पन्द्रह वर्षों के समय पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता, इसलिए उपर्युक्त विस्तार ही अभी विचार के लिए यथेष्ट होगा। सं० १६१२ से लेकर सं० १६२७ तक का यह विस्तार कहाँ तक प्रामाणिक है यही विचार करना है।

गोस्वामी जी के जीवन वृत्त के लिए बहिर्साक्ष्य बहुत है पर उसमें से कितना विश्वसनीय है और कितना नहीं यह कहना अधिकतर कठिन है। यदि हम पूर्ण रूप से किसी साक्ष्य पर विश्वास कर सकते हैं तो वह है 'अन्तःसाक्ष्य'; उनकी कृतियों से ही उनके जीवन पर यत्किंचित जो प्रकाश पड़ता वही सर्वथा प्रामाणिक है। फलतः प्रस्तुत विवेचन में हम उसी का अवलंबन ग्रहण करेंगे।

'अन्तर्साक्ष्य' के आधार पर विचार करते हुए नौ वर्ष हुए मैंने कवि की रचनाओं की तिथियाँ निर्धारित करने का एक प्रयत्न किया था[1] जिसमें मैं इस परिणाम पर पहुँचा था कि उपर्युक्त पन्द्रह वर्षों के भीतर कवि ने चार ग्रंथों की रचना की होगी : 'रामलला नहछू', 'जानकी मंगल', 'रामाज्ञा प्रश्न' और 'वैराग्य संदीपिनी' की।[2] इन चार ग्रंथों में से 'नहछू' और 'वैराग्य संदीपिनी' की प्रामाणिकता के संबंध में मुझे स्वतः सन्देह है, इसलिए प्रस्तुत प्रसंग

---

[1] —'हिन्दुस्तानी' : १९३२

[2] —वही, पृ० ४१—६३

में उसका आधार ग्रहण करना निरर्थक होगा। 'जानकी मंगल' और 'रामाज्ञा प्रश्न' का आधार ग्रहण करने के प्रसंग में हम उनकी प्रामाणिकता पर फिर भी विचार कर सकते हैं।

'जानकी मंगल' को अपने ही कवि की कृति मानने का अन्य कारणों के अतिरिक्त एक प्रमुख कारण यह है कि उसकी शैली वस्तुतः वही है जो 'मानस' की है; दोनों में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। दूसरे, कवि के जीवन-काल की ही, सं० १६३२ की एक प्रति उसकी अयोध्या में प्राप्त हो चुकी है[१] जिसकी एक प्रतिलिपि नागरी प्रचारिणी सभा काशी में है। फिर, उसकी प्रामाणिकता के विरोध में भी कोई बात नहीं मिलती, इसलिए हमें उसे प्रामाणिक मानना ही चाहिए। इसी प्रकार 'रामाज्ञा प्रश्न' को अपने ही कवि की कृति मानने का अन्य कारणों के अतिरिक्त एक प्रमुख कारण यह है कि इसकी शैली भी 'मानस' की शैली से भिन्न नहीं है, वस्तुतः दोनों एक ही हैं। और दूसरे, कवि के जीवन काल की ही, सं० १६५५ की, इसकी भी एक प्रति का पाया जाना प्रमाणित है।[२] ग्रंथ की प्रामाणिकता के विरोध में दो बातें बताई जाती हैं, एक यह कि इसकी रचना शिथिल है, दूसरे यह कि 'मानस' की भाँति सभा में परशुराम का आगमन इसमें नहीं होता, बल्कि बारात के लौटते समय मार्ग में होता है। पहली शंका के उत्तर में इतना ही जान लेना पर्याप्त होगा कि यह कवि की प्राथमिक कृतियों में से है और किसी भी प्राथमिक रचना में शैली या प्रबंध की प्रौढ़ता की आशा करना ही निरर्थक होगा। दूसरी शंका एक प्रमुख कथाभेद से संबंध रखती है, और यह कथाभेद 'जानकी मंगल'[३] और 'गीतावली'[४] के भी एक पद में पाया जाता है, अतएव इस कथाभेद के आधार पर भी 'रामाज्ञा प्रश्न' की प्रामाणिकता के विषय में संदेह करना युक्तियुक्त न होगा।

प्रश्न अब यह है कि इन दो ग्रंथों का रचनाकाल क्या होगा? रचनाओं

---

[१] —'हिन्दी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज-रिपोर्ट' सन् १९२०-२२, नं० १६८ (य)

[२] —'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' (श्रावण सं० १६६०) में 'रामाज्ञा-प्रश्न और रामशलाका' शीर्षक मेरा लेख देखिए।

[३] —'जानकी मंगल' १६६-२००

[४] —'गीतावली' उत्तर० ३८

के कालक्रम वाले अपने उपर्युक्त लेख में इन ग्रंथों के लिए जो तिथियां मैंने दी थीं, इधर के नौ वर्षों के मेरे अध्ययन ने उनमें कुछ परिवर्तन कर दिया है, यद्यपि मैं आज भी उन्हें 'मानस' से पूर्व भी रचनाएँ समझता हूँ। फिर भी, नौ वर्षों के बाद आज उनकी रचना-तिथियों पर पुनर्विचार किया जा सकता है।

'रामाज्ञा प्रश्न' में एक दोहा आता जो निम्नलिखित है:—

सगुन सत्य ससि नयन गुन अवधि अधिक नय बान।
होइ सुफल सुभ जासु जस प्रीति प्रतीति प्रभान॥७-७ ३॥

इसमें 'ससि' से १[१], 'नयन' से २[२], गुन से ६[३], 'नय' (नीति) से ४[४] और 'बान' से ५[५], और 'नय' से 'बान' के 'आधिक्य' से १ का आशय लेने पर १६२१ की तिथि निकलती है। फलतः 'रामाज्ञा-प्रश्न' की रचना-तिथि सं० १६२१ है इसमें सन्देह नहीं है। नौ वर्ष पूर्व जब मेरा ध्यान इस दोहे की ओर नहीं गया था तो मैं लगभग इसी परिणाम पर 'रामज्ञा प्रश्न' की कथावस्तु के आधार पर पहुँचा था।[६] मुझे हर्ष है कि इधर के मेरे अध्ययन ने उस परिणाम की सत्यता प्रमाणित कर दी है।

'जानकी मंगल' के अध्ययन के आधार पर मैं अपने उपर्युक्त लेख में इस परिणाम पर पहुँचा था कि अनुमानतः वह 'मानस' से लगभग दस वर्ष पूर्व की रचना होगी।[७] अब यद्यपि मैं उसे इतने पूर्व की रचना नहीं मानता फिर भी मुझे हर्ष है कि वह 'मानस' से पूर्व की रचना है यह मेरे इधर के अध्ययन ने प्रमाणित कर दिया है। हस्तलिखित पुस्तकों की खोज में सं० १६३२ की लिखी हुई 'जानकी मंगल' की एक ऐसी प्रति मिली है जिसका लिपिकार हमारे कवि के अतिरिक्त कोई व्यक्ति है।[८] इस प्रति की एक प्रति-

---

१—'कविप्रिया' ११—५
२—वही ११—७
३—वही ११—१६
४—वही ११—१०
५—वही ११—१२
६—'हिंदुस्तानी' (सन् १६३२) पृ० ५६
७—वही पृ० ५२, ५३
८—'हिंदी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज-रिपोर्ट' सन् १९२०-२२ नो० ११८ (य)

लिपि भी नागरी प्रचारिणी सभा काशी के कार्यालय में है। 'मानस' की कथा से इसकी कथा में जो अंतर है उस पर एक सामान्य प्रकाश मैं अपने कालक्रम वाले लेख में डाल चुका हूँ। उस कथा-भेद के लिये कुछ न कुछ समय का अन्तर दोनों रचनाओं में होना अनिवार्य है। 'मानस' में दर्शनीय अपेक्षाकृत प्रौढ़तर अभिव्यक्ति, गहनतर अध्ययन और विचारशीलता, सौम्यतर श्रृंगार-परिपाक और स्पष्टतर आध्यात्मिकता, दश वर्ष न सही, चार-पाँच वर्षों का अन्तर दोनों रचनाओं में रखने के लिए वाध्य करते हैं; इसलिए मैं समझता हूँ कि यदि और नहीं तो सं० १६२७ के पूर्व अवश्य 'जानकी मङ्गल' की रचना हुई होगी।

सोरों की किसी भी सामग्री में यह ध्यान देने योग्य है कि इन दो में से किसी भी रचना का उल्लेख नहीं होता है। 'मानस' ऐसी प्रशस्त और प्रौढ़ रचना के लिए उसकी भाषा पर अधिकार प्राप्त करने और शैली में अभ्यस्त होने में कुल चार ही वर्ष—या कदाचित् उससे भी कम ही—लगे होंगे, क्योंकि गृह त्याग की तिथि सं० १६२७ कही गई है, और वह भी एक विभाषा-भाषी को, इस पर सहसा विश्वास नहीं होता।

'रामज्ञा प्रश्न' में उसकी रचना-तिथि के अतिरिक्त भी कुछ ऐसे उल्लेख मिलते हैं जो इस सामग्री की प्रामाणिकता में अविश्वास उत्पन्न करते हैं।

(१) 'रामाज्ञा-प्रश्न' की रचना प्रह्लादघाट काशी-निवासी गंगाराम ज्योतिषी के लिए काशी में की हुई कही जाती है, और इस कथन में सत्य का यथेष्ट अंश जान पड़ता है। इन गंगाराम ज्योतिषी के उत्तराधिकारियों के पास ग्रंथ की एक ऐसी प्रति भी थी जिस पर सं० १६५५ में किया हुआ कवि का हस्ताक्षर था।[१] इसके अतिरिक्त इसके पाठ में एक दोहा भी आता है, जिसमें किन्ही गंगाराम को संबोधन है :—

> सगुन प्रथम उनचास सुभ तुलसी अति अभिराम।
> सब प्रसन्न सुर भूमिसुर गोगन गंगाराम॥ १-७-७

और भाषा भी इसकी अवधी है, अतः यह अवधीप्रान्त या काशी में ही रचा गया होगा साधारणतः ऐसा अनुमान किया जा सकता है। पर काशी-निवास या काशीयात्रा तक का कोई उल्लेख सोरों में प्राप्त सं० १६२७

---

[१] 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' (श्रावण सं० १६६०) में 'रामाज्ञा प्रश्न और रामशलाका' शीर्षक मेरा लेख देखिए।

तक की जीवन-सामग्री में नहीं होता। हाँ, यदि हम इस बात पर विश्वास न करें कि यह गंगाराम काशी के ही गंगाराम थे, अथवा इस पर कि कवि ने काशी आकर ही 'रामाज्ञा-प्रश्न' की रचना की, और यह कल्पना करें यह गंगाराम काशी के गंगाराम से भिन्न कोई व्यक्ति थे, अथवा यह कि काशी के गंगाराम ही सोरों पहुँच सकते थे और उनको वहाँ संबोधन किया जा सकता था, तो बात दूसरी है। पर, इन दूसरे गंगाराम के होने का, या काशी के गंगाराम के सोरों पहुँचने का भी कोई उल्लेख उपर्युक्त सामग्री में नहीं होता।

(२) चित्रकूट के सम्बन्ध में जो उल्लेख पुस्तक में आते हैं, वह भी कम ध्यान देने योग्य नहीं हैं। उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :—

पय पावनि बन भूमि भलि सैल सुहावनि पीठि।
रागिहि सीठि विसेषि थल बिषय बिरागिहि मीठि ॥२ ६ १॥
सगुन सकल संकट समन चित्रकूट चलि जाहु।
सीतारामप्रसाद सुभ लघु साधन बड़ लाहु ॥२-६-६॥
पय नहाइ फल खाइ जपु राम नाम षट मास।
सगुन सुमङ्गल सिद्धि सबु करतल तुलसीदास ॥७-४-७॥

बार-बार चित्रकूट-सेवन के इस आग्रह से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि कवि इन दोहों की रचना के पूर्व कई बार चित्रकूट गया होगा, और कम से कम एक बार छः मास तक वहाँ निवास करते हुए, विरक्त भाव से रहकर, फलाहार व्रत के साथ नियमपूर्वक राम नाम का उसने जप भी किया होगा। हमारा कवि ऐसे लोगों में से नहीं था जो स्वतः बिना किसी व्रत का पालन किये दूसरों को उसके पालन का उपदेश देते फिरते हैं। पर गृहत्याग से पूर्व किसी भी ऐसी यात्रा का उल्लेख सोरों वाली सामग्री में नहीं होता। इसके विपरीत ऊपर के उद्धरण में आई हुई निम्नलिखित पंक्तियाँ ध्यान देने योग्य हैं। सं० १६१२ से सं० १६२७ तक निरंतर किस प्रकार हमारा कवि विषयोन्मुख होता जाता है!

दंपति बसि बाराह धाम। लहत मोद आठोहु याम।८५
भक्तनु घर बाचहिं पुरान। तुलसी लहहिं धन और मान।९०
तुलसी हू बहु करत प्यार। रतनावलि भइ हृदय हार।१०२
ताहि न चाहत आँखि ओट। ओट होति हिय लगति चोट। १०३

सिथिल परी प्रभु भजन रीति । बाढ़ी तिय में अधिक प्रीति । १०४

यह सब अपनी चरम सीमा पर तब पहुँचता है जब वह 'नारि प्रेम मद-विभोर, होकर और समय का ज्ञान खोकर[1], अर्धरात्रि के समय[2], वर्षा की भयानक गंगा को पार कर ससुराल पहुँचता है[3], और स्त्री के इसप्रश्न पर

(बूझी) किमि आए अबेरि । गरजत घन गाढ़ी अंधेरि । १२१
कैसे उतरे गंगधार । मेरे जिय अचरज अपार । १२२

वह उत्तर देता है ।

(इमि सुनि बोले तुलसिदास) । तुमहिं मिलन उर अति हुलास । १२३
तुम बिन परत न मोहिं चैन । भई सांति तुव लखत नैन । १२७
तुव सुप्रेम में गङ्ग धार । सुमुखि सहज ही भयो पार । १२५

यह है सं० १६१२ से लेकर सं० १६२७ तक का गोस्वामीजी का जीवन, जिसका परिचय सोरों की सामग्री में मिलता है । दूसरी ओर 'रामाज्ञा प्रश्न' के अध्ययन से हम यह निश्चय पर पहुँचते हैं कि उसकी रचना-तिथि (सं० १६२१) के पूर्व ही उन्होंने अपने जीवन की धारा बदल दी थी।

'अन्तर्साक्ष्य' के प्रामाणिक तथ्यों से भी सोरों की सामग्री का विरोध इस प्रकार स्पष्ट है ।

संक्षेप में सोरों में प्राप्त सामग्री की यही अंतरंग परीक्षा है ।

१—'रत्नावली' —११२
२—वही —११३
३—वही —११४

हिन्दी-साहित्य की वर्त्तमान प्रवृत्तियाँ

[लेखक, श्री बिसाहूलाल सराफ़ बी० ए० 'साहित्यरत्न']

प्रवृत्तियों का प्रसार सभ्यता के साथ होता है। प्रारंभिक अवस्था में मनुष्य की प्रवृत्तियां सुषुप्तावस्था में रहती हैं। सभ्यता के विकास के साथ साथ वे क्रमशः जाग्रत होती जाती हैं। जाग्रत होने पर उनकी अभिव्यक्ति भी होने लगती है। प्रवृत्तियों की प्रारंम्भिक अभिव्यक्ति कतिपय निश्चित शब्दावली में होती है। कारण स्पष्ट है। सभ्यता की आदिम अवस्था में भाषा का क्षेत्र सीमित रहता है। कालान्तर में उस की कोष-वृद्धि होती जाती है। शब्द-शक्ति और व्यंजकता का विस्तार भी बढ़ने लगता है। व्यंजकता के विस्तार के कारण प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति को विस्तृत क्षेत्र प्राप्त हो जाता है। व्यंजना स्वतंत्र रूप में होने लगती है और ऐसा भी समय आता है, जब कि प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति इतनी अधिक हो जाती है कि उनका वर्गीकरण करना आवश्यक होता है। ऐसी ही परिस्थिति में प्रवृत्तियों का वर्गीकरण होता है। भिन्न भिन्न प्रवृत्तियां विभिन्न धाराओं में प्रवाहित होती हुई दृष्टिगत होती हैं।

हिन्दी-भाषा भाषी समाज तथा हिन्दी-साहित्य उपरोक्त सार्वभौमिक सिद्धान्त का अपवाद नहीं है। वर्त्तमान हिन्दी-साहित्य के प्रारम्भ में भाषा की व्यंजना-शक्ति उतनी विस्तृत नहीं थी जितनी कि आज है। आजकल खड़ीबोली का समय है। प्रारम्भ में खड़ीबोली की व्यंजकता इतनी स्मृद्ध नहीं थी जितनी कि आज है। वह समय था “ब्रजभाषा बनाम खड़ीबोली का”। लोग ब्रजभाषा के लालित्य पर लट्टू थे। उन्हें खड़ीबोली का खड़ापन खटकता था। जहां ब्रजभाषा बनाम खड़ीबोली का विषय आता वहां ब्रजभाषा के पोषक कहते “खड़ीबोली में लालित्य-पूर्ण व्यंजना की क्षमता नहीं है। वह तो अपने खड़ेपन के लिये प्रसिद्ध है। कविता की भाषा तो ब्रजभाषा है। गद्य की भाषा होने का खड़ीबोली साहस कर सकती है, पर पद्य की भाषा होने में उसे ब्रजभाषा से पिछड़ना ही पड़ेगा।” इस प्रकार “ब्रजभाषा बनाम खड़ीबोली” के वादविवाद होते रहे। किंतु समय ऐसा आया कि खड़ीबोली की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित होने लगा। आचार्य पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी ने खड़ीबोली का पक्ष लिया। काव्य-क्षेत्र में खड़ीबोली को खड़ी करने के लिये

बाबू मैथिलीशरण गुप्त, श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय, श्री ठाकुर गोपालशरणसिंह एवं पं० गयाप्रसाद शुक्ल "सनेही" अपना सहारा देकर सहायक हुए। उसकी व्यंजकता विस्तृत होगई तथा उसमें सफल काव्य-रचना होने लगी। आज वही भाषा सर्वमान्य हो रही है।

आज वह समय नहीं है। वर्तमान समय में खड़ीबोली की व्यंजकता अपने उत्कर्ष की ओर पूर्ण-रूपेण अग्रसर हो रही है। उसमें मानवप्रवृत्तियों के प्रकाशन के लिये विस्तृत क्षेत्र विद्यमान है। यही कारण है कि वर्त्तमान हिन्दी-साहित्य में अनेकानेक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिल रहा है। प्रस्तुत प्रवृत्तियां विभिन्न धाराओं में प्रवाहित हो रही हैं। उनका वर्गीकरण साहित्य के विभिन्न अंगों के वर्गीकरण के अनुसार हो सकता है।

साहित्य मनुष्य मात्र के भावों और विचारों का समुचित संकलन कहा जा सकता है। काल पाकर मनुष्य भावों से प्रेरित होता है। प्रेरणा के फल-स्वरूप विचार जागृत होते हैं। जागृत होने पर उनकी अभिव्यक्ति होती है। जब यह अभिव्यक्ति व्यक्ति विशेष के श्रीमुख से मुखरित होती है उस समय मौखिक साहित्य की सृष्टि होती है। इसी अभिव्यक्ति का लिखित स्वरूप प्रस्तुत होने पर उसे लिखित साहित्य का नाम मिलता है। लिपि-बद्ध साहित्य को ही साहित्य-शास्त्रियों ने साहित्य नाम दिया है। यद्यपि दैनिक बातचीत में भी साहित्यिकता का आभास होता है परन्तु उसके क्षणभंगुर होने के कारण उसे छोड़ दिया गया है।

साहित्य को भावों और विचारों का संकलन मान लेने पर उसकी विशदता का आभास होता है। मानव हृदय और मस्तिष्क अगणित भावों और विचारों का आगार है। अतएव यह स्वयं सिद्ध है कि साहित्य बहुत व्यापक विषय है। उसकी व्यापकता का पता लगाना इतना ही कष्ट-साध्य कार्य है जितना कि भावों और विचारों की गणना करना। यही कारण है कि उनकी गणना के स्थान में उनके अभिव्यक्ति की विभिन्न रीतियों की गणना की जाती है। अभिव्यक्ति की प्रधानतया दो प्रणालियां हैं, साधारण और विशेष। साधारण प्रणाली वह है जिसमें कि हम दैनिक जीवन में अपने भावों और विचारों को प्रगट करते हैं। विशेष प्रणाली वह है जिसमें हम उनको दैनिक जीवन की तरह न प्रगट कर विशेष प्रकार से करते हैं। पहिली का नाम गद्य और दूसरी का पद्य है। इस प्रकार साहित्य दो भागों में विभाजित होता है गद्य और पद्य। वर्त्तमान साहित्य की प्रवृत्तियों का अध्ययन करने के लिये वर्त्तमान

गद्य और पद्य की प्रवृत्तियों का अनुसंधान करना आवश्यक है।

गद्य-साहित्य—गद्य के अन्तर्गत उपन्यास, कहानी, नाटक, समालोचना, आदि का समावेश होता है। सामयिक उपन्यासों के प्रणयन का प्रारम्भ करने का श्रेय श्रीयुत मुंशी प्रेमचंदजी को है। आपने हिन्दी-उपन्यास क्षेत्र में पदार्पण करने के बाद ही "सेवा सदन" "रंगभूमि" "कायाकल्प" "कर्मभूमि" "ग़बन" "प्रतिज्ञा" आदि उत्कृष्ट रचनाएं भेंटकर उपन्यास के कथानक, कथोपकथन, पात्रचरित्र-चित्रण आदि का कलापूर्ण निर्वाह हुआ है। प्रेमचंदजी का आदर्श ग्रहण कर अनेक उपन्यास लेखक-हिन्दी-उपन्यास-क्षेत्र में अवतीर्ण हुए। फलतः "मंगल प्रभात" "कंकाल" "तितली" "गढ़ कुण्ठार" "भिखारिणी" "फांसी" "विदा" "देहाती दुनिया" आदि उपन्यास हिन्दी-भाषा भाषियों को प्राप्त हुए। आज कल सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक उपन्यास लिखे जा रहे हैं। उनमें से कुछ चरित्र-चित्रण-प्रधान और कुछ घटना-प्रधान हैं। समय की गति के साथ-साथ उपन्यासों के भविष्य के विषय में कुछ परिवर्तन का आभास मिल रहा है।

कहानी—वर्त्तमान समय कठिन जीवन के संघर्ष का समय है। जीवन-संघर्ष में व्यस्त रहने के कारण मनुष्य मात्र समय के अभाव का अनुभव करता है। समयाभाव के कारण उसे मनोरंजन के लिए अवकाश नहीं। परन्तु बिना मनोरंजन के निर्वाह भी असम्भव है। अतएव उसके लिए कम समय में अधिक मनोरंजन करना आवश्यक हो जाता है। "चन्द्रकान्ता सन्तति" सरीखे बड़े-बड़े उपन्यासों को ठण्डे दिमाग़ से बड़े धैर्य के साथ पढ़ने का समय नहीं रहा। यही कारण है कि बड़े-बड़े उपन्यासों का प्रचार कम होता जाता है। उपन्यासों के स्थान में कहानियों का प्राबल्य और प्रचार बढ़ रहा है। उपन्यासों की अपेक्षा कहानियों की लोकप्रियता और अधिकता का मूल कारण समय का अभाव है। सम्भवतः जीवन-संघर्ष और समयाभाव की उग्रता के साथ-साथ कहानी उपन्यास का स्थान ले लेंगी। वर्त्तमान कहानी लेखक, श्रीयुत कृष्णदेवप्रसाद जी गौड़ के शब्दों में "तीन श्रेणियों में विभाजित किये जा सकते हैं। वे हैं—प्रेमचंद स्कूल, प्रसाद स्कूल और उग्र स्कूल के लेखक। चौथी श्रेणी में अनुवादक लोग आते हैं।"

नाटक—प्राचीन काल में नाटक की गणना काव्य में होती थी। उसकी परख रंगमंच पर होती थी। अर्वाचीन मत के अनुसार नाटक के लिए

अभिनय की वस्तु होना आवश्यक नहीं है। इस मत के अनुसार नाटक दो प्रकार के हो सकते हैं। एक हैं अभिनेय नाटक जो रंगमंच की दृष्टि से उत्कृष्ट होते हैं। दूसरे प्रकार के नाटक अध्ययन करने योग्य हैं। प्रस्तुत विषय विबाद ग्रस्त है। हमारे यहां दोनों प्रकार के नाटक पाये जाते हैं। पं० राधेश्याम के नाटक अभिनेय और श्रीयुत स्वर्गीय प्रसाद के नाटक अध्ययन की वस्तु हैं। इनके अतिरिक्त दो प्रकार के नाटक और देखने में आते हैं—एकांकी और समस्या नाटक। एकांकी नाटकों को नाटकों का संक्षिप्त स्वरूप समझना चाहिये। जिस प्रकार जीवन संघर्ष उपन्यास के स्थान में कहानियों को प्रगतिशील बना रहा है उसी प्रकार वह नाटक के स्थान में एकांकी नाटक को प्रगतिशील करने में सहायक है। समस्या नाटकों के प्रणेता हैं पं० लक्ष्मीनारायण मिश्र। एकांकी और समस्या नाटकों की रचना पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से होने लगी है। अंग्रेजी में गाल्सवर्दी के एकांकी नाटकों का प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ा है। इसी प्रकार पाश्चात्य साहित्य के समस्या नाटक हिन्दी के समस्या नाटकों का साहित्य प्रस्तुत करने में सहायक हो रहे हैं।

समालोचना—सच्ची समालोचना की प्रवृत्ति हिन्दी साहित्य में कुछ ही वर्षों से अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से उत्पन्न हुई है। इसका पूर्ण विकास और निर्वाह पं० रामचन्द्र शुक्ल की समालोचना में पाया जाता है। अंग्रेजी में आलोचना चार प्रकार की होती है। हिन्दी में इनका रूपान्तर अन्तर्वृत्ति प्रकाशन, निर्णयात्मक, व्याख्यात्मक और मनोवैज्ञानिक समालोचना होगा। शुक्लजी की आलोचना में आलोचना के प्रत्येक स्वरूप के दर्शन होते हैं। आपकी आलोचना शैली सर्वमान्य एवं अनुकरणीय है।

निबंध—वर्त्तमान निबन्ध लेखकों में श्री पदुमलाल पन्नालाल बख्शी, श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी और श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी “निराला” का नाम उल्लेखनीय है। कहना न होगा कि पं० रामचन्द्र शुक्ल के अतिरिक्त आप लोग निबंध-साहित्य के आधार स्तम्भ हैं। वर्त्तमान निबंध साहित्य का स्वरूप उक्त लेखकों के “साहित्य समालोचना” “हिन्दी साहित्य विमर्श” “विश्व साहित्य” “प्रदीप” “पंचपात्र” “साहित्यिकी” “कवि और काव्य” “संचारिणी” और “प्रबन्ध-प्रतिभा” में मिल सकता है। आजकल वर्णनात्मक निबन्धों को छोड़कर भावात्मक, विचारात्मक तथा साहित्यिक निबन्ध लिखे जारहे हैं। उनमें विभिन्न शैलियों का प्रयोग पाया जाता है।

पद्य-साहित्य—छायावाद—वर्त्तमान काव्य-प्रवाह तीन प्रमुख धाराओं में प्रवाहित हो रहा है। पहिली धारा है छायावाद इसके मुख्य उन्नायकों में "प्रसाद" "पन्त" और "निराला" का नाम लिया जाता है। छायावाद का प्रारम्भ "प्रसाद" जी की "झरना" नामक रचना से समझना चाहिये। उसके बाद ही अनेकानेक छायावादी रचनाएँ "आँसू’ "लहर" "पल्लव" "गुञ्जन" "वीणा" "ग्रंथि" "युगान्त" "अनामिका" "परिमल" प्रकाशित होने लगीं। "पन्त" और "निराला" जी को काव्यरचना की दृष्टि से, प्रसादजी के समकालीन, कह सकते हैं। इन कवियों की रचनाओं का रचनाकाल प्रसादजी की रचनाओं के रचनाकाल के आसपास ही है। पहिले छायावाद का विकट विरोध हुआ। धीरे धीरे विरोध आप ही आप शान्त होने लगा। आजकल छायावादी साहित्य, साहित्य सेवियों द्वारा आदरणीय समझा जाने लगा है बड़े हर्ष का विषय है कि बाबू मैथिलीशरण गुप्त का ध्यान भी छायावाद की ओर आकर्षित हुआ है। "झङ्कार" नामक रचना ने लेखक की छायावादी भावना को स्पष्ट कर दिया है। डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा के शब्दों में "भगवती चरण वर्मा छायावाद के अधिक स्पष्ट कवि हैं।"

रहस्यवाद—छायावाद की सहगामिनी काव्य धारा—रहस्यवाद को कोई नहीं भूल सकता। जिस प्रकार छायावाद हिन्दी-साहित्य के लिये नवीन है तथा बंग और आंग्ल-साहित्य से आई हुई वस्तु मानी जाती है उसी प्रकार रहस्यवाद को नवीन बाहर से आई हुई वस्तु नहीं कह सकते। रहस्यवाद हिन्दी-साहित्य के लिये नई वस्तु नहीं है। उसका अस्तित्व हमारे प्राचीन कवियों में भी मिलता है। प्राचीन रहस्यवाद के इस युग में पुनरुत्थान होने में कोई आश्चर्य की बात नहीं। रहस्यवादी कवियों में श्री माखनलाल चतुर्वेदी, और श्रीमती महादेवी वर्मा का नाम उल्लेखनीय है।

साहित्य-परिषद् के सभापति
श्री नन्ददुलारे वाजपेयी का भाषण

आज हमारे साहित्य में एक नया प्रगतिशील आन्दोलन आरम्भ हो चुका है। साहित्य के सभी नए आन्दोलन एक अर्थ में प्रगतिशील कहे जा सकते हैं क्योंकि वे किसी-न-किसी नई सामाजिक या सांस्कृतिक प्रगति से उत्पन्न होते और किसी-न-किसी नवीन प्रगतिशील विचारधारा के सहचर हुआ करते हैं। इस दृष्टि से हमारा साहित्य पिछले तीस वर्षों में तीन प्रगतिशील आन्दोलनों का सृजन-संचालन कर चुका है। यहाँ मैं उस चौथे की चर्चा नहीं करूंगा जो इन तीनों से पहले का, हिन्दी के नवयुग का प्रथम आन्दोलन था और जिसके पुरस्कर्ता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आदि थे। मैं कहना यह चाहता हूँ कि इन तीन-चार प्रगतिशील आन्दोलनों के रहते अपने अति नवीन आन्दोलन का नाम 'प्रगतिशील' रखना विशेष उपयुक्त नहीं हुआ। इस नामकरण से भ्रम होता है कि हमारे पहले के आन्दोलन प्रगतिशील नहीं थे। प्रगतिशील ही नहीं वे प्रचलित साहित्य–सरणियों के विरुद्ध विद्रोहात्मक भी थे! ऐसी अवस्था में केवल इस अंतिम आन्दोलन का नाम 'प्रगतिशील' रखना कुछ ऐसा प्रेम है जैसे पुत्र अपना नाम पिता के नाम पर रख ले।

फिर, मेरे विचार से किसी साहित्यिक आन्दोलन का प्रगतिशील होना ही काफी नहीं है। प्रगति तो प्राकृतिक गति है। वह परिवर्तनशील वस्तु व्यापार का आवश्यक परिणाम है। तो क्या परिवर्तन का प्रतिबिंब होना ही साहित्य का एकमात्र स्वरूप या लक्ष्य है? मेरे विचार से नहीं। प्रथम तो परिवर्तन की सारी दिशाओं का परिज्ञान होना चाहिए। विकासमूलक शक्तियों और दिशाओं की पहचान होनी चाहिए। तभी हम कृत्रिम साधनों से (जिसके अंतर्गत मानसिक रूढियां, संस्कार और बाहरी सामाजिक अथवा राजनीतिक शक्तियां भी शामिल हैं।) रोके हुए आवश्यक परिवर्तन को साहित्यद्वारा उद्घाटित कर सकेंगे और साथ ही कृत्रिम साधनों से बढ़ाए हुए अनावश्यक परिवर्तन या विच्छेद को रोक भी सकेंगे।

यहाँ आप पूछेंगे कि साहित्यिक को इस प्रकार के बुद्धिव्यवसाय या विवाद में पड़ने की आवश्यकता क्या है? वह तो भावजगत का प्राणी है।

वह यदि अपने भावों को सौन्दर्य पूर्ण साहित्यशैली से प्रकाशित कर देता है तो उसके लिए इतना ही प्रर्याप्त होना चाहिए। मैं इसे नहीं मानता। साहित्य केवल व्यक्तिगत भावों के प्रदर्शन की भूमि नहीं हो सकता। व्यक्तिगत भाव भी आखिर क्या हैं ? उस व्यक्तिविशेष पर पड़े हुए विभिन्न ज्ञात-अज्ञात उपकरणों का प्रभाव। वे उपकरण उसे कहाँ से मिले ? अपने समय के समाज और सामाजिक चेष्टाओं से। तब प्रश्न यह है कि वह उस समाज और उन चेष्टाओं को आंख मूंद कर क्यों ले। आंखें खुली क्यों न रक्खे और क्यों न अपने सामूहिक उत्तरदायित्व को समझे। यह केवल एक उत्तरदायित्व ही नहीं है, व्यक्तित्व का उन्नायक साधन भी है। फिर यह ऊपर से लादा हुआ कोई बोझ भी नहीं है, यह मनुष्य के सामाजिक प्राणी होने की स्वाभाविक सूचना है।

व्यक्ति और समाज के बीच चलनेवाले स्वाभाविक आदानप्रदान को सचेत होकर ग्रहण करना काव्य-साहित्य को प्रगतिशील ही नहीं उत्थानमूलक भी बनाने में उपयोगी सिद्ध होगा। यदि हमने अनुकृति के आधार पर अथवा प्रतिरोध करने की क्षमता के अभाव के कारण कुछ विश्वासों प्रभावों या अनुभवों को धारण कर रक्खा है तो स्पष्ट है कि हममें साहित्यिक उत्कर्ष की सम्भावना बहुत थोड़ी है। यह असम्भव नहीं कि इन व्यक्तिगत प्रभावों के आधार पर हम ऐसे साहित्य का निर्माण करें (बशर्ते हममें कुछ काव्यशक्ति है) जो कुछ दिनों तक बहुत काफी लोकप्रिय हो जाय, क्योंकि जन साधारण तो अपना प्रतिबिम्ब ही साहित्य में देखना चाहता है और अक्सर ढाल की ओर चलने में उसे सुविधा मालूम देती है, पर देश और जाति के स्थायी साहित्य में यह नीचे की ओर लुढ़कना स्थान न पा सकेगा।

आप यह न समझें कि मैं साहित्य के लिए किसी रूढ़िबद्ध ऊंची नीति अथवा आदर्शवाद की सिफारिश कर रहा हूँ। ऐसा करना बिल्कुल ही मेरा लक्ष्य नहीं है। किसी बँधी-बँधाई लीक अथवा नपे-तुले आदर्शों के पैमाने पर साहित्य की प्रगति और उसका उन्नयन नहीं हो सकता। बदलते हुए समय के साथ प्रगति का मार्ग भी बदलेगा। हमारे आदर्शों में भी परिवर्तन और उलट-फेर होंगे। मेरा आग्रह केवल इतना है कि हम आंख मूंद कर किसी वस्तु को न लें। न हम आए हुए प्रभावों अथवा नवीनता के झोंके में बह जाएं और न विगत आदर्शों का स्वप्न देखते रहें। निराशा के लिए निराशा की फुलझड़ियाँ बरसाना हम साहित्य में बंद कर दें। और साथ ही

आकाशकुसुमों की आशा भी छोड़ दें।

मेरे कहने का मतलब यह नहीं कि साहित्य से करुणरस को अथवा ऊंची आदर्शात्मक कल्पनाओं को उठा देना होगा। उठाना या बैठाना हमें किसी को नहीं। साहित्य में आशा और निराशा, करुण और वीर सब के लिए समान स्थान है और रहेगा किन्तु उनकी नियोजना प्रगतिमूलक और उद्देश्य युक्त करनी होगी निरुद्देश्य और अस्तव्यस्त नहीं। शेक्सपियर के दुःखान्त नाटक अथवा भवभूति का उत्तर रामचरित करुण से भरे हुए हैं किन्तु क्या वे शक्तिहीनता और निर्बलता उत्पन्न करते हैं? नहीं, वे हमारी भावना को इस प्रकार स्पर्श करते हैं कि उनसे जीवन के सुन्दर लक्ष्यों के प्रति आस्था बढ़ती है। इसी उन्नयिनी परिपाटी की रक्षा हमें करनी होगी और यह तब होगा जब हम साहित्य की प्रगति को जीवन के साथ संबद्ध किये रहेंगे।

साहित्य के साथ जीवन को संबद्ध किए रखने का मतलब सिर्फ इतना है कि जीवन संबंधिनी आधारभूत चेतना साहित्य से लुप्त न हो जाय। हम मृत्यु के अथवा अगति के उपासक न बन जायं। निराशा और आत्मपीडन को अर्ध्य न देने लगें। इसका यह आशय नहीं कि साहित्य में निराशामूलक प्रवृत्तियों का चित्रण ही न किया जाय। किया वह अवश्य जाय पर आदर्श बनाकर नहीं। रचनाकार स्वयं उनसें अभिभूत हो कर जीवन का लक्ष्य न छोड़ दे। जीवन का लक्ष्य है जीना। जीना जितना ही व्यापक और समुन्नत स्वरूप धारण कर सके उतनी ही साहित्यकार की कृतकार्यता होगी। यहां फिर कहूँगा कि जीने का व्यापक और समुन्नत स्वरूप कोई रूढ़िबद्ध वस्तु नहीं है, किन्तु वह सचेत सतत विकास है।

अक्सर यह प्रश्न उठाया जाता है कि जब सारा समाज निराशा के गर्त में गिरा हुआ है तब वह आशा के गीत कैसे गाए? मैं आशा के गीतों का आग्रह नहीं करता। मेरा आग्रह केवल इतना है कि हम आत्मविस्मृत न हों, यह जाने रहें कि हम संप्रति निराशा के गर्त में गिरे हुए हैं। किन्तु यह स्थायी गिरना नहीं।

क्या इस सूत्र को मैं बुद्धिवाद या बुद्धिसूत्र कहूँ? बहुत व्यापक अर्थ में इसे यह नाम दे सकूंगा। आप पूछेंगे व्यापक अर्थ से मेरा आशय क्या है। आशय यह है कि वाद के रूप में बुद्धिवाद कुछ मोटी रेखाओं के भीतर घिरा है। साहित्यिक और सांस्कृतिक इतिहास में ऐसे युग आए हैं और आ सकते हैं जिसमें यह मोटी रेखाओं वाला बुद्धिवाद सहायक नहीं हुआ या न हो

(उदाहरण के लिए बुद्धिमूलक के बदले विश्वासमूलक प्रगतियां भी हुई हैं) किन्तु प्रगतिशील चेतना के रूप में बुद्धि सदैव विकास के साथ रही है।

यदि इस सूत्र के कुछ बाहरी निदर्शन या दृष्टान्त आप चाहें तो मोटे तौर पर मैं नीचे के निदर्शन दूंगा। १. अति शृंगारोन्मुख प्रवृत्तियां (Morbidity) प्रगति के विरुद्ध हैं। २. अति उदासीन प्रवृत्तियां प्रगति मूलक नहीं। ३. केवल कौतूहल प्रगति की बड़ी वस्तु नहीं। ४. केवल मनोरंजन प्रगति के लिए पर्याप्त नहीं। ५ बाह्य संघर्ष की अपेक्षा बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक संघर्ष प्रगतिशील साहित्य में अधिक महत्व रखते हैं। ये दृष्टान्त मैं साहित्यिक इतिहास के आधार पर दे रहा हूँ। मेरा विश्वास है कि ये वैज्ञानिक भी हैं।

यह तो हुआ प्रगतिशील साहित्य का प्रथम सूत्र। इसे मैं आत्मचेतना अथवा जीवनचेतना के नाम से पुकारूँगा। इसके अभाव में साहित्य सच पूछिए तो साहित्य-पद का अधिकारी नहीं होता। वह क्षयशील कला भी क्या कला कहा सकती है जो मृत्यु, आत्मपीड़न अथवा जीवनशोषण की ओर प्रगतिशील हो ? इसके उत्तर में संभव है कुछ लोग कहें कि जीर्ण जीवन की अनिवार्य समाप्ति मृत्यु में ही होगी और नवीन जीवन का उद्भव उसके पश्चात् ही होगा। जीर्ण जीवन का अंत मृत्यु ठीक है किन्तु क्या वह मृत्यु हमारा आदर्श हो सकती है ? आदर्श तो हमारा जीवन ही होगा। क्षय के लिए क्षय और मृत्यु की वरेण्यता हम किसी प्रकार प्रतिपादित नहीं कर सकते। दूसरे शब्दों में हम ह्रासोन्मुख या जीवन विघातिनी कला की कला कहकर प्रशंसा नहीं कर सकेंगे।

प्रगतिशील साहित्य का दूसरा सूत्र है परिवर्तन के क्रम को समझना, नवीन समस्याओं के संपर्क में आना और नवीन ज्ञान का उपयोग करना। यह भी जागरूक और दृष्टिसंपन्न साहित्यिकों के ही वश का काम है। जो कवि सामयिक जीवन की जितनी ही महान् हलचलों के बीच से गुजरेगा और साथ ही जितना ही अनुभव-प्रवण होगा उसकी साहित्यिक संभावनाएं उतनी ही विशाल होंगी। अपनों प्रशस्त कल्पना के द्वारा जो वर्तमान हलचलों का यथार्थ स्वरूप और आगम की झलक जितनी स्पष्टता से देख सकेगा वह उतना ही वड़ा साहित्यकार होगा। रवीन्द्रनाथ और बंकिमचन्द्र की बड़ी प्रशंसा भारतीय साहित्य में इतनी अधिक क्यों है ? केवल इसलिए नहीं कि उनमें बड़े ऊंचे दर्जे की काव्य प्रतिभा है या थी वरं इसलिए भी

वे परिवर्तनशील समय और उनकी आवश्यकताओं का निरूपण साहित्य में औरों से पहले कर सके। सामने आई हुई और आगे आने वाली समस्याओं को पहचानने और उनका हल ढूंढ़ने में वे औरों से पहले समर्थ हुए। न उन्होंने कृत्रिम समस्याओं या अनावश्यक आशंकाओं का सृजन किया और न आए हुए प्रश्नों से मुँह मोड़ा। उन समस्याओं और प्रश्नों का उन्होंने सुन्दर साहित्यिक निरूपण किया और उनका सही हाल बतलाया।

यह प्रगतिशीलता समय–सापेक्ष्य है। आज की हमारी समस्याएं वे ही नहीं हैं जो पचीस साल पहले थीं। कुछ चीज़ों का नाम लेना भी उस समय संभव न था जिनका आज खुले—आम व्यवहार होता है। लिबरल राजनीति अपने समय की प्रगतिशील राजनीति थी, किन्तु क्या आज भी उसे प्रगतिशील कहा जा सकता है? किसी समय में वह व्यावहारिक वस्तु थी आज वह पिछड़ी हुई समझी जाती है। किन्तु इस कारण उसका ऐतिहासिक मूल्य नष्ट नहीं होता। जिस समय राजनीतिक चेतना उच्च मध्य वर्गों तक सीमित थीं उस समय लिबरल राजनीतिक क्रियाशील वस्तु थी, आज वह निष्क्रिय जान पड़ती है राजनीतिक चेतना का विकास हो रहा है, वह क्रमशः प्रसरित होकर निम्नतम वर्गों में भी पहुंच जायगी। उस समय की राजनीति हमारे आज के प्रयासों को क्या कहेगी, इसकी हम केवल कल्पना कर सकते हैं। व्यवहार में तो हमें आज की अवस्था देखनी होगी। हमारा झुकाव किस ओर है, यही हमारे लिए निर्णयात्मक वस्तु है। साहित्य में तो झुकाव भी कोई अनिवार्य वस्तु नहीं। हम किस दिशा में क्रियाशील हैं और किन प्रश्नों को कितनी सफाई के साथ और कितने प्रभावशाली रूप में सामने रख रहे हैं, इतना ही समझ लेना पर्याप्त है। इसके साथ ही यह भी जानना आवश्यक है कि किस प्रश्न पर हमारी नजर कब पड़ी है! हमारे पूर्व औरों ने इस प्रश्न को उठाया है या नहीं, उठाया तो क्या समाधान किया है और हम इस विषय में अपनी कौन सी विशेषता रख रहे हैं?

यदि साहित्यकार की दृष्टि अपने समय के प्रमुख समस्याओं पर पूरे तौर से पड़ी है और उसने अपने साहित्य में उनका मार्मिक चित्रण किया है तो यह बात विशेष महत्त्व की नहीं है कि वह उनका क्या हल हमारे सामने रखता है। रचयिता की बौद्धिक तीव्रता और ग्राहिकाशक्ति का आभास हमें इतने में भी मिल सकता है कि उसने अपने समय की विभिन्न सामाजिक प्रगतियों

और मार्ग में आने वाली दिक्कतों को देखा है या नहीं। वह कोई उडंछू आदमी तो नहीं है। वर्षों पूर्व मैथिलीशरणजी के अथवा प्रेमचन्दजी के सामने जो प्रश्न थे और उनपर जिस प्रकार की प्रतिक्रिया उनकी थी, वही या उतनी ही आज भी हमारी हो यह आवश्यक नहीं हैं। न वही आवश्यक है कि आज हम उन्हें समय में पिछड़ा हुआ सिद्ध करने में अपने समय और शक्ति का अपव्यय करें। हम उन्हें आज का नेता नहीं मानते इतना ही हमारे लिए बस होना चाहिए। साहित्य के इतिहास में उनका जो स्थान है उसे उनसे कोई नहीं छीन सकता।

यहाँ अब यदि हमें इस सूत्र से निकले हुए कतिपय निष्कर्ष स्थूल रूप से आप के सामने रखने हों तो मैं इस प्रकार रखूंगा:—१. परिवर्तन के अंतर्गत प्रगतिशील शक्तियों को पहचानना २. परिवर्तन से उत्पन्न हुई विचारधारा के शब्द संकेतों का मनोयोग के साथ अध्ययन और प्राचीन प्रगतिशील विचारधारा की शब्दावली और उसके उद्देश्यों की नवीन उद्देश्यों से तुलना ३. नवीन समस्याओं का प्रगतिशील हल ४. प्राचीनता के मोह का परित्याग ५. नवीन समस्याओं के संबन्ध में साहित्यिक प्रेरणा उत्पन्न करना ६. रूढ़ियों के प्रति शंका उत्पन्न करना और ७. ह्रासोन्मुखी और अस्तंगत होते हुए जीवन के यथार्थ (ह्रासोन्मुख) स्वरूप का कलात्मक उद्‌घाटन।

एक युग में रहकर भी एक समस्या पर कई दृष्टियों से आक्रमण किया जा सकता है। यह तो युग की चेतनात्मक जाग्रत का सूचक है कि लोग अनेक प्रकार से किसी प्रश्न पर विचार करते हैं। इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की हठधर्मी का मैं पक्षपाती नहीं हूँ। मैं इस वैविध्य को प्रोत्साहन देना चाहता हूँ। इस विषय में मुझे अपने दो मित्रों की अक्सर याद आती है। श्रीजैनेद्रकुमार और श्रीनरोत्तमप्रसाद नागर। दोनों का दृष्टिकोण परस्पर विरोधी हैं। एक दक्षिणी ध्रुव दूसरा उत्तरी ध्रुव एक अर्हत प्रेमी और दूसरे फ्रायड के परम भक्त ! 'सुनीता' जैनेन्द्र का एक सामाजिक उपन्यास है। उसमें चित्रण है एक ऐसे परिवार का जिसमें एक युवती पत्नी और उसके पतिदेव हैं। पतिदेव के मित्र एक नवयुवक का बाहर से आगमन होता है। इस नवयुवक में आकर्षण की सृष्टि होती है उसे एक गुप्त क्रान्तकारी आन्दोलन से संबद्ध करके। अब यह क्रान्तकारी पुरुष है और वह युवती स्त्री। परदा नहीं है। पतिदेव उपन्यास की समस्या को सामने लाने के लिए कुछ दिनों घर से बाहर कहीं काम से चले जाते है। समस्या बिल्कुल

प्रत्यक्ष है, परदा रहित परिवार में परपुरुष के प्रवेश की समस्या। अवश्य यह आज की हमारी एक आवश्यक समस्या है किन्तु इसका समाधान जैनेन्द्र जी करते हैं एक रात नग्न रूपमें उस स्त्री को दिखाकर और क्रान्तिकारी पुरुष के मन में तात्कालिक विरक्ति या मानसिक आघात उत्पन्न करके। किन्तु क्या यह कोई वास्तविक समाधान है ? मैं इसे वास्तविक समाधान नहीं मानता किन्तु नरोत्तम प्रसाद इसके एक कदम आगे बढ़ते हैं। उनका आक्रमण जैनेन्द्र की सम्पूर्ण मनोभूमि पर है। मैं इस समाधान को उपन्यास का कोई आवश्यक अंश भी नहीं मानता। किन्तु नरोत्तम इतने से ही उसका पल्ला छोड़ने वाले नहीं। वे 'शुतुरमुर्ग' पुराण लिखकर यह दिखाते हैं कि दमित इच्छाओं का विस्फोट ऐसी ही कृत्रिम प्रणालियों में होता है जिन्हें लोग रहस्यात्मक रूप देकर छिपाना चाहते हैं।

इसी प्रकार हमारे साहित्य में विचारधाराओं का प्रवाह बड़े वेग से फैल रहा है जिसे मैं व्यक्तिगत रूप से शुभलक्षण समझता हूँ। आज हमारे यहाँ अध्यात्मिक और वैज्ञानिक संज्ञक वादों को लेकर जो बौद्धिक चर्चा उठी हुई है, उसका परिणाम अच्छा ही देखने में आता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि आक्रमण के साथ साथ एक दूसरे को समझने की चेष्टा भी उतनी ही मात्रा में होनी चाहिए। साथ ही यह भी ध्यान में रखना होगा कि कला अथवा साहित्य में नियोजित होने पर कोई भी वस्तुयोजना स्वतंत्र रूप में नहीं परखी जा सकेगी। उसकी परीक्षा उक्त कला या साहित्य-वस्तु के प्रभाव के अंतर्गत करनी होगी।

उदाहरण के लिए जैनेन्द्र कुमार के इस नग्नताप्रसंग को ही लीजिए। इसके गुण-दोष की परीक्षा हमें इस परिस्थिति के बीच रखकर करनी होगी जो उपन्यास में आई हुई है। कला में नग्नता स्वतः कोई भली या बुरी वस्तु नहीं। श्रीमद्भागवत और महाकवि सूरदास ने तो सोलह सहस्र गोपियों का चीर हरण कराया है। ईसाई मूर्तिकला के इतिहास में सर्वश्रेष्ठ सौन्दर्य कतिपय नग्न प्रदर्शनों का माना जाता है। यह कहकर मैं श्री जैनेन्द्र कुमार की ओर से सफाई नहीं पेश कर रहा न यही इजहार दे रहा हूँ कि कलाकृति की समीक्षा में रचयिता की मानसिक-अंतर्चेतना का प्रश्न नहीं उठता। मेरा कहना केवल इतना है कि कला में की गई कोई भी वस्तु-योजना कलात्मक प्रभाव की दृष्टि से परखी जानी चाहिए।

उदाहरण के लिए हम 'त्यागपत्र' नामक उपन्यास को लेते हैं। यदि

इसकी समीक्षा मनोविश्लेषण की दृष्टि से की जाय तो विश्लेषक अपना अधिक समय नायिका मृणाल के चरित्र सम्बन्धी अस्वाभाविक झुकावों की ओर देगा। मृणाल की बेंतों से मार खाने की इच्छा, अपने भतीजे को गोद में भरना, उससे लिपटना और उसे लिपटाना आदि की मीमांसा वह करेगा। यही रचना वस्तुवादी या (Rationalist) परीक्षक को दी जाय तो वह सूचित करेगा कि इस उपन्यास में अव्यवहार्य अहिंसा का प्रसार करने के लिए उपन्यासकार अपनी नायिका को अनाकांक्षित कष्टों के घोर झमेले में डालता है। वह कहेगा कि मृणाल जैसी तेजस्विता रखने वाली स्त्री यदि विवाह न करना तय कर लेती तो उसका विवाह ही उस व्यक्ति से न होता जिसे वह नहीं चाहती और तब विषम विवाह की समस्या को इस रूपमें रखने का अवसर ही न आता। जो स्त्री अपनी अनिच्छा से विवाहित हुई है वह विवाह होने पर पति को सर्वस्व समर्पण कर उसकी अनुचरी बन जायगी यह गांधीजी की उस टेकनिक के अनुकूल भले ही हो कि जेल के बाहर सत्याग्रह करें पर भीतर सारे नियमों का पालन। किन्तु यह विद्रोही मनोवृत्ति के विकास के उपयुक्त नहीं। इसी प्रकार वह यह भी कहेगा कि उपन्यास की नायिका किसी क्रमबद्ध मनोविज्ञान के आधार पर नहीं चलती, बल्कि एक अहिंसावादी सिद्धान्तविशेष की पुष्टि के लिए भाँति भाँति की परिस्थितियों में डाली जाती और आचरण करती है। किन्तु कला समीक्षक इन पहलुओं पर ही ध्यान न देकर यह भी जानना चाहेगा कि उपन्यास विषम-विवाह की समस्या पर (जो उस उपन्यास में आयोजित है,) कैसी गहरी चोट करने में सफल हुआ है। उसे यह अवश्य अनुभव होगा कि मृणाल आज की परवश नारी और विवश कन्या की प्रतीक बनाकर दिखाई गई है। प्रचारात्मक अधिकांश कृतियों की भाँति इसमें भी कुछ दोष हैं अतिरंजना के। और अस्पष्टता इस उपन्यास का दुर्गुण बन गया है, पर इसके प्रभावात्मक गुणों की अवहेलना नहीं की जा सकेगी।

यहीं हम प्रगतिशील साहित्य के तीसरे सूत्र को पकड़ते हैं जिसे हम कला निर्माण का सूत्र कहेंगे। ऊपर श्री मैथिलीशरण गुप्त और श्री प्रेमचन्द का हवाला आ चुका है। वहां मैंने यह संकेत किया है कि ये दोनों अपने समय के प्रगतिशील साहित्यकार थे किन्तु ये आज के हमारे नेता नहीं है। उनका स्थान इतिहास में हो गया है। यह एक पक्ष की बात है। उनका एक दूंसरा पक्ष है कला-निर्माण का क्योंकि ये कोरे विचारक नहीं हैं कवि और कलाकार

भी हैं। इस दृष्टि से उनकी रचनाएं सब समयों में पढ़ी जायँगी और समधिक आनन्द प्रदान करेंगी। जिन क्षणों में हम किसी विचारात्मक दृष्टि से अनुशासित नहीं होते, केवल काव्य का अध्ययन करना चाहते हैं उन क्षणों में कवियों के कला-निर्माण-का पक्ष प्रमुख होकर हमारे सामने आता है। तब हम यह नहीं सोचते कि उसने क्या कहा है और किस वर्ग के लिए कहा है, बल्कि यह जानना चाहते हैं कि उसने मानव जीवन के किन पहलुओं पर प्रकाश डाला है, जीवन का समष्टि स्वरूप कैसा खड़ा किया है। किस दशा में वह हमें प्रभावित कर सका और किस अथवा किन कला-परिपाटियों का अनुसरण किया है। अक्सर ऐसा ही देखा जाता है कि रचियता चाहे किसी प्रशस्त विचारधारा का स्वामी न हो किन्तु मानव जीवन के विविध अंशों और अवसरों के चित्रण में उसे बड़ी दक्षता प्राप्त हुई है। जीवन के किन सूत्रों को उसने उठाया है, उनका यथोचित समाहार वह कर सका है या नहीं, उसका नक्शा कितना बड़ा है उसकी कला योजना (चित्र-रचना की क्षमता) और भाषाशैली कैसी है इस प्रकार के प्रश्न इस अध्ययन में आते हैं। प्रभाव की गहराई, जीवन के व्यापक स्वरूपों का उद्घाटन और उन्हें सत्य के कलात्मक आभास से भरना, अंतर्निहित विचार प्रवाह का प्राणमय संघटन, सारी कृति का समाहित और अटूट ऐक्य आदि ऊंची कल्पना और काव्यशक्ति के परिचायक हैं और इन गुणों से ही कलाकार के महत्व का निर्धारण होता है।

कलाकार द्वारा अंकित चरित्र विशेष या चित्र विशेष की आज कोई व्यावहारिक उपयोगिता चाहे न हो पर कलात्मक उपयोगिता सब समयों में रहेगी। जैसे डिकेन्स के उपन्यास। कभी सामाजिक प्रगति के अवरुद्ध द्वारों का उद्घाटन करने के लिए बुद्धिविशिष्ट कला की सृष्टि होती है, जैसे इब्सन के नाटक। इस कला के भेदोपभेद हो जाते हैं और इतिहास में अलग अलग शैलियों का विन्यास हो जाता है। महान् कलाकारों ने सैकड़ों वर्षों के साहित्यिक इतिहास पर अपनी शैलियों की छाप छोड़ी है। दूर दूर देशों और दूर दूर समयों में जिनके बीच सामाजिक स्थितियों और समस्याओं की कोई ऐका नहीं —ये शैलियाँ बर्ती जाती हैं। शेक्सपियर की शैली डी० एल० राय में और होमर अथवा मिल्टन का अनुसरण माइकेल मधुसूदन दत्त में दिखाई देता है। क्लैसिक और रोमैन्टिक नाम की दो अभिव्यक्ति शैलियाँ विकसित हुई जिनके भीतर समस्त साहित्य का आकलन किया जाता है (अब भ्रम से कुछ लोग इन दोनों को पृथक पृथक जीवनदर्शन के रूप में लेने लगे हैं पर वास्तव में ये जीवन-

दर्शन नहीं हैं। कला—शैलियां मात्र हैं)। इसी प्रकार 'रियलिज्म' या वस्तुवाद साहित्यिक और कलात्मक अभिव्यक्ति का एक क्रम है जिसे आज आध्यात्मिक या आदर्शात्मक जीवनदर्शन का विरोधी माना जाता है। यह क्रान्ति इन दिनों हमारे साहित्य में खूब फैल रही है।

कालिदास के अभिज्ञान—शाकुन्तल में अंगूठी खो जाने के संयोग से नाटक में अमित आकर्षण की सृष्टि हुई है। इसी प्रकार शेक्सपियर अपने नाटकों में आकस्मिक संयोगों की नियोजना से कथा को तीव्र आकर्षणमय बनाता है। आज हम एक बुद्धवादी युग में विकास करते हैं। इसलिए संयोंग नियोजन को हल्की कला—सृष्टि का उपक्रम मानते हैं। हम अधिक विश्वसनीय और सुसंगत आधार नवीन कला का चाहते हैं। उसे हम पा सके हैं या नहीं यह दूसरा प्रश्न है। यह तो मैंने एक उदाहरण मात्र दिया हमारा उद्योग कला निर्माण की दिशा में भी अनेक मुखी प्रगतिशील विकास का है। यह साहित्य और कला के लिए शुभ लक्षण है।

कला—निर्माण का पक्ष साहित्य का प्रधान पक्ष है। इसके अंतर्गत परीक्षित होने पर उन समस्त अनधिकारियों की पोल खुल जाती है जो साहित्य के बाहर बड़े विचारक, जीवन समस्या को सुलझाने वाले दार्शनिक अग्रगामी बना करते हैं। निश्चय ही वे अपने क्षेत्र में अग्रगामी होंगे, किन्तु साहित्य में आने पर तो उनकी जांच हमारी साहित्यिक कसौटी पर होगी। संभव है उन्होंने बहुत बड़ा नक्शा बनाने की (महाकाव्य या बड़ा उपन्यास तैयार करने की) हिमाकत की हो पर नक्शे का बड़ा होना ही उनके असफल हो जाने का कारण बन सकता है। बड़े नक्शे को सजाना, सजीव करना, रूपों-रंगों कथाओं अंतर्कथाओं) को यथास्थान नियोजित करना, सारे नक्शे में रचियता के अंतर्निहित प्राण-प्रवाह का प्रवेश करना, जीवन-चित्र की प्रत्येक रेखा को सप्रयोजन, सुसंबद्ध और गुम्फित स्वरूप देना साधारण कलाकार का कार्य नहीं। यह साधारण कलाकार चरित्रों की सृष्टिकर सकता है, अंतर्व्यास स्पंदन और कला की आत्मा की नहीं। प्रेमचंदजी के उपन्यासों की अपेक्षा उनकी छोटी आख्यायिकाएं क्यों श्रेष्ट कला मानी जाती हैं? क्योंकि छोटे दायरे में प्रेमचंदजी अधिक सफल काम कर सके हैं। और जब प्रेमचंदजी की यह बात है तब उनको क्या चर्चा जिनका कला की सीमा में प्रवेश ही नहीं किन्तु जो अव्यवस्थित समय का लाभ उठाकर अपने को प्रगतिशील साहि-

त्यिक विज्ञापित करते हैं। प्रगतिशील साहित्यिक के लिए आवश्यकता यहां नहीं है कि वह नई विचारणा को लेकर साहित्य के बगीचे में उसे इस प्रकार लगा दे कि वह चार ही दिन में सूख जाय। आवश्यकता यह भी है कि वह अपनी विचार-लता को कला के संजीवन-से सिंचित कर और उसे उपवन के अन्य सुंदर वृक्षों और बेलियों के साथ लहलहाने योग्य बनाए।

ये ही तीन प्रधान सूत्र, मेरे विचार से, प्रगतिशील साहित्य के हैं जीवन-आस्था, परिवर्तन की पहिचान और उपचार तथा कलात्मक स्वरूप का नियोजन। इनमें पहला सूत्र, जीवन-आस्था, प्रकृति की अपनी तजवीज है इसलिए वह ऐसी रचनाओं का आप-से-आप लोप करती चलती है जो उसकी तजवीज के विरुद्ध हैं। किन्तु मुद्रण-कला की अभिवृद्धि के साथ पुस्तकों की ऐसी बाढ़ आ गई है कि प्रकृति का यह काम पिछड़ गया है। इस संबंध में हमारा कर्तव्य स्पष्ट ही यह है कि हम प्राकृतिक कार्य में सहायक होकर उसे शीघ्र कारगर होने दें। दूसरा सूत्र हमें मानव सुलभ आलस्य और गतानुगतिकता के विरुद्ध उठ खड़ा होने की चुनौती देता है। नवीन ज्ञान का प्रकाश ग्रहण करने को आमंत्रित करता है। परिवर्तन की एक व्यावहारिक सीमा के अंतर्गत सुव्यवस्थित जीवन-योजना का निर्माण करने का रास्ता सुझाता है। सभी समयों की अपनी अपनी समस्याएँ होती हैं। उन-उन समयों के साहित्यकार उनका कैसा नक्शा उतारते हैं कैसे प्रभावशाली तथा निर्णयात्मक रूपमें उन्हें हल कर पाते हैं—यह साहित्यकार के महत्त्व का एक अचूक मापदंड है। विविध विचारधाराओं का प्रसार, मैं कह चुका हूँ, मेरी दृष्टि में, एक उपादेय वस्तु है, साहित्यक्षेत्र के सजीव, सक्रिय और उर्वर होने का सूचक है। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि हम विकारग्रस्त मानसिक अवस्था और तज्जन्य साहित्यिक रचना का भी नवीन विचारधारा और अनुपम कलाकृति कहकर स्वागत करें।

तीसरा और सबसे महत्त्वपूर्ण सूत्र है कला के अपने विकास का। भ्रम वश लोग यह समझ लेते हैं कि किसी विशेष वाद की, जिसके वे हिमायती हैं, काव्य में स्थापना हो जाना ही काव्य के लिए महत्त्वप्रद है। कुछ लोग बड़े ऊँचे आदर्शों का, यहाँ तक कि कुछ लोग राम के नाम का ही काव्य में आ जाना काव्य का चरम लाभ मान लेते हैं। ऐसे ही लोग रहस्यवाद अथवा किसी आध्यात्मिक मानधारा के प्रवेश मात्र से कला के प्रति श्रद्धास्पद धारणा बना लेते हैं। और ठीक इसी के विपरीत कुछ अन्य लोग इसी कारण उ

कोसना आरंभ कर देते हैं। दोनों बहुत ही ऊपरी दृष्टियाँ हैं। ऐसी स्थिति में पहले तो हमें यह देखना होगा कि उस वाद विशेष का किस प्रकार के मानसिक माध्यम में पर्यवसान हो रहा है (कोई भी वाद या विचारधारा जब कला रूप में आवेगी तो मानसिक माध्यम से होकर ही)। यदि 'मानसिक माध्यम स्वतः समुन्नत नहीं तो कोई भी वाद श्रेष्ठ कला के निर्माण में सहायक नहीं हो सकता और यदि मानसिक माध्यम सुसंपन्न है तो हमें यह देखना होगा कि उस माध्यम में मानस-साक्षात्कार कराने की, कलात्मक अभिव्यक्ति की शक्ति कितनी है। इसलिए मुख्य प्रश्न यह नहीं कि वाद कौन सा है बल्कि मुख्य प्रश्न यह है कि वह वाद रचनाकार की मनःस्थिति को किस दशा में परिचालित करता और कैसे काव्य की सृष्टि में संलग्न करता है। किसी वादविशेष को रचयिता ने किस रूप में ग्रहण किया है, और उसमें काव्यशक्ति कितनी है। अपने मानसिक चित्रपट को काव्य के रूप में अंकित कर देने, फोटोग्राफी की भाषा में 'नेगेटिव' को चित्र का रूप देने में उनकी योग्यता कितनी है। बहुत कुछ रचयिता के अपने व्यक्तित्व और कौशल पर अवलंबित है। इसी व्यक्तित्व का काव्यकला में विकास क्रम नौटंकी से लेकर प्रशस्त जीवन चित्रों की और विशाल मानसिक योजना तक देखा जा सकता है।

किन्तु एक बात मैं यहां अवश्य कहूँगा। जिन मानसिक उद्वेलनों और विचारचक्रों का सृजन हमारे युग में हो रहा है वे ही उत्कृष्ट काव्य के रूप में परिणत होने के अधिक योग्य हैं। हम यहां एक कह सकेंगे कि जिस युग में जितने ही बलशाली उद्वेजन जिस दिशा में उठेंगे उन उद्वेजनों को लेकर उतने ही महान् साहित्यकार के जन्म लेने की संभावना उस दिशा में होगी। रूसी और फ्रान्सीसी क्रान्तियुगों के साहित्यिक इतिहास से यह कथन परिपुष्ट हो जाता है। कोई भी विराट उथल-पुथल का युग एक असाधारण मानसिक क्रियाशीलता लेकर आता ही है। आवश्यकता केवल एक ऐसे संयोग की होती है कि कोई रचनाशील मस्तिष्क उस महान उथलपुथल को साकार कर दे, उस क्रियाशीलता की विस्तृत छाप छोड़ जाय—अर्थात् उत्कृष्ट कोटि की साहित्यक रचनायें दे जाए। किन्तु इस बात का आग्रह फिर भी नहीं किया जा सकता कि वे रचनाएं बाह्यरूप से किसी परिपाटी विशेष अथवा किसी वाद विशेष के अनुकूल हों। इसलिए जो लोग काव्य में किन्हीं वादों को रखने का हठ करते हैं। जैसा कि कतिपय 'प्रगतिशील-साहित्यवादी' आज कर

रहे हैं। यही नहीं उन वादों के काव्योत्कर्ष का प्रभाव रचनाकार पर पड़ता ही है उसे किसी प्रकार की अभिव्यक्ति विशेष के लिए बाध्य क्यों किया जाय ?

आज हिन्दी में श्रेष्ठ साहित्य के सृजन के कौन से क्षेत्र हैं ? निश्चय ही समाजवादी विचारों के क्षेत्र। क्यों ? क्योंकि उन्हीं क्षेत्रों ने इस समय नवीन प्रतिभा को आकर्षित कर रक्खा है। क्यों नहीं आज प्रचलित धार्मिक क्षेत्रों में श्रेष्ठ साहित्यिक रचनाएँ और सुन्दर कला-निर्माण हो रहा ? क्यों आज वे पुरानी अनुकृति से ही अथवा दूसरे नवीन क्षेत्रों की प्रगतिशील शैलियों को अपना कर ही संतोष कर रहे हैं। स्वतः नई भूमि क्यों नहीं तैयार करते। स्पष्ट ही इसलिए कि वहां जीवन और उदभावना का अभाव तथा पिष्ठ-पेषण का प्राधान्य है। किन्तु क्या इसी कारण इस प्रगतिशील साहित्य के लिए नियम बना देना होगा कि वह किसी एक प्रणाली से ही व्यक्त किया जाय अथवा किसी विशेष मतवाद का समय-असमय राग अलापा करे। ऐसा करना तो प्रगति को कुंठित कर देना और रचनात्मक शक्तियों को प्रचार की दिशा में मोड़ देना होगा। निश्चय ही प्रचार कला का कोई लक्ष्य नहीं, कला का लक्ष्य तो है सृष्टि। नई प्राणप्रतिष्ठा, नए तौर-तरीके (टेकनीक), नूतन छंद, नवीन भाषा, नयी भावाभिव्यक्ति ये कला की अपनी प्रगतियां हैं।

फिर प्रश्न यह भी है कि केवल समाजवाद ही क्यों ? क्या वह जीवन के सब विभागों को पूरा कर लेता है ? क्या मनुष्य समाज के सामने और कोई सवाल नहीं रहा, विकास की कोई दिशा नहीं रही। क्या समाजवाद से ही मनुष्यता अपने आदर्श विकास पर पहुँच जायगी, और उसके प्रतिष्ठित होने पर प्रगति का मार्ग बंद हो जायगा ? ऐसा दावा कोई नहीं कर सकता। मानव-विकास की अनेक समस्याएं उसके पहले हैं और उसके पीछे भी रहेंगी। अनेक नवीन प्रश्न उठेंगे। सतत विकास ही प्रगति का ध्येय है। ऐसी अवस्था में कलाकार का रचना स्वातंत्र्य छीना नहीं जाना चाहिए।

किन्तु हमारी दृष्टि आज बौद्धिक वादों और उनके साहित्यिक निरूपणों की ओर इतनी अग्रसर है कि हम मुख्य कला-विवेचन को छोड़ ही बैठे हैं। यही कारण है कि हम वाद-विशेष का नाम लेकर रचना करने वालों के प्रति एक धारणा कायम कर लेते हैं और फिर किसी प्रकार उसे छोड़ने को तैयार नहीं होते। हमारी निःपक्ष कलादृष्टि संकुचित हो जाती है। इसी कारण बहुत से रचनाकारों को अनुचित लांछना मिली है (जैसे 'प्रसाद' जी के

काव्य को आए दिन कुछ क्षेत्रों में मिल रही है) और बहुतों को अनुचित प्रशंसा भी हासिल हुई है। (जैसे प्रेमचंदजी के उपन्यासों की कलात्मक निःशक्तता की ओर ध्यान न देकर कुछ लोग उन्हें आसमानी उंचाइयों पर पहुँचा रहे हैं अथवा श्री सुमित्रानंदन पंत की कुछ नवीन रचनाओं की, केवल कम्यूनिस्ट छाप के कारण, सराहना की जा रही है। उपदेशात्मकता में वे तीस साल पूर्व की कविताओं की ओर बढ़ रही हैं और शृङ्गारिकता में विहारीलाल से होड़ करती हैं।)

ऊपर मैंने जिन तीन प्रगतिशील सूत्रों का उल्लेख किया वे साहित्य और कलाओं में एक दूसरे से मिले रहते हैं। यही नहीं, वे एक दूसरे को वेष्टित करते और सुदृढ़ बनाते हैं। ये सूत्र जब साहित्य में एक साथ ग्रथित हैं तब इनका पृथक पृथक निरूपण करने में न केवल कुछ कठिनाई होती है बल्कि यह शंका भी उत्पन्न होती है कि क्या ये एक दूसरे से पृथक किए भी जा सकते हैं। यहां मैंने इनका अलग-अलग निर्देश इसलिए किया है कि इनको मैं तीन पृथक प्रवृत्तियाँ मानता हूँ जो संयुक्त होकर भी अपने अपने विशिष्ट प्रकार से साहित्य अथवा कला का उन्नयन करती हैं।

अब मैं आपका अधिक समय नहीं लूँगा, किन्तु अपना यह वक्तव्य समाप्त करने के पूर्व मैं आप लोगों के सामने (जो अधिकांश हिन्दी प्रान्त के निवासी नहीं हैं) अपने साहित्य के उन तीन नवीन उत्थानों के विशिष्ट रचनाकारों के नामों का संक्षेप में उल्लेख करूँगा जिन उत्थानों का जिक्र मैंने अपने वक्तव्य के आरंभ में किया है। यहां इन उन्नायकों की विशेषताओं का प्रदर्शन नहीं किया जा सकेगा, क्योंकि उसके लिए समय पर्याप्त नहीं। किन्तु नामावली स्वतः अपना उपयोग रखती है। आप चाहें तो इनमें मे एक या अनेक का रचनासौष्ठव देखने के लिए इनका अध्ययन करें और अपसे अपने प्रान्तीय साहित्यकारों की तुलना में इन्हें रख कर देखें। ये नाम मैंने अपनी रुचि से छांटे हैं, इसलिए इनकी जिम्मेदारी स्वभावतः मुझ पर ही है। अतः मैं सबसे पहले उन महानुभावों से क्षमा लूँगा जिनके नाम इस छोटे पैमाने में नहीं आ सके हैं।

मैं कह चुका हूँ कि हमारा साहित्य पिछले तीस वर्षों में तीन प्रगतिशील आन्दोलनों का सृजन संचालन कर चुका है। एक तो विगत युद्ध के पूर्व का साहित्यिक अध्ययन जिनके विधाता गद्य में श्री महावीर प्रसाद द्विवेदी और काव्य में श्री मैथिलीशरण गुप्त माने जा सकते हैं। इसके अन्य उन्नायकों में

श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय और श्री श्रीधर पाठक जैसे काव्यरसिक भी गिने जाएंगे। महायुद्ध के पश्चात् भी यह आन्दोलन चलता रहा जब कि इसकी आख़िरी बहार में दो सर्व-सुन्दर पुष्प खिले श्री रामचन्द्र शुक्ल और श्री प्रेमचन्द्र। दूसरा साहित्यिक आन्दोलन यद्यपि शिलान्यास की दृष्टि से महायुद्ध का समसामयिक है किन्तु उससे जड़ पकड़ी श्री जयशंकर प्रसाद के आंसू काव्य के प्रकाशन के पश्चात्। यह साहित्यि में रोमैण्टिक विद्रोह का आन्दोलन कहा जा सकता है जिसने विभिन्न रचनाकारों की प्रवृत्ति के अनुसार बहुमुखी रूप धारण किए हैं। पंत और निराला इसके प्रमुख काव्य उन्नायकों में हैं। कल्पना, कला, शब्दशक्ति और व्यक्तित्त्व उसे इन दोनों ने दिया। फिर एक ओर यह 'महादेवी' की करुण आध्यात्मिक रागिनी में परिणत हो गया और दूसरी ओर भगवतीचरण वर्मा को उन्मादयुक्त खुमारी तक पहुँच गया। सियारामशरण गुप्त, जैनेन्द्रकुमार और रामनाथ सुमन की ऐकान्तिक आदर्शवादिता से लेकर भगवती प्रसाद की निराशामूल कथाओं तक इसकी अनेकानेक भावभंगियां दिशाविभाग और 'शेड्स, दिखाई देते हैं। इसकी एक अनोखी दीप्ति श्री उग्र की रचनाओं में दीखी थी किन्तु प्रतिकूल झंझावात ने यह सुन्दर दीपक बुझा दिया। हाल की कहानियों में किमाकार (कुलरूप) लौ ही रह गई है जिसके प्रशंसक हैं उसकी उगती प्रतिभा पर कुठाराघात करने वाले कुछ महानुभाव। 'नवीन' और माखनलाल इस व्यापक आन्दोलन के राष्ट्रीय क्षेत्र के प्रहरी हैं। 'दिनकर' उनके वीर बालक हैं। सुभद्रा कुमारी उनकी सहकारिणी। श्री इलाचंद्र जोशी, रामकुमार वर्मा, गोविन्दवल्लभ पंत और वृन्दावनलाल के नाम भी इस युग के उन्नायकों में आते हैं। इस विराट आन्दोलन के प्रधान प्रतिनिधि जिनकी रचना में ऊपर उल्लेख किए गए प्रायः सभी 'शेडश' या दिशाविभाग मिलते हैं श्री जयशंकर प्रसाद हैं। प्रतिभा, कल्पना, अध्ययन और बौद्धिक अंतर्दृष्टि में वे अपने साहित्ययुग के अन्यतम व्यक्ति थे। साहित्यनिर्माण में उनका सा बहुमुखी विस्तृत और प्रतिनिधिमूलक कार्य किसी ने नहीं किया।

इस कल्पनाप्रधान विद्रोही युग की सामयिक प्रतिक्रिया आरम्भ हुई राजनीति में समाजवादी विचारों के आगमन और अंतर्राष्ट्रीय पी० ई० एन्० क्लब की हिन्दी स्थापना के पश्चात्। इस क्लब की सदस्यता हिन्दी में मुंहमांगे मिल रही थी इसलिए बहुत से अचायित और अनाकांक्षित व्यक्ति इसमें आरंभ से ही सम्मिलित हो गए। जिन्हें साहित्य के राजद्वार से मार्ग

नहीं मिला वे इस रास्ते घुस आए। फिर संभवतः इस क्लब को लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से इसमें श्री सुमित्रानन्दन पंत जैसे भिन्नरुचि व्यक्ति को प्रवेश कराया गया और उन्हें प्रगति का सूत्र सौंपा गया। यह सारी चेष्टा ऊपर ही ऊपर चल रही थी काव्यक्षेत्र में इसके पनपने के लिए जमीन तैयार नहीं की गई।

जमीन आगे चल कर तैयार हुई पर स्वतंत्र उद्योगों से। उसका अधिनायकत्व पंत को नहीं मिल पाया, वह मिला 'बच्चन' और 'अंचल' को जिन्होंने काव्यक्षेत्र में नई भाषा चलाई, कई भावधारा प्रवाहित की। कथा साहित्यमें उसके उन्नायक 'अज्ञेय' और यशपाल आदि हैं। नाटकों में नवीन कार्य लक्ष्मीनाराण मिश्र ने आरंभ किया और अब भुवनेश्वर प्रसाद आदि चला रहे हैं। विचारों के क्षेत्र में इस नई हलचल का प्रतिनिधि मैं डॉक्टर हेमचंद्र जोशी को मानता हूँ, यद्यपि अब वे इस क्षेत्र में नहीं हैं। मेरा विश्वास है कि अब भी यह आन्दोलन अपनी गहरी नींव नहीं जमा सका है और इसका स्वाभाविक कारण यही है कि रचनात्मक कार्य की अपेक्षा, प्रचार और प्रदर्शन की ओर हमारी अधिक अभिरुचि है। दूसरी बात यह है कि प्रतिक्रिया के रूप में इहके उच्छृङ्खल पक्षों ने जोर पकड़ा रक्खा है।

किसी भी साहित्यिक आन्दोलन की सही-सही विशेषताओं का निरूपण और परख मेरे विचार से उस आन्दोलन के पुरस्कर्ता उतनी निष्पक्ष दृष्टि से नहीं कर सकते। इसके लिए आवश्यकता है तटस्थ समीक्षा की जिनका अधिकांश भार विश्वविद्यालयों के अध्यापकों और विशेषज्ञों (Academicians and Specialists) को उठाना चाहिए। मुझे यह कहते खेद होता है कि हमारे विश्वविद्यालयों के अध्यापक अपने इस कर्तव्य की ओर उचित रूप से अग्रसर नहीं हैं।

इसके लिए यह भी आवश्यकता है कि सामयिक पत्रिकाएं और पत्र इस विषय में दिलचस्पी लें और सम्यक् रूप से सामयिक साहित्य के अनेकानेक पहलुओं पर प्रकाश डालें खेद है कि यह क्षेत्र और भी अविकसित है और इस समय बहुत थोड़े योग्य व्यक्ति सामयिक पत्र-पत्रिकाओं का परिचालन कर रहे हैं। बड़ी और पुरानी पत्रिकाओं की यह अधोगति देखकर ही हाल में कुछ छोटी छोटी विचारात्मक पत्रिकाएं प्रकाशित होने लगी हैं। मैं इन उद्योगों की सफलता चाहता हूँ। साप्ताहिक और दैनिक पत्र भी साहित्यसंबंधी चर्चा के लिए अपना द्वार प्रायः बंद किए हुए हैं। वे लोकरुचि की दुहाई देते

हैं और कहते हैं कोई पढ़ता नहीं इन लेखों को। किन्तु क्या इतनी ही सफा काफी है? मेरे विचार से कुछ दिनों तक निरुद्देश्य भी विचारपूर्ण साहित्यि लेखों को (जहां तक हो सके सरल भाषा में) छापते रहना रुचि-संस्का कारक होगा। 'हमारे पत्र संपादक क्या इस कर्तव्य की ओर ध्यान दें आज हिन्दी में निम्नकोटि की कहानियों और तत्संबंधी पत्रिकाओं का बाजा गर्म है। कई प्रतिष्ठित पत्रिकाएं साहित्य की दृष्टि से एकदम निरुद्देश्य निक रही हैं यह स्थिति बहुत ही चिन्ताजनक है। मैं तो इसके सुधार की अपी भर कर सकता हूँ।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की पुस्तकों
तथा
'सम्मेलन पत्रिका'
का प्रचार करना प्रत्येक हिन्दी प्रेमी का कर्त्तव्य है।

हिन्दी संसार

[लेखक—जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, संग्रह मन्त्री]

मातृभाषा में उच्च शिक्षा—आगरा विश्वविद्यालयमें दीक्षान्त भाषण देते हुए डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जीने इस बात पर ज़ोर दिया है कि विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम मातृभाषाओंको बनाया जाय। यद्यपि यह बात समय समय पर पहले भी कई बार कही गयी है, किन्तु अभी तक इस पर अमल नहीं किया गया है। अंग्रेजी भाषा कितनी ही उन्नत और सम्पन्न हो तो भी उसे किसी देश में अधिक दिनों तक शिक्षा का माध्यम नहीं बनाया जा सकता। विदेशी भाषा का माध्यम होने से विद्यार्थियों की मानसिक शक्ति, समय और धनका अपव्यय होता है। एक भाषा के रूप से अंग्रेजी सीखना और बात है किन्तु इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति, दर्शन यहाँ तक कि संस्कृत और हिन्दी की शिक्षा भी अंग्रेजी के द्वारा दी जाय यह हमारे ऐसे गुलाम देश में ही चल सकता है। जो निस्सन्देह देश के लिये लज्जाजनक है। अपनी भाषा और संस्कृति के विकास के लिये यह आवश्यक है कि डाक्टर श्यामाप्रसाद की सलाह के अनुसार युनिवर्सिटियों में मातृभाषा को आवश्यक महत्त्व दिया जाय। हैदराबाद की उसमानिया युनिवर्सिटी यदि एक देशी भाषा द्वारा ऐसी शिक्षा दे सकती है तो अन्य विश्वविद्यालयों के लिये यह काम असम्भव नहीं हो सकता। सब से पहले हिन्दू विश्वविद्यालय को इसका आदर्श उपस्थित करना चाहिये।

रेडियो और रावराजा—रावराजा डाक्टर श्यामविहारी मिश्र ने रेडियो की आपत्तिजनक भाषा के सम्बन्ध में एक लेख लिखा है। आपने इस पर आपत्ति की है कि आल इण्डिया रेडियो उर्दू की अपेक्षा हिन्दी की उपेक्षा करता रहा है। आल इण्डिया रेडियो से ब्राडकास्ट की हुई भाषा अरबी फारसी के शब्दों से लदी हुई कठिन उर्दू होती है। रेडियो के अधिकारी सरल हिन्दी के शब्दों से जबरदस्ती परहेज करते हैं। आल इण्डिया रेडियो के दफ्तर में अधिकांश मुसलमान या उर्दू प्रेमी हिन्दू भरे हुए हैं। इसलिये इसकी जांचकर शिकायतें दूर करनी चाहिये। वहां का सम्पूर्ण वातावरण बदलना आवश्यक है। असल में आल इण्डिया रेडियो के हिन्दुस्तानी प्रोग्राम में काम करनेवाले ७५ या कम से कम ६६ प्रतिशत कर्मचारी अच्छी

हिन्दी जाननेवाले होने चाहियें। हिन्दुस्तानी प्रोग्राम का कम से कम ७५ फीसदी शब्द समूह सरलतापूर्वक समझी जानेवाली हिन्दी होनी चाहिये। कठिन अरबी-फारसी या संस्कृत के शब्दों को अलग कर देना चाहिये। दिल्ली, लखनऊ, लाहौर और बम्बई के रेडियो स्टेशन का वातावरण सरल हिन्दुस्तानी में बदल देना चाहिये। आल इण्डिया रेडियो के कन्ट्रोलर मिस्टर बुखारी को अपने विभाग का कार्य सञ्चालन निष्पक्ष होकर करना चाहिये। आल इण्डिया रेडियो की खबरें अपढ़ भी समझ सकें ऐसी भाषामें रहनी चाहिये। हां, साहित्यिक ब्राडकास्ट में वक्ता की रुचि के अनुसार परिमार्जित हिन्दी या उर्दू में रह सकता है। यदि राव राजा महोदय की सलाह मानी जाय तो अवश्य ही ब्राडकास्ट का संशोधन हो सकता है। श्रीयुत अणे महोदय ने भी इस सम्बन्ध में एक वक्तव्य प्रकाशित किया है और कहा है कि रेडियो की भाषा कठिन फारसी मिश्रित होती है। उसमें हिन्दी के स्थान पर उर्दू रहती है जिससे हजारों हिन्दू ग्राहकों के साथ अन्याय होता है।

जयाजी प्रताप—ग्वालियर के स्वर्गीय लोकप्रिय और सफल शासक नरेश महाराज माधवराव सेंधिया की मूर्ति के उद्‌घाटन का समारोह अभी कुछ दिन हुए ग्वालियर में श्रीमान कोल्हापुर नरेश के हाथों हुआ था। उस उत्सव के उपलक्ष्य में ग्वालियर के "जयाजी प्रताप" ने अपना एक विशेषांक निकाला था। इस विशेषांक में ग्वालियर राज्य तथा ग्वालियर के नरेशों के सम्बन्ध में उपयुक्त लेखों का अच्छा संग्रह निकला था। स्वर्गीय माधव महाराज और वर्तमान प्रजापालक महाराज के सम्बन्ध में भी कई लेख हैं आवश्यकता और प्रसंग के अनुसार कितने ही चित्र भी हैं। उच्च अधिकारियों और कौंसिल के सभासदों के भी चित्र दिये गये हैं। पत्र ग्वालियर की जानकारी से पूर्ण है। यहीं नहीं कोल्हापुर नरेश और छत्रपति शिवाजी के सम्बन्ध में भी लेख हैं। सम्पादकों को बधाई है।

रेडियो की भाषा—श्रीमती सावित्री दुलारेलाल और श्रीयुत दुलारेलाल भार्गव ने मिलकर अभ्युदय में एक लेख लिखा है जिसमें रेडियों की भाषा के सम्बन्धमें विचार किया गया है। आप चाहते हैं कि रेडियो के लिये एक भाषा अलग बना ली जाय, जिससे न तो उर्दू का सवाल उठे और न हिन्दी का ही झगड़ा रहे। आप चाहते हैं कि उसका व्याकरण तो खड़ी बोली का रहे और ऐसा सरल रहे कि उसे बंगाली, महाराष्ट्र, गुजराती, नेपाली, राज

स्थानी आदि अपना सकें। बेसिक इंग्लिश की तरह एक वेसिक हिन्दुस्तानी भाषा गढ़ी जाय जो कम से कम समय में सीखी जा सके और जिससे सारे हिन्दुस्तान का काम चल सके। इसमें इंग्लिश की तरह ८५० शब्दों से काम नहीं चलेगा। अभी इसके लिये चार हज़ार शब्दों का एक कोष बनाया जाय, और रेडियो में उन्हीं शब्दों का प्रयोग हो। यही नहीं ऐसी डिक्शनरी आप लोग तैयार भी कर रहे हैं। जो हो, इस समय रेडियो का महत्व ज्यों ज्यों बढ़ता जाता है त्यों त्यों इसके आन्दोलनकी ओर लोगों का ध्यान अधिकाधिक खिंच रहा है। अब तो लखनऊ से रेडियो सम्बन्धी आन्दोलन और रेडियोकी भाषाकी आलोचना करने के लिये पण्डित जगदम्बा प्रसाद मिश्र हितैषी और बाबू गोपाललालजी एम. ए. के सम्पादकत्वमें "आकाशवाणी" नामकी एक पाक्षिक पत्रिका भी निकली है। आशा है रेडियो की भाषा का कुछ संशोधन अवश्य हो जायगा।

कलकत्तेमें टण्डनजी—अभी उस महीने माननीय बाबू पुरुषोत्तमदास जी टण्डन कलकत्ते गये थे और उनके आगमनके उपलक्ष्यमें वहांके तुलसी विद्यालयमें एक विराट सभा भी हुई थी। पं० माधवजी शुक्लके मंगलाचरणके पश्चात् श्री जयचन्दजी विद्यालङ्कार ने हिन्दू संस्कृति पर एक विद्वत्तापूर्ण सारगर्भित भाषण दिया। उड़ीसाके भूतपूर्व प्रधान मन्त्री श्री विश्वनाथदासने "हिन्दुस्तानी" के सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट किये। पण्डित अम्बिकाप्रसाद जी वाजपेयीने कहा कि भाषाका स्वरूप कोई एक नहीं रहता, प्रत्युत वह सदा परिवर्तित होता रहता है। हिन्दी भाषाके साथ भी यही नियम लागू है, श्रीमान टण्डनजीने कहा कि आज जो हिन्दी बोली जाती है वही रूप उसका पहले नहीं रहा। आजसे चालीस वर्ष पूर्व हिन्दीका कुछ और ही स्वरूप था। इतने दिनोंके बीच हिन्दीमें अनेक परिवर्तन हुए और आगे भी होते रहेंगे। हिन्दी ही राष्ट्रभाषा का स्थान ग्रहण कर सकती है; और उसीको मुसलमान भी अपनायेंगे। तथा कथित "हिन्दुस्तानी" को नहीं। उसे तो यह रूप बरबस दिया जाता है।

ब्रजभाषाकी उपयोगिता—अर्जुनमें श्री बद्रीप्रसाद प्रभाकरने कविता के लिये ब्रजभाषाकी उपयोगिता बतलाते हुए लिखा है "ब्रजभाषामें माधुर्यकी छटा अत्यन्त रहती है। जैसी अनुप्रास और माधुर्य की छाप प्रकृत भाषामें पायी जाती है वैसी अन्य भाषाओंमें मिलनी कठिन ही नहीं अपितु लगभग उसका अभाव सा ही है। ब्रजभाषामें वह माधुर्य विद्यमान है जिससे

आकृष्ट होकर मुसलमान-ईसाई तथा अंग्रेज़ जैसे अनेक विजातीय कवियों ने भी इसे अपनाया है। इसमें सभी रसोंमें भिन्न भिन्न कवियों द्वारा कविता की गयी है। इसके प्रत्येक शब्दको हम कितने ही प्रकारसे तोड़-मोड़कर प्रयोगमें ला सकते हैं। ब्रजभाषा व्याकरणके कड़े नियमोंसे जकड़ी नहीं है। इसमें गहन से गहन और सरल से सरल विषयोंका अच्छी तरह प्रतिपादन हो सका है और होता भी है। ब्रजभाषा छन्द शास्त्र में वर्णित सभी मात्रिक छन्दों एवं वर्णिक वृत्तों में आसानीसे ढली है तथा ढल भी रही है। अतः हम बड़े गर्व के साथ कह सकते हैं कि ब्रजभाषा कविता के लिये सर्वथा सर्व प्रकारेण उपयुक्त है।

संथालों की लिपि—विहार प्रान्त में संथाल परगने में संथाल जाति की काफी संख्या बसती है। उनकी निजकी कोई लिपि नहीं है। ईसाइयों के प्रयत्न से रोमन लिपि में उनकी भाषा की बातें लिपिबद्ध की गयी हैं। विहार की निरक्षरता निवारण समिति ने भी निश्चय किया था कि संथालों को रोमन लिपि द्वारा शिक्षा दी जाय। इसके विरुद्ध आन्दोलन हुआ और कहा गया कि विहार की भाषा हिन्दी है अतएव संथालों को हिन्दी भाषा और नागरी लिपि में शिक्षा दी जाय। इसके पुनः विचार के लिये निरक्षरता निवारण समिति की बैठक हुई, उसमें कहा गया कि जहां की भाषा हिन्दी या उड़िया या बँगला हो वहां उसी लिपि के द्वारा शिक्षा दी जाय। यह भी कहा गया कि जो संस्थाएँ आन्दोलन कर रही हैं वह आत्मविज्ञापन ही है। स्वयं संथाल लोग कुछ कहें तो वह सुनने योग्य होगा। अब विहार प्रान्तीय साहित्य सम्मेलन का कर्तव्य है कि वह संथाली भाषा के शब्दों को नागरीमें लिखकर संथाली पुस्तकें तैयार करने का मार्ग प्रशस्त करे। संथालों की संख्या ३० लाख है, इनमें १३२७६ संथाल ईसाई हो गये हैं। शीघ्र प्रयत्न होने से संथाल लोग भी नागरी अक्षर पसन्द करेंगे। उन्हें अपनी भाषा से प्रेम हो सकता है किन्तु वर्णमाला जब उनकी निज की नहीं है तब अपनी पड़ोसी जातियों की लिपि को अपनाना उनके लिये कठिन और अस्वाभाविक नहीं होगा। संथाली के उच्चारण के अनुरूप यदि नागरी में संकेत स्थिर हो जायँ तो अच्छा होगा। यह सुनकर प्रसन्नता हुई कि विहार प्रान्तीय साहित्य सम्मेलन ने पत्र व्यवहार आरम्भ कर दिया है। आशा है कार्य भी शीघ्रता से आरम्भ हो जायगा।

नागरी सप्ताह—गत दिसम्बर मासमें आगरा नागरी प्रचारिणी सभा ने नागरी सप्ताह सफलतापूर्वक मनाया। पहले दिन संगीत सम्मे

लन प्रोफेसर ताल्लुकेदार के सभापतित्वमें हुआ। दूसरे दिन अदालत में जाकर हिन्दी प्रचार किया गया। अदालतों तथा जनता में अपील बांटी गयी। दूसरे समय व्याख्यानों और प्रकाश चित्रों द्वारा कई विषयों पर प्रकाश डाला गया। तीसरे दिन कविता दिवस था। बाल अन्ताक्षरी में पांच स्कूलों के प्रतियोगियों ने भाग लिया। इनके लिये जो कप रखा गया था उसे मिडिल स्कूल के विद्यार्थियों ने प्राप्त किया। माध्यमिक अन्ताक्षरी में विभिन्न संस्थाओं के ३२ प्रतियोगियों ने भाग लिया। इसका शील्ड बेसिक ट्रेनिंग सेंटर के विद्यार्थियों को मिला। सायंकाल में पं० सोहनलालजी द्विवेदी के सभापतित्व में कवि सम्मेलन हुआ। द्विवेदीजी की वासवदत्ता कविता लोगों ने बहुत पसन्द की। बरेली के श्री निरंकार देव 'सेवक' तथा आगरे के श्री गोपाल चन्द्र व्यास और श्री शर्मन लाल अग्रवाल की कविता भी पसन्दकी गयी। चौथे दिनअन्तर्प्रान्तीय संस्कृति दिवस मनाया गया। इस दिन का कार्य क्रम अत्यन्त ज्ञान वर्धक और मनोरंजक रहा। इस सम्मेलन में विभिन्न प्रान्तों और धर्मों के अनुयायियों ने अपने यहां की विवाह प्रथा पर व्याख्यान दिये। मालूम हुआ कि स्थान और जलवायु भेद से हिन्दुओं की विवाह प्रथा में कुछ अन्तर हो तौ भी सामान्यतः समानता है। पांचवें दिन वाद विवाद दिवस सात हाई स्कूल के प्रतियोगियों द्वारा मनाया गया। महावीर दिगम्बर जैन स्कूल को विजय स्वरूप सत्यनारायण शील्ड मिला। मिडिल स्कूल और कालेज के विद्यार्थियों का भी विवाद हुआ। नार्मल स्कूल को श्रीलक्ष्मी नारायण शील्ड मिला। श्री सैयदअली का भाषण सुन्दर रहा। छठे दिन साहित्यिक पार्लिमेंट हुई। सरकार की ओर से कवि जीवन सुधारक बिल उपस्थित किया गया। खूब मनोरंजक प्रश्नोत्तर हुए। बिल पास न होने के कारण प्रधान मन्त्री श्रीशर्मनलाल को त्याग-पत्र देना पड़ा। सातवें दिन नाटक मनाया गया और पुरस्कार वितरण हुआ। तुलसी, विहारी, सूर, भूषण, रसखान और घनानन्द के जीवन की प्रमुख घटनाओं को नाट्य द्वारा प्रदर्शित किया गया। इस तरह पूरे सप्ताह अच्छी साहित्यिक चहल-पहल रही और सप्ताह का कार्य-क्रम सानन्द पूर्ण हुआ। सभा का यह ढंग अन्य सभाओं के लिये भी साहित्यिक जागृति की दृष्टिसे अनुकरणीय है।

उर्दू भारत की आम भाषा हो—अखिल भारतीय मुसलिम छात्र संघ की कानफरेंस लाहौर में हुई। इसमें प्रस्ताव पास हुआ है कि "उर्दू भाषा ही भारत की राष्ट्रीय उन्नति का आधार है। इसी भाषा में हिन्दू और

मुसलिम संस्कृतियों के भाव हैं। इसलिये समस्त प्रान्तीय सरकारों को उर्दू की रक्षा और उन्नति के लिये प्रयत्न करना चाहिये। इस तरह राष्ट्रीय एकता का उद्देश्य दृढ़ होगा।" एक अन्य प्रस्ताव द्वारा केन्द्रीय सरकार से कहा गया है कि "वह उर्दू भाषा को अपने विभागों में विशेष कर व्यवस्थापिका सभा में स्थान दे।" एक प्रस्ताव द्वारा पञ्जाब युनिवर्सिटी से भी कहा गया है कि वह इस भाषा को अपनावे। यही नहीं कांग्रेस, अहरार सभा, मुसलिम लीग और हिन्दू सभा से भी कहा गया है वे कि उर्दू को शिक्षा का माध्यम तथा भारत की आमभाषा बनाने का प्रयत्न करें पंजाब के प्रधान मन्त्री सर सिकन्दर हयातखां ने भी यही कहा है कि भारत की आमभाषा उर्दू ही है। इस कानफरेंस ने मौलाना अबुलकलाम आज़ाद, डा० मुहम्मद अशरफ, डा० जाकिर हुसेन, सरतेजबहादुर सप्रू और बाबू राजेन्द्र प्रसाद की उर्दू सम्बन्धी सेवाओं के लिये भी उन्हें धन्यवाद दिया है। इस धन्यवाद प्राप्तिके लिये हम भी श्री राजेन्द्रबाबू को बधाई देते हैं और कानफरेस की इस खोज की सराहना करते हैं कि हिन्दू संस्कृतियों के भाव इसी उर्दू भाषा में हैं। इसी सचाई और न्यायीभावना से उर्दू के हिमायती उसे देश की आमभाषा बनाने की आशा रखते हैं।

झाजी का भाषण—इलाहाबाद युनिवर्सिटी के वाइस चांसलर पं० अमरनाथजी झा ने लखनऊ विश्वविद्यालयमें अंग्रेजी सम्मेलन के समय देश की शिक्षा प्रणाली पर भाषण किया था। आपकी राय है कि शिक्षा में अंग्रेज़ी का माध्यम रहने से छात्रों की शिक्षा सम्बन्धी प्रगति में बाधा पहुँची है और अनेक दृष्टियों से भारतीय भाषाओं को भी आघात पहुँचा है। इसके बिना देशी भाषाओं में आधुनिक विषयों की पुस्तकें नही बन सकीं। अंग्रेज़ी को महत्व देना अब बन्द होना चाहिये। हाँ द्वितीय भाषा की तरह उसका पढ़ाना जारी रखना चाहिये, क्योंकि अब यह अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है। यह आनन्द तथा प्रेरणा देनेवाली रही है और रह सकती है। इसके द्वारा हम कुछ बड़े बड़े विचार वालों के निकट सम्पर्क में रहते हैं, अंग्रेजी तथा हमारी भाषाओं के बीच शत्रुता होने की आवश्यकता नहीं। हम अपने साहित्य की उन्नति करेंगे; परन्तु अन्धकार दूर करने में हमें जितनी भी सहायता मिल सकेगी हम प्राप्त करेंगे, जिससे मानवता अपना पुनर्निर्माण करती जाय। वास्तविक विद्वान् न अमीर हैं न गरीब, न नास्तिक हैं न भक्त; बल्कि वे हैं जो आत्मा रखते हैं और विश्वास रखते हैं कि ज्यों ज्यों दुनिया बदलती है, वह एक

ही समान रहता है । उसकी पुस्तकों में तत्कालीन सभ्यता, सामाजिक संगठन और शक्तिका दिग्दर्शन होता है । लार्ड कर्ज़न को यह आश्चर्यजनक बात मालूम पड़ती थी कि भारतीयों का अंग्रेज़ी पर पूर्ण अधिकार है, वे पूर्ण शुद्धता के साथ अंग्रेज़ी लिख ही नहीं सकते बल्कि बोल भी सकते हैं ।

श्री लालजी पुस्तकालय—पटना ज़िले के दयानगर, नूरसराय में राधेराम बरह पुरिया और उनकी चाची जीने अपने पितृ श्री बाबू लालजी राम के स्मारक में श्री लालजी पुस्तकालय स्थापित कराया है । इसकी एक संचालिका समिति है । पुस्तकों के चुनाव के लिये एक विद्वत्समिति है । हिन्दी विश्व विद्यालय, देवघर हिन्दी विद्यापीठ, रामायण परीक्षा आदि परीक्षाओं की पुस्तकें भी हैं । सामयिक पत्रों की भी सुविधा है । अभी कुछ दिन पहले उसका प्रथम वार्षिकोत्सव पं० छविनाथ पाण्डेय, श्री रामायण शरणसिंह, प्रोफेसर सेंटे, श्रीमती शारदा कुमारी आदि की उपस्थिति में धूम से मनाया गया था । देहातों में ऐसे पुस्तकालयों की बहुत आवश्यकता है ।

हिन्दू सम्मेलन में राष्ट्रभाषा—गोरखपुर कमिश्नरी का हिन्दू सम्मेलन पिछले महीने में हुआ । उसके स्वागताध्यक्ष तमकुही नरेश श्री राजा साहब इन्द्रजीत बहादुर साही जी ने अपने भाषण में कहा कि हमारी राय में राष्ट्रभाषा हिन्दी ही होनी चाहिये । अन्य प्रान्तीय भाषाओं की अपेक्षा हिन्दी का प्रचार बहुत अधिक है । दक्षिण में भी अब लाखों की तादाद में हिन्दी जाननेवाले हो गये हैं । अन्य प्रान्त के लोगों की सुविधा पर ध्यान देते हुए हमें संस्कृत शब्दों से पुष्ट हुई हिन्दी को ही अधिक महत्व देना चाहिये । कुछ लोग हिन्दुस्तानो को (जिसमें अरबी और फारसी के शब्द ठूंस-ठूंस कर भरे हैं) राष्ट्रभाषा के सिंहासन पर बिठाना चाहते हैं । हमें इसका प्रचार वांछनीय नहीं जान पड़ता । हमारे धर्म, ग्रन्थ, इतिहास-दर्शन आदि सभी संस्कृत भाषा में ही हैं । एक प्रकार से हिन्दू ऋषि-महर्षियों का मस्तिष्क ही संस्कृत भाषा में भरा हुआ है । अतः हिन्दी के साथ ही संस्कृत का भी आदर और प्रचार करना चाहिये । हिन्दी को पुष्ट करने के लिये भी संस्कृत का ज्ञान आवश्यक सा हो जाता है । भाषा के साथ लिपि का प्रश्न भी महत्व पूर्ण है । हमारी लिपि देव नागरी ही होनी चाहिये । क्योंकि वह सब दृष्टियों से पूर्ण और सरल है । कुछ लोग प्रेस सम्बन्धी कठिनाइयों को सामने रखते हुए रोमनलिपि का प्रचार या देव नागरी में स्वच्छन्द सुधार चाहते हैं । हमें वे दोनों ही बातें उचित नहीं जान पड़तीं । आजकल हिन्दी में बहुत सी पत्र-

पत्रिकाएं और पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं। यह देखते हुए प्रेस की कठिनाइयों का प्रश्न गौण हो जाता है। रोमन लिपि से हमारी भाषा का उच्चारण कितना विकृत हो जायगा। इसे सभी समझ सकते हैं।

राष्ट्रभाषा कैसी हो—कलकत्ते में पं० प्रभुदयाल जी अग्निहोत्री के प्रयत्न से राष्ट्रभाषा सम्मेलन हुआ था। अग्निहोत्रीजी ने कहा कि राष्ट्रभाषा हिन्दी के भण्डार में सभी भाषाओं के शब्दों का समावेश होने से उसकी उन्नति होगी। आर्यसमाजों को हिन्दी प्रचार के कार्य में पूरा सहयोग देना चाहिये। एक प्रस्ताव में कहा गया कि अखिल एशिया राष्ट्र संघ की स्थापना होने पर हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा हो सकती है। संस्कृत का व्यापक प्रचार पहले विभिन्न राष्ट्रों में हो चुका है इसलिये संस्कृत की पुत्री हिन्दी के लिये यह कोरी कल्पना नहीं बल्कि महत्व का प्रश्न है। दूसरे प्रस्ताव में आर्यसमाजों से अनुरोध किया गया कि आर्य सदस्यता के लिये हिन्दी ज्ञान अनिवार्य कर दें। लोगों से अनुरोध किया गया कि मर्दुमशुमारी में अपनी भाषा हिन्दी लिखावें। सभापति श्री मूलचन्दजी अग्रवाल ने कहा कि भारतवर्ष को नये संसार में उचित स्थान ग्रहण करना है; अतः राष्ट्रभाषा की अवहेलना कर हम पनप नहीं सकते। हम राष्ट्रवादी बन नहीं सकते और संसार में हमारा प्रभाव हो नहीं सकता। पुरुष यह कार्य न करें तो देवियां कर दिखायें।

उर्दू का माध्यम—पञ्जाब असेम्बली में एक ऐसा बिल उपस्थित है, जिसका उद्देश्य पंजाबी की प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम उर्दू को बनाया जाना है। हिन्दी और गुरुमुखी को भी रखने का संशोधन अस्वीकृत कर दिया गया है। पंजाब में इसके लिये आन्दोलन आरम्भ हो गया है। हिसार के हिन्दुओं और सिखों ने सभा कर इसका विरोध किया है। दिल्ली में भी विरोध की सभा हुई है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन में भी इसका विरोध किया गया है। पंजाब सरकार की नीति में परिवर्तन न होने पर पञ्जाबी भाई सत्याग्रह को भी तैयार हैं।

बँगला देवनागरी लिपि में हो—श्रीयुक्त निवारण चन्द्र भट्टाचार्य ने प्रस्ताव किया है कि "बंगला भाषा देवनागरी अक्षरों में छापी और लिखी जाय और बँगला भाषा की गति संस्कृतानुयायी हो।" उनका कहना है कि इस प्रस्ताव को ग्रहण करने पर बंगालियों की ऐहिक सुविधा तो होगी ही; किन्तु पारमार्थिक सुविधा की आलोचना मैं अभी नहीं करना चाहता। यह

ज़ोर देकर कहा जा सकता है। कि इस देश में रोमन अक्षर नहीं चल सकते। भारतवर्ष का आत्ममर्यादा बोध उसे रोमन अक्षर ग्रहण करने नहीं देगा। टाइपराइटिंग, हैण्ड राइटिंग, लीनो टाइप आदि की सुविधा के विषय में आप लिखते हैं कि आवश्यकता होने पर भारतीय अक्षरों के लिये यन्त्र निर्मित होंगे और होते हैं। रोमन अक्षर प्रचलित करने से हमारी पुरुषानुक्रम संचित साहित्य-सम्पदा बीस वर्ष में नष्ट हो जायगी। नागरी अक्षर ग्रहण कर लेने पर बंगालियोंकी यह इच्छा भी पूर्ण हो सकती है कि बंगला ही राष्ट्रभाषा हो। बंगालियों को अभी भी नागरी अक्षर सीखने पड़ते हैं। यही नहीं मराठी, गुजराती और मद्रास वालों को भी धर्म चर्चाके लिये नागरी अक्षर सीखने पड़ते हैं। नागरी अक्षर चल जाने से उड़िया-तामिल बर्मी भाषाओं के अक्षर एक हो जायेंगे। प्रकाशकों और विद्यार्थियों को भी सुविधा होगी। भाषा संस्कृतानुयायी होने से सभी प्रान्तीय भाषाओं की निकटता सिद्ध होगी।

हिन्दी पर प्रहार—सहयोगी “आजने” मर्दुमशुमारी की नीति की आलोचना करते हुए इस नीति की बड़ी निन्दा की थी कि पञ्जाब जैसे अन्य प्रान्तों में तो वहां के रहनेवालों की भाषा “उर्दू” या हिन्दी” लिखी जायगी; परन्तु संयुक्तप्रान्त-बिहार-मध्यप्रदेश-मध्यभारत-बुन्देलखण्ड-बघेलखण्ड और पहाड़ी स्थानों की भाषा जबरदस्ती “हिन्दुस्तानी” दर्ज होगी। इस तरह जहां हिन्दी बोलने वालों की संख्या अधिक है वहां हिन्दी का लोप कर दिया जायगा। यह प्रहार हिन्दुओं की भाषा पर ही नहीं प्रत्युत उनकी संस्कृति पर भी है। “हिन्दुस्तानी” की यही बानगी है, कि उसमें मातृभाषा न कह कर “मादरी ज़बान” कहा जायगा। हिन्दी और हिन्दू संस्कृति पर होने वाले ये प्रहार अब असह्य हो रहे हैं। आगे सहयोगी कहता है कि हिन्दुओं और हिन्दी प्रेमियोंमें यदि कुछ भी सार है तो उन्हें इसका प्रतिवाद बिना विलम्ब करना चाहिये और वह निष्फल हो तो मनुष्य गणना का बहिष्कार करनेका आन्दोलन निर्भयता और दृढ़ता के साथ करना चाहिये।” अबतो मनुष्य गणना हो भी गयी। आन्दोलन भी काफी हुआ। उसका प्रभाव भी हुआ और यह कहा भी गया कि अपनी भाषा जो लोग जो लिखावेंगे वही लिखी जायगी। किन्तु इस आज्ञा का प्रचार कहाँतक हुआ और जनगणना करने वालों ने इसका पालन कहाँतक किया इसका पता रिपोर्ट निकलने पर ही मिलेगा।

———

प्राप्ति स्वीकार

[लेखक—जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, संग्रह मन्त्री]

गीता बोध—इसमें महात्मा गांधीजी ने गीता के सम्बन्ध में और उसके तत्व-ज्ञान के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किये हैं। पुस्तक छोटी; किन्तु बहुत महत्वपूर्ण और सबके मनन करके योग्य है। मूल्य डेढ़ आना। पता सस्ता साहित्य मण्डल दिल्ली।

सन्त नन्दवार—सन्त नन्दवार मद्रास प्रान्त के अछूत महात्मा थे। अपने त्याग और ईश्वर भक्ति से अपने विरोधियों में भी आपने प्रेम भाव उत्पन्न किया था। भगवान भी भक्त के वश में होकर क्या क्या करते हैं, इसका परिचय भी इससे मिलेगा। लेखक पं० ऋषीकेश शर्मा और प्रकाशक दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास है। दाम चार आने।

यूरोप का इतिहास—यह यूरोप के इतिहास का तृतीय भाग है। इसमें पिछले युद्ध और उसके परिणाम पर दृष्टि डालकर अबतक के राष्ट्र संघ स्थापन तक का इतिहास आ गया है। लेखक श्रीयुक्त पं० रामकिशोर शर्मा बी० ए० विशारद और प्रकाशक सस्ता साहित्य प्रकाशक मण्डल अजमेर है। दाम ||-)

बापू—श्रीयुत सियारामशरण गुप्त ने महात्मा गांधीजी के सम्बन्ध में उनकी सत्तरहवीं वर्ष गांठ के समय यह तुकान्त कविता का काव्य लिखा है। कविता सभी अच्छी हैं, किन्तु कोई कोई कविता बहुत ही हृदय ग्राही बन पड़ी हैं। पुस्तक ||) में साहित्य प्रेस चिरगांव झांसीसे प्राप्त होती है।

नाम माहात्म्य—यह एक धार्मिक एवं परिमार्थिक मासिक पत्र है। इसने "ब्रजाङ्क" नाम का विशेषांक निकाला है। इसमें ब्रज मण्डल सम्बन्धी १३९ लेखों का समावेश किया गया है। एक तरह से इसे ब्रज मण्डल की डाइरेक्टरी कह सकते हैं। अंक बहुत उपयोगी है। वार्षिक मूल्य १≠) कुछ भी नहीं है। पता—भजनाश्रम श्री वृन्दाबन।

भारतीय मूर्तिकला—श्रीयुत रायकृष्णदासजी ने एक अधिकारी की तरह ही इस सुन्दर पुस्तक को लिखा है। प्राचीन ऐतिहासिक काल से भारतीय मूर्तिकला का इसमें सचित्र वर्णन किया गया है। गुफाओं आदि में प्राप्त सामग्री का आधार लेकर भी वर्णन प्रामाणिक बनाया गया है। पुस्तक

हिन्दी साहित्य की एक अमूल्य निधि है। एक रुपये में काशी नागरी प्रचारिणी सभा से प्राप्त होती है।

पालिमहाव्याकरण——बौद्ध धर्म का प्रायः सभी साहित्य पाली भाषा में सङ्कलित है। उसे जानने के लिये पाली भाषा का व्याकरण जानना आवश्यक है। अब तक हिन्दी में पालीभाषा का कोई प्रामाणिक ग्रन्थ नहीं था। श्रीमान् भिक्षु जगदीश काश्यप एम० ए० जी ने उस कमी की पूर्ति कर दी है। यह व्याकरण पाली भाषा का पूर्ण और प्रामाणिक कहा जा सकता है। यही नहीं किसी भी भारतीय भाषा में इतना सुन्दर पाली व्याकरण नहीं है। पता महाबोधि सभा, सारनाथ बनारस।

हरिहर प्रेस की पुस्तकें——बरालोकपुर इटावाके हरिहर प्रेस से उसके स्वामी चिकित्सक चूड़ामणि वैद्यराज पं० विश्वेश्वरदयालुजी ने कृपया निम्नलिखित पुस्तकें भेजी हैं (१) सुखिया मालिन और सुखाबाई पुस्तक संगीतमय है। वैद्यराजजी की ही लिखी है। भक्ति की महिमा दिखलाई गयी है। पुस्तक रास लीला या नौटंकी के ढंग की है। मूल्य दो आना। (२) सांगीत द्रौपदी-इसमें भी नौटंकी के ढंग पर द्रौपदी की कथा है। इसके भी कर्ता वैद्यराज जी हैं। मूल्य चार आना। (३) सांगीत नरसी भक्त-यह भी वैद्यराज की बनायी हुई नौटंकीनुमा नरसी भक्त की कथा है। दाम चार आने। (४) सांगीत इन्दुमती पद्म पुराणोक्त अज की स्त्री इन्दुमती की इसमें कथा संगीत रूप से वैद्यराजजी ने लिखी है। दाम दो आने। (५) नरसी भक्त-श्रीराधेश्याम के तर्ज पर, इसमें नरसी भक्त का कथानक लिखा गया है। दाम चार आने। (६) हंसडिम्भ नाटक यह भी वैद्यराज विश्वेश्वरदयालुजी रचित नाटक है। शाल्वन देशके राजा ब्रह्मदत्त और उनके मन्त्री मित्रसह को तपस्या द्वारा पुत्र प्राप्त करना, राजपुत्र हंस के आचरण से दुर्वासा ऋषि का अप्रसन्न होना, हंस का राजसूय यज्ञ के लिये तैयार होना और श्री कृष्ण को ललकारना, अन्त में श्रीकृष्ण के द्वारा दोनों भाइयों का मरना आदि दिखाया गया है। दाम चार आना। (७) अथकोकसार-पण्डित लक्ष्मीनारायण कौशिक संकलित यह कोकसार की पुस्तक है। आवश्यक विषयों का संग्रह हुआ है। आसन भी हैं। मूल्य आठ आने। (८) गायत्री पुरश्चरण-वैद्यराज विश्वेश्वरदयालुजी ने गायत्री के पुरश्चरण पर प्रकाश डाला है। दाम चार आने। (९) अथबगला विधान-नारद पंचरात्र में वर्णित बगलाविधान तन्त्रोक्त पुस्तक है। मूल्य चार आने। (१०) अथ कुंजिका स्तोत्रम्-सप्तशती विधान

सहित इसमें कुंजिका स्तोत्र दिया गया है। अभीष्ट सिद्धि के उपाय बता गये हैं। दाम ।) (११) वैदिक प्रत्यंगिरा और विपरीत प्रत्यङ्गिरा तान्त्रि विधान की पुस्तक है। दाम चार आने। (१२) दत्तात्रय तन्त्रम् यह तन्त्र ग्रन्थ है। वैद्यरत्न पं० सभाकान्तजी झा आयुर्वेद शास्त्री की की हु भाषा टीका है। इसमें अद्‌भुत चमत्कारिक प्रयोग लिखे हुए हैं। तान्त्रिकों सिवाय वैद्यों के भी काम की चीज़ है। दाम ॥) है।

प्रतिस्पर्धा—एक फ्रेंच प्रहसन के आधार पर लिखा हुआ यह ए अच्छा प्रहसन है। इसमें मूर्खता में प्रतिस्पर्धा करने वाले कई मूर्खों का जि है। प्रहसन मनोरंजक और चटपटा है। एक महाराष्ट्र स्त्री का हिन्दी लिखना स्वागत योग्य है। दाम चार आने।

लेखनकला—पण्डित किशोरीदास वाजपेयीजी ने लेखन कला सम्बन्ध में गवेषणा पूर्वक शास्त्रीय विवेचना के साथ यह पुस्तक लिखी है किस प्रकार भाषा निर्दोष बनाकर सजायी और अलंकृत की जाती है। कि प्रकार भावों से भाषा भरी जाय आदि विषय इसमें सरलता से किन्तु अच्छ तरह बतलाये गये हैं। विद्यार्थी और नये लेखकों के लिये पुस्तक उपादेय है मूल्य छः आने। भागीरथी प्रेस कनखल यू० पी० से पुस्तक प्राप्त होगी।

प्रभुमति के दोहे—महाजनी हिसाब की यह पुस्तक है। सब त के हिसाब बही लिखने के कायदे, गिनती, पहाड़े तथा महाजनी काम में उ योगी साधारण व्यवहार की बातों की जानकारी इसमें अच्छी तरह दी ग है। हिसाब के गुरु भी लिखे गये हैं। इस पुस्तक से महाजनों का ज्ञान ब विस्तृत हो सकता है। लेखक बाबू प्रभुलाल अग्रवाल सिकन्दराबादी, हापु ज़िला मेरठवाले हैं। मूल्य १)

गुड़पाक विज्ञान—ऊख से बना गुड़ सभी मिठाइयों का आधार है कुछ लोग चीनी नहीं खाते वे भी गुड़के गुणके कायल रहते हैं। इसके सिवा गुड़ अमीर गरीब सब के उपयोग के लिये सहज साध्य है। इस पुस्तक गन्ने की खेती से लेकर गुड़ पकाने तक की सब बातें लिखी गयी हैं। इस बाद गुड़ से बननेवाले सब तरह के विविध खाद्य पदार्थों के तैयार करने विधि भी लिखी गयी है। पुस्तक अपने ढंग की अनूठी और प्रत्येक गृहस् के घर में रहने योग्य है। अचार-मुरब्बा-तरकारी तक लिखी गयी है। काम की पुस्तक है—लेखक श्रीमाताप्रसादजी गुप्त, मूल्य ॥) पता—श्रीनव किशोर प्रेस लखनऊ।

मधुकर—श्री वीरेन्द्रकेशव साहित्य परिषद टीकमगढ़ की ओर से इस नाम का पाक्षिक पत्र निकाला गया है। इस पत्र की विशेषता यह है कि यह अखिलभारतीय क्षेत्र में व्यापक होने का न तो दावा करता है और न अखिल भारतीय समस्याओं को सुलझाने का ही दम भरता है। यह अपना क्षेत्र बुन्देलखण्ड और ओरछा राज्य को ही बनाता है। वहां की जनता की आवश्यकताएं, राजा-प्रजा के मेल और सहयोगपूर्ण कर्तव्य, वहां की संस्कृति और समाज की दशा की चर्चा तथा उसकी उन्नति ही इसका विशेष अभिप्रेत विषय होगा। इतना होने पर भी उसका दृष्टिकोण व्यापक होगा, वह देश-विदेश के सांस्कृतिक उपवनों से जीवनप्रद रस ग्रहण कर जनता के सम्मुख रखेगा। अबतक इसके जो अंक निकल चुके हैं, उनसे सफल सम्पादन का सबूत मिल रहा है। इसके सम्पादक हैं, विशाल भारत के भू० पू० सफल सम्पादक पण्डित बनारसीदासजी चतुर्वेदी। पाठ्य विषयोंसे पूर्ण पत्र का मूल्य दो रुपया वार्षिक है।

चित्ररेखा—हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व साहित्य मन्त्री और इलाहाबाद युनिवर्सिटी के हिन्दी साहित्याध्यापक डाक्टर रामकुमार वर्माजी की कुछ चुनी हुई कविताओं का यह संग्रह है। कविताओं में करुण रस और प्रकृति निरीक्षण की प्रधानता है। कल्पना नये ढंग की और भावना भव्य तथा अनूठी है। इस संग्रह की विशेषता बतलाने के लिये आरम्भ में इलाहाबाद युनिवर्सिटी के वाइस चांसलर पण्डित अमरनाथजी झा का प्राक्कथन और परिशिष्ट में प्रोफेसर सरस्वती प्रसाद एम० ए०, श्री जानकीनाथ सिंह मनोज एम० ए०, श्रीमती कुमारी चन्द्रकला बी० ए०, श्री भगवती चरण वर्मा और श्रीचन्द्रजी की भिन्न भिन्न दृष्टियों से विवेचनात्मक परिचय है। इसकी श्रेष्ठता का सबसे बड़ा प्रमाण तो यह है कि इस पर ओरछा राज्य का "देवपुरस्कार" प्राप्त हो चुका है। मूल्य १॥) प्रकाशक हिन्दी साहित्य-सम्मेलन प्रयाग।

जीवन सखा—डाक्टर बालेश्वर प्रसाद यौगिक क्रियाओं और प्राकृतिक चिकित्सा के प्रवीण डाक्टर हैं। आपने 'जीवन सखा' नामक शारीरिक-मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक मासिक पत्र निकाला है। उसका जनवरी का विशेषांक कई महत्वपूर्ण विषयों से युक्त निकला है। जिसमें स्वास्थ्य रक्षा, आहार, व्यायाम आदि के कुशल लेखकों के लेख हैं। दाम १) वार्षिक मूल्य ३) है।

मुग़ल बादशाहों की हिन्दी—इसके लेखक श्रीयुक्त चन्द्रबली जी पांडेय हैं और काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने प्रकाशित किया है। इसमें दिखलाया गया है कि फारसी का प्रचलन बन्द होने के बाद किस प्रकार उर्दू की उत्पत्ति और उसका प्रचार हुआ। मुग़ल बादशाह तो अन्त तक बहादुरशाह तक हिन्दी के ही प्रेमी रहे उसमें कविता करते रहे उनके द्वारा उर्दू का प्रचार नहीं हुआ। इसमें यह सिद्ध किया गया है कि सर्व साधारण की धारणा के अनुसार हिन्दू मुसलिम मेल स्वरूप बाजारों से उर्दू की उत्पत्ति नहीं हुई। हिन्दी को उसके संगीतों ने बादशाही दरबारों और दक्षिणी भारत में फैलाया और कायम रखा। औरंगजेब के ज़माने तक ब्रजभाषा या हिन्दी हराम नहीं समझी गयी बल्कि उसके समय में हिन्दीं किताबों के तरजुमे अधिक हुए। ईरानी कवि ज़मीर उसी के ज़माने में बादशाही दरबार में आया और यहाँ की भाषा को उसने बहुत पसन्द किया "पथी के" नाम से वह हिन्दी कविता भी किया करता था। यार जातक का उसने फारसी का अनुवाद भी किया था। अकबर की तरह खुद औरंगजेब भी हिन्दी में कविता करता और हिन्दी कवियों को दरबार में रखता था। औरंगजेब के बाद "उर्दु ये मुअल्ला' के ज़माने से परदेशियों के द्वारा उर्दू का बीजवपन हुआ। बादशाह मुहम्मदशाह के समय मन्त्री मुहम्मद अमीन खां ने उर्दू की ईजाद की अर्थात् भारत में मुग़ल सल्तनत की कमजोरी के समय विदेशी भाषा फारसी का व्यवहार घटता गया और फारसी प्रेमी विदेशियों के द्वारा हिन्दी उर्दू के रूप में पनपने लगी। मुसलमानी बेगमों को फारसी समझ में नहीं आती थी; इसलिये बादशाही महलों में हिन्दी पढ़ाई गयी। करबल कथा के लेखक नवाब फ़ज़ल अली स्वयं अपनी पुस्तक की भाषा "हिन्दी" ही कहते हैं। इसके बाद सन् १७५५ के करीब उसका उर्दू नाम पड़ता है। पुस्तक देखने योग्य है। मूल्य ॥)

राष्ट्रभाषा प्रचार समाचार

[लेखक—श्रीयुत श्रीमन्नारायण अग्रवाल, मन्त्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा ।]

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा की ओर से विभिन्न अहिन्दी प्रान्तों में जो कार्य हो रहा है, उसकी जानकारी हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सदस्यों को नियमित रूप से देने के लिये हमने सोचा है कि अगर हर मास 'सम्मेलन पत्रिका' में एक संक्षिप्त कार्य विवरण प्रकाशित किया जाय, तो अच्छा हो । हमें खुशी है कि साहित्य मंत्रीजी ने हमारी योजना को स्वीकार कर लिया है ।

कुछ प्रान्तोंके गत दो मास का संक्षिप्त कार्य विवरण इस अंक में दिया जा रहा है । आगे प्रत्येक मास का व्योरा "सम्मेलन पत्रिका" में निकलता रहेगा ।

गुजरात

गत दो महीने में गुजरात के विभिन्न राष्ट्र भाषा प्रचार केन्द्रों में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव विशेष उत्साह के साथ मनाये गये हैं । ऐसे अवसरों पर गुजरात के प्रतिष्ठित सज्जनों के राष्ट्रभाषा प्रचार के महत्त्व पर सारगर्भित व्याख्यान भी हुए जिनसे जनता ने काफी प्रोत्साहन प्राप्त किया । यहाँ संक्षेप में विभिन्न केन्द्रों का जिक्र किया जाता है ।

आंकलाव—ता० १३-१२-४० को गुजरात के प्रसिद्ध कवि श्री झीणाभाई देशायी 'स्नेह रश्मि' की अध्यक्षता में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव मनाया गया । उस अवसर पर परीक्षार्थियों के अनेक हिन्दी संवाद सफलता के साथ हुए ।

अहमदाबाद—ता० ४-१२-४० को श्रीमान् सर चीनुभाई द्वितीय रेरीनेट की अध्यक्षता में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव मनाया गया । स्थानीय कई प्रतिष्ठित सज्जनोंने उस उत्सव में विशेष दिलचस्पी ली । श्री जेठालाल जोशीने अपने निवेदन में बताया कि शहर में १५ केन्द्रों में ३० वर्ग चलाये जा रहे हैं और ३०० के करीब विद्यार्थी उनसे लाभ उठाते हैं । करीब ७ प्रचारक भाई राष्ट्रभाषा प्रचार में सहायता दे रहे हैं । श्री जोशीजी ने राष्ट्रभाषा प्रचार कार्यालय में हिन्दी के एक पुस्तकालय की आवश्यकता प्रकट की है और जनता से उसके लिये सहायता करने की प्रार्थना की है ।

सूरत—ता: १४-१२-४० को इन्दौर स्टेट के प्रधान दीवान श्री कर्नल दीनानाथ साहब ने राष्ट्रभाषा प्रचारक मंडल का मुआयना किया और कार्य को देखकर संतोष प्रकट किया। आपने मंडल को ५०) का दान भी किया।

प्रचारक मंडल की ओर से हिन्दी व्याख्यानों की आयोजना होती रहती है ता० ३१-१२-४० को श्री करुणाशंकर पंड्या ने "हिन्दी साहित्य की काव्यधारा" पर उत्तम भाषण दिया।

नडियाद—ता: १६-१२-४० को केन्द्र का तीसरा प्रमाणपत्र वितरणोत्सव गुजरात के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता श्री नरहरि भाई परीखकी अध्यक्षता में मनाया गया। प्रमाणपत्रों के वितरण के बाद अध्यक्ष महोदय ने हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू के बारे में अपने विचार को प्रकट करते हुए कहा कि हमें काम से मतलब है, नाम से नहीं। हमारे राष्ट्र पर अंग्रेजी का जो बुरा असर पड़ा है, उसको शीघ्र से शीघ्र मिटाना है।

झालोद—ता: ११-१-४१ को गुजरात के पुराने कार्यकर्त्ता श्री मामा साहेब फड़के की अध्यक्षता में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव सफलता से मनाया गया। कई सज्जनों के "राष्ट्रभाषा का महत्व" विषय पर सारगर्भित व्याख्यान हुए।

महाराष्ट्र

गत दो महीनों में महाराष्ट्र के भी विभिन्न केन्द्रों में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव मनाए गए हैं। कार्य संगठन की दृष्टि से समिति के मंत्री ने धुलें, सिरपुर, जलगांव, नासिक आदि स्थानों में जाकर परिस्थिति की जांच की और कार्य को बढ़ाने की दृष्टि से स्थानीय कार्यकर्त्ताओं के साथ बातचीत की।

पूना हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अवसर पर महाराष्ट्र के भिन्न भिन्न स्थानों में काम करनेवाले राष्ट्रभाषा प्रचारकों का एक सम्मेलन ता: २९-१२-४० को पूना में मनाया गया जिसमें प्रचार कार्य के बारे में चर्चा की गई। बैठक में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के प्रधान मंत्री श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल ने राष्ट्रभाषा प्रचार के हेतु, तथा वर्धा समिति की नीति का स्पष्टीकरण किया। कई प्रचारकों ने कार्य की दृष्टि से बहुत सी सूचनाएं पेश कीं। परस्पर परिचय तथा कार्य की दृष्टि से यह बैठक लाभदायी हुई।

पंढरपुर—यहां पर आर्य विद्याधाम नामक संस्थाके द्वारा राष्ट्रभाषा का प्रचार अच्छी तरह चल रहा है। ता: ९-१२-४० को डा० आर० जी० बोराकी अध्यक्षता में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव सफलता से मनाया गया।

वामणोद—ता: ८-१२-४० को यावल के राष्ट्रभाषा प्रेमी श्री श्रावण सखाराम वकीलकी अध्यक्षता में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव मनाया गया। इसी समय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वामणोद की स्थापना हुई।

खिरोंदे—यहां के केन्द्र व्यवस्थापक तथा प्रचारक विशेष उत्साह से काम कर रहे हैं। न्हावी गांव तथा विवरा में राष्ट्रभाषा प्रचार वर्ग खोले गये हैं। खिरोंदे के इर्द गिर्द और भी गांवों में प्रचार करने का इरादा है।

मीरज—ता० १७-१-४१ को मीरज संस्थान की रानी साहबा की अध्यक्षता में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव मनाया गया। दीवान साहेब, विद्याधिकारी तथा अन्य सरकारी कर्मचारियों ने विशेष दिलचस्पी ली। आशा की जाती है कि मीरज संस्थान में राष्ट्रभाषा का अच्छा प्रचार होगा।

नासिक—ता० ३-२-४१ को केन्द्र का प्रमाणपत्र वितरण समारंभ प्रचार समिति के प्रधान मंत्री श्री श्रीमन्नारायणजी अग्रवाल की अध्यक्षता में हुआ। प्रमाणपत्र वितरण करने के बाद राष्ट्रभाषा के प्रचार का महत्व बतलाते हुये आपने अपने व्याख्यान में कहा कि राष्ट्रभाषा का प्रचार राष्ट्र को एक सूत्र में बांधकर स्वराज्य की ओर एक कदम बढ़ाने के लिये किया जा रहा है। राष्ट्रभाषा स्वराज्य की भाषा है। सांप्रदायिक भावना और राष्ट्रभाषा प्रचार साथ साथ नहीं चल सकते। हमें तो राष्ट्रभाषा द्वारा सारे हिन्दुस्तान की सेवा करनी है।

नासिक केन्द्र का काम सुचारु रूप से चल रहा है। केन्द्र व्यवस्थापक तथा राष्ट्रभाषा प्रचारक विशेष दिलचस्पी से काम कर रहे हैं।

असम—सत्याग्रह में भाग लेने के कारण असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के अध्यक्ष श्री गोपीनाथजी बरदलै, प्रधान मंत्री श्री देवकान्त जी बरूआ, तथा श्री राजेंद्र बरूआ ने त्यागपत्र दे दिये हैं। अध्यक्ष के स्थान पर प्राध्यापक श्री विरंचिकुमार बरूआ तथा प्रधान मंत्री के स्थान पर फिलहाल श्री जमुनाप्रसादजी श्रीवास्तव का चुनाव हुआ है।

प्रान्तीय सम्मेलन; जो श्री जमनालालजी बजाज की अध्यक्षता में होनेवाला था, देशव्यापी सत्याग्रह आंदोलन आरंभ हो जाने के कारण अनिश्चित समय के लिये स्थगित कर दिया गया है।

नौगांव में राष्ट्रभाषा विद्यालय सुचारु रूप से चल रहा है। भवन निर्माण के लिये धन संग्रह किया जा रहा है।

शिवसागर में बड़े दिन की छुट्टियों में वाक्शक्ति बढ़ाने की दृष्टि से

विद्यार्थियों द्वारा "महारानी दुर्गावती" नाटक बड़ी सफलता से खेला गया।

प्रचार की दृष्टि से संचालक ने कई स्थानों का निरीक्षण किया है, औ विभिन्न स्थानों में राष्ट्रभाषा के प्रचार कार्य को व्यवस्थित करने का प्रय किया है।

राष्ट्रभाषा अध्यापन मन्दिर, गुवाहाटी——राष्ट्रभाषा अध्याप मन्दिर, गुवाहाटी की सवांत परीक्षा में ५ विद्यार्थी उत्तीर्ण हुये हैं। अध्याप मन्दिर का काम सुचारु रूप से चल रहा है।

साहित्य-निर्माण——असम रा. भा. प्र. समिति द्वारा प्रकाशि "असमियां साहित्य की रूपरेखा" पुस्तक छप गई है।

"असमियां हिन्दी स्वबोधिनी" श्री कमलदेव नारायण लिख रहे हैं।

बंगाल

बंगाल के प्रचारक श्री वामनचन्द्रजी बसु करीब ६ महीने से बंगाल मिदनापुर जिले में राष्ट्रभाषा प्रचार कर रहे हैं। वासुदेवपुर गांधी आश्रम उन्होंने कार्यकर्त्ताओं का वर्ग चलाया है। नीचे लिखे ४ स्थानों पर राष्ट्रभा वर्ग खोले गये हैं।

१. महिषा-दल कांग्रेस कार्यालय,
२. हादिया-सूताहाटा,
३. सोलाट,
४. इडतियत कार्यालय,

विदर्भ-नागपुर

अमरावती——ता: ७-१२-४० को श्री वीर वामनरावजी जोशी अध्यक्षता में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव मनाया गया। प्रमाणपत्र वितरण बाद कई विद्वानों के भाषण हुये जिनमें राष्ट्रभाषा के महत्व पर प्रकाश डाल गया। ऐसी आशा की जाती है कि विदर्भ प्रान्त में शीघ्र ही राष्ट्रभाषा प्रचार व्यवस्थित ढंग से होने लगेगा।

धामणगांव——यहां एक राष्ट्रभाषा वर्ग खोलनेका प्रयत्न किया जा रहा है। आशा है शीघ्र ही वर्ग खुल जावेगा।

बम्बई

हिन्दी प्रचार सभा, बम्बई की आयोजना के अनुसार प्रमाणपत्र वितरणोत्सव ता० ३१-१२-४० को आदरणीय श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन सभापतित्व में बड़े उत्साह से मनाया गया। सम्मेलन के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री अम्बिका प्रसादजी बाजपेई ने दीक्षान्त भाषण दिया।

श्री टंडनजी ने अपने लम्बे भाषण में राष्ट्रभाषा हिन्दी का समर्थन किया तथा राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में फैली हुई गलतफहमियों को दूर किया।

इस उत्सव में पूना अधिवेशन से लौटे हुये अनेक सज्जनों ने अपनी उपस्थिति से जनता का उत्साह बढ़ाया।

राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षाएं, फरवरी, १९४१

भिन्न भिन्न प्रान्तों के केन्द्रों से नीचे दिये विवरण के अनुसार आवेदन-पत्र आये हैं :......

प्रान्त	केन्द्र संख्या	प्रारम्भिक	प्रवेश	परिचय	कोविद	कुल
असम	१४	२७६	६२	२४	४	३६६
बंगाल	१	११	३	०	०	१४
उत्कल	२	८	८	३	०	१९
सिन्ध	२२	५५७	१४०	५०	४	७५१
गुजरात	८२	२९०४	१०३६	३६७	९०	४४०७
महाराष्ट्र	९४	२४१४	११२४	५४१	२२५	४३०४
बम्बई	१०	९७१	३३६	१४८	६४	१५१९
विदर्भ	७	११७	३४	१३	११	१७५
कुल	२३२	७२५८	२७४३	११५६	३९८	११५५५

स्थायी समिति का द्वितीय अधिवेशन

स्थायी समिति का द्वितीय अधिवेशन रविवार, २७ माघ सं० १९९७, ता० ९-२-४१ को, सम्मेलन के संग्रहालय में, श्री पं० अमरनाथ झा के सभापतित्व में २ बजे दिन से हुआ। ४७ सदस्य उपस्थित थे।

१—सर्वप्रथम सम्मेलन के भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री पं० कृष्णकान्त जी मालवीय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सभापति और हिन्दी के महान विद्वान आचार्य रामचन्द्रजी शुक्ल, तथा ऋषिकुल हरिद्वार के प्रिसिपल लीलाधरजी शास्त्री के देहावसान पर शोकप्रस्ताव उपस्थित किया गया जिसे सब सदस्यों ने खड़े होकर स्वीकृत किया।

२—प्रधान मंत्री ने गत अधिवेशन की कार्यवाही पढ़ सुनाई जो कुछ संशोधनों के अनन्तर स्वीकार हुई।

३—प्रधान मंत्री ने नियमानुसार कार्यसमिति, विश्वविद्यालय परिषद, साहित्यसमिति, प्रचारसमिति तथा संग्रहसमिति के निर्वाचन का विषय उपस्थित किया। नियमानुसार निम्नलिखित सदस्य निर्वाचित हुये—

कार्यसमिति

१—श्री पुरुषोत्तमदास टंडन
२—,, लक्ष्मीधर वाजपेयी
३—" उदयनारायण तिवारी
४—" बाबूराम सक्सेना
५—" रामशंकर शुक्ल 'रसाल'
६—" रामचन्द्र टंडन
७—" कृष्णदेवप्रसाद गौड़
८—" चन्द्रशेखर वाजपेयी
९—" श्रीराम शर्मा
१०—" बाबूराव विष्णु पराड़कर

विश्वविद्यालय परिषद्

१—श्री नीतीश्वरप्रसाद सिंह
२—" पुरुषोत्तमदास टंडन

३—श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़
४—" नन्ददुलारे वाजपेयी
५—,, सत्य प्रकाश
६—,, उमेश मिश्र
७—,, सीताराम चतुर्वेदी
८—,, पुत्तनलाल विद्यार्थी
९—,, गिरिजादत्त शुक्ल
१०—,, श्रीराम शर्मा
११—,, शालिग्राम वर्मा
१२—,, भगीरथप्रसाद दीक्षित
१३—,, बेनीप्रसाद अग्रवाल
१४—,, शिवगोविन्द मिश्र
१५—,, छविनाथ पाण्डेय
१६—,, बालकृष्ण पाण्डेय
१७—,, काका कालेलकर
१८—,, रामनाथ दुबे
१९—,, गुरुप्रसाद टंडन
२०—,, गुलाबराय

साहित्यसमिति

१—श्री अमरनाथ झा
२—,, पुरुषोत्तमदास टंडन
३—,, रामशंकर शुक्ल 'रसाल'
४—,, जगन्नाथप्रसाद शुक्ल
५—,, जयचन्द्र विद्यालंकार

प्रचारसमिति

१—श्री बनारसीदास चतुर्वेदी
२—,, श्रीराम शर्मा
३—,, रामनाथ शर्मा
४—,, हरिभाऊ उपाध्याय
५—,, मदनमोहन सेठ

६—श्री चन्द्रबली पाण्डेय
७—,, छविनाथ पाण्डेय
८—,, डा० रघुवीर
९—,, अमरनाथ काक
१०—,, दयाशंकर दुबे
११—,, शंकरसहाय सक्सेना
१२—,, रामधन शर्मा
१३—,, शं० रा० दाते
१४—,, वि० मा० देशमुख

संग्रहसमिति

१—श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी
२—,, अमरनाथ झा
३—,, प्रयागदत्त शुक्ल
४—,, छविनाथ पाण्डेय
५—,, माताप्रसाद गुप्त
६—,, बनारसी दास चतुर्वेदी
७—,, ब्रजमोहन व्यास
८—,, रामचन्द्र टंडन
९—,, पुरुषोत्तमदास टंडन
१०—,, सत्यप्रकाश
११—,, उदयनाराण तिवारी
१२—,, मोतीलाल मेनारिया
१३—,, लक्ष्मीनारायण नागर
१४—,, रामप्रसाद

४—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की सदस्यता से सेठ श्री जमनालाल बजाज का त्यागपत्र स्वीकार किया गया और उनके स्थान पर डा० राजेन्द्रप्रसाद जी निर्वाचित किये गये।

५—श्री छविनाथजी पाण्डेय, प्रधान मंत्री विहार प्रा० हि०सा० सं०, श्री रामलखनजी शुक्ल के स्थान पर स्थायी समिति के सदस्य निर्वाचित हुये। (श्री शुक्ल जी प्रबन्धमंत्री होने के कारण स्थायी समिति के सदस्य हैं।)

६—श्री पुत्तनलाल जी विद्यार्थी ने निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित किया—

हिन्दी, गुजराती, मराठी और बंगाली भाषाओं को एक दूसरे के निकट लाने के लिये प्रायः १५०० शब्दों की एक सूची बनाई जाय जिसमें ऐसे पारिभाषिक शब्द रहें जो पत्र पत्रिकाओं में बहुधा व्यवहृत होते हैं। उद्योग किया जाय कि इस सूची के शब्दों का प्रयोग उपर्युक्त भाषाओं के समाचार-पत्र और पत्रिकाओं में हो। इस सूची को बनाने के लिए निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति बनाई जाय जो सूची बनाकर साहित्यसमिति के पास प्रकाशनार्थ भेज दें—

श्री डा० सत्यप्रकाश	संयोजक
,, डा० बाबूराम सक्सेना	सदस्य
,, पुत्तनलाल विद्यार्थी	,,

टिप्पणी—पारिभाषिक शब्दों से तात्पर्य वैज्ञानिक शब्दों से नहीं है। साधारण सामाजिक जीवन में व्यवहृत शब्दों की सूची बनाने का अभिप्राय है।

निश्चय हुआ कि उपर्युक्त सज्जनों की उपसमिति प्रस्ताव के अनुसार कार्यवाही कर अपनी रिपोर्ट स्थायी समिति के समक्ष उपस्थित करे।

प्रधान मंत्री

स्थायी समिति का तृतीय अधिवेशन

स्थायी समिति की बैठक रविवार, ९ चैत्र संवत् १९९७, तारीख २३ मा १९४१ को ३ बजे दिन से संग्रहालय भवन में श्री पंडित अमरनाथ झा सभापतित्व में हुई। कुल २३ सदस्य उपस्थित थे।

१—प्रधान मंत्री ने पिछली बैठक की कार्यवाही पढ़ सुनाई जो स्वीकृत हुई।

२—प्रधान मंत्री ने १ फाल्गुन संवत् १९९७ से ३० कार्तिक संवत् १९ तक के आय व्यय का अनुमानपत्र उपस्थित किया जो स्वीकृत हुआ।

३—प्रधान मंत्री ने जैन पारितोषिक समिति के संगठन का विषय उपस्थित किया सर्वसम्मति से नीचे लिखे सदस्यों की पारितोषिक समिति संगठित हुई—

१—श्री धर्मचन्द्र सरावगी,	कलकत्ता
२—श्री कृष्णदास जी जाजू,	वर्धा
३—श्री डा० विश्वेश्वर प्रसाद,	प्रयाग
४—श्री शेषमणि त्रिपाठी,	सुल्तानपुर
५—श्री दयाशंकर दुबे,	प्रयाग (संयोजक)

४—प्रधान मंत्री ने बताया कि देहरादून की हिन्दी साहित्य समिति त सुल्तानपुर की हिन्दी परिषद् ये दोनों संस्थाएं सम्मेलन से सम्बद्ध वर्तमान स्थायी समिति के लिए इनके प्रतिनिधियों के नाम अब कार्या में आये हैं। निश्चय हुआ कि निम्नलिखित तीनों नाम स्वीकार कि जायं।

१—श्री धर्मदेव शास्त्री,	हिन्दी साहित्य समिति, देहरादून
२—श्री गयाप्रसाद शुक्ल,	,, ,,
३—श्री बलराम त्रिपाठी,	हिन्दी परिषद्, सुल्तानपुर

५—परीक्षामंत्री ने हिन्दी परिचय और हिन्दी कोविद परीक्षाओं नियमावली विचारार्थ उपस्थित की। सर्वसम्मति से नियमावली निम्न लिखित रूप में स्वीकृत हुई—

हिन्दी परिचय और हिन्दी कोविद परीक्षा

१—पंजाब और काश्मीर में हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रचार के लि सम्मेलन की ओर से दो परीक्षाएं ली जायंगी।

२—इन परीक्षाओं में हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि का प्रयोग होगा।

३—प्रति वर्ष दो बार नियत तिथियों में निम्नलिखित दो परीक्षाएं ली जायंगी—

१—हिन्दी परिचय परीक्षा
२—हिन्दी कोविद परीक्षा

परीक्षाओं का समय व तिथि परीक्षा से कम से कम ६ मास पूर्व परीक्षा-समिति द्वारा सूचित किये जायंगे।

हिन्दी कोविद परीक्षा में उत्तीर्ण होने वाले परीक्षार्थियों को 'हिन्दी कोविद' की उपाधि दी जायगी।

४—इन परीक्षाओं के उत्तीर्णाङ्क ३० प्रतिशत होंगे। प्रथम श्रेणी प्राप्त करने के लिए ५० प्रतिशत, द्वितीय श्रेणी प्राप्त करने के लिए ४० प्रतिशत और तृतीय श्रेणी प्राप्त करने के लिए ३० प्रतिशत अङ्क प्राप्त करना आवश्यक होगा।

५—इन परीक्षाओं का शुल्क निम्नप्रकार होगा—

हिन्दी परिचय परीक्षा	१)
हिन्दी कोविद परीक्षा	२)

६—हिन्दी कोविद परीक्षा में वे ही परीक्षार्थी प्रविष्ट हो सकेंगे जो कम से कम ६ मास पूर्व हिन्दी परिचय परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हों।

७—परीक्षा समिति को अधिकार होगा कि किसी विशेष परीक्षार्थी को उसकी योग्यता का प्रमाणपत्र पाने पर बिना परिचय परीक्षा उत्तीर्ण किये हिन्दी कोविद परीक्षा में सम्मलित होने का अधिकार दे दे।

८—हिन्दी परिचय परीक्षा में निम्नलिखित ३ प्रश्नपत्र होंगे—

१—गद्य और सरल व्याकरण
२—पद्य
३—रचना

९—हिन्दी कोविद परीक्षा में निम्नलिखित ३ प्रश्नपत्र होंगे—

१—गद्य तथा व्याकरण
२—पद्य
३—रचना और निबन्ध

१०—ये परीक्षाएँ कार्तिक १९९८ से आरम्भ की जायंगी।

नियम परिवर्तन

अध्याय १ उपनियम १ (क) शीघ्रलिपिविशारद के बाद, जोड़िये
हिन्दी परिचय, हिन्दी कोविद ।

„ „ (ख) में जोड़िये आरायजनवीसी के बा
'हिन्दी परिचय'

„ „ „ में जोड़िये कृषिविशारद के बाद हिन्
कोविद

„ „ ६ (क) शीघ्रलिपिविशारद के बाद जोड़िये
हिन्दी परिचय १)
हिन्दी कोविद २)

अध्याय ३ नियम २ में जोड़िये हिन्दी कोविद

„ ३ „ ५ (क) समूह २ में जोड़िये 'बङ्गला, गुजराती, मराठ

प्रधान मन्त्री

हिन्दी विश्वविद्यालय परिषद का प्रथम अधिवेशन

हिन्दी विश्वविद्यालय परिषद का प्रथम अधिवेशन रविवार, ११ फाल्गुन, ता० २३ फरवरी १९४१ को सायंकाल ३½ बजे से सम्मेलन के संग्रहालय भवन में श्री पुरुषोत्तमदासजी टण्डन के सभापतित्व में हुआ।

१—परीक्षामंत्री ने नियमावली के उपनियम २० के अनुसार परीक्षासमिति के लिए ११ सदस्यों के निर्वाचन का विषय उपस्थित किया। सर्वसम्मति से सदस्यों का निर्वाचन नीचे लिखे अनुसार हुआ—

१—श्री अमरनाथ झा
२—,, पुरुषोत्तमदास टण्डन
३—,, लक्ष्मीधर बाजपेयी
४—,, लक्ष्मीनारायण दीक्षित
५—,, रामलखन शुक्ल
६—,, रामशंकर शुक्ल 'रसाल'
७—,, ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल'
८—,, चन्द्रशेखर वाजपेयी
९—,, जगन्नाथप्रसाद शुक्ल
१०—,, डा० उमेश मिश्र
११—,, मथुराप्रसाद सिंह

२—परीक्षामंत्री ने नियमावली के उपनियम २२ (ङ) के अनुसार वर्गों के लिए सदस्यों के निर्वाचन का विषय उपस्थित किया। सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि हिन्दी साहित्य, मराठी और गुजराती वर्गों में सात सात सदस्य तथा अन्य वर्गों में पांच पांच सदस्य चुने जायँ। प्रत्येक वर्ग का निर्वाचन नीचे लिखे अनुसार हुआ—

हिन्दी साहित्य—	श्री दयाशंकर दुबे (संयोजक)	प्रयाग
	,, डा० रामप्रसाद त्रिपाठी	,,
	,, सीताराम चतुर्वेदी	काशी
	,, रामशंकर शुक्ल रसाल	प्रयाग
	,, लक्ष्मीधर वाजपेयी	कानपुर

श्री लक्ष्मीनारायण दीक्षित प्रयाग
,, रामकुमार वर्मा ”

मराठी—श्री डबल्यू० जी० गोखले, इन्टरमीडिएट बोर्ड, प्रयाग (संयोजक)।
” जगन्नाथ कृष्ण नेने, विद्या मन्दिर हाईस्कूल, प्रयाग।
” 'साहित्यरत्न' गंगाधर इन्दूरकर, प्रयाग।
” दत्तात्रय पोतनवीस एम० ए०, प्रयाग।
” विमलाबाई देवधर एम० ए०, बी० टी०, सेन्ट्रल हिन्दू गर्ल्स स्कूल, बनारस।
” ग० र० वैशम्पायन, सदाशिव पेठ, पूना।
” काका कालेलकर, मगनवाड़ी, वर्धा।

गुजराती—श्री बी० के० त्रिवेदी, डिप्टी लाइब्रेरियन, प्रयाग (संयोजक)।
” साँवलजी नागर, सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल, बनारस।
” लक्ष्मीनारायण नागर, प्रयाग।
” रामकृष्ण दुबे एम० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग।
” विष्णुराम मेहता, प्रयाग।
” काका कालेलकर, वर्धा।
” जीवनशंकर याज्ञिक एम० ए०, हिन्दू विश्वविद्यालय।

बंगला— श्री क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय (संयोजक)
” सुहृदचंद्र चौधरी, हेडमास्टर कर्नलगंज हाई स्कूल, प्रयाग।
” राधारमण चक्रवर्ती, एंग्लो बंगाली इंटर कालेज, प्रयाग।
” सत्यांशुमोहन मुखोपाध्याय, ट्रेनिंग कालेज, काशी।
” अनुकूलचन्द्र मुकर्जी, एम० ए०, प्रयाग।

इतिहास—श्री डा० विश्वेश्वरप्रसाद एम० ए०, डी० लिट्० (संयोजक)।
” डा० रामप्रसाद त्रिपाठी, प्रयाग।
” डा० रामशंकर त्रिपाठी, सनातन धर्म कालेज, कानपुर।
” डा० परमात्माशरण एम० ए०, डी० लिट्०।
” जयचन्द्र 'विद्यालंकार', सेवा उपवन, काशी।

भूगोल—श्री रामनारायण मिश्र, ई० सी० कालेज, प्रयाग (संयोजक)।
” शिवप्रसाद पाण्डेय बी० ए०, एल० टी०, माडर्न हाई स्कूल, प्रयाग।

श्री डा० रामनाथ दुबे, एम० ए०, डी० लिट्०, प्रयाग विश्वविद्यालय ।
” बलभद्रप्रसाद वाजपेयी, कान्यकुब्ज कालेज, लखनऊ ।
” शांतिनाथ नागर एम० एस-सी०, बी० टी०, ट्रेनिंग कालेज, काशी ।

गणित—श्री डा० गोरखप्रसाद डी० एस-सी०, प्रयाग (संयोजक) ।
” श्रीगोविन्द तिवारी एम० ए०, प्रयाग ।
” जितेन्द्रनाथ सेन, एम० ए०, के० पी० कालेज, प्रयाग ।
” चन्द्रशेखर वाजपेयी एम०ए०, विद्या मंदिर हाई स्कूल, प्रयाग ।
” रामकुमार चौबे एम० ए०, एल० टी०, एल-एल० बी०, सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल, काशी ।

राजनीति—श्री अवधबिहारीलाल, एम० ए०, प्रयाग विश्वविद्यालय (संयोजक)
,, कृष्णदेवप्रसाद गौड़, एम० ए०, एल० टी०, डी० ए० वी० कालेज, बनारस ।
” नीतीश्वरप्रसादसिंह, सुहृद संघ, मुजफ्फरपुर ।
” वाचस्पति उपाध्याय, एम० ए०, बी० टी०, एंग्लो इंटर कालेज, काशी ।
” कन्हैयालाल, काशी विद्यापीठ ।

अर्थशास्त्र—श्री दयाशंकर दुबे, एम० ए०, एल-एल० बी० (संयोजक) ।
श्री कन्हैयालाल गोयल एम० ए०, प्रयाग ।
” कपिलदेव उपाध्याय, काशी विद्यापीठ ।
” शंकरसहाय सक्सेना एम० ए०, बरेली कालेज ।
” कृष्णकुमार शर्मा, एस० डी० कालेज, कानपुर ।

संस्कृत तथा पुरातत्त्व—श्री डा० उमेश मिश्र, एम० ए०, डी० लिट्०, प्रयाग विश्वविद्यालय (संयोजक) ।
श्री क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय, एम० ए०, प्रयाग विश्वविद्यालय ।
” लक्ष्मीनारायण दीक्षित एम० ए०, सा० रत्न, बंगाली इण्टर कालेज, प्रयाग ।
” बलदेव उपाध्याय एम० ए०, हिन्दू वि० वि०, काशी ।

श्री चन्द्रशेखर पाण्डेय, एम० ए०, साहित्य रत्न, सनातनध कालेज, कानपुर।

दर्शनशास्त्र—श्री डा० उमेश मिश्र एम० ए०, डी० लिट्० (संयोजक)।
श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०, प्रयाग।
" वीरमणि उपाध्याय एम० ए०, आचार्य हिन्दी विद्यापीठ काशी।
" राजाराम शास्त्री, काशी विद्यापीठ।
" क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय एम० ए०, प्रयाग विश्वविद्यालय।

अंग्रेजी—श्री ब्रजराज एम० ए०, बी० एस-सी०, एल-एल० बी०, (संयोजक)
" मनोरंजनप्रसादसिंह एम० ए०, राजेन्द्र कालेज, छपरा।
" सीताराम चतुर्वेदी एम० ए०, ट्रेनिंग कालेज काशी।
" बालकृष्ण पाण्डेय एम० ए०, कान्यकुब्ज कालेज, लखनऊ।
,, कुबेरनाथ शुक्ल, गवर्नमेंट कालेज, प्रयाग।

धर्मशास्त्र—श्री क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय एम० ए०, प्रयाग (संयोजक)।
,, लक्ष्मीधर वाजपेयी, गान्धी नगर, जवाहर पार्क, कानपुर।
,, रघुवर मिट्ठूलाल शास्त्री एम० ए०, प्रयाग।
,, लक्ष्मीनारायण दीक्षित एम० ए०, सा०रत्न, प्रयाग।
,, डा० उमेश मिश्र एम० ए०, डी० लिट्, प्रयाग।

वैद्यक तथा शरीरविज्ञान— श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, प्रयाग (संयोजक)।
श्री डा० ब्रजबिहारीलाल, बी० एस-सी०, प्रयाग।
,, रामदुलारे शुक्ल 'आयुर्वेदाचार्य', प्रयाग।
,, डा० सिद्धार्थ एम० बी० बी० एस०, प्रयाग।
,, बेनीमाधव द्विवेदी, 'आयुर्वेदरत्न', प्रयाग।

विज्ञान—श्री डा० सत्यप्रकाश, डी० एस्-सी०, प्रयाग (संयोजक)।
,, शालिग्राम वर्मा, एम० ए०, बी० एस-सी०, प्रयाग।
,, चन्द्रशेखर वाजपेयी एम० एस-सी०, हेड मास्टर विद्या-मन्दिर हाई स्कूल, प्रयाग।
,, डा० रामशरणदास, प्रयाग विश्वविद्यालय।
,, महावीरप्रसाद श्रीवास्तव बी० एस्-सी, एल० टी०, हेडमास्ट गवर्नमेण्ट हाई स्कूल, फर्रुखाबाद।

कृषिशास्त्र—श्री दयाशङ्कर दुबे, एम० ए०, एल-एल बी०, प्रयाग (संयोजक)।
श्री तेजशङ्कर कोचक, बी० एस-सी० लखनऊ।
,, जी० एन० व्यास, प्रयाग।
,, मूलचन्द मालवीय, प्रयाग।
,, पुरुषोत्तमदास अग्रवाल, प्रयाग।

ज्योतिष—श्री डा० गोरखप्रसाद डी० एस-सी० (संयोजक)।
,, डा० रामशङ्कर शुक्ल 'रसाल' एम० ए०, डी० लिट्०, प्रयाग।
,, श्यामकिशोर मालवीय, एम० ए०, विद्यामन्दिर हाई स्कूल, प्रयाग।
,, वेणीमाधव द्विवेदी जोतिषाचार्य, 'आयुर्वेदरत्न', प्रयाग।
,, महावीर प्रसाद श्रीवास्तव बी० एस-सी०, एल० टी०, हेडमास्टर गवर्नमेण्ट हाई स्कूल, फर्रुखाबाद।

मुनीमी—श्री राधाकृष्ण तिवारी, प्रयाग (संयोजक)।
,, संगमलाल अग्रवाल एम० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग।
,, कन्हैयालाल गोयल एम० ए०, प्रयाग विश्वविद्यालय।
,, सेठ अमरचन्द माहेश्वरी, उरई।
,, युगलकिशोर खन्ना, बी० काम०, प्रयाग।

अर्जीनवीसी—श्री श्रीमोहन श्रीवास्तव, वकील (संयोजक)।
श्री बेनीप्रसाद अग्रवाल एम० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग।
,, संगमलाल अग्रवाल एम० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग।
,, झुन्नीलाल पाण्डेय, उरई।
,, शीतलादीन द्विवेदी, बी० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग।

संपादनकला—श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल' (संयोजक)।
श्री सत्यजीवन वर्मा, एम ए०, प्रयाग।
,, शिवपूजनसहाय, राजेन्द्र कालेज, छपरा।
,, बाबूराव विष्णु पराड़कर, संपादक 'आज', काशी।
,, लक्ष्मीधर वाजपेयी, गान्धीनगर, जवाहर पार्क, कानपुर।

संगीत श्री पटवर्धन, प्रयाग (संयोजक)।
,, कुशालकर, प्रयाग।
,, जगदीशप्रसाद पाठक, प्रयाग।

श्री ब्रजराज, एम० ए०, बी० एस-सी०, प्रयाग ।
,, डी० ओझा, प्रयाग ।

गार्हस्थ्यशास्त्र—श्रीमती रत्नकुमारी एम० ए०, प्रयाग (संयोजिका)।
श्रीमती गोरखप्रसाद, प्रयाग ।
,, कमला देवी शर्मा, प्रयाग ।
श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी, कानपुर ।
श्रीमती चन्द्रावती त्रिपाठी, एम० ए०, प्रयाग ।

ड्राइंग...श्री बी० के० महादाने, ड्राइङ्ग मास्टर, प्रयाग (संयोजक)।
,, द्वारकाप्रसाद अर्गल, ड्राइङ्ग मास्टर, प्रयाग ।
,, श्यामलाल पचौरी, ड्राइङ्ग मास्टर, अग्रवाल विद्यालय, प्रयाग।
,, विश्वम्भरप्रसाद, ड्राइङ्ग मास्टर, डी० ए० वी० हाई स्कूल, प्रयाग
" सोहनलाल, हिन्दू स्कूल, काशी ।

पाली—" डा० बाबूराम सक्सेना एम० ए०, डी० लिट्० (संयोजक)।
" आनन्द कौसल्यायन, सारनाथ ।
" सीताराम चतुर्वेदी एम० ए०, ट्रेनिंग कालेज, काशी ।
" उदयनारायण त्रिपाठी, एम ए०, 'साहित्यरत्न', प्रयाग ।
" नारायणदत्त पाण्डेय, एम० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग ।

———

३—परीक्षामंत्री ने नियमावली के उपनियम १८(छ) के अनुसार विश्वविद्याल परिषद के लिए पांच विशेषज्ञ सदस्यों के निर्वाचन का विषय उपस्थि किया । सर्वसम्मति से निम्नलिखित ५ विशेषज्ञ सदस्य निर्वाचित कि गए—

(१) श्री क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय एम० ए०, प्रयाग विश्वविद्यालय ।
(२) " अवधविहारीलाल एम० ए० " "
(३) " प्रो० ब्रजराज एम० ए० प्रयाग ।
(४) " डब्ल्यू० जी० गोखले बी० ए० प्रयाग ।
(५) " बी० के० त्रिवेदी, डिप्टी लाइब्रेरियन, प्रयाग विश्वविद्यालय ।

४—परीक्षामंत्री ने संवत १९९७ (सन् १९४०) की परीक्षाओं का परिण

विचारार्थ उपस्थित किया। निश्चय हुआ कि वह नियमानुसार प्रकाशित किया जाय।

५—परीक्षामंत्री ने प्रस्ताव किया कि इस वर्ष से पंजाब, सीमाप्रदेश तथा काश्मीर में हिन्दी प्रचार की दृष्टि से कुछ विशेष परीक्षाओं की आयोजना की जाय। निश्चय हुआ कि परिषद् परीक्षासमिति को आदेश देती है कि वह इन परीक्षाओं के लिए नियमावली, पाठ्यक्रम आदि पूरी योजना बनाये। तत्पश्चात् सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

दयाशङ्कर दुबे,
एम० ए०, एल-एल० बी०,
परीक्षामंत्री

हिन्दी प्रचार में

दक्षिण भारत सबसे पुराना व पुरोगामी है

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा

सात करोड़ हिन्दी प्रेमियों की एक मात्र हिन्दी संस्था है
उसके अंतर्गत

६०० वर्तमान केन्द्र — १७०० पुराने केन्द्र
२०००० वर्तमान परीक्षार्थी — १००००० पुराने परीक्षार्थी
५०० पाठशालायें — १२०० प्रचारक

काम कर रहे हैं।

इनका एक विस्तृत, सुव्यवस्थित संगठन समूचे
प्रान्त में एक जाल सा बिछा हुआ है।

इस महान राष्ट्रीय संस्था का हाल
और
दक्षिण के हिन्दी प्रचार का विवरण
आप

सभा के मुखपत्र

"हिन्दी प्रचार समाचार" में पढ़िये।
सालाना चंदा—सिर्फ दो रुपये

व्यवस्थापक,
पत्रिका विभाग,

पता—दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
त्यागरायनगर, मद्रास।

अपनी बात

श्रद्धेय टंडन जी—गत २ अप्रैल को हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रा माननीय श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन सरकार द्वारा नजरबन्द कर लि गये। इस समय वह जेल में हैं। श्रद्धेय टंडनजी ने अपने जीवन में दे के लिये जो त्याग और बलिदान किया है, वह किसी से छिपा नहीं है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन से तो उनका शरीर और आत्मा का सा अटूट संबंध है। यद्यपि टंडन जी जेल में है किन्तु सम्मेलन के प्रति उनकी हित चिंतना हमा साथ है। सम्मेलन के गत अधिवेशन के मनोनीत सभापति श्री संपूर्णानंद भी इस समय जेल में हैं। सभापति मनोनीत होने के बाद ही वे गिरफ्तार क लिये गये थे और पूना का अधिवेशन उनके सभापतित्व से वंचित रह गया। श्रद्धेय टंडन जी और श्री संपूर्णानंदजी जेल से कब मुक्त होंगे इसे कौन क सकता है? किंतु सम्मेलन के प्रेमियों और समस्त हिन्दी संसार को इनकी शुभ कामनायें प्राप्त हैं यह कम गौरव की बात नहीं है।

यों तो हिन्दी जगत में अनेकों पत्र पत्रिकायें हैं पर

साधना

ही एक ऐसी मासिक पत्रिका है जो केवल २) वार्षिक मूल्य में ही उच्चकोटि की विविध विषय बिभूषित सामग्री भेंट करती है, आप भी ग्राहक बनिए।

मनीआर्डर भेजने का पता—

साधना कार्यालय, बांके-विलास, आगरा

सभी प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता—

गयाप्रसाद एण्ड सन्स आगरा।

साहित्य-सन्देश का साहस

अक्टूबर के महीने में अपना बृहद् उपन्यास-अङ्क निकालने के पश्चात्

[छः महीनों में चार विशेषाँक]

पहला—परीक्षांक ! यह एक मार्च को पाठकों के हाथ में होगा। इस अंक का प्रकाशन विद्यार्थियों के लाभार्थ किया जा रहा है। इन्टर, बी० ए० और एम० ए० के विद्यार्थी इससे विशेष रूप में लाभ उठा सकेंगे और, आगे चलकर सम्मेलन की परीक्षाओं में भी इस अंक का उपयोग हो सकेगा।

दूसरा—शुक्ल-अङ्क ! यह एक अप्रेल सन् १९४१ को तैयार होगा। इस अंक में शुक्लजी का प्रारम्भिक जीवन, उनकी समस्त कृतियों की आलोचना, आपकी शैली का विश्लेषण, हिन्दी के प्रति की गयी आपकी सेवाओं का विवेचन और आचार्य के जीवन के कुछ महत्वपूर्ण संस्मरण इस अंक में छापे जाएंगे। हिन्दी के पाठकों को संदेश के प्रसाद-अंक और द्विवेदी-अंक की याद न भूली होगी। कोशिश यह की जा रही है कि यह अंक भी अपनी पिछली परम्परा में आदर्श उपस्थित कर सके।

तीसरा—उपन्यास-अङ्क (दूसरा खण्ड) यह अंक एक जून सन् १९४१ को प्रकाशित होगा। हम उपन्यास-अंक का प्रथम खण्ड अक्टूबर सन् १९४० में निकाल चुके हैं। उक्त अंक में हिन्दी उपन्यासों का मार्मिक विवेचन किया गया था। अब इस अंक में भारत की प्रान्तीय भाषाओं के उपन्यासों एवं विश्व के उपन्यासों की मूल धाराओं पर प्रकाश डाला जायगा। हिन्दी के कुछ श्रेष्ठ उपन्यासों पर इस अंक में अधिकारी व्यक्तियों के अध्ययन प्रस्तुत किये जाएँगे और हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार अपनी उपन्यास-कला के विस्तृत अनुभव स्वयं अपनी कलम से हिन्दी पाठकों को देंगे।

चौथा—आलोचनांक ! यह चतुर्थ वर्ष की समाप्ति के बाद नववर्षाङ्क के रूप में सितम्बर सन् १९४१ को तैयार होगा। यह अंक एक प्रकार से हिन्दी जगत् में अभूत पूर्व होगा। यह हिन्दी समालोचना का इतिहास, उसके विभिन्न पहलू, आधुनिक समालोचना के मान और हिन्दी के सभी समालोचकों की शैलियों पर अपना पूर्ण अध्ययन प्रस्तुत करेगा। यह अंक उपन्यास-अंक से भी अधिक महत्व पूर्ण होगा।

इन सभी अंकों के दाम लागत के अनुसार फुटकर लेने वालों को अधिक देने पड़ेंगे। इससे अच्छा यह है कि स्थायी ग्राहक बना जाय और ३) पेशगी भेज दिये जायँ। विद्यार्थी समाज तो २) में ही वर्ष भर ग्राहक रह सकता है।

साधारण अंक का नमूना मुफ्त मंगाकर देख लीजिए।

पत्र व्यवहार का पता—**साहित्य-सन्देश कार्यालय, आगरा।**

जीवन-जाग्रति, जीवन-निर्माण और जीवन की साधना यदि आपको करनी है तो

सस्ता साहित्य मण्डल का सस्ता साहित्य

पढ़िये

नवीन प्रकाशन

(सर्वोदय साहित्यमाला)

९१. प्रेम में भगवान—टॉलस्टॉय की १७ चुनी हुई सदाचार और नीति की कहानियाँ । दाम ॥)

९२. हमारे गाँव और किसान— हमारे गाँवों और किसानों की हालत उनके दुखदर्द के हाल तथा उनको दूर करने के उपाय इसमें बताये गये हैं । दाम ॥)

९३. ब्रह्मचर्य—महात्माजी के ब्रह्मचर्य-संबंधी लेखों का संग्रह । दाम ॥)

९४. गांधी-अभिनंदन-ग्रंथ—

महात्मा गांधी की ७१ वीं वर्षगाँठ पर समर्पित तथा सर्वपल्ली राधाकृष्णन् द्वारा संपादित अभिनंदन ग्रंथ । दाम २) नवीन संस्करण १।)

९५. हिन्दुस्तान की समस्यायें—

जवाहरलाल नेहरू के हिन्दुस्तान की समस्याओं पर लिखे विचारपूर्ण लेख । दाम १)

९६. जीवन-संदेश—

खलील जिब्रान की सुप्रसिद्ध पुस्तक The prophet का अनुवाद । दाम ॥)

९७. समन्वय—

डॉ० भगवानदासजी के लेखों का संग्रह । दाम २)

९८. समाजवाद: पूँजीवाद—

प्रसिद्ध अंग्रेज़ी लेखक बर्नाड श की प्रसिद्ध पुस्तक के आधार प लिखी । दाम ॥।)

९९. मेरी मुक्ति की कहानी—

महर्षि टॉल्स्टॉय की आत्म कहान तथा उनके बचपन के संस्मरण। दाम ॥)

१००. खादी-मीमांसा—

खादी विचारधारा को तर्क त आँकड़ों और उद्धरणों से समझा वाली पुस्तक । दाम १॥)

१०१. बापू-[घनश्यामदास बिड़ला

महात्मा गांधी का अत्यंत नि से किया हुआ विश्लेषण, अने निजी तथा रोचक स्मरणीय प्रसंगों पूर्ण· १३ सुन्दर चित्रों सहित; दाम ॥। सजिल्द १।), हाथ का कागज की नवीन संस्करण छप रहा है ।

१०२. 'विनोबा' और उन विचार—

प्रथम सत्याग्रही विनोबा के विचा को पढ़कर आप जीवन जीना ज जायेंगे । यह समझेंगे कि सफल जी उसीका है जिसने जीवन जीना सीख दाम ॥)

१०३. लड़खड़ाती दुनिया—जवा

लाल जी द्वारा विश्व-समस्याओं पर लिखे गये लेख ॥)

(नवजीवन माला)

१. राष्ट्रीय गायन–चुनी हुई राष्ट्रीय स्वदेश-भक्तिपूर्ण कविताओं और गायनों का संग्रह—=)

२. खादी का महत्त्व—खादी के बारे में आप इससे सहज में ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। लेखकः गुलजारीलाल नंदा; दाम –)॥

(सामयिक साहित्य माला)

१. युद्ध-संकट और भारत

यूरोप में युद्ध शुरू होने के बाद से भारत का उस युद्ध के प्रति क्या रुख हो, इस विषय पर कांग्रेस और सरकार में जो चर्चा छिड़ी उसपर दिये गये वक्तव्यों और लेखों का संग्रह; दाम ।)

२. सत्याग्रह कब, क्यों और कैसे ?—

सत्याग्रह क्यों हो, कब हो और कैसे हो, इस पर महात्माजी के लेखों का यह संग्रह है। दाम ≶)

३. राष्ट्रीय पंचायत—

कांग्रेस की माँग—विधान-सभा (Constituent assembly) पर देश के नेताओं के विचार। दाम ।)

(बाल साहित्य माला)

१. कथा-कहानी–बालोपयोगी रोचक कहानियाँ दाम =)

२. सीख की कहानियाँ (२ भाग) बालोपयोगी शिक्षाप्रद कहानियाँ; प्रत्येक भाग का दाम =)

३. शिवाजी चरित्र—छत्रपति शिवाजी का बालोपयोगी जीवनचरित दाम =)

४. देशप्रेम की कहानियाँ—दुनिया के इतिहास में से चुनी हुई देश प्रेम की ५ कहानियाँ; दाम =)

सोल एजेन्सी-प्रकाशन

डायरी के कुछ पन्ने :—घनश्यामदास बिड़ला की दूसरी मनोरंजक पुस्तक—जिसमें दूसरी गोलमेज परिषद् में गांधीजी के साथ के संस्मरण हैं। मूल्य १॥)

१. बिखरे विचार—बिड़लाजी की तीसरी पुस्तक विविध लेख संग्रह १।)
२. मालवीयजी के साथ ३० दिन· श्री रामनरेश त्रिपाठी
३. युद्ध और अहिंसा—महात्मा गांधी

'जीवन-साहित्य' मासिक भी आपने पढ़ा है ?

सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सर्कस, नई दिल्ली

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के नवीन प्रकाशन

बुद्ध चरित्र—रचयिता पं० रामचंद्र शुक्ल मूल्य २।।) महात्मा बुद्ध का उज्जवल चरित्र, सुन्दर ब्रजभाषा काव्य। इस पुस्तक की महत्वपूर्ण भूमिका में ब्रज, खड़ी और अवधी भाषाओं का व्याकरण विवेचन किया गया है।

सोवियत-भूमि—ले० महापंडित राहुल सांकृत्यायन, मूल्य ५) रूस के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिये हिन्दी में अद्वितीय ग्रंथ।

मूर्तिकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) भारतवर्ष की मूर्तिकला की आदि से अंत तक तात्विक व्याख्या।

चित्रकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) चित्रकला पर सर्वोत्तम पुस्तक

बाल-मनोविज्ञान—ले० पं० लालजीराम शुक्ल मूल्य १।) हिन्दी में बाल-मनोविज्ञान संबंधी सर्वश्रेष्ठ रचना।

मआसिरुल् उमरा, भाग १ और २—अनु० बाबू ब्रजरत्नदास, मूल्य ४) प्रति भाग। मुगल शासनकाल के सरदारों की सब से प्रामाणिक जीवनियां।

बिहार में हिन्दुस्तानी—ले० पं० चंद्रबली पाण्डेय, मूल्य ।) बिहार प्रांत में हिन्दी हिन्दुस्तानी समस्या की तात्विक व्याख्यान।

भाषा का प्रश्न—ले० पं० चंद्रबली पांडेय, मूल्य ।।) भाषा सम्बन्धी प्रश्नों का विस्तृत और विवेचनापूर्ण उत्तर।

कचहरी की भाषा और लिपि—ले० पं० चंद्रबली पांडेय मूल्य ।।।) अदालतों की भाषा और लिपि का विस्तृत विवेचन।

मध्य प्रदेश का इतिहास—ले० रायबहादुर डा० हीरालाल बी० ए०, १।।)

हिन्दी साहित्य का इतिहास— ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य ५) प्रवर्द्धित संस्करण हिन्दी साहित्य का सब से अच्छा और विस्तृत इतिहास।

रघुनाथ रूपक—सम्पादक महताबचंद खारैड, मूल्य २) डिंगल भाषा का अत्युत्तम काव्य।

नैपोलियन बोनापार्ट—ले० लाला राधामोहन गोकुलजी, मूल्य १)

सिक्खों का उत्थान और पतन—ले० पं० नन्दकुमार देव, मूल्य १)

भीष्म पितामह—(जीवनी)ले० गणपति जानकी राम दुबे, मूल्य १)

आदर्श और यथार्थ—ले० बाबू पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव, मूल्य ।।।) काव्य में आदर्शवाद और यथार्थवाद का बहुत स्पष्ट और ऐतिहासिक विवेचन।

मालती माला—(कहानी) ले० श्रीमती मालती शर्मा, मूल्य ।।)

त्रिवेणी—ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य १) सूर, तुलसी और जायसी पर लेखक के आलोनात्मक निबंधों के विशिष्ट अंशों का संग्रह।

मिलने के पते—प्रत्येक नगर के प्रतिष्ठित पुस्तक-विक्रेता
अथवा नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा

प्रकाशित कुछ पुस्तकें

(१) सुलभ साहित्यमाला

१ भूषण ग्रन्थावली	२)
२ हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	।।)
३ भारत गीत	≡)
४ राष्ट्रभाषा	।।)
५ शिवाबावनी	≡)
६ सरल पिंगल	।)
७ भारतवर्ष का इतिहास भाग १	२।।)
८ ” ” ” ” २	२।)
९ व्रजमाधुरीसार	२।।)
१० पद्मावत पूर्वार्द्ध	१), १।)
११ सत्य हरिश्चन्द्र	।-)
१२ हिन्दी भाषा सार	।।।)
१३ सूरदास की विनय पत्रिका	≡)
१४ नवीन पद्यसंग्रह	।।।)
१५ कहानी कुञ्ज	।।=)
१६ विहारी संग्रह	≡)
१७ कवितावली	।।।)
१८ सुदामा चरित्र	।)
१९ अलंकार प्रकाश	।=)
२० कबीर पदावली	।।।=)
२१ हिन्दी गद्य निर्माण	१।।)
२२ हिन्दी साहित्य की रूप रेखा	।)
२३ सती करुणाकी	।।)
२४ हिन्दी पर फारसी का प्रभाव	।।=)
२५ पार्वती मङ्गल	।)
२६ सूर पदावली	।।=)
२७ नागरी अंक और अक्षर	≡)
२८ हिन्दी कहानियाँ	१।।)
२९ ग्रामों का आर्थिक पुनरुद्धार	१।)
३० तुलसी दर्शन	२।।)
३१ भूषण संग्रह भाग १	।-)
३२ भूषण संग्रह भाग २	।।=)

(२) साधारण पुस्तकमाला

१ अकबर की राज्यव्यवस्था	१)
२ प्रथमालंकार निरूपण	≡)

(३) वैज्ञानिक पुस्तकमाला

१ सरल शरीर विज्ञान	।।), ।।।)
२ प्रारम्भिक रसायन	१)
३ सृष्टि की कथा	१)

(४) बाल साहित्यमाला

१ बाल पञ्चरत्न	।।)
२ वीर सन्तान	।=)
३ बिजली	=)

(५) ओझा अभिनन्दन ग्रन्थ

१६)

रजिस्टर्ड नं० ए० ६२१

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अभूतपूर्व साहित्य प्रकाशन

प्रेमघन-सर्वस्व

(प्रथम भाग)

'दो शब्द' लेखक, माननीय श्री पुरुषोत्तमदास जी टंडन

परिचय-लेखक, आचार्य पंडित रामचंद्र जी शुक्ल

आधुनिक हिन्दी के निर्माता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति स्वर्गीय उपाध्याय पंडित बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की सम्पूर्ण कविताओं का विशाल संग्रह-ग्रंथ । हिन्दी में प्रथम और अपूर्व काव्य । लेखक के चित्रों से सुसज्जित और सजिल्द । मूल्य ४॥)

बाल साहित्यमाला

बालभारती
श्रीयुत श्रीनाथसिंह
मूल्य ।=)

वीर शतमन्यु
श्रीयुत 'स्वर्णसहोदर'
मूल्य ।)

बालकथा
सौ० श्रीमती कमलाबाई किबे
मूल्य ॥)

छत्रपति शिवाजी
श्रीयुत गुर्ती सुब्रह्मण्यम् एम० ए०
मूल्य ।)

बाल कवितावली
श्री सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ
मूल्य ।)

साधारण पुस्तकमाला

चित्ररेखा
श्रीरामकुमार वर्मा एम० ए०
मूल्य १॥)

गोरख बानी
डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल एम० ए०,
डी० लिट्०

डिंगल में वीररस
श्री मोतीलाल मेनारिया एम० ए०
मूल्य १।।।)

आधुनिक कवि—१
श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए०
मूल्य १॥)

वीर काव्य संग्रह
श्री उदयनारायण तिवारी एम० ए०
श्री भगीरथप्रसाद दीक्षित 'साहित्यरत्न'
मूल्य २)

साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

मुद्रक—गिरिजाप्रसाद श्रीवास्तव, हिन्दी साहित्य प्रेस, प्रयाग ।
प्रकाशक—साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।

पुस्तकालय

४-६-४२

वैशाख-ज्येष्ठ, संवत् १९९८

सम्मेलन पत्रिका

[भाग २८, संख्या ९, १०]

संपादक

श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल

साहित्यमंत्री

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
प्रयाग

) वार्षिक इस प्रति का ।=)

विषय-सूची

१—श्री जयचन्द्रजी और 'राजा भोज' [लेखक—साहित्याचार्य पं० विश्वेश्वरनाथ रेऊ] ... ...
२—भारतवर्ष की आधुनिक भाषाएं [लेखक—श्री राममूर्ति मेहरोत्रा एम० ए०] ... ...
३—जैन साहित्य के ऐतिहासिक गुजराती ग्रन्थ [ले०—श्री अमरचन्द नाहटा, सम्पादक 'राजस्थानी'... ... ...
४—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा [ले०—श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल राष्ट्रभाषा प्रचार मन्त्री] ... ...
५—हिन्दी संसार [ले०—पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल संग्रह मंत्री] ...
६—प्राप्ति स्वीकार [ले० पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल संग्रह मन्त्री, तथा श्री रामनिधि शर्मा बी० ए०] ...
७—परीक्षा फल ... ...
८—संवत् १९९७ की पदक सूची ... ...
९—संवत् १९९७ की परीक्षाएँ ... ...
१०—परीक्षकों के वक्तव्यों का सारांश ... ...
११—कार्य समिति की द्वितीय बैठक का विवरण ... ...

नियमावली

१—सम्मेलन पत्रिका प्रति मास प्रकाशित होती है।

२—हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आदर्शों की पूर्ति में सहायक होन पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।

३—पत्रिका का वार्षिक मूल्य १) तथा एक अङ्क का =) है।

४—पत्रिका के सम्बन्ध में पत्रव्यवहार साहित्यमन्त्री, हिन्दी साहि सम्मेलन, प्रयाग के पते से करना चाहिए।

५—पत्रिका संबन्धी पत्रव्यवहार में जवाब के लिए टिकट आने चाहिए अन्यथा आवश्यक अनावश्यक का विचार कर पत्रोत्तर दिया जायगा।

सम्मेलन पत्रिका

भाग २८] बैशाख, ज्येष्ठ १९९८ [संख्या ९, १०

श्री जयचन्द्रजी और 'राजा भोज'

[लेखक, साहित्याचार्य पंडित विश्वेश्वरनाथ रेऊ]

काशी से प्रकाशित होने वाले दैनिक 'आज' के २२ मार्च १९४१ के अङ्क में 'हिन्दी का इतिहास-साहित्य' नाम से श्री जयचन्द्र जी विद्यालङ्कार का लिखा एक लेख छपा है। यह लेख गत मार्गशीर्ष-पौष की 'सम्मेलन पत्रिका' के अङ्क से उद्धृत किया गया है। उक्त लेख में हमारे ग्रंथ 'राजा भोज' के विषय में लिखा है—

"राजा भोज" में धार के प्रसिद्ध राजा भोज और उसके वंश के सम्बन्ध में सब तरह की बातें हैं लेकिन सब एक दूसरे से असम्बद्ध, बिना किसी क्रम और तरतीब के। भोज के समय की भारत की दशा का वर्णन पहले आगया है, तो भोज के समय का निर्धारण पीछे हुआ है।"

इस विषय में क्या हम विद्यालङ्कार जी से पूछ सकते हैं कि 'सब एक दूसरे से असम्बद्ध' इस वाक्य से आपका क्या तात्पर्य है? क्या इसमें एक स्थान पर राजा भोज का एक शताब्दी में होना और दूसरे पर दूसरी शताब्दी में होना लिख दिया गया है या ऐसी ही कोई अन्य बात आगई है? यदि ऐसा हो तो कृपया सूचित करने का कष्ट करें। परन्तु यदि आपका तात्पर्य भिन्न-भिन्न लेखकों के विरोधी विवरणों से हो, जो इसमें उद्धृत किए गए हैं, तो अपने शब्दों पर फिर से विचार करने की कृपा करें। रही भिन्न भिन्न प्रकरणों के आगे पीछे छपने की बात, इसे हम सहर्ष स्वीकार करते हैं। परन्तु खेद है कि आपकी 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा' में भी यही त्रुटि इधर-उधर दृष्टिगोचर हो जाती है। उदाहरणार्थ उसके द्वितीय खण्ड में

पहले मानव और रोल वंश से लेकर महाभारत संग्राम तक का हाल लिखकर बाद में समाज की बुनियादों की स्थापना का हाल दिया गया है।

आगे आपने लिखा है कि "प्राचीन भारत में कुछ प्रजातंत्र भी थे, यह कहने की रेऊजी की हिम्मत नहीं होती; इससे वे कहते हैं कुछ पर जातियां ही अपना अधिकार जमाए थीं।"

इसके समाधान के लिए यहां पर आपही की 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा' से एक अवतरण दिया जाता है—

"समूचे वृजि संघ की राजधानी भी वेसाली (वैशाली) ही थी।"…
…लिच्छिवियों के ७७०७ राजा थे……। ये सब राजा अपने गाँव में शायद स्वतंत्र शासक थे; किन्तु राज्य के सामूहिक कार्य का विचार एक परिषद में होता था जिसके वे सब सदस्य होते थे। इसी राज्य परिषद के हाथ में लिच्छिव-राष्ट्र की मुख्य शासन-शक्ति थी।" (पृ० ३१३)

अब पाठक स्वयं ही विचार करें कि ऐसे राज्यों को जाति-राज्य कहना ठीक है या प्रजातंत्र?

अन्तिम आक्षेप आपका इस प्रकार है—

"सोलह महाजन पदों के युग में तो क्या, उसके आठ सौ बरस बाद तक भी अवन्ति प्रदेश मालवा न कहलाता था। मालव जाति महाजन पद युग में पंजाब में मुलतान के उत्तर पूरब रहती थी। अवन्ति प्रदेश पर तब राजा चण्ड प्रद्योत का राज्य था।"

उत्तर में निवेदन है कि 'राजा भोज' नामक पुस्तक में हमारा लेख इस प्रकार है:—

"प्राचीन साहित्य से ज्ञात होता है कि आज से पच्चीस सौ वर्ष पूर्व गांधार (कंधार) से लेकर मालवे तक का भारतीय भूभाग सोलह राज्यों में बँटा हुआ था। इनमें से कुछ का प्रबन्ध राज सत्ता के अधीन था और कुछ पर जातियाँ ही अधिकार जमाए हुए थीं। ऐसी ही एक जाति का राज्य अवन्ति प्रदेश पर था, जो मालव जाति के नाम से प्रसिद्ध थी।"

इस अवतरण की भाषा भ्रामक मानी जा सकती है। परन्तु उक्त अवतरण में केवल उन जातियों में की ही मालव नामक एक जाति का राज्य मालवे पर भी रहना बतलाया गया है। सम्भव है प्रारम्भ में इस घटना का उल्लेख मालवा के नामकरण के लिए ही किया गया हो और "इसी से इसका नाम मालवा पड़ा।" यह वाक्य हमारे या लेखक के दोष से छूट

गया हो। इस कथन की पुष्टि उसी के ३५ वें पृष्ट के इस अवतरण से भी होती है—

"वि० सं० ३८७ (ई० स० ३३०) के करीब गुप्त वंश का प्रतापी नरेश समुद्रगुप्त राज्य पर बैठा। उस समय मालवे पर मालव जाति का प्रजासत्तात्मक या जातिसत्तात्मक राज्य था। परन्तु उसके पुत्र चन्द्रगुप्त द्वितीय ने वि० सं० ४५२ (ई० स० ३९५) के करीब मालवजाति को हराकर वहां पर अपना अधिकार कर लिया।"

इससे स्पष्ट प्रकट होता है कि मालवे पर मालव जाति के राज्य का वास्तविक उल्लेख इन पंक्तियों में ही अभीष्ट था।

अस्तु, लेख के समाप्त करने के पूर्व यह नम्र निवेदन कर देना भी अनुचित न होगा कि एक तो जाति के पीछे प्रदेश का नाम बदलना कोई आवश्यक बात नहीं है और बदलना भी है तो दीर्घकाल के विशेष संपर्क के बाद ही। दूसरा ईसवी सन् से १५० वर्ष पूर्व के लगभग के मालवगण के सिक्कों का जयपुर राज्य के दक्षिणी भाग से मिलना भी उन लोगों का उस समय के आसपास ही अवन्ति प्रदेश तक पहुँच जाना सूचित करता है।

तीसरा आप स्वयं 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा' में अवन्ति को भी १६ महाजन पदों में गिनते हैं और उस समय को महाजन पदयुगक कहते हैं। (पृ० ३१२)

ऐसी हालत में उक्त युग के सामने चण्ड प्रद्योत के व्यक्तित्व का अस्तित्व ही कितना दीर्घकालीन हो सकता है?

अस्तु, ऊपर जो कुछ लिखा गया है वह विद्यालङ्कारजी के लेख के भाव को देखकर ही लिखा गया है, अन्यथा हर एक व्यक्ति को अपना मत प्रकट करने का अधिकार है।

भारतवर्ष की आधुनिक भाषाएं

[लेखक—श्री राममूर्ति मेहरोत्रा, एम० ए०]

हार्नले का मत है कि आर्य भारतवर्ष में दो दलों में आये। इतिहासज्ञों का कहना है कि प्रथम बार वे काबुल की घाटी में होकर खैबर के दर्रे से आए और मध्यदेश अर्थात् सरस्वती (पंजाब) तथा गंगा के मध्य भाग में बस गए। जब इनको यहाँ रहते-सहते अधिक काल व्यतीत हो गया, तो चितराल तथा गिलगिट की ओर से एक दल और आया, जिसने पूर्वागत आर्यों को, जो कि गर्म जलवायु में रहने के कारण निर्बल हो गये थे, मध्यदेश से निकाल दिया और स्वयं वहाँ अधिकार कर लिया। इस प्रकार परागत आर्य मध्यदेश में और पूर्वागत उनके चारों ओर सीमान्त पर बस गये। प्रारंभिक संस्कृत ग्रन्थों में 'मध्यदेश' से अभिप्राय कुरु, पांचाल तथा उत्तरी हिमालय प्रदेश से था, परन्तु बाद के ग्रन्थों में 'मध्यदेश' शब्द हिमालय तथा विन्ध्याचल और सरस्वती तथा प्रयाग के बीच के भूमि भाग के लिये प्रयुक्त हुआ है। अतः स्पष्ट है कि मध्यदेश के क्षेत्र की कालांतर में वृद्धि हो गई थी। संभवतः इसका कारण यह है कि परागत आर्यों ने अपने को चारों ओर से पूर्वागत आर्यों से घिरा होने के कारण सुरक्षित न जानकर चारों ओर बढ़ने का प्रयत्न किया होगा, जैसा कि इससे प्रगट है कि राठौर कन्नौज से तथा सोलंकी पूर्वी पंजाब से आकर राजपूताने में और यादव मथुरा से जाकर गुजरात में बस गये थे। इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि पंजाबी, गुजराती, राजस्थानी आदि अंतरंग भाषाओं में बहिरंग भाषाओं के भी कुछ चिन्ह मिलते हैं, जिससे स्पष्ट है कि प्राचीनकाल में इनके क्षेत्र में बहिरंग भाषाओं का प्रचार रहा होगा जिनको इन अंतरंग भाषाओं ने स्थान-च्युत करके वहाँ अपना अधिकार जमा लिया होगा। इस प्रकार उत्तर में काश्मीर तथा नैपाल तक, दक्षिण में गुजरात तक, पश्चिम में सिंध के मैदान की पूर्वी सीमा तक और पूर्व में बनारस तक फैल गए होंगे। तदनुसार परागत आर्य गंगा-सिंध के मैदान में हिमालय तथा विन्ध्याचल के बीच मध्यदेश में और पूर्वागत इनके चारों ओर पश्चिमी पंजाब, सिंध, महाराष्ट्र, बिहार-उड़ीसा, बंगाल तथा आसाम में बस गए। अतएव

परागत आर्य अंतरङ्ग, पूर्वागत बहिरङ्ग और पूर्वी हिन्दी भाषाक्षेत्र के निवासी मध्यवर्ती हो गये ।

अंतरङ्ग अथवा परागत आर्य मध्यदेशीय होने के कारण कोल-द्राविड़ों के सम्पर्क में आये और बहिरङ्ग अथवा पूर्वागत दर्दिस्तान पास होने के कारण दर्द-भाषा भाषियों के । द्राविड़ सभ्य और दर्द जंगली थे, अतः अंतरङ्ग आर्यन में वैदिक सभ्यता का विकास हुआ और उनकी भाषा शुद्ध तथा संस्कृत रही, परंतु बहिरंग में न तो वैदिक सभ्यता का ही विकास हो सका और न उनकी भाषा ही शुद्ध व संस्कृत रह सकी । अतएव अंतरङ्ग तथा वहिरंग आर्यन की सभ्यता तथा भाषा में बहुत भेद हो गया । क्योंकि अंतरंग आर्य-विजयी होने के कारण वहिरङ्ग आर्यन तथा उनकी सभ्यता और भाषा को नीच समझते थे, अतः यह भाषा भेद बढ़ता ही गया और कालांतर में इन दोनों की भाषाएँ भिन्न हो गईं और उनके अंतरङ्ग और वहिरंग दो पृथक भेद हो गये । अंतरङ्ग उच्च और वहिरङ्ग निम्न श्रेणी की समझी जाने लगीं । यही कारण है कि राष्ट्रभाषा सदैव से अंतरङ्ग की ही कोई विभाषा रही है, यथा संस्कृत, प्राकृत (पाली), अपभ्रंश (शौरसेनी), ब्रजभाषा, खड़ी बोली आदि । अंतरङ्ग तथा वहिरङ्ग के बीच की भाषा पूर्वी हिन्दी मध्यवर्ती हो गई । अतएव भारतीय आर्य शाखा की अंतरङ्ग, वहिरङ्ग और मध्यवर्ती तीन उपशाखाएँ हो गईं ।

आधुनिक भाषाओं का वर्गीकरण—तदन्तर उक्त अंतरङ्ग-वहिरङ्ग भेदों की ग्रियर्सन ने भाषा संबंधी कारणों से भी पुष्टि की और निम्न प्रकार वर्गीकरण किया:—

(क) वहिरंग उपशाखा :—(१) पश्चिमोत्तर वर्ग :—लहँदा तथा सिंधी
(२) दक्षिणी वर्ग :—मराठी
(३) पूर्वी वर्ग :—उड़िया, बिहारी, बंगला तथा आसामी
(ख) मध्यवर्ती उपशाखा :—(४) मध्यवर्ती वर्ग :—पूर्वी हिन्दी
(ग) अंतरंग उपशाखा :—(५) केन्द्र वर्ग :—पश्चिमी हिन्दी, पंजाबी, गुजराती तथा राजस्थानी ।
(६) पहाड़ी वर्ग—पूर्वी पहाड़ी (नेपाली), केन्द्रवर्ती पहाड़ी तथा पश्चिमी पहाड़ी ।

अंतरंग तथा बहिरंग में भेद—बहिरंग अथवा अंतरंग भाषाओं में उच्चारण, रचना व्याकरण आदि के जिन नियमों में परस्पर साम्य है उन्हीं में बहिरंग तथा अंतरंग में वैषम्य है अर्थात् बहिरंग तथा अंतरंग भाषाओं की विशेषताओं में परस्पर विरोध है। ग्रियर्सन ने इस प्रकार के अनेक अंतर तथा विरोध बताए हैं और रामप्रसाद चंद ने तो उनको वंशात्मक प्रमाणों से भी सिद्ध करने का प्रयत्न किया है।

बहिरंग भाषाओं की विशेषताएँ (ग्रियर्सन):—(क) ध्वन्यात्मक अथवा उच्चारणात्मक :—(१) शब्दांत में आने वाले इ, उ अथवा ए का लोप नहीं होता। (२) इ तथा उ द्रव स्वर हैं। प्रायः इ का ए और उ का ओ हो जाता है। (३) युक्त विकर्ष (epenthesis) भी एक विशेषता है। (४) इ तथा उ प्रायः परस्पर परिवर्तित हो जाते हैं (५) स का उच्चारण शुद्ध नहीं होता। प्रायः उसका श, ष अथवा ह हो जाता है। (६) ए (अ इ) का ऐ और ओ (अउ) का औ हो जाता है। (७) ड़ तथा ल की जगह र हो जाता है। (८) द तथा ड परस्पर परिवर्तित हो जाते हैं। (९) म्ब का म अथवा ब हो जाता है। (१०) प्रायः द का ज तथा ध का झ हो जाता है। (११) अंतस्थ र (intervocal) का लोप हो जाता है। (१२) महाप्राण तथा अल्प प्राण परस्पर परिवर्तित हो जाते हैं। (१३) संयुक्त व्यंजन में प्रायः मध्य अथवा अर्द्ध व्यंजन का लोप हो जाता है और उसके पूर्व का अक्षर दीर्घ हो जाता है।

(ख) रचनात्मक अथवा व्याकरणिक :—(१) स्त्रीलिंग 'ई' प्रत्यय द्वारा बनता है। (२) विशेषण 'ली' प्रत्यय द्वारा निर्मित होता है। (३) भूतकालिक क्रिया का रूप कर्त्ता के पुरुष के अनुसार परिवर्तित हो जाता है जैसे मराठी में 'मैं गया' के लिए 'गेलो' तथा 'वह गया' के लिए 'गेला' आता है, परंतु अंतरंग भाषाओं में भूतकालिक क्रिया तीनों पुरुषों में एक सी रहती है जैसे प० हि० में मैं गया, वह गया, तू गया आदि में 'गया'। अतएव बहिरंग भूतकालिक क्रियाओं में कर्त्ता के पुरुष तथा वचन का बोध क्रिया के रूप से ही हो जाता है, परन्तु अंतरंग में नहीं। यथा बं० गेलाम, म० गेलो, आदि क्रियाएँ उत्तम पुरुष एक बचन कर्त्ता की द्योतक हैं, परन्तु प० हि० 'गया' नहीं। (४) भूतकालिक क्रिया के साथ आने वाला सर्वनाम प्रायः क्रिया में अंतर्भूत रहता है। (५) शब्द अभी सप्रत्यय है अर्थात् प्रत्यय संज्ञा के साथ जुड़कर उसका एक भाग बन जाता है जैसे बं० घोड़ार

तथा वि० घोराक में सम्बन्ध कारक प्रत्यय संज्ञा में संश्लिष्ट है, परन्तु अन्तरङ्ग में प्रत्ययों का इतना ह्रास हो गया है कि उनका अस्तित्त्व ही नष्ट हो गया है और उनकी जगह का, को, के को, ने, से, पर आदि विभक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं जैसे घोड़े का, घोड़े ने आदि। (६) शब्दों तथा धातुओं में भी साम्य है।

इस प्रकार बहिरङ्ग भाषाएँ संहित और अन्तरङ्ग व्यवहित हैं।

(ग) वंशात्मकः—चंद ने अन्तरङ्ग-बहिरङ्ग भाषा-भेद की वंशात्मक कारणों से भी पुष्टि की है। उनका मत है कि अन्तरङ्ग आर्य (Dolicho cephalic) जाति के और बहिरङ्ग (Brachy cephalic) जाति के थे, अतः उनकी भाषाओं में भेद होना स्वाभाविक ही है।

उक्त मतों की आलोचनाः—एस० के० चटर्जी के अनुसार उक्त दोनों मतों में एक भी ठीक नहीं है।

(क) ध्वन्यात्मकः—(१) अंतिम स्वर का लोप सब बहिरङ्ग भाषाओं में नहीं पाया जाता जैसे बं० आंख में। इसके अतिरिक्त अन्तरङ्ग भाषाओं में भी सदैव अंतिम स्वर का लोप नहीं होता जैसे ब्रज० बाँटु, मालु, सबु, पेटु, जबाबु, औरु, कंगालु, नौकरु, करि, धरि, दूरि, देखि इत्यादि में।

(२) 'इ का ए और उ का ओ हो जाना' केवल वहिरंग में ही नहीं अपितु अंतरंग में भी पाया जाता है, यथा पं० हि० में दिखाना से देखना तथा बुलाना से बोलना और ब्रज० में मुट्ठी से मोही, तुही से तोही आदि में।

(३) युक्त विकर्ष केवल आसामी, बंगला, उड़िया आदि पूर्वी वहिरंग भाषाओं में ही पाया जाता है, मराठी, सिंधी आदि पश्चिमी वहिरंग में नहीं; इधर गुजराती तथा प० हि० अंतरंग भाषाओं में भी पाया जाता है जैसे सुन्दर से सौन्दर्य।

(४) 'इ तथा उ का परस्पर परिवर्तन वहिरंग में ही नहीं अपितु अंतरंग में भी पाया जाता है जैसे प० हि० खिलना खुलना, छुगुली-छिगली, फुसलाना-फिसलाना, विन्दु-बुन्द, इत्यादि में। इसके अतिरिक्त अंतरंग-वहिरंग में भी ऐसा होता है जैसे वं० वालि पं० हि० वालुका वं० गुनना पं० हि० गिनना आदि में।

(५) 'स' संबंधी परिवर्तन सब वहिरंग भाषाओं में एक सा नहीं होता, सिंधी तथा लंहदा में स का ह और मराठी, बंगला आदि में 'श' हो जाता है। इसके अतिरिक्त 'स' का 'ह' अथवा श होना अंतरंग में भी पाया जाता

है जैसे पं० कोस-कोह, प० हि० केसरी-केहरी, सूर-शूर, ग्यारस-ग्यारह, द्वादश-बारह, इत्यादि में।

(६) 'ए का ऐ और ओ का औ हो जाना' केवल सिंधी तथा लहँदा की विशेषता है, पूर्वी वहिरंग भाषाओं की नहीं; उधर राजस्थानी, गुजराती तथा प० हि० में भी ऐसा होता है जैसे प० हि० में head, manager, hot, daughter इत्यादि क्रमशः हैट, हैड, मैनेजर, हौट, डौटर, इत्यादि की भाँति उच्चरित होते हैं।

(७) 'ड, ल तथा र के अभेद' का बंगला, उड़िया, मराठी तथा लहँदा में अभाव है, उधर यह अंतरंग में भी पाया जाता है जैसे ब्रज० बल-बर, गल-गर, जलइ-जरइ, बिजली-बिजुरी, काजल-काजर, शृगाल-स्यार, वेला-वेर तथा पकड़े-पकरे, घड़ी-घरी, बिगड़इ-बिगरइ, पीड़ा-पीरा, इत्यादि में।

(८) 'ड तथा द का अभेद' वहिरंग में ही नहीं, अंतरंग में भी पाया जाता है जैसे० ब्रज० दृष्टि-डीथी, दग्ध-डाढ़ा, ड्योढ़ी-देहली, प० हि० डाभ-दर्भ, दण्ड-डंड, दंसना-डसना दण्डिका-डंडी, दाडिम्ब-डारिम आदि में।

(९) 'म्ब का म अथवा व हो जाना' अंतरंग में भी पाया जाता है जैसे प० हि० जम्बु-जामुन, निम्ब-नीम, अम्बी-अमियाँ निम्बु-नीबू, इत्यादि में।

(१०) 'द-ज तथा ध-झ का अभेद' बंगला, उड़िया, मराठी तथा सिंधी के अतिरिक्त अन्य वहिरंग भाषाओं में नहीं पाया जाता, उधर प० हि० में भी पाया जाता है जैसे गिद्ध से गिज्ज।

(११) अंतस्थ 'र' का लोप अंतरंग में भी होता है जैसे प० हि० करि से कै, और से औ, पर से पै इत्यादि।

(१२) 'महा प्राण तथा अल्प प्राण का अभेद' गुजराती, राजस्थानी, प० हि० अंतरंग भाषाओं में भी पाया जाता है जैसे भगिनी से बहिन, उष्ट्र से ऊँट, ईंठा से ईंट, तिवाड़ी से तिवारी तथा वेश भेस, विभूति से भभूत, वास्प से भाप इत्यादि।

(१३) 'संयुक्त व्यंजन में अर्द्ध अथवा मध्य व्यजन का लोप और उसके पूर्व के अक्षर का दीर्घ होना' केवल आसामी, बंगला, बिहारी, उड़िया तथा मराठी में पाया जाता है, सिंधी तथा लहँदा में नहीं; उधर गुजराती, पंजाबी तथा प० हि० में भी पाया जाता है जैसे भिक्षा से भीख, सप्त से सात, सत्य से साँच, लक्ष से लाख आदि में।

मुख्य त्रुटिः—पूर्वी तथा पश्चिमी वहिरंग अथवा अंतरंग भाषाओं के उच्चारण में बहुत अन्तर तथा विषमता है।

(ग) रचनात्मकः—(१) 'ई' प्रत्यत्त द्वारा स्त्रीलिंग बनना अंतरंग की भी विशेषता है।

(२) 'ली' प्रत्यक्ष द्वारा विशेषण अंतरंग में भी बनते हैं जैसे प० हि० लजीली, कटीली, हठीली, शर्मीली, रंगीली, छबीली, झगड़ाढू इत्यादि।

(३) कर्त्ता के पुरुष तथा वचन का बोध सब भूत कालिक क्रियाओं के रूपों से नहीं होता, केवल अकर्मक क्रियाओं के भूतकाल से होता है। सकर्मक क्रियाओं के भूतकालिक रूपों में तो पूर्वी तथा पश्चिमी वहिरंग अथवा अंतरंग भाषाओं में बहुत अंतर है, पूर्वी कर्त्तरि प्रधान और पश्चिमी कर्मणि प्रधान हैं। अतः सकमर्क भूतकालिक क्रियाओं में कर्त्ता के पुरुष तथा वचन का बोध केवल पूर्वी वहिरंग भाषाओं में हो सकता है, पश्चिमी में नहीं, उधर पू० हि० में भी ऐसा ही होता है।

(४) 'भूतकालिक क्रियाओं में सर्वनाम का अंतर्भुक्त होना' सब वहिरङ्ग भाषाओं तथा क्रियाओं में नहीं पाया जाता।

(५) सप्रत्यय अथवा विभक्ति प्रधान शब्द वहिरङ्ग में ही नहीं, अंतरङ्ग में भी पाये जाते हैं जैसे व्रज० मैं (मैंने), तैं (तू ने) घोड़हि (घोड़े को), प० हि० माथे (माथे पर), भूखों (भूख से) इत्यादि।

(६) न तो सब धातु तथा शब्द वहिरङ्ग में ही समान हैं और न अंतरग में ही उदाहरणार्थ बङ्गला तथा विहारी के शब्द मराठी से नितांत भिन्न हैं। इसके अतिरिक्त जो शब्द वहिरङ्ग में पाये जाते हैं वे अंतरङ्ग में भी मिलते हैं जैसे बङ्गला, विहारी, मराठी, सिंधी तथा लहँदा में पाये जाने वाले शब्द गुजराती तथा प० हि० में भी पाये जाते हैं उदाहरणार्थ 'आछ या अछ' पू० हि०, विहारी तथा बङ्गला में तो मिलता है, परंतु सिंधी तथा लहँदा में नहीं मिलता, उधर राजस्थानी, गुजराती तथा पहाड़ी में भी पाया जाता है। मुख्य त्रुटिः—सकर्मक क्रियाओं के भूतकालिक रूप पूर्वी भाषाओं में कर्त्ता के अनुसार और पश्चिमी भाषाओं में कर्म के अनुसार होते हैं, अतः व्याकरणिक दृष्टि से पूर्वी तथा पश्चिमी अंतरङ्ग अथवा वहिरङ्ग में बहुत अंतर तथा विषमता है।

(ग) वंशात्मकः—(१) चंद के अनुसार अंतरङ्ग आर्य एक जाति के और वहिरङ्ग दूसरी जाति के थे, अतः गङ्गा-जमुना के मैदान के प० हि०

भाषी कन्नौजिया ब्राह्मण तथा लहँदा (प० पञ्जाबी) भाषी आर्यन भिन्न-भिन्न जातियों के हुए, परन्तु इतिहासानुसार वे एक ही वंश के हैं।

(२) बङ्गाली अपने को मध्य देशीय अंतरङ्ग आर्यन का वंशज मानते हैं, न कि पश्चिमी भारत तथा महाराष्ट्र से आकर बङ्गाल-विहार में बसने वाले वहिरङ्ग आर्यन का।

अतः वंश अथवा जाति की विभिन्नता अंतरङ्ग-वहिरङ्ग की भेदक नहीं है।

निष्कर्षः—सारांश यह है कि न तो सब वहिरङ्ग भाषाओं में ही परस्पर साम्य है और न अंतरङ्ग में ही; जिस प्रकार पूर्वी तथा पश्चिमी वहिरङ्ग भाषाओं में, उच्चारण, रचना, व्याकरण आदि में वैषम्य है उसी प्रकार पूर्वी तथा पश्चिमी अंतरङ्ग में भी। अतः न तो पूर्वी और पश्चिमी वहिरङ्ग ही एक वर्ग में रखी जा सकती हैं और न पूर्वी तथा पश्चिमी अन्तरङ्ग ही। हाँ पश्चिमी अन्तरङ्ग तथा वहिरङ्ग में अथवा पूर्वी अन्तरङ्ग तथा वहिरङ्ग में, उच्चारण, क्रियारूप (conjugation) रचना, व्याकरण सम्बन्धी जिन बातों में परस्पर साम्य है उन्हीं में पूर्वी तथा पश्चिमी में वैषम्य है। उदाहरणार्थ, प० हि०, राजस्थानी, पञ्जाबी, लहँदा, सिंधी आदि प० भाषाओं में स का ह हो जाता है, परन्तु पू० हि०, विहारी, उड़िया, बङ्गला, आसामी आदि पू० भाषाओं में स का श हो जाता है; प० हि०, पहाड़ी, राजस्थानी, पञ्जाबी, गुजराती, लहँदा, सिंधी तथा मराठी पश्चिमी भाषाएं कर्मणि प्रधान और पू० हि०, उड़िया, विहारी, बङ्गला तथा आसामी पूर्वी भाषाएं कर्त्तरि-प्रधान हैं जैसा कि निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट हैः—

कर्मणि-प्रधान पश्चिमी भाषाएं

(अ) वहिरङ्ग

(१) सिंधी—मूँ किताब पढ़ी-मे।

(२) लहँदा—किताब पढ़ीम्।

(३) मराठी—मीं पोथी नाचिली।

(आ) अन्तरङ्ग

(४) पहाड़ी—मैंल किताब पढ़ी।

(५) गुजराती – में पोथी बाँची।

(६) राजस्थानी—मुँ (अथवा म्हे) पोथी पढ़ी छे।

कर्त्तरिप्रधान पूर्वी भाषाएं

(अ) वहिरङ्ग

(१) विहारी (भोजपुरी)—हम पोथी पढ़ लीं।

(२) उड़िया—आम्भे पोथि पोढ़लुं।

(३) बङ्गला—आमि वोइ पोड़िलाम्।

(आ) अन्तरङ्ग

(४) पू० हि०—मैं पोथी पढ़ेउँ।

तदनुसार क्रियारूप भी पश्चिमी वहिरङ्ग तथा अंतरङ्ग में एक प्रकार से और पूर्वी वहिरङ्ग तथा अंतरङ्ग में दूसरी प्रकार से बनते हैं। इसके अतिरिक्त आर्यों का सप्रसिंधु में रहना पहिले से ही पाया जाता है, अतः पश्चिमी अंतरङ्ग तथा वहिरङ्ग आर्यन एक वंश के और पूर्वी अंतरङ्ग तथा वहिरङ्ग दूसरे वंश के हुए। अतएव अंतरङ्ग-वहिरङ्ग भाषा भेद निराधार हैं। इसकी अपेक्षा पूर्वी तथा पश्चिमी भेद करना अधिक उपयुक्त होगा।

उक्त वर्गीकरण में इन त्रुटियों के अतिरिक्त एक और भी दोष है। पश्चिमी हिन्दी के उत्तरी क्षेत्र की भाषा सदैव से राष्ट्रभाषा अथवा सर्व-प्रमुख रही है। संस्कृत, पाली, शौरसेनी, ब्रज आदि राष्ट्रभाषाएँ मध्यदेश के इसी भाग की थीं। खड़ी बोली अथवा उच्च हिन्दी भी दिल्ली-मेरठ के पास की भाषा है। भावी राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी भी खड़ी बोली का ही एक रूप है। अतएव इस क्षेत्र की भाषा सदैव से सम्राज्ञी और अन्य भाषाएं उसके आधिपत्य में रहने वाली रानियाँ रही हैं। सम्राज्ञी तथा रानियों को एक पंक्ति में बैठाना सम्राज्ञी का अपमान करना है अर्थात् सर्व प्रधान भाषा प० हि० को अन्य गौण भाषाओं के साथ रखना अनुचित है। अतः प० हि० को केन्द्र-भाषा मानकर वर्गीकरण करना चाहिये।

उक्त त्रुटियों के निराकरण का प्रयत्न:—संभवतः इन्हीं त्रुटियों तथा दोषों के कारण वेवर, एस० के० चटर्जी, आदि विद्वानों ने अंतरङ्ग-वहिरङ्ग-वर्गीकरण की उपेक्षा करके अन्य प्रकार वर्गीकरण करने का प्रयत्न किया है। वेवर ने उत्तरी, दक्षिणी, पूर्वी, पश्चिमी, मध्यदेशीय आदि अनेक वर्गों में तथा चटर्जी* ने प० हि० को केन्द्र भाषा मानकर उसके चारों ओर की भाषाओं को उत्तरी, पश्चिमी, दक्षिणी तथा पूर्वी वर्गों में विभाजित

---

*चटर्जी का वर्गीकरण :—
(अ) उत्तरी वर्ग—सिंधी, लहँदा, पंजाबी
(आ) पश्चिमी वर्ग—गुजराती, राजस्थानी
मध्य वर्ग—प० हि०
(इ) पूर्वी वर्ग—पू० हि०, विहारी, उड़िया, बंगला, आसामी
(ई) दक्षिणी वर्ग—मराठी

किया है । तदुपरान्त स्वयं ग्रियर्सन + ने चटर्जी के वर्गीकरण को सुविधाजनक जानकर मध्यदेशीय प० हि० को केन्द्र भाषा मानकर उसकी निकटवर्ती भाषाओं को अंतर्वर्ती अथवा मध्यम वर्ग में और दूरवर्ती भाषाओं को वहिरङ्ग वर्ग में रखा है । उक्त दोनों वर्गीकरणों में प० हि० का महत्त्व अवश्य बढ़ गया, परन्तु पूर्वी पश्चिमी का प्रश्न चटर्जी के वर्गीकरण में तो आवश्यकता से अधिक हल हो गया और ग्रियर्सन के वर्गीकरण में अक्षुण्ण रहा, अर्थात् चटर्जी के वर्गीकरण में प० हि० के पश्चिम की भाषाओं के उत्तरी तथा पश्चिमी और पूर्व की भाषाओं के पूर्वी तथा दक्षिणी अनावश्यक उपभेद हो गए और मराठी पश्चिमी भाषाओं के समान होने पर भी पूर्वी भाषाओं में सम्मिलित हो गई, और ग्रियर्सन के वर्गीकरण में अंतर्वर्ती तथा वहिरङ्ग दोनों वर्गों में पूर्वी तथा पश्चिमी भाषाएँ यथा पूर्व सम्मिलित रहीं; अतः दोनों वर्गीकरण अपूर्ण हैं ।

आदर्श वर्गीकरण:—वह होगा जिसमें प० हि० को केन्द्रस्थ मान कर भाषाओं को पूर्वी तथा पश्चिमी में विभाजित किया जाय और प० हि०

पश्चिमी भाषाएँ	केन्द्र भाषा	पूर्वी भाषाएँ
(१) पहाड़ी (२) पञ्जाबी (३) लँहदा (४) सिंधी (५) राजस्थानी (६) गुजराती (७) मराठी	पश्चिमी हिन्दी	(१) पूर्वी हिन्दी (२) विहारी (३) उड़िया (४) बंगला (५) आसामी

+ ग्रियर्सन का द्वितीय वर्गीकरण :—

(क) मध्य देशीय भाषा—प० हि०

(ख) अंतर्वर्ती अथवा मध्यम भाषाएं :—

(अ) मध्यदेशी भाषा से विशेष घनिष्टता वाली—पञ्जाबी, राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी ।

(आ) वहिरंग भाषाओं से अधिक संवद्ध—पू० हि०

(ग) वहिरङ्ग भाषाएं :—

(अ) पश्चिमोत्तर वर्ग—लहँदा, सिंधी

(आ) दक्षिणी वर्ग—मराठी

(इ) पूर्वी वर्ग—विहारी, उड़िया, बङ्गाली, आसामी

को पश्चिमी वर्ग में रखा जाय जिससे उसकी समानता है अर्थात् यदि नैनीताल से नागपुर तक एक सीधी रेखा खींची जाय तो उसके पूर्व की भाषाएँ पूर्वी और उसके पश्चिम की भाषाएँ पश्चिमी कहलायेंगी और पश्चिमी वर्ग की सर्व प्रधान अथवा राष्ट्र भाषा प० हि० केन्द्रस्थ होगी। तदनुसार आदर्श वर्गीकरण निम्नलिखित होगा:--

(क) पश्चिमी भाषाएं:—(१) केन्द्र भाषा—पश्चिमी हिन्दी-- इसका क्षेत्र शिमला तथा नैनीताल के दक्षिण हिमालय की तराई से नर्मदा की घाटी के दक्षिण तक और अम्बाला से कानपुर तक है अर्थात् इसका प्रसार पंजाब के द० पू० भाग, संयुक्त प्रदेश, मध्य भारत तथा मध्य प्रदेश में है। इसमें खड़ी बोली, ब्रज भाषा, बांगरू, कन्नौजी तथा बुंदेलखंडी सम्मिलित हैं।

(अ) खड़ी बोली:--इसका मुख्य केन्द्र दिल्ली मेरठ तथा बिजनौर का निकटवर्ती प्रदेश और विस्तार बरेली से अम्बाला तक है अर्थात् यह बरेली, रामपुर (रियासत) मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून आदि ज़िलों में व्यवहृत होती है। इसके—खड़ी बोली उच्च अथवा साहित्यिक हिन्दी, उर्दू तथा हिन्दुस्तानी तीन रूप हैं। खड़ी बोली तत्सम् बहुला है अर्थात् इसमें संस्कृत के तत्सम् तथा अर्द्ध तत्सम् शब्दों का बाहुल्य है। शिक्षित हिन्दू समाज के नित्य व्यवहार तथा साहित्य में इसका प्रयोग होता है। यही राष्ट्र भाषा भी है। उर्दू में अरबी, फ़ारसी तत्सम् और अर्द्ध तत्सम् शब्दों का आधिक्य है और फ़ारसी व्याकरण से प्रभावित होने के कारण वाक्य रचना मसनवी ढंग की है। इसके दो रूप हैं—दिल्ली-लखनऊ की तत्सम् बहुला रेख्ता और हैदराबाद की सरल दक्खिनी। उत्तरी भारत के मुसलमानों तथा कायस्थों की भाषा उर्दू ही है, परन्तु कायस्थों में उत्तरोत्तर हिन्दी का प्रचार बढ़ रहा है। हिन्दुस्तानी में संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, अंग्रेजी, देशी आदि देशी तथा विदेशी भाषाओं के शब्दों का बाहुल्य है। इसका झुकाव उर्दू की ओर है। उत्तरी भारत के सर्व साधारण की बोल चाल की भाषा यही है आजकल इसे राष्ट्रभाषा के सिंहासन पर बैठाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

(आ) बाँगरू:--इसका क्षेत्र पंजाब का दक्षिणी-पूर्वी भाग है। यह हिसार, झींद, रोहतक करनाल आदि में बोली जाती है। इसका निर्माण पंजाबी, राजस्थानी तथा खड़ी बोली के समिश्रण से हुआ है।

(इ) व्रजभाषा:—यद्यपि यह बदायूँ, बुलंदशहर, अलीगढ़, आगरा, मथुरा इटावा तथा धौलपुर में बोली जाती है, परन्तु इसका मुख्य केन्द्र व्रज मंडल (मथुरा) है। इसका साहित्य बहुत सुन्दर और विस्तृत है। इसमें संज्ञा विशेषण, कृदंत आदि के वाचक शब्द प्रायः ओकारांत होते हैं।

(ई) कन्नौजी :—यद्यपि इसका व्यवहार इटावा, कन्नौज, फरुख़ाबाद, हरदोई, शाहजहाँपुर पीलीभीत तथा कानपुर के पश्चिमी भाग में होता है, परन्तु इसका मुख्य केन्द्र कनौज-फरुख़ाबाद है। इसका साहित्य व्रजभाषा के साहित्य के ही अंतर्गत आ जाता है। उत्तरोत्तर हिन्दुस्तानी में परिवर्तित होती जाने के कारण इसका अस्तित्व नष्ट प्राय होता जा रहा है।

(उ) बुंदेलखंडी :—यह जमुना से नर्मदा की घाटी तक व्यवहृत होती है। इसका मुख्य केन्द्र बुन्देलखंड अर्थात् झाँसी, जालौन, हमीरपुर आदि है। आल्हाखंड इसके साहित्यका सुन्दर उदाहरण है। केशवदास सर्व प्रमुख बुन्देली कवि थे।

(२) पंजाबी :—इसका क्षेत्र पूर्वी पंजाब और केन्द्र अमृतसर तथा लाहौर हैं। पंजाब में प्रत्येक ज़िले की अपनी एक पृथक बोली है, प्रत्युत किसी किसी ज़िले में तो एक से अधिक बोलियाँ व्यवहृत होती हैं। अतः पंजाबी के अंतर्गत अनेकों बोलियां हैं। इनमें मध्य भाग अर्थात् दो मुख की माझी और जम्मू की पार्श्ववर्त्ती डोग्री मुख्य हैं। पंजाबी में साहित्य नाम मात्र को ही है। 'जन्म साखी' जैसे कुछ ग्राम्य गीत ही इसके साहित्य हैं। यह लहँदा से अधिक संबद्ध है। इसकी लिपि गुरुमुखी लहँदा की लंडा लिपि का ही एक परिवर्तित रूप है और बहीखातों की लिपि तो लंडा है ही। डोग्री की लिपि टक्करी है। पंजाब में उर्दू का भी अधिक प्रचार है।

(३) लहँदा :—इसका क्षेत्र पंजाब का पश्चिमी भाग है, तदनुसार इसे पंजाबी भी कहते हैं। इसकी चार बोलियाँ हैं—नमक की पहाड़ी के दक्षिणी भाग की केन्द्रीय लहँदा, मुल्तान डेरागाज़ी खाँ के पार्श्व की मुल्तानी उत्तरी पश्चिमी पंजाब की पोठवारी तथा दक्षिणी पूर्वी सीमाप्रांत की धन्नी। इसका साहित्य केवल कुछ ग्राम्य गीतों तक ही सीमित है। इसकी लिपि लंडा है। (४) सिंधीः—इसका क्षेत्र सिंध है। इसमें थरेली, सिरैकी, विचोली, लारी तथा कच्छी पाँच बोलियां सम्मिलित हैं। थरेली तथा सिरैकी उत्तरी सिंध में, विचोली मध्य सिंध में, लारी दक्षिणी सिंध में तथा

कच्छी कच्छ में बोली जाती है। इसमें विचोली साहित्यिक अथवा टकसाली भाषा है। लिपि इसकी भी लंडा है, परन्तु गुरुमुखी तथा नागरी भी व्यवहृत होती हैं। (५) गुजराती:—इसका क्षेत्र गुजरात तथा बड़ौदा का निकटवर्ती प्रदेश है। राजस्थानी। विशेषतया प्राचीन मारवाड़ी, भीली तथा खानदेशी तथा गुजराती में इतना सादृश्य है कि दोनों परस्पर सम्बद्ध प्रतीत होती हैं। उत्तरी तथा दक्षिणी गुजराती में कुछ भेद है। इसकी तीन बोलियाँ हैं—एक सूरत तथा बड़ौच में, दूसरी अहमदाबाद में और तीसरी काठियावाड़ में व्यवहृत होती हैं। पहिले इसकी लिपि देवनागरी थी, परन्तु आजकल गुजराती है।

(६) मराठी:—इसका क्षेत्र पूना का पार्श्व, बरार नागपुर का पार्श्ववर्ती मध्य प्रदेश का दक्षिणी भाग तथा वस्तर है। इसकी बोलियाँ कोंकणी, बरारी, हल्वी तथा देशी मराठी हैं। इनमें पूना की देशी मराठी टकसाली तथा साहित्यिक है। इसमें सुन्दर साहित्य है। मराठी की लिपि देवनागरी है, परन्तु नित्य व्योवहार की लिपि 'मोड़ी' है।

(७) राजस्थानी:—इसका क्षेत्र राजस्थान (राजपूताना) है। इसमें मेवाती, जयपुरी, मालवी तथा मारवाड़ी (मेवाड़ी) चार बोलियाँ सम्मिलित हैं। मेवाती गुड़गाँव के पास, जयपुरी जयपुर तथा कोटाबूंदी में, मालवी इन्दौर के पार्श्व में और मेवाड़ी मेवाड़ अर्थात् उदयपुर जोधपुर जैसलमेर तथा बीकानेर में व्यहृत होती हैं। मारवाड़ी तथा जयपुरी गुजरातीसे, मेवाती ब्रजभाषासे और मालवी बुन्देलखण्डीसे संबद्ध हैं। मारवाड़ीमें कुछ प्राचीन साहित्य भी पाया जाता है जो डिंगल कहलाता है। मीराबाई राजस्थानीकी सर्व प्रसिद्ध कवियित्री हैं। इसकी लिपि देवनागरी है, परन्तु मारवाड़ियों के निज व्यवहारकी लिपि महाजनी है। उत्तरी भारत में महाजनी का प्रचार मारवाड़ियों द्वारा ही हुआ है।

(८) पहाड़ी अथता खस:—इनका क्षेत्र हिमालय के दक्षिण दारजिलिंग से शिमला तक है अर्थात् यह नेपाल, संयुक्तप्रांत के उत्तरी पहाड़ी प्रदेश तथा सरहिंद के उत्तरी भाग में व्यवहृत होती हैं। यद्यपि ये भाषाएँ अपने मूल रूप में दर्द भांषाओं से संबद्ध हैं, परन्तु इनका राजस्थानी से अधिक सादृश्य है। इसका कारण यह है कि इन पहाड़ी प्रदेशों के खस आर्यन दर्दिस्तान से आकर यहां बसे थे, अतः दर्द भाषाओं का यहाँ की भाषाओं पर बहुत प्रभाव पड़ा; परन्तु बाद में पूर्व काल में गूजर और मुसलमान

काल में अनेक राजपूत भी यहाँ आकर बस गए, अतः खस भाषाएं राजस्थानी से भी प्रभावित हो गईं। जब खस लोगों ने नेपाल को जीता तो ये गूजर तथा राजपूत भी इनके साथ थे, अतः नेपाल की भाषाएं राजस्थानी से प्रभावित हो गईं। इस प्रकार शिमला से नेपाल तक की पहाड़ी भाषाएँ राजस्थानी से संबद्ध हो गईं। पहाड़ी भाषाओं की पूर्वी, माध्यमिक तथा पश्चिमी तीन बोलियाँ हैं। पूर्वी पहाड़ी, जिसे नेपाली पर्वतिया, खसकुरा अथवा गोरखाली भी कहते हैं, नेपाल में बोली जाती है। इसका केन्द्र काठमांडू है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से इसका विशेष महत्व है, अनेकों जर्मन तथा रूसी विद्वानों ने इसका अध्ययन किया है इसमें कुछ अर्वाचीन साहित्य भी है। नेपाल के पूर्वी भाग में नेवारी आदि तिब्बत-वर्मी परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं, परन्तु अब वहाँ भी धीरे धीरे खसकुरा का प्रचार हो रहा है। इसकी लिपि देवनागरी है। राज्य दरबार में हिन्दी का अधिक मान है। माध्यमिक पहाड़ी कमायूँ तथा गढ़वाल में व्यवहृत होती है। यह जयपुरी से बहुत मिलती जुलती है। इसकी कमायुँनी तथा गढ़वाली दो बोलियाँ हैं। कमायुँनी का मुख्य केन्द्र अलमोड़ा में नैनीताल का निकटवर्ती प्रदेश और गढ़वाली का मंसूरी का पार्श्व है। इसकी साहित्यिक भाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी है। इसका साहित्य केवल कुछ नवीन पुस्तकों तक ही सीमित है। पश्चिमी पहाड़ी जोनसार-बावर (संयुक्त प्रांत) से शिमला तक व्यवहृत होती है। इसका मारवाड़ी से अधिक सादृश्य है। इसकी लगभग तीस बोलियाँ हैं, जिनमें जौनसार-बावर की जौनसारी, शिमला की क्योंथली, कुङूली की, कुङूली चम्बा की चम्बाली आदि मुख्य हैं। चम्बाली के अतिरिक्त शेष सब की लिपि टक्करी है। इसमें कोई विशेष साहित्य नहीं है, केवल कुछ ग्राम्य गीत हैं।

(ख) पूर्वी भाषाएँ:—(१) पूर्वी हिन्दी—इसका क्षेत्र हिमालय की तराई से रायपुर तक और कानपुर से भागलपुर तक है। यद्यपि कुछ बातों में यह प० हि० से मिलती जुलती है, परन्तु व्याकरण के अधिकांश रूपों में इसका सम्बन्ध बिहारी भाषा से है। अतः यह पूर्वी वर्ग की होते हुए भी मध्यवर्ती भाषा कही जा सकती है। इसकी अवधी, बघेली तथा छत्तीसगढ़ी तीन बोलियां हैं। यद्यपि अवधी तथा बघेली में अधिक अंतर नहीं है, परन्तु उड़िया तथा मराठी से प्रभावित होने के कारण छत्तीसगढ़ी इनसे बहुत भिन्न है। अवधी हिमालय की तराई से जमुना तक बोली जाती है, परन्तु

इसका मुख्य केन्द्र अवध है । रामायण तथा पद्मावत इसके साहित्य के सुन्दर उदाहरण हैं । तुलसी इसके सर्व प्रमुख कवि थे । इसके दक्षिण जबलपुर-मांडला तक बघेली व्यवहृत होती है । इसका मुख्य केन्द्र रीवाँ है । इसकी साहित्यिक भाषा अवधी है । बघेली क्षेत्र के दक्षिण छत्तीसगढ़ आदि में छत्तीसगढ़ी बोली जाती हैं इसमें प्राचीन साहित्य का तो अभाव है, परन्तु कुछ नई बाजारू पुस्तकें हैं । यद्यपि पूर्वी हिन्दी की लिपि नागरी है, परन्तु कैथी का भी प्रयोग होता है ।

(२) **विहारी:**—इसका व्यवहार गोरखपुर, बनारस, विहार, छोटा नागपुर तथा मालदा में होता है । इसकी मैथिली, मगही तथा भोजपुरी तीन बोलियाँ हैं । इनमें मैथिली तथा मगही में तो सादृश्य है, परन्तु भोजपुरी इन दोनों से भिन्न है । मैथिली दरभंगा के निकटवर्ती प्रदेश में; मगही गया, पटना, मुंगेर, हज़ारीबाग तथा मालदा में: और भोजपुरी गोरखपुर तथा बनारस कमिश्नरियों और शाहवाद, आरा, चम्पारन, सारन तथा छोटा नागपुर के ज़िलों में बोली जाती है । मैथिली की लिपि मैथिली है जिसके अक्षर बंगला अक्षरों के समान हैं । विद्यापति मैथिलकोकिल इसके सर्व प्रधान कवि थे । मगही तथा भोजपुरी की लिपि कैथी है । विहारी की छपाई की लिपि नागरी है । इस प्रकार यद्यपि इसमें मैथिली, कैथी तथा नागरी तीन लिपियां प्रयुक्त होती हैं, परन्तु साहित्यिक भाषा केवल एक हिन्दी ही है ।

(३) **उड़िया:**—इसका क्षेत्र उड़ीसा, छोटानागपुर का दक्षिणी भाग, मध्य प्रदेश का पूर्वी भाग तथा मद्रास का उत्तरी भाग है । उड़िया तथा बंगला के व्याकरण में अधिक साम्य है, परन्तु उड़िया की लिपि बंगला से कहीं अधिक कठिन है । इसमें तेलुगु तथा मराठी शब्दों की अधिकता हैं इसका साहित्य कृष्ण सम्बन्धी है ।

बंगला:—इसका क्षेत्र बंगाल है । बंगला तत्सम बहुला भाषा है । इसकी उत्तरी, पूर्वी तथा पश्चिमी तीन बोलियाँ हैं । हुगली की पश्चिमी बंगला साहित्यिक भाषा है । इसका साहित्य बहुत उच्च कोटिका है । बंगला लिपि देवनागरी का ही एक परिवर्तित रूप है । बंगला में अ का ओ की भाँति और स का श की भाँति उच्चारण होता है ।

(५) **आसामी:**—ब्रह्मपुत्र की घाटी में ग्वालपारा से सदिया तक बोली जाती है । व्याकरण, उच्चारण तथा लिपि में यह बंगला से बहुत मिलती जुलती है । इसमें प्राचीन साहित्य स्वरूप कुछ सुन्दर ऐतिहासिक ग्रन्थ भी पाए जाते हैं । इसकी लिपि बंगला का एक परिवर्तित रूप है ।

जैन साहित्य के ऐतिहासिक गुजराती ग्रन्थ

[लेखक, श्री अमरचन्द नाहटा, संपादक 'राजस्थानी']

भारतीय वाङ्गमय में जैन साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है पर जैनेतर विद्वानों के उससे प्रायः अपरिचित से रहने के कारण अभी तक जैन वाङ्गमय को समुचित स्थान नहीं मिला। कुछ वर्षों पहले उस विशाल साहित्य के सम्बन्ध में जानकारी कराने वाली पुस्तकों का भी अभाव था। पर अब वैसा नहीं है। जैन साहित्य की सूची के तौर पर प्रायः ३२ वर्ष पूर्व श्री जैन श्वेताम्बर कॉन्फ्रेन्स ने जैन ग्रन्थावली नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया था जिसमें श्वेताम्बर साहित्य के संस्कृत एवं प्राकृत ग्रन्थों की सूची थी। उसके बाद बहुत से नवीन अन्वेषण हुए, सैकड़ों महत्वपूर्ण ग्रन्थों एवं भाषा के हजारों रास चौपाइयों का पता चला। सौभाग्य से श्रीयुक्त मोहनलाल दुलीचन्द देशाई-एडवोकेट, बम्बई हाईकोर्ट का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। फलतः २०-२५ वर्ष के अनवरत एवं अथक परिश्रम से आपने ४ महत्व पूर्ण ग्रन्थों का संकलन किया जिनका संक्षिप्त परिचय कराना ही इस लेख का उद्देश्य है।

सर्वप्रथम भाषा-साहित्य के विवरणात्मक (परिचय स्वरूप) "जैन गुर्जर कवियों' भा० १ सं० १९९२ में प्रकाशित हुआ। जिसमें विक्रम की तेरहवीं शताब्दि से १७ वीं शताब्दि तक के अपभ्रंश गुजराती, हिन्दी एवं राजस्थानी के कवियों एवं उनकी रचनाओंका महत्वपूर्ण परिचय है। कवियों के परिचय में उनके गच्छ एवं गुरु परम्परादि का यथा ज्ञात विवरण है और कृति परिचय में कृति के आदिअन्त के आवश्यक पद्य संग्रहीत किये गये हैं। इस भाग में कुल २८७ जैन भाषा कवियों एवं उनका ५४१ पद्यमय कृतियों का परिचय है। अन्त में गद्य भाषा साहित्य की भी सूची दी गई है। ग्रन्थ के आदि में ३२० पृष्ठों में भाषा साहित्य का इतिहास लिखा गया है। यह साहित्यिक विद्वानों के बड़े ही काम की चीज़ है। अन्त में कवियों एवं कृतियों की अकारादि क्रमसे सूची है। ग्रन्थ की कुल पृष्ठ-संख्या १०१० और सजिल्द ग्रन्थ का मूल्य ५) रुपया रखा गया है जो सर्वथा उपयुक्त है। ग्रन्थ गुजराती भाषा एवं गुजराती लिपि में श्री जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स-बम्बई ने प्रकाशित किया है।

उपरोक्त ग्रन्थ प्रकाशन के ५ वर्ष बाद इसका दूसरा भाग प्रकाशित

हुआ जिसमें केवल अठारहवीं शताब्दि के जैनी कविओं (कवि न २८८ से ४६६ तक = १७९) एवं उनकी कृतियों (कृ० नं० ५४२से ९०३ ४०१) का परिचय उसी प्रकार से है। अन्त में कृतियों की सूची है। परिशिष्ट नं० १ में जैन कथा नामक कोष २० पृष्ठों में और परिशिष्ट नं० २ में तथा खरतर गच्छ नामक जैन गच्छों की उपलब्ध पट्टावलियों का ऐतिहासिक सार है। परिशिष्ट नं० ३ में अंचलगच्छ की पट्टावली नं०४ में राजावली दी है जो ऐतिहासिक दृष्टि से (परिशिष्ठ नं० २-३-४) बड़े ही महत्व की हैं। समग्र ग्रन्थ की पृष्ठ संख्या ८४५ एवं मूल्य सजिल्द का ३ रुपया है। प्रकाशक उपरोक्त संस्था है।

इसके २ वर्ष पश्चात् आपका अत्यन्त महत्व पूर्ण ग्रन्थ "जैन साहित्यको का संक्षिप्त इतिहास" उपरोक्त संस्था से ही प्रकाशित हुआ है। इसमें भगवान् महावीर से सं० १९६० तक के समस्त श्वेताम्बर जैन साहित्य एवं ग्रन्थकारों, श्रावकों एवं विशिष्ट घटनाओं का परिचय दिया गया है। ८३५ पृष्ठोमें मूल ग्रन्थ समाप्त हुआ हैं। प्रायः २०० पृष्ठों में विस्तृत अनुक्रमणिका जो कि २३ विभागों में विभक्त है समाप्त हुई है। ५० पृष्ठों में शुद्धि वृद्धि एवं 'जैन गुज्जर कविओ' भा० १-२ पर आई हुई विविध विद्वानों की अमूल्य सम्मतियाँ छपी हैं। ग्रन्थ के आदि में ६१ पृष्ठों में 'निवेदन' २० पृष्ठों में 'कामदार केशवलाल हिम्मत राम की प्रस्तावना' फिर सांकेतिक अक्षरों की समझ, चित्र परिचय, एवं विषयानुक्रम हैं। समग्र ग्रन्थ की पृष्ठ संख्या २२५५ एवं चित्र संख्या ६० हैं। सजिल्द ग्रन्थ का मूल्य ३६) रुपया है। इस ग्रन्थ की रचना में श्रीयुक्त देशाई का २० वर्षों का परिश्रम सफल हुआ है। उनके परिश्रम की कुछ झांकी, हम उन्हीं के शब्दों में यहाँ दे रहे हैं।

"ते लखतां-छपता चार वर्ष बीती गया। एनी पाछला दिन रात श्रम लेवामां में कचास राखी नथी। समय लई पोताने खर्चे जुदे जुदे स्थलो जई, पुस्तक भण्डारों जोइ तपासी, आववा, तेमाथी मलेला तेमज अन्य प्राप्तव्य साधनों ने प्राप्त करी संग्रह, करवो, तेमांथी नोंधों टांचलों करी लेवा ते परथी प्रमाणो आपी प्रकरणो, लखवां, छापवा मोकसवों, तेना, प्रुफोनु शोधन करवुं, तेने पाछल मंगावी सुधारवा-प्रेषवां, तेनी विस्तृत अनुक्रमणिका करवी वगेरे बधुय एकले पंडे कोई नीपण सहाय बगर 'एकप्रूफ रीडर,जेवानी पण मदद वगेरे करीने आ पुस्तक में गुजरात ने सादर धर्पुं छे।

मेरे विचार से ऐसा इतिहास अद्यावधि किसी भी भाषामें किसी भी साहित्य का प्रकाशित नहीं हुआ जिसमें ग्रन्थकारों की छोटी मोटी सभी रचनाओं का उल्लेख एवं उल्लेखनीय सभी प्रवृतियों और घटनाओं का समावेश हो। यह ग्रन्थ केवल साहित्व का इतिहास ही नहीं अपितु जैन विश्वकोष है।

इस महान् ग्रन्थ के पश्चात् देशाईजी का "जैन गुज्जर कविओं का" तीसरा भाग अभी छप रहा है। मूल ग्रन्थ छप चुका है। अनुक्रमणिकाओं को लेकर २००० से भी अधिक पृष्ठ छप चुके हैं जिनमें १९ वीं एवं २० वीं शताब्दि (सं० १९६०) तक के जैन कवियों के कृतियों का परिचय है। पूर्व के दोनों भागों की पूर्ति एवं गद्य भाषा-साहित्य की सूची दी गई है। अन्त में जैन रास चौपाई आदि भाषा कृतियों में जिन जिन "देशीयों" का व्यवहार हुआ है उनकी विस्तृत सूची है जिसके द्वारा हमारा लोक साहित्य कितने अधिक परिमाण में नष्ट हो चुका है, स्पष्ट प्रतीत होता है। इसके बाद जैनेतर कवियों की कृतियों का भी परिचय दिया गया है।

इस ग्रन्थ की महत्वपूर्ण प्रस्तावना छपनी बाकी है। उसके मुद्रित हो जाने पर यह भाग सम्भवतः दो जिल्दों में प्रकाशित होगा।

इस प्रकार श्रीयुक्त देशाईजी ने समस्त श्वेताम्बर साहित्य का इतिहास प्रकाशित कर गुजराती भाषा एवं जैन साहित्य की महान सेवा की है। श्रीयुक्त देशाई बड़े ही कर्मठ हैं। मैंने स्वयं उन्हें प्रायः सारी रात काम करते देखा है। दिन में वकालत करना और सारी रात साहित्य सेवा में व्यतीत करना, ऐसे लगनशील व्यक्ति विरले ही मिलेंगे।

उपरोक्त तीनों ग्रन्थों को श्री जैन श्वेताम्बर कान्फरेन्स ने प्रकाशित किया है और चौथा भी उसी के द्वारा प्रकाशित होने वाला है। "कान्फरेन्स" ने प्रचारार्थ १४) के बदले अभी मात्र ४) रुपये में ही तीनों (प्रकाशित) ग्रन्थों को देने की सूचना निकाली है जो केवल काग़ज़ के ही दाम नहीं हैं। अतः जैनेतर विद्वानों को विशेष रूप से इस सुयोग का लाभ उठाना चाहिये।

जैनेतर साहित्यिक विद्वानों को तो जैन साहित्य का यथा-विधि ज्ञान न होने से वे जैन ग्रन्थों के विषय में जो कुछ लिखते हैं, प्रायः भ्रान्तिपूर्ण होता है। अभी हाल ही में नागरी प्रचारिणी पत्रिका में हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का विवरण छपा था उसमें जैन कवि "लब्धोदय" का नाम

“लक्ष्योदय” इत्यादि के साथ कई भूल भ्रान्तियाँ छपी हैं। यह ताज़ा उदाहरण है, अतएव मैं जैनेतर विद्वानों से विशेष रूप से अनुरोध करूँगा कि वे अपने लेखन में इन ग्रन्थों का उपयोग अवश्य करें ताकि जैन साहित्य के विषय में वे जो कुछ लिखें, प्रामाणिक हो।

मैं जैनेतर विद्वानों से एक और अनुरोध करूँगा। कि उन्होंने जैन साहित्य की जानकारी के अभाव के कारण, जैन साहित्य को उचित स्थान नहीं दिया है। इस विषय में भी ज़रा उदारता एवं निष्पक्षता से काम लें। जैन साहित्य इतना विशाल एवं सर्वाङ्गीय है कि उसकी उपेक्षा से भारतीय साहित्य का यथावत् पूरा परिचय ही नहीं होता। इस बात को शायद वे अभी अतिशयोक्ति-पूर्ण मानें, पर जब वे उक्त चार ग्रन्थों को ध्यान से पढ़ेंगे तो उन्हें यह स्वीकार करना ही होगा। मैंने इस लेख में जिन चार महान् ग्रन्थों का परिचय दिया है वे तो केवल श्वेताम्बर साहित्य की रूपरेखा मात्र हैं। उनके अतिरिक्त और भी सैकड़ों महत्वपूर्ण ग्रन्थ जैन भंडारों में सुरक्षित हैं जिनका देशाई महाशय को भी पता नहीं क्योंकि अन्वेषण का कार्य्य ही ऐसा है कि नित्य नवीन बातों का पता चलता रहता है। अनेकों ज्ञान भंडार तो अब भी ऐसे हैं कि जिनमें वर्षों से ताले लगे हैं। कोई देख ही नहीं पाता। इसी प्रकार दिगम्बर साहित्य भी कम महत्व का नहीं है, जिसका परिचय इन ग्रन्थों में नहीं है। इस साहित्य के भी हज़ारों महत्वपूर्ण प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तामिल आदि भाषाओं के ग्रन्थ हैं। दिगम्बर विद्वानों से विशेष अनुरोध है कि वे भी अपने दि० साहित्य का इतिहास देशाई के ग्रन्थों की भाँति शीघ्र ही प्रगट करें ताकि विश्व को समस्त जैन वाङ्मय की सच्ची महत्ता का पता लगे।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

[लेखक—श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल, मंत्री]

गुजरात—प्रान्त के विभिन्न स्थानों में राष्ट्रभाषा का प्रचार कार्य खूब बढ़ रहा है। गत दो महीनों में कई केन्द्रों में प्रमाण पत्र वितरणोत्सव बड़े उत्साह से मनाये गये हैं। कई स्थानों पर राष्ट्रभाषा के प्रचार कार्य को सुसंगठित किया गया है। यहाँ संक्षेप में विभिन्न केन्द्रों का जिक्र किया जाता है।

सूरत—राष्ट्रभाषा प्रचारक मंडल, सूरत अपनी विविध प्रवृत्तियों के द्वारा सूरत शहर में प्रचार कार्य कर रहा है। हिन्दी के विद्वानों, कवियों और साहित्यिकों का सहयोग प्राप्त करने का भी मंडल प्रयत्न करता रहता है। गत दो महीनों में मंडल की ओर से श्री काका साहब कालेलकर, श्री दुलारेलाल भार्गव, तथा श्रीमती सावित्री देवी के आम सभा में व्याख्यान हुये, जिनसे जनता ने काफी प्रोत्साहन प्राप्त किया।

ता० १ अप्रेल से सरकार से सहायता कम मिलने के कारण 'मंडल' ने अपना राष्ट्रभाषा अध्यापन मन्दिर बन्द कर दिया है।

सूरत के राष्ट्रभाषा कोविद परीक्षा उत्तीर्ण युवकों ने 'राष्ट्रभाषा कोविद मंडल' नाम की एक संस्था स्थापित की है। यह संस्था समय समय पर विद्वानों के व्याख्यान तथा साहित्यिक वार्तालाप की आयोजना किया करती है। राष्ट्रभाषा कोविद मंडल की ओर से श्री काका साहेब कालेलकर, श्री गंगाशंकर पंड्या, श्री रामेश्वर दयाल दुबे का साहित्यिक वार्तालाप हुआ।

अहमदाबाद—शहर में राष्ट्रभाषा का पुस्तकालय स्थापित करने के लिये प्रयत्न चालू है। स्थानीय मिशन हाई स्कूल का गत राष्ट्रभाषा परीक्षा का परीक्षाफल उत्तम रहा है।

भावनगर—यहाँ एक वर्ग चलाया गया जिसमें ४० के करीब शिक्षक और नवयुवक आये थे। उस वर्ग के शिक्षकों ने काठियावाड़ में प्रचार कार्य शुरू किया है।

नड़ियाद—यहाँ का काम विशेष रूप से बढ़ रहा है। एक नये प्रचारक की भी नियुक्ति हुई है। पिछली परीक्षा के बाद २० केन्द्र नये खुले।

बड़ोदा राज्य—राज्य ने अपनी पाठशालाओं में वर्धा की पुस्तकों को पाठ्य पुस्तक के तौर पर स्वीकार किया है। बड़ोदा राज्य में राष्ट्रभाषा का प्रचार जोर से चल रहा है।

पोरबन्दर-राजकोट—कार्य को व्यवस्थित और सुसंगठित करने की दृष्टि से सभायें की गईं जिनमें श्री कानजी भाई ने राष्ट्रभाषा के प्रचार के सम्बन्ध में अपने विचार जनता के सामने रखे। श्री कानजी भाई, श्रीप्रह्लाद राय वैद्य तथा श्री वजुभाईशाह आदि सज्जन राष्ट्रभाषा प्रचार कार्य में विशेष दिलचस्पी ले रहे हैं।

बम्बई

आर्यन तथा गोखले एज्यूकेशन सोसाइटी स्कूलों के राष्ट्र भाषा वर्गों का द्वितीय वार्षिक स्नेह सम्मेलन रविवार ता० १६-२-४१ को बड़े उत्साह से मनाया गया। बम्बई के प्रसिद्ध कांग्रेस-कार्यकर्ता श्री हठीसिंह जी ने राष्ट्र-भाषा सीखने पर काफ़ी ज़ोर दिया। वर्धा के आचार्य दादा धर्माधिकारीजी के व्याख्यान से श्रोतागण खूब प्रभावित हुये। सभा की मंत्रिणी श्री पेरीनबेन केप्टन तथा वर्धा समिति के परीक्षा मंत्री श्री नाणावटी की उपस्थिति से समारम्भ के उत्साह में और भी वृद्धि हुई।

महाराष्ट्र

गत दो महीनों में महाराष्ट्र के भी विभिन्न केन्द्रों में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव तथा स्नेह सम्मेलन मनाये गये हैं। प्रान्तीय मन्त्री श्री गो० प० नेने ने विभिन्न केन्द्रों का निरीक्षण किया और स्थानीय कार्यकर्ताओं तथा प्रचारकों के साथ प्रचार के सम्बन्ध में परामर्श किया। यहाँ संक्षेप में विभिन्न केन्द्रों का ज़िक्र किया जाता है :—

पूना—प्रान्तीय समिति की ओर से राष्ट्रभाषा शिक्षक विद्यालय शुरू किया गया जिसमें जलगाँव, वेंगुर्ला, सोलापुर आदि स्थानों के १० विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

कराड—यहाँ के राष्ट्रभाषा विद्यालय का स्नेह सम्मेलन प्रो० पोतदार की अध्यक्षता में हुआ। स्वागताध्यक्ष तथा अध्यक्ष के बड़े रोचक तथा प्रभावशाली भाषण हुये। श्री पोतदार जीने राष्ट्रभाषा के रूप को समझाया और कहा कि जो भाषा सब की समझ में आ सकेगी और जिसे सब लोग व्यवहार में ला सकेंगे वही चल जायगी, उसे कोई रोक नहीं सकता।

श्री शिवाजी हिन्दी प्रेमी-मंडल—मंडल का दूसरा वार्षिक स्नेह सम्मेलन २८ मार्च ४१ को श्री काका साहेब कालेलकर की अध्यक्षता में हुआ। श्री काका साहब ने अपने भाषण में कहा कि राष्ट्रभाषा बड़ी आसान

सरल और सादी होनी चाहिये। राष्ट्रभाषा के साथ ही नहीं, बल्कि राष्ट्रभाषा के पहले ही राष्ट्रीयता का प्रचार होना बिलकुल जरूरी है। राष्ट्रभाषा तो केवल साधन है साध्य नहीं।

यह मंडल राष्ट्रभाषा प्रचार का कार्य गत तीन साल से कर रहा है और उसका कार्य दिन-ब-दिन बढ़ रहा है।

पाउलसे—जनता शिक्षण मंडल खिरोदा के मातहत यहाँ पर एक राष्ट्रभाषा प्रचार वर्ग खोला गया है।

पेठा—स्थानीय प्रचारक श्री रा० जोगदेव स्थानीय हाईस्कूल में राष्ट्रभाषा वर्ग का संचालन कर रहे हैं काफी संख्या में विद्यार्थी राष्ट्रभाषा के प्रति प्रेम दिखा रहे हैं।

विटा—स्थानीय प्रचारक श्री रा० के० केलकर के उत्साह से इस छोटे से गाँव में राष्ट्रभाषा का प्रचार उन्नति कर रहा है।

वसई—स्थानीय उत्साही प्रचारक श्री तेंडुलकर जी वसई के अलावा स्थानीय उपकेन्द्र अगाशी, आरनाला आदि स्थानों में जा जाकर राष्ट्रभाषा के वर्ग चला रहे हैं। वसई के पापड़ी हाईस्कूल तथा वसई की आम सभा में श्री रामेश्वर दयाल दुबे ने राष्ट्रभाषा प्रेमी जनता को राष्ट्रभाषा सीखने का महत्व आसान हिन्दी में समझाया।

परीक्षा मंत्री का प्रवास—परीक्षा मंत्री श्री अमृतलाल नाणावटी ने हैदराबाद (दक्षिण) बुलारम, सिकन्दराबाद, गुलबर्गा, चिंचोली और औरंगाबाद केन्द्रों का निरीक्षण किया। औरंगाबाद में परीक्षामंत्री ने उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को प्रमाण पत्र दिये।

उत्कल

ता० ८, ९ फरवरी को बरहमपुर में उत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का नवाँ वार्षिक अधिवेशन पुरी के श्री महन्तजी गजाधर रामानुज जी के सभापतित्व में मनाया गया। इस अवसर पर कलकत्ता से श्री वसन्तलालजी मुरारका तथा पूर्व भारत राष्ट्रभाषा प्रचार सभा के मंत्री श्री भंवरमल जी उपस्थित थे। कई विद्वानों के भाषण हुये। एक प्रस्ताव द्वारा इस बात पर खेद प्रकट किया गया कि उत्कल सरकार ने सन् १९४१ के आरम्भ से उड़ीसा में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर देने की अपनी घोषणा को अभी तक कार्यरूप में परिणत नहीं किया। अनुवाद समिति के काम को बढ़ाने के लिये श्री महन्तजी ने १५१) की रकम सभा को भेंट की।

सिन्ध

सिन्ध में प्रचार कार्य के सञ्चालक श्री इन्द्रदेव शर्मा ने विभिन्न केन्द्रों में दौरा किया और वहाँ की जनता को राष्ट्रभाषा का महत्व समझाया।

प्रान्तीय समिति के अध्यक्ष श्री प्रो० नारायणदास जी मलकानी ने कराची, सक्कर शिकारपुर आदि स्थानों में नये सिरे से सङ्गठन करने के लिये दौरा किया और स्थानीय कार्यकर्ताओं से मिलकर प्रचार कार्य को बहुत वेग दिया।

हैदराबाद में राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन—ता० २२, २३ फरवरी को हैदराबाद में श्री काका साहब कालेलकर की अध्यक्षता में सिंध राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन हुआ। सम्मेलन की तैयारी के लिये राष्ट्रभाषा के प्रचारार्थ श्री काका साहब ने ता० १२ फरवरी से सिंध प्रान्त में दौरा किया। उनके साथ प्रो० मलकानी के अलावा परीक्षा मंत्री श्री नाणावटी तथा आचार्य दादा धर्माधिकारी जी भी थे। दौरे में स्कूलों में व स्थान स्थान पर प्रचार कार्य के बारे में चर्चा हुई और व्याख्यान हुये।

ता० २२, २३, २४ को हैदराबाद में अधिवेशन हुआ जिसमें सम्मिलित होने के लिये सिन्ध के विभिन्न केन्द्रों से राष्ट्रभाषा प्रचारक और केन्द्र व्यवस्थापक आये थे। अधिवेशन पूर्ण सफल रहा।

ता० २८ फरवरी को श्री काका साहब कराची गये और वहाँ प्रचार कार्य को सुसङ्गठित किया। कराची से राष्ट्रभाषा प्रचार के लिये आर्थिक सहायता भी अच्छी मिली जो वहाँ की एक समिति को सुपुर्द की गई है।

विदर्भ-नागपुर

नागपुर-विदर्भ प्रान्त में राष्ट्रभाषा के प्रचार कार्य को व्यवस्थित करने के लिये कुछ समय से विशेष ध्यान दिया जा रहा है। प्रान्तीय मंत्री श्री हरिहर रावजी देशपांडे ने कई स्थानों में जाकर राष्ट्रभाषा वर्ग चलवाने और परीक्षा केन्द्र खुलवाने का प्रयत्न किया है। अमरावती जिले में सोनेगाँव तथा तीवसा में दो केन्द्र नये खोले गये हैं। अकोला में स्थायी प्रचारक नियुक्त करने की व्यवस्था हो रही है। कई केन्द्रों में प्रमाणपत्र वितरणोत्सव मनाया गया, जिनमें अमरावती, चांदूर, शेंदुर्जना, वर्धा आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

असम

प्रान्तीय सञ्चालक श्री जमुनाप्रसाद श्रीवास्तव ने नौगाँव डिब्रूगढ़, गणेशबाड़ी, शिवसागर जोरहट, आदि केन्द्रों का निरीक्षण किया और राष्ट्रभाषा प्रचार कार्य को बढ़ाने की दृष्टि से विभिन्न स्थानों में स्थानीय कार्यकर्ताओं से बातचीत की तथा स्कूलों और सार्वजनिक सभाओं में राष्ट्रभाषा प्रचार की आवश्यकता और महत्ता पर भाषण दिये।

असम प्रान्त में राष्ट्रभाषा प्रचार कार्य को विशेष वेग देने के विचार से एक नयी योजना की बातचीत चल रही है। प्रान्तीय संचालक ने विभिन्न स्थानों पर "असमिया हिन्दी साहित्य परिषद्" की योजना पर प्रकाश डाला। ऐसी आशा की जाती है कि इस योजना को कार्य रूप में परिणत करने के लिये प्रान्त के साहित्यिक विद्वानों और राष्ट्रभाषा प्रेमियों का सहयोग प्राप्त होगा।

नौ गाँव जिले में "पुरानी गोदाम" नामक स्थान पर एक अध्यापन मन्दिर खोलने की व्यवस्था पर विचार किया जा रहा है।

मणिपुर रियासत में जब से हिन्दी प्रचार समिति का सङ्गठन हुआ है विभिन्न स्थानों में राष्ट्रभाषा के वर्ग खोले गये हैं। कितने ही हाई स्कूलों में व्यवस्थित ढङ्ग से राष्ट्रभाषा का अध्ययन प्रारम्भ हुआ है। सम्पूर्ण प्रान्त में राष्ट्रभाषा सीखने के लिये अपूर्व उत्साह दिखाई देता है।

वर्धा कार्यालय

प्रमाणित प्रचारक-योजना—यद्यपि राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा अभी अपनी शिशु अवस्था में ही है फिर भी उसका काम व्यापक हो गया है। राष्ट्रभाषा प्रचारकों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ रही है। ऐसी दशा में इस बात की आवश्यकता अनुभव की जा रही है कि राष्ट्रभाषा प्रचारकों का संगठन किया जाय तथा उन्हें अधिक योग्य बनाकर अपने कार्यक्षेत्र, प्रान्तीय समिति, केन्द्रीय समिति आदि से परिचित रखने का प्रबन्ध किया जाय। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर समिति ने प्रमाणित प्रचारक योजना बनाई है, जो शीघ्र ही कार्य रूप में परिणित की जायगी।

"राष्ट्रभाषा समाचार"—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने निश्चय किया है कि "राष्ट्रभाषा समाचार" नाम की एक मासिक मुख पत्रिका समिति की ओर से प्रकाशित की जाय। इस पत्रिका में वर्धा कार्यालय तथा परीक्षा विभाग

की ओर से सभी सूचनायें प्रकाशित की जावेंगी। 'राष्ट्रभाषा समाचार' का पहला अंक १५ जून १९४१ को प्रकाशित होगा।

राष्ट्रभाषा अध्यापन मन्दिर, वर्धा—गत वर्ष की भाँति वर्धा राष्ट्रभाषा अध्यापन मन्दिर में 'राष्ट्रभाषा रत्न' परीक्षा का अध्ययन १९४१-४२ के सत्र में चालू रहेगा। मन्दिर का सत्र १ जुलाई १९४१ से आरम्भ होगा।

हिन्दी शीघ्रलिपि और मुद्रा लेखन-वर्ग—पिछले साल की भाँति इस साल भी समिति की ओर से शीघ्रलिपि और मुद्रा लेखन वर्ग ता० १ जुलाई १९४१ से प्रारम्भ होगा।

जिला समितियों का संगठन—राष्ट्रभाषा प्रचार कार्य को संगठित बनाने के लिये यह आवश्यक समझा गया है कि जिला समितियाँ कायम की जाँय। इन समितियों का सम्बन्ध प्रान्तीय समिति से होगा। सम्बद्धता सम्बन्धी नियम बनाये गये हैं। ऐसी आशा की जाती है कि विभिन्न प्रान्तों में शीघ्र ही जिला समितियाँ कायम होंगी और प्रचार कार्य व्यवस्थित ढंग से चलेगा।

राष्ट्रभाषा रत्न परीक्षा—राष्ट्रभाषा प्रचार की दृष्टि से इस बात की आवश्यकता विशेष रूप से अनुभव की जा रही है कि हमारे प्रचारकों की राष्ट्रभाषा-सम्बन्धी योग्यता भाषा की विचित्र शैलियों पर अधिकार, भाषा शिक्षण कला का ज्ञान आदि बढ़ाया जाय। इसलिये वर्तमान प्रचारकों तथा भावी प्रचारकों और शिक्षकों को दृष्टि में रखकर उनकी योग्यता को बढ़ाने के साधन रूप में 'कोविद' परीक्षा से ऊँची एक परीक्षा की योजना की गई है। 'राष्ट्रभाषा रत्न' परीक्षा पहली बार सन् १९४२ के अप्रेल के अन्तिम सप्ताह या मयी के प्रथम सप्ताह में होगी

राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षायें—ता० १, २ फरवरी १९४१ को राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षायें हुई थीं जिनका परीक्षा फल प्रकाशित हो गया है। संक्षेप में प्रान्त वार परीक्षा फल की सारिणी यहाँ दी जाती है:—

१,२ फरवरी ४१ की राष्ट्र-भाषा प्रचार परीक्षाओं के केन्द्र-आवेदक व उत्तीर्ण परीक्षार्थिओं की संख्या बतलाने वाला नक़्शा:—

प्रान्त	केंद्रों की संख्या	प्रारम्भिक			प्रवेश			परिचय			कोविद			कुल जोड़			विशेष
		आवेदक	बैठे	उत्तीर्ण	आवेदक	बैठे	उत्तीर्ण	आवेदक	बैठे	उत्तीर्ण	आवेदक	बैठे	उत्तीर्ण	कुल आवे०	कुल बैठे	कुल उत्तीर्ण	
असम	१४	२७६	२४१	१६६	६२	६५	३१	२४	२३	६	४	४	३	३६६	३२९	२०६	
बंगाल	१	११	९	०	३	२	१							१४	११	१	
उत्कल	२	८	६	४	८	८	७	३	२	२				१९	१६	१३	
सिंध	२२	५५७	५०३	३९६	१४०	१२४	११०	५०	४८	३३	४	४	४	७५१	६७९	५४३	
गुजरात	८२	२९०४	२६२८	२०२८	१०३६	९४४	७३७	३७७	३३२	१९५	९०	८४	४५	४४०७	३९८८	३००५	
महाराष्ट्र	९४	२४१४	२१८६	१८१४	११२४	१०११	८३४	५४१	४९४	३०६	२१६	१९५	१३२	४२९५	३८८६*	३०८६	
बम्बई	१०	९७१	८८३	७१७	३३६	३०८	२३९	४८	१३४	८१	६४	६२	४८	१५१९	१३८७	१०८५	
विदर्भ	७	११७	१०८	९५	३४	२९	२६	१३	८	७	११	९	८	१७५	१५४	१३६	
	२३२	७२५८	६५६४	५२२०	२७४३	२४८७	१९८५	११५६	१०४१	६३०	*३८९	*३५८	*२४०	११५४६	१०४५०	८०७५	
*सिर्फ अतिरिक्त विषय में (अलावा)											१०	१०	१०				

हिन्दी-संसार

महासभा में राष्ट्रभाषा—अभी प्रयाग में संयुक्त प्रान्तीय हिन्दू-महासभा का अधिवेशन हुआ था। उसके सभापति गोरखपुर के महन्त श्री दिग्विजयनाथजी हुए थे। आपने अपने भाषण में अन्य विषयों की चर्चा करते हुए राष्ट्रभाषा की भी चर्चा की थी। आपने कहा कि हिन्दुओं की राष्ट्रभाषा हिन्दी है और जिन प्रान्तों में उसका बहुल प्रचार नहीं है, उन प्रान्तों के हिन्दुओं को भी, हिन्दुओं की एकता दृढ़ करने के लिये राष्ट्रभाषा हिन्दी को अपनाना चाहिये। आपके मत में राष्ट्रभाषा अपनाये बिना कोई भी राष्ट्र अपनी पुरानी संस्कृति और शान प्राप्त नहीं कर सकता।

साहित्य-सेवियों की स्मृति—शुभचिन्तक में पं० देवीदयालु चतुर्वेदी "मस्त" ने रायबहादुर डाक्टर हीरालाल-स्मृति ग्रन्थ के सम्बन्ध में एक लेख लिखा है। आपको शिकायत है कि अन्य भाषाभाषियों में जहाँ उसके साहित्य-निर्माताओं के प्रति अगाध आस्था और तज्जन्य स्तुत्य स्मारक कार्यों की विविधता देखी जाती है, तहाँ हिन्दी भाषा-भाषियों में इस दिशा में क्रियाहीनता अथवा शून्यता दृष्टिगत होती है, वह न केवल विस्मयजनक प्रस्तुत लज्जास्पद भी कही जा सकती हैं। जिनकी सेवाओं के फलस्वरूप मा भारती का भण्डार श्री सम्पन्न हो, जिनके पदचिन्हों पर चलकर आनेवाली पीढ़ी गर्व से अपना मस्तक ऊँचा कर सकती हो, उन्हीं साहित्य-सेवियों का पार्थिव शरीर नष्ट होते ही यदि हम उनकी स्मृति को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये सर्वथा निष्क्रिय नजर आने लगें तो यह हमारा दुर्भाग्य ही कहा जायगा। मध्यप्रान्त के साहित्यिकों और विशेषकर पुरातत्वज्ञों में स्वर्गीय रायबहादुर डाक्टर हीरालाल जी की एतद्विषयक सेवाएं अपना सानी नहीं रखतीं। यदि हम उनकी स्मृति में कुछ भी न कर अपनी अक्षम्य कृतघ्नता का भी परिचय दें तो भी इस उग्रविभूति की स्मृति भुलाये नहीं भूल सकती। डाक्टर हीरालाल की स्मृति में एक स्मृति-ग्रन्थ तैयार करने का आयोजन मध्यप्रदेश के साहित्यिकों ने किया तो था; परन्तु मालूम पड़ता है इस सम्बन्ध में भी क्रियात्मक कार्यवाही शीघ्रता से नहीं हो रही है। इस

समिति के अध्यक्ष बालपुर के पं० लोचनप्रसाद जी पांडेय हैं; परन्तु उन्हें प्रान्तीय लेखकों से समुचित सहयोग नहीं मिल रहा है। आशा है मध्यप्रदेश के साहित्यिक इस स्वीकृत कार्य को पूर्ण कर अपने कर्तव्य का अवश्य पालन करेंगे।

सारन जिला सम्मेलन——छपरा-सारन ज़िले के बसन्त पुर थाना में प्रथम ज़िला हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हुआ। सभापति प्रोफेसर जनार्दन प्रसाद झा "द्विज" थे। एक शानदार जलूस निकाला गया। सम्मेलन में दूर दूर से स्त्रियां भी काफी संख्या में आयी थीं। सभापति महोदय ने अपने भाषण में कहा "भाषा और साहित्य का जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध है। हिन्दी और हिन्दुस्तानी का झगड़ा व्यर्थ है। साहित्य वह दूध है जिसे मातृभाषा प्रदान करती है और जो जीवन को पुष्ट करने के लिये परमावश्यक है। जो भाषा और साहित्य को बिगाड़ने की चेष्टा करता है वह न तो हिन्दी की भलाई करता है और न उर्दू की ही। गौरैयाकोठी में विद्यालय खोलने और प्रथमा परीक्षा पास विद्यार्थियों को भारतीय विश्वविद्यालयों से केवल अँग्रेजी में मैट्रिक परीक्षा देने की सुविधा प्राप्त कराने के प्रस्ताव स्वीकृत हुए। पटना विश्वविद्यालय ने मैट्रिक की परीक्षा का माध्यम हिन्दुस्तानी रखा है और प्रश्न अँग्रेजी में पूछने का आयोजन किया है, इसकी निन्दा की गयी और साथ ही चौथे प्रस्ताव द्वारा हिन्दुस्तानी के नाम पर हिन्दी को विकृत करने के प्रयत्न का घोर विरोध किया गया। साथ ही संस्कृत साहित्य सम्मेलन, नाटक, कविता पाठ आदि भी हुआ। इस प्रकार ज़िला सम्मेलन करने के प्रयत्न का हम अभिनन्दन करते हैं। इस प्रकार का प्रयत्न सभी ज़िलों में होना अभीष्ट है।

नागरी प्रचारिणी सभा——काशी नागरी प्रचारिणी सभा का वार्षिक अधिवेशन भी हो गया। सभा का वार्षिक विवरण और अपव्यय का व्योरा सुनाया गया। आगामी वर्ष के लिये रायबहादुर पं० कमला कर द्विवेदी सभापति और पण्डित लल्लीप्रसादजी पांडेय प्रधान मन्त्री चुने गये। पाण्डेय जी सामने आकर काम करने में प्रायः झिझका करते थे, आशा है अपनी वर्षों की सञ्चित शक्ति का उपयोग कर आप सभा का काम सफलता पूर्वक निर्वाह करते हुए सुयश सम्पादन करेंगे।

हिन्दुस्तानी रीडरें— विहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने

प्रान्तीय शिक्षा विभाग को हिन्दुस्तानी रीडरें लिखकर देने का जिम्मा लिया है। इसका बिहार प्रान्त में ज़ोर का विरोध हो रहा है। जिस हिन्दुस्तानी नाम की नकली भाषाने हिन्दी संसार को विचिलित कर रखा है, उसकी रीडरें तैयार कर प्रान्तीय सम्मेलन उसके प्रचार में सहायक हो और प्रकारान्तर से उस भाषा की स्वीकृति दे यह बिहार प्रान्तीय हिन्दी-प्रेमियों को सहन नहीं है। वे लोग इसे हिन्दुस्तानी कमेटी को सहयोग देना और सम्मेलन की प्रतिष्ठा को गिराने वाला तथा हिन्दी के भविष्य के लिये घातक मानते हैं। वे इसमें सामञ्जस्य नहीं देखते कि एक ओर तो सम्मेलन हिन्दुस्तानी के विरोध के लिये एक कमेटी कायम करे और दूसरी ओर विकृत हिन्दुस्तानी को जन्म देकर पालन पोषण करनेवाली हिन्दुस्तानी कमेटी से सहयोग करे। हो सकता है कि इससे सम्मेलन को कुछ द्रव्य प्राप्त हो जाय किन्तु यदि उससे सिद्धान्त की रक्षा न होती हो तो उस द्रव्य का मोह छोड़ना ही श्रेयस्कर है। किन्तु सम्मेलन के मन्त्री पण्डित छविनाथ पांडे जी इसे हिन्दुस्तानी का सहयोग नहीं मानते। शायद उनका कहना है कि ऐसी पुस्तकें संग्रहात्मक होंगी, उनमें हिन्दी के लेखकों के लेखों का संग्रह होगा और कुछ पाठ हिन्दुस्तानी भाषा के भी होंगे। शायद सम्मेलन इस पर ध्यान रखेगा कि हिन्दुस्तानी की भाषा सरल हो, उर्दूफारसी प्रधान जैसी हिन्दुस्तानी की आलोचना हो रही है वैसी न हो। अच्छा हो मन्त्री जी हिन्दी संसार के समक्ष इस विषयको और स्पष्ट और विशद रूप से रख दें जिससे गलत फहमी होने का अन्देशा न रहे।

त्रावनकोर में राष्ट्रभाषा--मद्रास प्रान्त में त्रावनकोर एक बड़ी रियासत है, वहां राष्ट्रभाषा हिन्दी का बहुत अधिक प्रचार हो रहा है। अभी त्रावणकोर की राजधानी त्रिवेन्द्रम में वहाँ के हिन्दी के प्रमुख विद्वान साहित्यरत्न श्री वासुदेव पिल्लई को नागरिकों की ओर से एक मानपत्र दिया गया था, उसमें बतलाया गया कि त्रावणकोर में हिन्दी का संदेश घर-घर पहुँचाया जा रहा है। विशेष कर राजधानी त्रिवेन्द्रम में इसमें खासी सफलता मिली है। वहाँ नगर के हर एक भाग में हिन्दी के स्कूल खोले गये हैं। इस तरह त्रिवेन्द्रम में हिन्दी का पूर्ण रूप से प्रचार हो गया है। वहाँ वालों का मत है कि भारत की राष्ट्रभाषा होने के लिये हिन्दी विशेष रूप से उपयुक्त है। उस सभा के सभापति नगर के मेयर श्री सी० माधवन जी थे।

आपने अपने भाषण में जनता से अपील की कि हिन्दी का अच्छी तरह प्रचार किया जाय क्योंकि इसे देशकी आम भाषा बनाना उचित है। यदि भारत को एक संयुक्त राष्ट्र बनाना है तो उसके लिये एक आम भाषा भी होनी चाहिये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये हिन्दी सब से अच्छी भाषा है। आपने सूचित किया कि त्रावणकोर में लोग अधिक हिन्दी सीख रहे हैं। राज्य के स्कूलों में हिन्दी का अनिवार्य रूप से प्रचार करना चाहिये। त्रावणकोर का यह प्रयत्न अन्य अहिन्दी भाषाभाषी प्रान्तों और रियासतों के लिये अनुकरणीय है।

मुसलमानों की असहनशीलता——काश्मीर के मुसलमान चाहते हैं कि काश्मीर राज्य में केवल उर्दू का ही प्रचार हो, यही नहीं अल्पमत हिन्दुओं को वे किसी प्रकार की भी सुविधा देना नहीं चाहते। वहाँ की सरकारने उर्दू का माध्यम तो स्वीकार कर लिया है। परन्तु यह सुविधा दे दी है कि उस उर्दू को कोई चाहे फ़ारसी अक्षरों द्वारा सीखे और चाहे तो नागरी अक्षरों द्वारा सीखे। यहां के मुसलमानों को यह भी सह्य नहीं है। काश्मीर असेम्बली में मुसलमानों ने यह दबाव सरकार पर डाला कि देवनागरी वाली सुविधा वह वापस ले ले। इसे सरकारने स्वीकार नहीं किया। उसने कहा कि उर्दू तो है ही केवल उसे दो लिपियों में लिखने की सुविधा दी गयी है। नेशनल कानफरेंस पार्टी के नेता मियाँ अल्लाहयार खां ने सरकार के इस निश्चय का विरोध किया और सभा से उठ कर चले गये। उनके साथ अन्य १५ निर्वाचित मुसलिम सदस्यों ने भी उन्हीं का अनुकरण किया। यह है हमारे भाइयों की राष्ट्रीयता और सहिष्णुता। विहार-मध्यप्रदेश आदि में अल्पसंख्यक मुसलमानों को उर्दू सीखने की सब तरह की सुविधा दी जाय और उसका कोई हिन्दू विरोध न करे; किन्तु जहाँ हिन्दू अल्पसंख्या में हैं वहाँ वे भाषा जाने दीजिये अपने अक्षर भी न सीखने पावें यह विचित्र भावों का नमूना है। उधर दक्षिण में हैदराबाद रियासत में मुसलमानों की संख्या फी सैकड़ा ५ होने पर भी उर्दू का ही प्रचार किया जाय और बहुमत की प्रजा पर भी वह जबरदस्ती लादी जाय!

राष्ट्रभाषा का स्वरूप——वीर अर्जुन में पण्डित रामनाथ शर्मा ने इस विषय पर एक लेख लिखा है। राष्ट्रभाषा के स्वरूप के सम्बन्ध में ग्वालियर राज्य के मुरार हिन्दी साहित्य सम्मेलन में एक प्रस्ताव पास हुआ

है। वह यों है "राष्ट्रभाषा भारत के लिये वही हो सकती है जो भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रान्तों की प्रान्तीय भाषाओं से निकटतम हो। बङ्गाली, गुजराती, मराठी, तामिल, मलयालम इत्यादि भाषाओं में अधिकतर संस्कृत शब्दों का प्रयोग होता है। गुरुमुखी भाषा भी हिन्दी ही का स्वरूप है। अतः राष्ट्रभाषा वही हो सकती है, जिसका सम्बन्ध संस्कृत से है। यह भाषा शुद्ध हिन्दी भाषा ही है।" पण्डित रामनाथ जी का कहना है कि हिन्दी के अन्तर्गत शाखाभेद में हिन्दी-गुजराती झिल्ली आदि हैं, जिनके बोलने वालों की संख्या १२ करोड़ है। बाह्यभेद में पश्चिमी भेद की सिंधी और पञ्जाबी, दक्षिणी भेद में मराठी-कोंकणी, पूर्वी भेद में उड़िया, बिहारी, बङ्गाली और आसामी हैं। इन सबों के बोलने वाले १३ करोड़ हैं। तामिल मलयालम-कनाड़ी और तेलगू भेद में ७ करोड़ हैं। मलयालय भाषा के साहित्यका परिचय प्राप्त करने से मालूम पड़ेगा कि इसमें बँगला से भी अधिक संस्कृत शब्दों का प्रयोग होता है। श्रीयुक्त रानडेने अपनी इंगलिश-मराठी डिक्शनरी में पारिभाषिक शब्दों के सम्बन्ध में लिखा है कि "विभिन्न विज्ञानों, गणित, ज्योतिष, भौतिक विज्ञान, रसायनशास्त्र, पशु विज्ञान, वनस्पतिविज्ञान, मनोविज्ञान, शारीरिकविज्ञान तथा शिल्प और कला आदि के लिये अंग्रेजी के यथार्थवादी शब्दों को स्थिर करते हुए हिन्दुस्थान की विभिन्न भाषाओं के लिये संस्कृत की सेवा की अत्यन्त आवश्यकता है। संस्कृतमें प्रत्यय और विभक्ति जोड़कर नये-नये छोटे शब्द सुगमता से बनाये जा सकते हैं। संस्कृत के शब्द बड़े लचीले होते हैं और उनमें थोड़े से परिवर्तन से बहुत सा भण्डार बढ़ाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त संस्कृत में विज्ञान और मनोविज्ञान सम्बन्धी बहुत से शब्द पहले से ही हैं उच्च साहित्य के लिये जिस सौष्ठवकी आवश्यकता होती है वह संस्कृत भाषा में पूर्ण रूप से है। इन सब बातों पर विचार करने से मालूम पड़ेगा कि राष्ट्रभाषा वही हो सकती है, जिसका सम्बन्ध प्रान्तीय भाषाओं की जननी संस्कृत से हो। ऐसी भाषा का स्वागत मद्रास और बम्बई प्रान्त में भी उसी तरह होगा जैसा बंगाल महाराष्ट्र में होना स्वाभाविक है। क्रिश्चियन मिश्नरियों ने बाइबिल के प्रचार के लिये ऐसी ही हिन्दी का उपयोग किया है। अतः न्याय और विवेक से यदि राष्ट्रभाषा के स्वरूप निश्चय करने में काम लिया जावे तो यह विश्वास है कि विशुद्ध हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है।

निज़ाम सरकारका अन्याय—हैदराबाद में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की रुकावट के सम्बन्ध में सहयोगी भारत ने निम्नलिखित सम्मति दी है:—

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अपना अगला अधिवेशन हैदराबाह दक्षिण में करने का निश्चय किया था, किन्तु हमें अब ज्ञात हुआ है कि निज़ाम सरकार इसके लिये अनुमति देने को तैयार नहीं है। हैदराबाद राज्य के अधिकारियों को अपने यहाँ साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन होने देने में क्या आपत्ति या आशंका थी यह नहीं बतलाया गया है। हम इतना निस्संकोच रूप से कह सकते हैं कि उनके इस पक्षपात-पूर्ण निर्णय से न केवल विभिन्न प्रान्तों के हिन्दी-भाषा-भाषियों को बल्कि हैदराबाद के बहुसंख्यक लोगों को भी क्षोभ होगा। अपनी लगभग ८५ प्रतिशत हिन्दू जनता से होने वाली आय की एक बड़ी रकम निज़ाम सरकार केवल उर्दू के प्रचार और उन्नति में लगाती आई है। हिन्दुओं की भाषा और संस्कृति की उन्नति की उपेक्षा कर १५ प्रतिशत से भी कम मुसलिम जनता के सांस्कृतिक हितों को अग्रसर करने में ही वह निरत रही है। वर्तमान निर्णय इस अन्याय का एक ज्वलन्त उदाहरण है। हमें विश्वास है कि हिन्दी संसार तथा हैदराबाद के हिन्दू इस अन्याय को मूक बनकर ही न सहन कर लेंगे बल्कि उसके विरुद्ध जल्द अपनी आवाज़ उठावेंगे।

हैदराबाद में हिन्दी का दमन—निज़ाम सरकार ने हैदराबाद में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन करने के सम्बन्ध में जो रुकावट डाली है उस पर सहयोगी "आज" ने निम्नलिखित सम्मति दी है:—

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान मंत्री ने घोषित कर दिया है कि निज़ाम सरकार ने हैदराबाद राज्य में हिन्दी साहित्य सम्मेलन करने की सचमुच मनाही कर दी है। हमें विश्वास नहीं होता था कि निज़ाम सरकार इस प्रकार प्रकाश्य रूप से हिन्दू संस्कृति का विरोध करेगी। अतः इस पर टीका करते हुए हमने आशा की थी कि समाचार ग़लत साबित होगा। उस आशा पर पानी फिर गया। हमें अत्यन्त खेद के साथ कहना पड़ता है कि उक्त सरकार ने बहुत ही बुरा उदाहरण भारत के सामने उपस्थित किया है। हैदराबाद भारत का सब से बड़ा देशी राज्य है और उसके नागरिकों में प्रतिशत नब्बे से अधिक हिन्दू हैं। भाषा और संस्कृति के सम्बन्ध में इस प्रकार

की रोक टोक किसी भी सभ्य देश में नहीं की जाती। हैदराबाद में जो किया गया है उसकी प्रति क्रिया यदि अन्य राज्यों में हो तो हमें आश्चर्य न होगा।

समय की सम्मति——हैदराबाद सम्मेलन के संबंध में जौनपुर का सहयोगी "समय" लिखता है—यह जानकर आश्चर्य हुआ। यह स्पष्ट ही है कि निज़ाम सरकार की संकुचित मनोवृत्ति और उसकी साम्प्रदायिक विचार धारा ही इसका मूल कारण है। किसी भाषा और साहित्य को साम्प्रदायिक माप दण्ड से मापना हमारी समझ में नहीं आता। साहित्य तो अनेक संघर्षों, मानवीय चेष्टाओं और विचारों के आदान-प्रदान का संतुलन विकास है। हिन्दी जैसी हिन्दुओं की वैसी ही मुसलमानों की भी भाषा है। जनता के अधिकारों पर अगर इस तरह का कुठाराघात हो तो विरोध करना जनता का कर्तव्य हो जाता है। इस फरमानशाही से एक और भी प्रतिक्रिया हो सकती है। हिन्दू रियासतें भी शायद इससे कुछ सबक लें और इसी प्रकार की नीति अख़्तियार करें।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की पुस्तकों
तथा
'सम्मेलन पत्रिका'
का प्रचार करना प्रत्येक हिन्दी प्रेमी का कर्त्तव्य है।

प्राप्त स्वीकार

[लेखक—श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल संग्रह मन्त्री, तथा
श्री रामनिधि शर्मा बी० ए०]

१-—विभूतिमती-ब्रजभाषा——श्री दानविहारीलाल शर्मा ने कवि सम्राट अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' जी द्वारा लिखित प्रस्तुत पुस्तक का प्रकाशन कर हिन्दी जनता को एक सामयिक चीज़ प्रदान की है। खड़ी बोली और ब्रजभाषा की उपयोगिता के सम्बन्ध में जो एक हल्का आन्दोलन हिन्दी संसार में चल रहा है यह पुस्तक उसी का परिणाम है। ब्रजभाषा पर किये गये आक्षेपों का लेखक ने प्रामाणिक ढङ्ग से निराकरण करने की चेष्टा की है। लेखन शैली गम्भीर एवं गवेषणापूर्ण है। कटुता कहीं छू तक नहीं गयी है। खड़ी बोली में प्रियप्रवास जैसे महाकाव्य के रचयिता हरिऔध जी द्वारा ब्रजभाषा के वैभव का समर्थन करना निस्सन्देह उसके लिये महान् गौरव की बात है। पुस्तक पढ़ने योग्य है। पृष्ठ सं० ६६, मूल्य ६ आने। प्रकाशक—ब्रजसाहित्य ग्रंथमाला वृन्दावन, यू० पी०।

२—'भ्रमर-गीत'—नन्ददासजी ब्रजभाषा के चोटी के कवियों में हैं। 'भ्रमर गीत' आपकी सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसमें सरस सगुणवाद का समर्थन करके शुष्क निर्गुणवाद का खण्डन किया गया है। विधुरा गोपियों के मुख से प्रेम प्लावित तर्क पूर्ण बातें सुनकर ऊधो का ज्ञान गर्व दूर हो जाता है। उनकी दशा ही कुछ और हो जाती है।

"देखत इनको प्रेम नेम ऊधो को भाज्यो।
तिमिरभाव आवेस बहुत अपने मन लाज्यो॥
मन में कह रज पाँय कै लै माथे निज धारि।
हौं तो कृत २ है रह्यौं त्रिभुवन आनन्द वारि॥

इसी प्रकार के बहुत से अन्य मार्मिक पदों को पढ़ने से भाषा भी सादगी के साथ २ भाव की गम्भीरता का अनूठा आनन्द मिलता है। केवल ७५ छन्दों की इस पुस्तिका का व्यापक महत्व ही इसके गुणों का द्योतक है। सम्पादक श्री दानविहारीलाल शर्मा ब्रज-साहित्य ग्रंथ माला वृन्दावन हैं। पृष्ठ संख्या २० तथा मूल्य =) है।

पूर्णिमा——बम्बई हिन्दी विद्यापीठ ने अहिन्दी शालाओं की माध्यमिक

तथा हिन्दी शालाओं की उत्तर-प्राथमिक कक्षाओं के लिये कविताओं का यह संग्रह प्रकाशित किया है। कवितायें राष्ट्रीय सामयिक तथा शिक्षाप्रद हैं। पद्यों का क्रम सरल से कठिन की ओर रखा गया है, परिशिष्टभाग में शब्दार्थ एवं भावार्थ भी दे दिया है, जिससे पुस्तक बालकों के लिये और उपयोगी हो जाती है। ऐसे ही संग्रह बच्चों की भावनाओं को जागृत तथा उन्नत करने में सहायक हो सकते हैं। प्रकाशकों को इसका अनुकरण करना चाहिये। पृ० सं० ३६ मू० ४ आने।

गल्पहार——प्रस्तुत पुस्तक भी बम्बई हिन्दी विद्यापीठ ने बालकों ही के लिये प्रकाशित की है। इसमें ७ कहानियों का संग्रह है। साहित्याकाश के सूर्य श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'काबुलीवाला' शीर्षक कहानी भी इसमें सम्मिलित है। प्रेमचन्द, सुदर्शन श्रीराम शर्मा आदि श्रेष्ठ कहानी लेखकों की कृतियां भी इसमें सन्निहित हैं। संग्रह बालकों के लिए सर्वथा उपयोगी है। पृ० सं० ७७ मू० ६ आने।

कलरव——प्रस्तुत पुस्तक श्रीनिरंकारदेव सेवक की आकांक्षा, बचपन के स्वप्न, मन के राजा, भिखारिन, दीपक, मांझी, आंधी, बरसात, ग्राम्य-जीवन आदि १६ कविताओं का संग्रह है! कवितायें सभी सुन्दर, सरस तथा भावपूर्ण हैं। कवि की अपनी अनुभूति को ज्यों की त्यों प्रकट करने की चेष्टा सफलता की ओर अग्रसर हुई है। शब्दों के जाल में भावों को ढूँढ़ना नहीं पड़ता। शैली सरल, सीधी और आकर्षक है। पृष्ठ-संख्या १०४ मू० छ आने प्रका० हिन्दी-प्रचारिणी सभा बरेली कालिज, बरेली।

स्वस्तिका—यह पुस्तक भी श्री निरंकार देवजी की ही कविताओं का संग्रह है। कवितायें, छन्द, भाव और भाषा सभी दृष्टियों से सुन्दर हुई हैं। 'स्वप्न का संसार' 'अशान्ति' आदि कविताओं में कवि के भावुक हृदय की वेदना और निराशा की छाया स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। अनुभवजन्य भावों के विकास की प्रधानता से कोरी कल्पनाएँ दबी सी प्रतीत होती हैं। लेखक की इस यथार्थवादिता का हम हृदय से स्वागत करते हैं। पृष्ठ-संख्या १२०, मू० दस आने। प्र० हिन्दी-प्रचारिणी सभा बरेली कालिज, बरेली।

पवित्र पर्व—प्रस्तुत पुस्तक कवि-सम्राट् श्री अयोध्यासिंहजी उपाध्याय 'हरिऔध' की विभिन्न पर्वों, त्योहारों तथा उत्सवों पर लिखी हुई अनूठी कविताओं का संग्रह है। कवितायें मौलिक, सरस तथा कवि की सर्वतोमुखी

प्रतिभा की द्योतक हैं। पुस्तक के प्रारम्भ में 'पर्व और उत्सव' शीर्षक गद्य-भाग बहुत ही महत्व का है। लेखक ने पर्वों की महिमा उनकी उपयोगिता एवं आवश्यकता का वर्णन तथा उनके मर्मों का उद्घाटन किया है। पुस्तक प्रत्येक हिन्दू तथा हिन्दी प्रेमी के पढ़ने योग्य है। पृ० सं० ९४ मू० १० आने, प्रका० रामनारायणलाल कटरा, प्रयाग।

आदर्श नरेश—प्रस्तुत पुस्तक खेतड़ी (राजपूताना—जयपुर से ९० मील दूर) के स्वर्गीय महाराज श्रीमान् अजीतसिंहजी बहादुर का सचित्र विस्तृत जीवन चरित्र है। झाबरमल्लजी शर्मा कई वर्षों के अनवरत परिश्रम से लगभग ४०० पृष्ठों की इस पुस्तक को यह रूप दे सके हैं। पुस्तक ऐतिहासिक ढंग से प्रत्येक पहलू पर ध्यान रखते हुई बड़ी छानबीन के साथ लिखी गई है। स्वामी विवेकानन्द की यह सम्मति 'भारतवर्ष की उन्नति के लिए जो थोड़ा-बहुत मैंने किया है, वह न होता यदि राजाजी मुझे न मिलते' स्व० श्रीमान् अजीतसिंह जी के आदर्श जीवन का पुष्ट प्रमाण है। राजा जी का अपनी भाषा, साहित्य, संस्कृति तथा देश के प्रति जो उत्कट प्रेम था वह प्रत्येक देशी राजाओं के लिए अनुकरणीय है। प्रकाशक—शेखावटी हिस्टारिकल रिसर्च आफिस, जसरापुर-खेतड़ी (राजपूताना। मूल्य २॥)

मनोविज्ञानम्—हिन्दीवालों की साधारण समझ यह है कि मनोविज्ञान का विषय भारत के लिये नवीन है। इसके लेखक वैद्यरत्न पण्डित ब्रजविहारी चतुर्वेदी जी विहार प्रान्त के एक सुप्रसिद्ध प्रमुख वैद्य और अध्ययनशील तथा चिन्ताशील विद्वान हैं। आपने संस्कृत में यह पुस्तक लिखकर दिखलाया है कि मनआत्मा-शरीर और उनके स्वरूप, व्यवहार आदि कैसे हैं। मानसिक विकारों के द्वारा किस प्रकार रोगोत्पत्ति होती है। पुस्तक विद्वतापूर्ण और खोज के साथ लिखी गयी है। ग्रन्थ कर्ता महोदय से भिखना पहाड़ी, पटना के पते पर पुस्तक मिलती है।

करुण तरंगिणी—पण्डित गांगेयनरोत्तम शास्त्री जी की ३९ कविताओं का इसमें संग्रह है। नामके अनुसार कविताओंमें करुणा रसओत-प्रोत है। कविताएं सरल-भावपूर्ण और सुन्दर शब्द विन्याससे पूर्ण हैं। बीच बीचमें चित्र देकर कविता के भाव और भी स्पष्ट कर दिये गये हैं। कुछ कविता संगीत के ढंग की है। आरम्भ का चित्र बहुत भावमय है। उसमें

कविता कामिनीके आँसुओंसे एक तरङ्गिणी-नदी बन कर बहती दिखायी गयी है। इस सफलता के लिये शास्त्री जी को बधाई है। दाम सजिल्द का एक रुपया। पता गांगेयभवन २८० चितरंजन एविन्यू कलकत्ता।

चन्द्रप्रभा—पुस्तक मैथिली बोली में है। सुरमनगरी के राजा धर्मध्वज की कुमारी चन्द्रप्रभा का कथानक इसमें दिया गया है। लेखक स्वर्गीय श्री कृष्णठाकुरजी और प्रकाशक पं० रघुनाथप्रसाद मिश्र पुरोहित साहित्य-मनीषी मैथिल बन्धु कार्यालय अजमेर। मूल्य ≡) कथानक रोचक है

हिन्दीमैथिलीशिक्षक—हिन्दी के द्वारा मैथिलीभाषा सीखने के लिये यह पुस्तक लिखी गयी है। लेखक पं० लक्ष्मीपति सिंह जी बी० ए० तथा भूमिका लेखक पण्डित अमरनाथ जी झा एम० ए० और प्रकाशक पण्डित रघुनाथप्रसाद मिश्र मैथिल बन्धु कार्यालय अजमेर हैं। मूल्य ॥।) इसके द्वारा भाषा के साथ व्याकरण का भी बोध होता जाता है। पुस्तक काम की है।

भारती—बम्बई विद्यापीठने शिक्षा के लिये यह संग्रह प्रकाशित किया है। राष्ट्रभाषा की शिक्षा के साथ ही ऐसे पाठ पढ़ाये जायँ जो देशभक्ति, नवजागरणका संदेश, ऐतिहासिक ज्ञान, देशके अमरविभूतिसेवक आदि का परिचय दे सकें। कविता पाठ भी उच्चभाव से प्रेरित दिये गये हैं। चुनाव अच्छा हुआ है। दाम ।) श्रीयुक्त भानुकुमार जी जैन मन्त्री बम्बई हिन्दी विद्यापीठ हीराबाग बम्बई से प्राप्त।

स्वागताध्यक्ष का भाषण—अभी दिल्ली में हिन्दीपत्रकार सम्मेलन हुआ था। उसके स्वागताध्यक्ष प्रोफेसर इन्द्रवाचस्पतिजी का यह भाषण है। आजकल पत्रों और सम्पादकों के सम्बन्ध में जो जटिल समस्याएं उपस्थित हैं, इसमें उनपर प्रकाश डाला गया है।

सभापति का भाषण—दिल्ली में जो पत्रकार सम्मेलन हुआ था उसके सभापति विश्वमित्र सम्पादक बाबू मूलचन्द जी अग्रवाल हुए थे। यह उन्हीं का भाषण है। उपस्थित समस्याओं पर खरी खरी बातें कही गयी हैं।

पुस्तक भण्डार की पुस्तकें—विहार प्रान्त में सन्थाली और मुण्डा जाति की भाषा को लेकर एक समस्या खड़ी हुई है। पादरी लोग उन्हें

रोमनलिपि के द्वारा शिक्षा देने का उद्योग कर रहे हैं। किन्तु वहाँ के हिन्दी भाषी लोग प्रयत्न कर रहे हैं कि नागरी अक्षरोंके द्वारा उन्हें उनकी भाषा की शिक्षा दी जाय। जिससे राष्ट्रभाषा से भी उनका परिचय होता रहे। उन्हें राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीयतासे अलग रख जातिविच्छेद होने देना उचित नहीं है। इस दृष्टि से यह प्रयत्न बहुत स्तुत्य है। अतएव लहरिया सराय पुस्तक भण्डार का यह प्रकाशन महत्व पूर्ण है। निम्न लिखित पुस्तकें प्राप्त हुई हैं --(१) मुण्डा जदुर दुरङ्ग कविता की पुस्तक है दाम दो पैसा (३) सन्थाली पहिल पुथी--सन्थाली भाषाकी पहली पुस्तक है दाम तीनआना (४) उरांव वेञ्जा डण्डी विवाह सम्बन्धी गान पुस्तक है दाम दो पैसा (५) उरांव बेञ्जा डण्डी यह भी उरांव संगीत की पुस्तक है दाम एक आना (६) उरांवकरम डण्डी यह भी उरांव संगीत की पुस्तक है दाम -) उरांव करमण्डी दाम दो पैसा।

कृषि प्रवेशिका--प्रस्तुत पुस्तक श्री पं० शीतलाप्रसाद जी तिवारी 'विशारद' ने प्रारम्भिक परीक्षाओं के विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए लिखा है। यह पुस्तक ४३ अध्यायों में विभक्त है। पौदों की जड़ पत्ती, तना, फूल; बीज उसके रखने फैलाने तथा बोने के नियम, भूमि की किस्में तथा उनकी परीक्षा, हलों के प्रकार तथा विभिन्न नाजों की बुवाई और पैदावार के सम्बन्ध में विस्तृत रूप से लिखा गया है। पुस्तक के पढ़ने से कृषि सम्बन्धी वर्तमान उन्नत प्रणाली का समुचित ज्ञान प्राप्त हो सकता है। लेखक महोदय ने जो कृषि विज्ञान के विशेषज्ञ हैं विषय को बहुत ही सरल और रोचक बना दिया है। विद्यार्थियों को कृषि विषय का आवश्यक ज्ञान प्राप्त कराने के लिये पुस्तक अत्यन्त उपयुक्त है। इसीलिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने स्वयं इस पुस्तक को प्रकाशित किया है। पृष्ठ सं० २१३, मूल्य १)।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
के
हिन्दी विश्वविद्यालय की
संवत् १९९७ (सन् १९४०) की परीक्षाओं का परीक्षाफल
उत्तमा परीक्षा (साहित्य रत्न) विषय-हिन्दी साहित्य

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३	श्री ओंप्रकाश सिंह	आगरा	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १७०
७	श्रीमती तारा वाजपेयी	”	” १८६
१५	श्रीधर्मनारायण शर्मा 'धर्म'	”	” २०३
१७	” धर्मवीर प्रेमी	”	” २०७
१८	” हरचरण शर्मा	”	द्वितीय श्रेणी ४३९
१९	” अम्बाप्रसाद सुमन	”	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १९५
२०	” चन्द्रप्रकाश	”	” २१२ [वि.यो.सातवांप्र०पत्र]
२४	” ब्रजकिशोर शर्मा 'ब्रजेश'	”	द्वितीय श्रेणी ४८६ [वि.यो.सातवांप्र०पत्र]
२६	” रामकरण शर्मा	”	द्वितीय श्रेणी ४४८
२८	श्रीमती अनमोल कुमारी भाटिया	”	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १७४
३१	श्री सत्यदेव वेदी प्रमोद	”	द्वितीय श्रेणी ४४६
३३	” मुरारीलाल झा	”	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) २१४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३७	श्री उमादत्त नैथाणी	आगरा	द्वितीय श्रेणी ३६१
४०	” बालजीतसिंह	”	” ४१७
४१	” धीरजलाल चतुर्वेदी	”	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १९९
४२	” गोपालशंकर नागर ‘माधव’	”	द्वितीय श्रेणी ३९९
४६	” विदुरदत्त चतुर्वेद	”	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १८७
४८	” रवीन्द्रसिंह	”	द्वितीय श्रेणी ३६५
५०	” ओ३म्प्रकाश सक्सेना ‘प्रकाश’	”	” ४६९
५१	” दामोदरदास तिवारी	”	उत्तीर्ण (प्र०खंड)२३३ [वि०यो०प्रथमप्र०पत्र]
५२	” फूलचन्द्र कुलश्रेष्ठ	”	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १९८
५४	” श्रीधर शर्मा	”	” १६३
५५	” बद्रीप्रसाद श्रीवास्तव	”	” १६४
५८	” गणेशप्रसाद शर्मा	”	द्वितीय श्रेणी ४९०
५९	” महेन्द्रसिंह	”	” ४०१
६०	” श्यामबिहारी कुलश्रेष्ठ	”	” ३९०
६२	” अक्षयचन्द्र शर्मा	”	” ५३१ [वि०यो० प्रश्नपत्र ६]
६३	” उमाशंकर शर्मा	”	द्वितीय श्रेणी ४०८
६५	” सुधीन्द्रनाथ	”	” ३८७

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६७	श्री छोटेलाल गोलश	आगरा	द्वितीय श्रेणी ३६७
६८	,, रामचन्द्र व्यास	,,	,, ४५४
७०	,, शुकदेव शर्मा	,,	,, ३८४
७१	,, कुं० तेजपाल सिंह 'शिष्य'	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १६७
७२	,, गयाप्रसाद गुप्त	,,	द्वितीय श्रेणी ४०१
७४	,, सुरेशचन्द्र शुक्ल	,,	,, ३६७
७६	श्रीमती सुलभा देवी	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १७४
७७	श्री मायाशंकर वर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ४५०
८१	,, चन्द्रसिंह झाला	इन्दौर	,, १६२
८५	,, दुर्गाशंकर पांडेय	,,	द्वितीय श्रेणी ४०४
८८	,, विपिनबिहारी वाजपेयी	,,	,, ४१३
८९	,, अयोध्यानाथ सान्याल	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १८६
९१	,, चन्द्रमोहननाथ दर	,,	,, १७३
९२	,, बैजनाथप्रसाद दुबे	,,	द्वितीय श्रेणी ३९५
९३	,, गुलाबचन्द्र जैन	,,	,, ४०५
९८	,, रतनलाल शाह	,,	,, ४५२
९९	,, बद्रीनारायण कृष्णदास 'मेहता'	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) २११

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१००	श्री बाबूलाल टेलर 'निर्वान्या'	इन्दौर	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १९६
१०१	" रामनाथ शुक्ल	"	द्वितीय श्रेणी ३१२
१०२	" छज्जूलाल चवरे	"	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १७८
१०३	' मांगीलाल जैन	"	द्वितीय श्रेणी ५२७
१०४	" रामचरण गर्ग	"	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १९५
१०५	" जयकिशन महाजन	"	द्वितीय श्रेणी ४३१
११२	" दुर्गाप्रसाद दास	कलकत्ता	" ३७०
११४	" दलश्रृंगार पाण्डेय	"	" ३६३
११६	" लक्ष्मीशंकर मिश्र	"	" ३६५
११९	" शिवचन्द्र तिवारी	"	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १६७
१२२	श्रीमती मनोरमादेवी दीक्षित	"	" १६६
१२४	श्री रामविलाससिंह	"	द्वितीय श्रेणी ३७६
१२६	" अम्बिकालाल श्रीवास्तव	कानपुर (एस० डी० कालेज)	" ३८८
१२७	" चन्द्रकान्त मिश्र	"	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) २४७
१२८	" ब्रह्मदत्त तिवारी	"	द्वितीय श्रेणी ४७७
१२९	" ब्रजकिशोर द्विवेदी 'किशोर'	"	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १८५
१३१	" हरिशरण	"	द्वितीय श्रेणी ५१९

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१३२	श्री रामचन्द्र विद्यार्थी	कानपुर (एस० डी० काले०)	द्वितीय श्रेणी ४७३
१३५	" वीरहरि त्रिवेदी	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १७९
१४०	" लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी	"	द्वितीय श्रेणी ३९४
१४१	" होरीलाल वर्मा	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १७७
१४५	" यमुनाप्रसाद उपाध्याय	"	" १७४
१४६	" रामबाबू मिश्र	"	" १६३
१४७	" टीकाराम वेलवाल	"	द्वितीय श्रेणी ३९८
१४८	" मथुरादत्त पंत	"	" ४३०
१४९	" चन्द्रपाल सिंह	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १९९
१५१	" विन्ध्येश्वरी प्रसाद पाण्डेय	"	" १८८
१५३	" विश्वप्रकाश दीक्षित	"	द्वितीय श्रेणी ४९५
१५४	" शिवशङ्कर मिश्र	"	उत्तीर्ण(प्र०खंड)२४२ [वि.यो. पांचवांप्र०पत्र]
१५६	" सरदार इन्द्रसिंह भूकम्प	"	द्वितीय श्रेणी ४२९
१५८	" जगदीश नारायण त्रिपाठी	"	" ४०५
१५९	" प्रहलाददास कांकानी	"	प्रथम श्रेणी ५४५ [वि०यो०छठवांप्र०पत्र]
१६१	" श्यामसुन्दर पाण्डेय	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) २००
१६२	" शिवस्वरूप बाजपेयी	"	" १७३

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६३	श्री प्रभुदयाल शुक्ल	कानपुर (एस० डी० कालेज)	द्वितीय श्रेणी ५०४
१६४	” रामस्वरूप शर्मा 'मयंक'	”	” ४०४
१६६	” प्रेमनारायण शुक्ल	”	प्रथम श्रेणी ५७५ [विशेष यो० निबन्ध]
१६९	” विजयबहादुर अग्निहोत्री	”	द्वितीय श्रेणी ५२४
१७१	” श्यामसुन्दर वाजपेयी	”	प्रथम श्रेणी ५४७
१७२	श्रीमती विद्या श्रीवास्तव	”	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १९९
१७४	श्री बलदेव तिवारी	काशी (ट्रेनिंग कालेज)	द्वितीय श्रेणी ३९०
१७५	” सकलदीप सिंह	”	” ४२१
१७६	” राजाराम तिवारी	”	” ४०१
१७८	” सिद्धनाथ तिवारी	”	” ४७५
१७९	” रामप्रवेश राय	”	” ४३५
१८३	” उग्रसेन सिंह	”	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) २०३
१८४	” छबिनाथ त्रिपाठी	”	द्वितीय श्रेणी ४५५
१८६	” पारसनाथ शर्मा	”	” ३८५
१८७	” शिवशरण पाण्डेय	”	” ४५८
१८८	” द्वारिका त्रिपाठी	”	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १७७
१९०	कुंवर कृष्णकुमार सिंह	”	द्वितीय श्रेणी ५०१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१९२	श्री हरीशंकर	काशी (ट्रेनिंग कालेज)	द्वितीय श्रेणी ४७४ [वि० यो० निबन्ध]
१९३	,, रामनरेश सिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ४०५
१९४	,, ठाकुरदयालु पाण्डेय	,,	,, ३८३
१९५	,, जगन्नाथ चौबे	,,	,, ३९५
१९६	,, रामाधार ठाकुर	,,	,, ३८४
१९८	,, नवरत्न तिवारी	,,	,, ३८९
१९९	,, श्रवणकुमार	,,	,, ४१५
२००	,, जगतनारायण सिंह	,,	,, ४५६ [वि०यो० मौखिक]
२०१	,, बचालाल सिंह	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १६५
२०३	,, परमहंस पाठक	,,	द्वितीय श्रेणी ४४४
२०४	,, लल्लनप्रसाद द्विवेदी	,,	,, ४२४
२०७	,, रामदेव सिंह	,,	,, ४०१
२०९	,, गौरीशंकर वाजपेयी	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १६८
२१०	,, सीताराम सिंह 'ज्योतिर्मय'	,,	द्वितीय श्रेणी ३७९
२१२	,, शिवनाथ	,,	,, ३९५
२१४	,, छेदीराय	,,	,, ४३५
२१६	,, हरिप्रसाद	,,	,, ४५६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
२१८	श्री उमादत्त मिश्र	काशी (ट्रे० का०)	द्वितीय श्रेणी ४३८
२२०	,, रविनन्दन सिंह	,,	,, ४५४
२२२	,, भगवतीशरण सिंह	,,	,, ४७५
२२३	,, वीरेन्द्रकुमार सिंह	,,	,, ४४९
२२४	,, ब्रजमोहनदास अग्रवाल	,,	,, ३९२
२२५	,, यमुनाशंकर चौबे	,,	,, ४६१
२२६	,, रघुनाथ सिंह	,,	,, ३६८
२२७	,, देवतादीन पांडेय	,,	,, ३७९
२२८	,, मंगलाप्रसाद पाण्डेय	,,	,, ४२०
२२९	,, जयकरन पाण्डेय	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १६०
२३०	,, रामसूरत मणि त्रिपाठी	,,	द्वितीय श्रेणी ३७२
२३१	,, सच्चितानन्द मिश्र	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १६२
२३२	,, राधाकृष्ण	,,	,, १६०
२३३	,, तुलसीप्रसाद	,,	,, १७४
२३५	,, मनसिज शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ३७८
२३६	,, केशवचन्द्र मिश्र	,,	,, ४२५
२३७	,, नृपसिंह मिश्र	,,	उत्तीर्ण प्रथम (खण्ड) २२०

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
२३८	श्री देवनारायण द्विवेदी	काशी (ट्रे० का०)	द्वितीय श्रेणी ३९५
२३९	" सत्यनारायण माहेश्वरी	"	" ४५१
२४१	" बालचन्द्र शर्मा	"	" ४५८
२४२	" शिवशंकर द्विवेदी	"	" ३८८
२४३	" नारायणप्रसाद शर्मा	"	" ४२९
२४५	" सत्यनारायण हर्ष	"	" ४१५
२५०	" श्रीराम शर्मा	"	" ४७९
२५१	" उमाशंकर शुक्ल	"	" ३८८
२६०	" शिवनन्दनप्रसाद	पटना	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) २६३
२६१	" मैथिलीशरण 'नेहनिधि'	"	" २०१
२६२	" रामकृष्णसिंह 'श्री'	"	द्वितीय श्रेणी ३६२
२६४	" रामवृक्षसिंह 'दिव्य'	"	" ३६८
२६८	श्रीमती सीता अग्रवाल	"	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १९५
२७१	श्री शिवकुमार शर्मा 'सरोज'	"	" १७३
२७५	" अयोध्याप्रसाद	"	" १७६
२७६	" रामचन्द्रप्रसाद अम्बष्ट 'वीणाचन्द्र'	"	" १६६
२८१	" प्रभुदास रामचन्द्र भुपटकर	पूना	द्वितीय श्रेणी ४१४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्तांक
२८३	श्री मधुसूदन सदाशिव बर्वे	पूना	द्वितीय श्रेणी ३६६
२८५	” भीमाशंकर गुरु	”	” ४२६
२८६	” सभाजीतसिंह	प्रयाग	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १८६
२८७	” रामजी उपाध्याय	”	द्वितीय श्रेणी ४८२
२८८	” वंशीधर पंत	”	” ३८७
२९६	” संकटाप्रसाद उपाध्याय	”	” ४५८
२९८	” सुमन वात्स्यायन	”	” ४६१
२९९	” ‘वीर विभु’ भैरवदीन मिश्र ‘मार्तण्ड’	”	” ३९४
३००	” जनार्दन स्वरूप अग्रवाल	”	” ५१३
३०३	” भगवतीप्रसाद भट्ट	”	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १६३
३०४	” छत्रधारी मिश्र	”	द्वितीय श्रेणी ३९८
३०५	” ज्वालाप्रसाद श्रीवास्तव	”	” ४१४
३०७	” रामेश्वर राय	”	” ४०१
३०९	” सुबोध अदावाल	”	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) २३३
३१३	” काशीप्रसाद श्रीवास्तव	”	द्वितीय श्रेणी ४०२
३१४	” के० वासुदेवन पिल्ले	”	” ३७१
३१७	” श्रीनाथ मिश्र	”	उत्तीर्ण (प्रथम खंड) १७८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३१८	श्री ओमप्रकाश अग्रवाल	प्रयाग	द्वितीय श्रेणी ४६५
३१९	" रामरक्षा त्रिपाठी	"	" ३८२
३२०	" हरशरण शर्मा	"	" ४५८
३२३	" रामचन्द्र शुक्ल	"	" ३८१
३२४	" सरयूप्रसाद मिश्र	"	" ४१६
३२५	" विश्वनाथ त्रिपाठी	"	" ४२९
३२७	" कृष्णाराम दुबे	"	" ४०७
३२८	श्रीमती लक्ष्मीदेवी	"	" ४०४
३३१	श्री केदारनाथ त्रिपाठी	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १६२
३३३	" श्रीपति नारायण सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४९१
३३५	" श्यामनारायण मिश्र 'श्याम'	"	" ४०५
३३६	" हरिशंकर गौतम 'शकुंत'	"	" ३८९
३३८	" हुकुमचन्द जैन 'सुमन'	"	" ४६१
३३९	" सी० शंकर	"	" ३७९
३४०	" नरोत्तम मालवीय	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १७७
३४३	श्रीमती पुष्पलता कपूर	"	द्वितीय श्रेणी ३८५
३४५	श्री श्रीनन्द पाण्डेय	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १६०

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३४६	श्री देवीप्रसाद पाण्डेय	प्रयाग	द्वितीय श्रेणी ३९२
३४७	" धर्मकिशोर लाल	"	" ३९०
३४८	" शोभनाथ त्रिपाठी	"	" ३९८
३५२	" लक्ष्मीनारायण पाण्डेय	"	" ४३४
३६०	" बद्रीदत्त शास्त्री	"	" ४९३
३६१	" पूजाप्रसाद मिश्र 'तेज'	"	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) १८५
३६३	" महेशचन्द्र	"	" २३१
३६४	" ताराचन्द सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ३९१
३६५	" पद्मानन्द चतुर्वेदी	"	" ४२४
३६६	" गुर्ती सुब्रह्मण्य	"	" ४३६
३६७	" परशुराम तिवारी	"	" ४३६
३६८	" बालेश्वरी तिवारी	"	" ४६३
३७०	" ठाकुर घूरनसिंह चौहान	"	" ४४०
३७१	" मौजीसिंह	"	" ३८७
३७२	" श्रीनारायण मिश्र	"	" ४२७
३७३	" एम० नागेश्वर राव	"	" ३९३
३७४	" शिवकुमार सिंह	"	" ४२४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३९६	श्री बलदेवप्रसाद नोटियाल	लाहौर	द्वितीय श्रेणी ३८४
४०४	" जगन्नाथप्रसाद पाठक	वर्धा	" ३८४
४०५	" गुंडो दासो कंपली	"	" ४२५
४०६	" भगवतीप्रसाद शुक्ल	"	" ४३२

उत्तमा परीक्षा (विज्ञान रत्न) विषय-कृषि-शास्त्र

८०	श्री जनकसिंह वर्मा	आगरा	उत्तीर्ण प्रथम खण्ड १७२
२५६	" रामचन्द्रसिंह राणा	काशी (ट्रे० का०)	" १६९
३८९	" बलवन्त राय पटेल	प्रयाग	द्वितीय श्रेणी ३६७
३९१	" भैरवप्रसाद सिंह 'पथिक'	"	" ३७२
३९३	" काशीप्रसाद	"	" ३८६

उत्तमा परीक्षा (साहित्य रत्न) विषय-राजनीति

२५५	श्री शिवप्रसाद द्विवेदी	काशी(ट्रे० का०)	द्वितीय श्रेणी ३८९
२८०	" के० गोपाल	प्रयाग	"

उत्तमा परीक्षा (आयुर्वेद रत्न) विषय-वैद्यक

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१७३	श्री सेवकराम गुप्त	कानपुर (एस० डी० कालेज)	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) २०७
३८२	,, ज्ञानदत्त मिश्र	प्रयाग	द्वितीय श्रेणी ४९१
३८५	,, भागवतप्रसाद गंगेले	,,	उत्तीर्ण (प्रथम खण्ड) २१०
३८६	,, जाह्नवी शंकर शुक्ल	,,	द्वितीय श्रेणी ४२७
३८७	,, विश्वनाथ दुबे	,,	,, ४२४
३८८	,, लेखराज बौरी	,,	प्रथम श्रेणी ५५७ [वि० यो० प्रश्नपत्र]

उत्तमा परीक्षा (साहित्य रत्न) विषय-इतिहास

४१०	श्री छोटेलाल चौधरी	वर्धा	उत्तीर्ण (प्र०ख०) ११९

मध्यमा (विशारद) परीक्षा

१	श्री गोकुल प्रसाद नेमा	अकोला	तृतीय श्रेणी ३९९
९	श्रीमती राधादेवी गोइनका	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८	श्री ठाकुर फतेहबहादुर सिंह	अजमतगढ़	द्वितीय श्रेणी ४३३
१०	,, गुलाबचन्द्र गोयल	अजमेर	तृतीय श्रेणी ३३७
११	,, सूरजकरण	,,	,, ३६१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५	श्री चन्द्रदेव चन्द्र	अतरौली	प्रथम श्रेणी ४८१ [विशेष यो० संस्कृत]
१७	श्रीमती देवकी भवानीदत्त पन्त	ताड़ी खेत (अल्मोड़ा)	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१८	श्री गोपालसिंह कालाकोटी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२१	,, केशवदत्त पाँडे	,,	द्वितीय श्रेणी ४०१
२२	,, तेजसिंह चौहान	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२३	,, महेशदत्त पांडे	अनूप शहर	द्वितीय श्रेणी ४३५
२५	,, नेतराम हरजाल	अमरावती	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
२६	श्रीमती पुष्पलता	अमृतसर	,,
३६	श्रीमती सन्तोष कुमारी	अलीगढ़	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४०	श्री रणधीर उपाध्याय	अहमदाबाद	द्वितीय श्रेणी ४६०
४१	,, छोटू भाई सुथार	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४२	,, जशभाई पटेल	,,	,,
४३	श्रीमती राजकुमारी मिश्रा 'रमा'	,,	,,
४५	श्री रामचन्द्र पंड्या	,,	,,
४८	,, गिरिजाशंकर चतुर्वेदी	आगरा	तृतीय श्रेणी ३५२
५१	,, इन्द्रसेनगुप्ता 'देवेन्द्र'	,,	,, ३६१
५२	,, दौजीराम हर्सानियां	,,	,, ३५८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५३	श्री मिट्ठनलाल सिंघल	आगरा	द्वितीय श्रेणी ४०७
५६	" गिरीशचन्द्र शर्मा	"	" ४२७
५८	" शीतलप्रसाद गुप्त	"	" ४०१
५९	" छोटेलाल शर्मा वाशिष्ठ	"	" ४३६
६६	" हरिदास गुजराती 'भूषण'	"	तृतीय श्रेणी ३६४
६७	" राधाचरण शर्मा	"	" ३२३
६९	" प्रकाश सक्सेना	"	प्रथम श्रेणी ५६२ [वि०यो०ग०औरवि०]
७२	" राधेश्याम अग्रवाल	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
७३	" रामबाबू गुप्ता	"	"
७७	" रामसिंह शर्मा शुक्ल	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७९	" रामसिंह जैन	"	"
८०	" भजनलाल उपाध्याय	"	"
८१	" कुं० सूरजपालसिंह तोमर	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८५	" रणवीरसिंह फौजदार	"	तृतीय श्रेणी ३९७
८८	" राजनाथ शर्मा	"	द्वितीय श्रेणी ४०२
८९	" कपूरचन्द्र जैन	"	तृतीय श्रेणी ३४०
९१	" रामभरोसेलाल शर्मा 'राय'	"	" ३९१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
९२	श्री राजेश्वरीप्रसाद चतुर्वेदी	आगरा	प्रथम श्रेणी ५०२
९८	,, जयदयाल गुप्त	,,	तृतीय श्रेणी ३८८
९९	,, मगनबिहारीलाल सक्सेना	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१००	,, जगदीशप्रसाद गौड़	,,	,,
१०४	,, रामलगन दुबे	आजमगढ़	द्वितीय श्रेणी ४७५ [वि० यो० संस्कृत]
१०५	,, रमाशंकर पांडे	,,	द्वितीय श्रेणी ४४४ [वि० यो० संस्कृत]
११०	,, नेमीचन्द्र जैन	आरा	द्वितीय श्रेणी ४११
११३	,, व्रजेन्द्रप्रसाद सिंह	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११४	,, गोपालदत्त मिश्र	,,	,,
११५	,, ब्रजनाथ तिवारी	,,	,,
११६	,, हरिनन्दन त्रिपाठी	,,	,,
११९	,, संतप्रसाद	,,	तृतीय श्रेणी ३४०
१२०	,, राममूर्ति सिंह	इटारसी	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१२२	,, दरबारसिंह	इटावा	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१२३	,, भगवतदयाल पांडे	,,	द्वितीय श्रेणी ४५७
१२४	,, विजयबाबू मिश्र	,,	तृतीय श्रेणी ३८२
१२६	,, जोधासिंह तिवारी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१२८	श्री दुर्गाप्रसाद	इटावा	उत्तीर्ण ३०१
१३०	" रामनारायण	इन्दौर	तृतीय श्रेणी ३८८
१३४	" लक्ष्मण दुबे	"	द्वितीय श्रेणी ४१३
१३५	" कैलाशनारायण चौधरी	"	" ४३१
१४३	" भूरालाल गोपाल	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१४४	" मोहनलाल उपाध्याय 'निर्मोही'	"	तृतीय श्रेणी ३१६
१४६	" गिरधारीलाल वर्मा	"	द्वितीय श्रेणी ४०७
१४७	" रघुनाथ सदाशिव भवरासकर	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१४९	श्रीमती सुशीला भार्गव	"	"
१५०	" प्रेमकुमारी देवी कासलीवाल	"	"
१५१	श्री ओङ्कार राम जोशी	"	तृतीय श्रेणी ३१४
१५२	" शिवनारायण नानालाल गुप्त	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१५५	" नारायणदेव आर्य	"	तृतीय श्रेणी ३२१
१५८	" वृजवल्लभ भट्ट	"	द्वितीय श्रेणी ४०८
१५९	श्रीमती कुमारी लीलावती व्यास	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१६०	" रामजीवन त्रिपाठी	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६१	श्री चांदमल चौपड़ा	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६२	श्री लक्ष्मीनारायण अग्रवाल	इन्दौर	तृतीय श्रेणी ३५८
१६३	,, बाबूलाल गुप्ता	,,	,, ३४२
१६४	,, रामनारायण विजय वर्गीय	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१६५	,, शिवनारायण कानूनगो	,,	तृतीय श्रेणी ३६०
१६६	,, गोवर्धनलाल शर्मा	,,	उत्तीर्ण ३१४
१६७	,, राजभाऊ कानूनगो	,,	तृतीय श्रेणी ३६३
१७०	,, ओंकारप्रसाद तिवारी	,,	,, ३९६
१७१	,, जनार्दनसुका खड़के	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१७२	,, विट्ठल माधोराव निकम	,,	,,
१७३	,, नारायण जोशी	,,	,,
१७४	,, हरिहर त्रिवेदी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१७५	,, श्रीकृष्ण जोशी	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१७९	,, गोरखनाथ पांडेय	इम्फाल	तृतीय श्रेणी ३४०
१८०	,, खजानसिंह पच्छिमी	,,	,, ३३९
१८४	,, साधोलाल	इस्लामपुर	,, ३३७
१८५	,, अवधबिहारी पाण्डेय	,,	द्वितीय श्रेणी ४१६
१८७	,, जयनारायण मिश्र	ईशीपुर	तृतीय श्रेणी ३६९

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१८८	श्री रामनारायण लाहिड़ी	ईशीपुर	द्वितीय श्रेणी ४२१
१९१	” राजेन्द्रप्रसाद तिवारी	”	तृतीय श्रेणी ३८२
२००	” वल्लभदास	उदयपुर (सा० वि०)	द्वितीय श्रेणी ४२५
२०२	” विहारीलाल व्यास	”	” ४२४
२०६	” चैनसुख अजमेरा	उदयपुर (हि० वि० पी०)	तृतीय श्रेणी ३५६
२०८	” पुरुषोत्तम मेनारिया	”	उत्तीर्ण ३०३
२०९	” रूपलाल सोमानी	”	तृतीय श्रेणी ३८७
२१३	” हीरालाल नाहर	”	” ३५८
२१४	” शालिगराम गोरवाल	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२२३	” दुर्गाशंकर दुर्गावत	”	”
२२५	” मेवालाल	उरई	तृतीय श्रेणी ३६२
२३३	” शंकरप्रसादसिंह	एकमा	” ३४८
२३४	” बाबूनन्द मिश्र	”	” ३८०
२३५	” फूलदेव ठाकुर	”	उत्तीर्ण ३०१
२३६	” कामताराय	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
२३७	” कपिलदेव ओझा	”	तृतीय श्रेणी ३२७
२३९	” चेतनारायणलाल दास	”	” ३६८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
२४०	श्री शोभानन्द मिश्र	एकमा	तृतीय श्रेणी ३४४
२४७	,, महेन्द्रप्रसाद चतुर्वेदी	कटनी	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२४८	,, जगतनारायण पाण्डेय	कटया	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
२४९	,, कामताप्रसाद सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३९७
२५०	,, जुगलकिशोरप्रसाद सिंह	,,	,, ३८५
२५१	,, कमलाप्रसादराय	,,	,, ३८७
२६३	,, कृष्णदेव झा	कटिहार	,, ३२३
२६४	,, नाथूराम पाण्डेय	कन्नौज	,, ३५७
२६५	,, जगदम्बाप्रसाद श्रीवास्तव	,,	,, ३८९
२६६	,, ओ३म्प्रकाश गुप्त	,,	,, ३४०
२६७	,, श्रीकृष्ण गुप्त	,,	द्वितीय श्रेणी ४५४
२७४	,, पंचानन पाण्डेय	कलकत्ता (तु० सा० वि०)	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२७८	,, राममूर्ति पाण्डेय	,,	,,
२८१	,, रामप्रसाद सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३३६
२९१	,, जगदीश सिंह	,,	,, ३६२
२९३	,, रामसुभग मिश्र	,,	द्वितीय श्रेणी ४७८
२९५	,, जयनाथ पाण्डेय	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
२९८	श्री रामविलास चौबे	कलकत्ता [तु० सा० वि०]	तृतीय श्रेणी ३२६
३०६	" देवनारायण राय शर्मा	"	" ३६७
३०७	" वैकुण्ठनाथराय	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
३०९	" दामोदर तिवारी	"	तृतीय श्रेणी ३६८
३११	" राम अचल मिश्र	"	" ३७३
३१२	" गोपाल दास गुप्त	"	द्वितीय श्रेणी ४६१
३१३	" हितनारायण सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३८१
३१५	" रेवती नन्दन शर्मा	"	" ३३५
३१९	" चावलि सूर्य नारायण मूर्ति	काकिनाडा	अध्याय ३ नि० ७ के अनुसार
३२०	" वेंपराल चिनराम स्वामी	"	"
३२२	" बाबूलाल	कानपुर [स०धर्म०का०]	तृतीय श्रेणी ३८०
३२६	" रामप्यारे अवस्थी	"	द्वितीय श्रेणी ४२०
३२९	" भगवती प्रसाद गौतम	"	" ४४३
३३०	" लक्ष्मीनारायण	"	" ४३१
३३१	" गोपाल कृष्ण शर्मा	"	" ४३५
३३५	" भगवती सिंह	कानपुर (डी० ए० वी० का०)	तृतीय श्रेणी ३६६
३३६	" कृष्णचन्द्र आर्य	"	द्वितीय श्रेणी ४४३

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३३७	श्री आनन्द किरण मिश्र	कानपुर (डी० ए० वी० का०)	द्वितीय श्रेणी ४३५
३३८	" रामनाथ मिश्र	"	तृतीय श्रेणी ३३०
३४०	" बाबूराम मिश्र	"	प्रथम श्रेणी ५२३ [वि० यो० संस्कृत]
३४१	" रामशंकर त्रिपाठी	"	तृतीय श्रेणी ३५०
३४२	" देवीप्रसाद त्रिपाठी	"	द्वितीय श्रेणी ४०७
३४३	" ठाकुरप्रसाद अग्रवाल	"	" ४३९
३४५	" शिवनाथ दीक्षित	"	तृतीय श्रेणी ३७८
३५०	" कामताप्रसाद रावत	"	द्वितीय श्रेणी ४११
३५१	" रामकृष्ण 'मित्र'	"	तृतीय श्रेणी ३९१
३५७	" रमेशचन्द्र दीक्षित	"	" ३९९
३५८	" चन्द्रपालसिंह यादव	"	" ३७१
३५९	" शिवधार सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४२६
३६३	श्रीमती शिवरानी शर्मा	कांधला	" ४०९
३६६	श्री बाबूराम ब्रह्मभट्ट	कालपी	तृतीय श्रेणी ३३५
३६७	" रामशंकर द्विवेदी	"	द्वितीय श्रेणी ४६१
३७०	" गोपालसिंह बर्मा	कालाकांकर	" ४३३
३७२	" कविराज भगवान शर्मा	कालिम्पोंग	" ४५५

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३७३	श्री नानक चन्द	कालिम्पोंग	तृतीय श्रेणी ३२६
३७५	” राजबली मिश्र	काशी [ओरि० काले०]	द्वितीय श्रेणी ४२१ [वि० यो० संस्कृत]
३७६	” जगदीश पाण्डेय	”	द्वितीय श्रेणी ४४८
३७७	” रामशीष पाण्डेय	”	” ४०१
३७९	” रामकिशोर पाण्डेय	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
३८०	” भगवानप्रकाश शास्त्री	”	तृतीय श्रेणी ३९३
३८१	” मामराज दत्त	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
३८२	” हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव	”	प्रथम श्रेणी ४८६ [वि० यो० संस्कृत]
३८३	” शंकर शर्मा	”	तृतीय श्रेणी ३९४
३८४	” राममूर्ति पाण्डेय	”	” ३४१
३८५	” भगवतीप्रसाद सिंह	”	प्रथम श्रेणी ४९७
३८६	” सत्यनारायण पाण्डेय	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
३८७	” रामसकल त्रिपाठी	”	द्वितीय श्रेणी ४२३
३८९	” रामजी त्रिपाठी	”	तृतीय श्रेणी ३७२
३९१	” बद्रीप्रसाद गुप्त	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
३९३	” जगदीश शंकर नागर	”	तृतीय श्रेणी ३८५
३९४	” गोविन्द बल्लभ जोशी	”	द्वितीय श्रेणी ४११

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३९५	श्री सच्चिदानन्द त्रिपाठी	काशी (ओ० का०)	तृतीय श्रेणी ३६८
३९६	" रामेश्वर पाण्डेय	"	द्वितीय श्रेणी ४०६
३९७	" जयराम त्रिपाठी	"	तृतीय श्रेणी ३७२
३९९	" चन्द्रिकाप्रसाद पाठक	"	द्वितीय श्रेणी ४२०
४००	" माताबदल श्रीवास्तव	"	" ४४०
४०१	" ज्वालाप्रसाद पाठक	"	प्रथम श्रेणी ५०१ [वि० यो० संस्कृत]
४०३	" रामचन्द्र मालवीय	"	प्रथम श्रेणी ४९३
४०५	" दीनानाथ त्रिपाठी	"	द्वितीय श्रेणी ४४०
४०६	" विश्वनाथ द्विवेदी	"	" ४१९
४०७	" रामकुमार उपाध्याय	"	तृतीय श्रेणी ३९८ [वि० यो० संस्कृत]
४०८	" रमेशप्रसाद त्रिपाठी	"	प्रथम श्रेणी ५२३ [वि० यो० संस्कृत]
४०९	" कमलापति दीक्षित	काशी	तृतीय श्रेणी ३६७
४१०	" गोकुलानन्द पाण्डेय	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४१२	" कल्पनाथ पाण्डेय	"	बिभाजित प्रणाली के अनुसार
४१४	" रामशकल सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३६७
४१५	" मदन मोहन त्रिपाठी	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४१६	" केदारनाथ ओझा	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
४१८	श्री राजकुमार ओझा	काशी	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४२३	" हरिप्रसाद गुप्त	"	द्वितीय श्रेणी ४६४
४२४	" विद्याधर त्रिवेदी	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४२५	" रामनरेश मिश्र	"	"
४२९	" जयचन्द्र सिंह	"	"
४३०	" गिरिजाशंकर मिश्र	"	"
४३१	" महादेवसिंह यादवेन्द्र	"	"
४३३	" गोपालदास	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४३५	" तारकेश्वर चतुर्वेदी	"	द्वितीय श्रेणी ४२७
४३६	" ताराप्रसाद गुप्त	"	तृतीय श्रेणी ३५२
४४२	" राधामोहन चौबे	"	" ३३६
४४३	" विश्वनाथ मिश्र	"	" ३८१
४४५	" शम्भूनाथ शर्मा	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४४९	" सूर्यदत्त मिश्र	"	तृतीय श्रेणी ३३१
४५०	" रामनगीना त्रिपाठी	"	द्वितीय श्रेणी ४४१
४५१	" देवनाथ मिश्र	"	प्रथम श्रेणी ४९०
४५२	" रत्नाकर उपाध्याय	"	" ५०२

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
४५३	श्री केशवप्रसाद पाण्डेय	काशी	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४५४	,, रामसूरत सिंह	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४५५	,, देवनाथ राय	,,	द्वितीय श्रेणी ४३१
४५६	,, सीताराम मिश्र	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४६१	,, रामनरेश उपाध्याय	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४६२	,, रामवृक्ष सिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ४०९
४६३	,, भूपदेव शुक्ल	,,	तृतीय श्रेणी ३६५
४६५	,, रामप्रताप त्रिवेदी	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४६७	,, चन्द्रिकाप्रसाद पाण्डेय	,,	द्वितीय श्रेणी ४१३
४६८	,, सुरेशचन्द्र मिश्र	,,	उत्तीर्ण २९६
४६९	,, जगदीश शुक्ल	,,	तृतीय श्रेणी ३९६
४७०	,, नरसिंह पाण्डेय 'पथिक'	,,	द्वितीय श्रेणी ४३४
४७१	,, दूधनाथ सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३६०
४७७	,, नकछेद मिश्र	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४७८	,, कमलाप्रसाद द्विवेदी	,,	,,
४७९	,, मिश्रीलाल गुप्त	,,	,,
४८३	,, रामबहाल सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३९४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
४८५	श्री हरिद्वार त्रिपाठी	काशी	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४८७	” सीताराम उपाध्याय	”	तृतीय श्रेणी ३७१
४८९	” रामगोपाल सिंह	”	” ३६८
४९१	” सत्यनारायण राय	”	” ३४२
४९२	” दूधनाथ त्रिपाठी शास्त्री	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
४९५	” विजयशंकर मल्ल	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४९७	” शोभनाथ तिवारी	”	तृतीय श्रेणी ३५१
४९९	” रूपनाथ पाण्डेय	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५००	” कोमलसिंह	”	तृतीय श्रेणी ३५९
५०२	” शिवनाथ मिश्र	”	द्वितीय श्रेणी ४७७
५०३	” शिवशंकर खन्ना	”	तृतीय श्रेणी ३५०
५०४	” बद्रीप्रसाद पाठक	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५०५	” अभयकुमार पाण्डेय	”	तृतीय श्रेणी ३४५
५०७	” देवीविशाल दीक्षित	”	” ३५०
५०९	” राधाकृष्ण जोशी	”	” ३२७
५११	” कुवेरप्रसाद	”	” ३१६
५१३	” सूर्यनाथ पाण्डेय	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५१५	श्री काशीनाथ मिश्र	काशी	तृतीय श्रेणी ३७५
५१७	" दुर्गाप्रसाद गुप्त	"	द्वितीय श्रेणी ४२२
५२०	" जवाहरलाल सैगल	"	" ४६६
५२१	" केशवदत्त बगौली	"	तृतीय श्रेणी ३५०
५२२	" चतुर्भुजनाथ तिवारी	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
५२३	" शिवसागर मिश्र	"	तृतीय श्रेणी ३५४
५२४	" शीतलाप्रसाद	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
५२८	श्रीमती नानकी मलकानी	"	"
५२९	" भवानीदयाल गुप्त	"	तृतीय श्रेणी ३४०
५३१	श्री जगतनारायण सिंह	काशी (उदय०प्र०का०)	" ३३४
५३२	" अमरपाल सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४३६
५३३	" रामबहादुर सिंह	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५३४	" जगदीशनारायण सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३७६
५३५	" धनेशपत त्रिपाठी	"	" ३९६
५३६	" सन्तप्रसाद दास महन्त	"	" ३८५
५४१	" कन्हैयालाल	कुकड़ेश्वर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५४४	" कमलाप्रसाद झा	कुआंगढ़ी	तृतीय श्रेणी ३६५

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५४६	श्री दशरथ झा 'काव्यतीर्थ'	कुआंगढ़ी	अध्याय ३ नि० ७ के अनुसार
५४७	" शशिनाथ झा	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५४९	" राजेन्द्रप्रसाद सिंह 'इन्द्र'	"	तृतीय श्रेणी ३६१
५५१	" रमाकान्त झा	"	द्वितीय श्रेणी ४०४
५५३	" रामधारीप्रसाद	कुशीनगर	तृतीय श्रेणी ३७२
५५५	" वासुदेव पाण्डेय	"	" ३८६
५५९	" हरीशंकर त्रिपाठी	कोआथ	द्वितीय श्रेणी ४२४
५६०	" ब्रह्मदेव पाण्डेय	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५६३	" रामकृष्ण शर्मा	कोटा (भारतेन्दु समिति)	"
५६४	" रामेश्वरदयाल भार्गव	"	तृतीय श्रेणी ३७४
५६५	" राजेश्वर	"	" ३३८
५६७	" रामचरनलाल सक्सेना	"	द्वितीय श्रेणी ४३३
५६८	" टीकमचन्द जैन	"	प्रथम श्रेणी ५३४
५६९	" सिरिल	"	तृतीय श्रेणी ३७६
५७०	" गोकुलदास शर्मा	"	" ३३१
५७६	" योगेश्वरप्रसाद सिंह	खगड़िया	उत्तीर्ण ३१०
५७८	" जयमंगल शर्मा	खगौल	तृतीय श्रेणी ३८४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५७९	श्री रामावतार शर्मा	खगौल	उत्तीर्ण ३००
५८१	" हनुमानसहाय	"	तृतीय श्रेणी ३४६
५८७	" रामलखनलाल	खड़गपुर	द्वितीय श्रेणी ४१५
५९१	" ब्रह्मदेव मिश्र शास्त्री	खपड़ाडीह	तृतीय श्रेणी ३८२
५९२	" बद्रीनारायण सिंह	"	" ३३१
५९६	" पराकुंश त्रिपाठी	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६००	" लक्ष्मीनारायण सक्सेना	खुजनेर	"
६०६	" महावीरप्रसाद शर्मा विर्थरे	खुर्जा	तृतीय श्रेणी ३९४
६१०	श्रीमती गंगादेवी	खैर	" ३६२
६११	श्री रामदुलारे द्विवेदी	खोपापार	उत्तीर्ण ३१२
६१२	" रामचन्द्र द्विवेदी	"	तृतीय श्रेणी ३३३
६१५	" विश्वनाथ मिश्र	"	उत्तीर्ण ३१७
६१६	" चेतनारायण	"	तृतीय श्रेणी ३३२
६१७	" हनुमानदत्त शुक्ल	"	" ३८२
६१८	" दयाशंकर राय	"	" ३४९
६२०	" राजबसन्त द्विवेदी	"	" ३६३
६२२	" जयदेव मिश्र	गढ़बनैली	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६२९	श्री रामबालक सिंह शर्मा	गया	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६३०	" सत्यदेव प्रसाद सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३३७
६३४	" ब्रह्मदत्त मिश्र	"	" ३७४
६३६	" बाबूलाल साहू	गाड़र वारा	" ३४१
६३९	" प्रेमलाल चौकसे	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६४०	" भगवान दास	"	तृतीय श्रेणी ३४१
६४५	" राजाराम	गोरखपुर	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
६४६	" विष्णुदेव द्विवेदी	"	तृतीय श्रेणी ३७८
६४८	" जगन्नाथ राम	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६४९	" अमरनाथ पाण्डेय	"	"
६५१	" राधेश्याम रूंगटा	"	द्वितीय श्रेणी ४१६
६५२	" राजकुमार सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३८४
६५३	" बल्देव तिवारी	"	" ३६४
६५४	" किशोरीलाल	"	" ३७८
६५६	" अम्बिका पाण्डेय	"	द्वितीय श्रेणी ४५१
६५७	" कोदई उपाध्याय	"	प्रथम श्रेणी ४९६
६५८	" रामसूरत तिवारी	"	तृतीय श्रेणी ३६६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६६३	श्री रामनाथ अग्रवाल	चिड़ावा	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६६७	श्रीमती पौधारी देवी उर्फ हेमलता पाण्डेय	चुरू (ऋषि कुल)	”
६६९	श्री मुरलीधर शर्मा	”	द्वितीय श्रेणी ४२१
६७०	” कुञ्जविहारी शर्मा	”	तृतीय श्रेणी ३८५
६७१	” मदन गोपाल	छतरपुर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६७४	” रामनिवास व्यास	छिन्दवाड़ा	”
६७५	” सूरज प्रसाद सिगारे	”	”
६७६	” शंकर लाल पंवार	”	”
६७८	” नन्हें सिंह	”	तृतीय श्रेणी ३५८
६७९	” गोपाल असोलकर	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
६८०	” महावीर झा	जन्दाहा	द्वितीय श्रेणी ४७९
६८१	” कुशेश्वर झा	”	” ४३८
६८२	” राजपति चौधरी	”	” ४२२
६८३	” बच्चेलाल झा	”	तृतीय श्रेणी ३९७
६८५	” नर्मदा प्रसाद सराफ़	जबलपुर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६८६	” श्रेष्ठी रतनलाल जैन	”	तृतीय श्रेणी ३३६
६८८	” शालिग्राम व्यास	”	” ३२५

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६९०	श्री सुरेशचन्द्र श्री वास्तव	जबलपुर	तृतीय श्रेणी ३४६
६९६	श्रीमती तारापोतदार	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
६९७	श्रीमती श्यामासिह	,,	,,
७०२	श्री दत्तात्रय हरी खिखड़कर	,,	,,
७०६	,, चन्द्रशेखर त्रिवेदी	,,	,,
७०७	,, शंकरलाल दुबे	,,	तृतीय श्रेणी ३३०
७०८	,, देवीप्रसाद चौधरी	,,	उत्तीर्ण २११
७१०	,, रामसेवक पाण्डेय	,,	द्वितीय श्रेणी ४१६
७११	,, भगवतप्रसाद मघरिया	,,	,, ४१५
७१२	,, पुरुषोत्तमलाल बिलौहाँ	,,	उत्तीर्ण ३०८
७१५	,, श्यामसुन्दर केदावत	जयपुर	तृतीय श्रेणी ३४१
७१६	,, रामजीलाल शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ४०१
७१८	,, भट्ट रघुवीर स्वरूप शास्त्री	,,	,, ४६५
७२०	,, विजयदत्त माथुर	,,	तृतीय श्रेणी ३६८
७२१	,, राधामोहन शर्मा	,,	,, ३२६
७२२	श्रीमती शैलकुमारी चतुर्वेदी	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
७२५	,, पुष्पलता देवी	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
७२६	श्री गोविन्दराव नाड़कर्णी	जावद	तृतीय श्रेणी ३४०
७२७	” द्वारिकासिंह	जैतपुर	” ३४९
७२८	” कुबेरनाथ पाण्डेय	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
७२९	” जगन्नाथप्रसाद सिंह	”	”
७३०	” श्रीरामसिंह	”	”
७३१	” गोपालसिंह	”	द्वितीय श्रेणी ४०३
७३२	” हरदत्त	जोधपुर	तृतीय श्रेणी ३८५
७३५	श्रीमती नीमावती देवी सोडल	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
७३७	श्री वेंकटशर्मा	”	द्वितीय श्रेणी ४०४
७३८	” रामसेवक लाल	जौनपुर	तृतीय श्रेणी ३६४
७३९	” चन्द्रभूषण पाण्डेय	”	” ३२०
७४१	” रामअधीन सिंह	”	” ३३२
७४४	” वैद्यनाथ मिश्र	झरिया	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
७४७	श्रीमती सौ० शान्ता राधा गोपालजी पंड्या	झालरापाटन	”
७४९	” विमला देवी	”	तृतीय श्रेणी ३९०
७५२	श्री हरप्रसाद त्रिपाठी	झाँसी	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७५३	” केदारनाथ पाण्डेय	”	”

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
७५५	श्री कृष्णचन्द्र पेंगोरिया	झाँसी	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७५८	" प्रभुदयाल	झुंझनू	तृतीय श्रेणी ३३१
७५९	" प्रमेश्वरीप्रसाद खेतान	"	" ३४४
७६०	" महावीरप्रसाद शर्मा	"	" ३४१
७६१	" सूरजमल शर्मा	"	" ३७३
७६३	" विद्यानन्द	टाँडा	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
७६५	" राधेमोहन शर्मा	"	तृतीय श्रेणी ३४७
७६६	" हरिश्चन्द्र	टीकमगढ़	" ३२१
७६८	" रामप्रसाद	टीकापट्टी	" ३९५
७६९	" हरिश्चन्द्र	"	" ३९७
७७०	" कदमलाल पोद्दार	"	" ३६३
७७१	" जगदीशलाल	डालटनगंज	प्रथम श्रेणी ४९० [वि० यो० गणित]
७७५	" कामाख्या पाण्डेय	डिब्रूगढ़	तृतीय श्रेणी ३५६
७७६	" रामकृष्ण सहाय	डिहरी	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७७७	" ओझा भुवनेश्वर शर्मा	"	"
७८०	" रामाश्रय सिंह	डुमरी	तृतीय श्रेणी ३२४
७८२	" शिवपूजन दुबे	"	" ३३१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
७८३	श्री श्याम नारायणसिंह	डुमरी	द्वितीय श्रेणी ४२४
७८६	,, रामविलाससिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३३३
७८८	,, रामभजन विश्वकर्मा	,,	,, ३५४
७८९	,, रामयश शुक्ल	,,	,, ३६५
७९१	,, बैजनाथ ओझा	ढिंगवस	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७९२	,, शिवदर्शनसिंह	,,	,,
७९३	,, कुबेरनाथ सिंह	तिलौथू	,,
८०१	,, भैयालाल व्यास 'लाल'	दतिया	तृतीय श्रेणी ३४९
८२१	,, सूर्यनारायण पाण्डेय	दार्जिलिंग	,, ३३६
८२६	,, गयाप्रसादसिंह	दिघवारा	,, ३४५
८२८	श्रीमती कुमारी प्रभावती भटनागर	दिल्ली	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८३२	श्री रघुपतिसिंह	देव (गया)	उत्तीर्ण ३०८
८३५	,, बद्रीनाथ शास्त्री	,,	,, ३१५
८३६	,, सुमेरचन्द्र जैन	देवबन्द	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८३७	,, ज्ञानचन्द्र गोयल	,,	तृतीय श्रेणी ३२२
८३९	,, राजनाथ शर्मा	देवरिया	उत्तीर्ण ३१८
८४०	,, जटाशङ्कर मणि त्रिपाठी	,,	द्वितीय श्रेणी ४२५

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
८४२	श्रीमती यमुनादेवी अग्निहोत्री	देहरादून (कन्या गुरु०)	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८४३	श्री किशोरीलाल	देहरादून (डी० ए० वी० का०)	तृतीय श्रेणी ३५१
८४५	” सत्यप्रकाश शर्मा	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८५०	” दूधनाथ सिंह	दोहरीघाट	तृतीय श्रेणी ३३५
८५१	” मंगलदेव	”	” ३२२
८५३	” शुकदेवप्रसाद सिंह	धमदाहा	” ३८७
८५४	” नागेश्वर मिश्र	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८५५	” महेन्द्रप्रसाद वर्मा	”	तृतीय श्रेणी ३६३
८५८	” लालजी झा	धमौरा	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८६०	” हरि नारायण मलतारे	धार	उत्तीर्ण ३४५
८६२	” भालचन्द्र आपटे	धारवाड़	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८६३	” रामधारी सिंह	धूसी	तृतीय श्रेणी ३७०
८६५	” सुग्रीवपति त्रिपाठी	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८६७	” यज्ञप्रसाद	धौलपुर	”
८७१	” यमुना शर्मा	नरकटियागंज	तृतीय श्रेणी ३८४
८७२	” विश्वनाथ द्विवेदी	”	उत्तीर्ण ३१२
८७३	” राधावल्लभ मिश्र	”	द्वितीय श्रेणी ४२१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
८७५	श्री चन्द्रिका मिश्र	नवादा	द्वितीय श्रेणी ४१२
८७८	" दामोदरराव सप्रे	नागपुर(हिन्दी हाई स्कूल)	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८७९	" लक्ष्मीनारायण भारद्वाज	"	द्वितीय श्रेणी ४५६
८८१	" चम्पासिंह सोलंकी	नागौद	तृतीय श्रेणी ३४८
८८२	" फ़ज़लकरीम	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
८८३	" वागरोधी कृष्णचन्द्र भट्ट	नाथद्वारा	द्वितीय श्रेणी ४२१
८८६	" मथुरादास	नारायणगढ़	द्वितीय श्रेणी ४३०
८८७	" कचरूमल वर्मा	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८९१	" मुरलीधर नारायणप्रसाद	नालन्दा	"
८९३	" रामचन्द्रप्रसाद 'चन्द्र'	"	तृतीय श्रेणी ३३४
८९४	" रामानुग्रह नारायण सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४५३
८९९	" रामचन्द्र कड़े पूरकर	नासिक	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
९०४	" यमुनाप्रसाद	नाहरगढ़	तृतीय श्रेणी ३३०
९०७	" रामचन्द्र पाण्डेय	निसरपुर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
९१३	" कमलाप्रसाद दुबे	पचम्बा	द्वितीय श्रेणी ४४०
९१४	" राजेन्द्र दुबे	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
९२०	" विश्वनाथप्रसाद वर्मा 'विद्यार्थी'	पटना कालेज	प्रथम श्रेणी ४९४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
९२३	श्री मक्खन ठाकुर	पटना कालेज	विभाजित प्रणाली के अनुसार
९२४	” बलभद्र उपाध्याय	”	”
९३०	” जंगबहादुर ठाकुर	”	उत्तीर्ण ३०७
९३३	” शुकदेवप्रसाद वर्मा	”	प्रथम श्रेणी ४९८ [वि० यो० गणित]
९३६	” रामप्रसादसिंह	”	द्वितीय श्रेणी ४०८
९३९	” रामदुलारेशरण सिंह	”	तृतीय श्रेणी ३३०
९४१	” ब्रजभूषण मिश्र	पड़रौना	विभाजित प्रणाली के अनुसार
९४२	” नारायणसिंह	”	तृतीय श्रेणी ३२५
९४३	” रामसिंगार ओझा	”	” ३५१
९५१	” शिवराम त्रिवेदी	पन्ना	उत्तीर्ण ३११
९५४	” रामप्रताप मिश्र	प्रयाग (सम्मेलन कार्यालय)	प्रथम श्रेणी ५००
९५८	” श्रीकृष्ण गोस्वामी	”	तृतीय श्रेणी ३६१
९६०	” रामकिंकर मिश्र	”	प्रथम श्रेणी ४१५
९६४	” देवव्रत वर्मा	”	तृतीय श्रेणी ३८१
९६५	” बलदेवप्रसाद	”	उत्तीर्ण ३०१
९६६	” गयाप्रसाद द्विवेदी	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
९६७	” सूर्यनारायण पाण्डेय	”	तृतीय श्रेणी ३७४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६८	श्री रामनाथ शुक्ल	प्रयाग (सम्मे० कार्या०)	द्वितीय श्रेणी ४२६
१७०	,, उमाशङ्कर त्रिपाठी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१७१	,, वंशरूप पाण्डेय	,,	द्वितीय श्रेणी ४१९
१७२	,, रामपाल दुबे	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१७६	,, शिवनाथ पाण्डेय	,,	,,
१७९	,, अल्पनारायण शुक्ल	,,	तृतीय श्रेणी ३९१
१८४	,, राजेन्द्रनाथ	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१८९	,, रामदास पाण्डेय	,,	,,
१९०	,, श्रीकान्त द्विवेदी	,,	तृतीय श्रेणी ३३०
१९१	,, रामप्रसाद	,,	,, ३३५
१९३	,, भरतानुजदास	,,	द्वितीय श्रेणी ४२९
१९४	,, चन्द्रिकाप्रसाद सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३९७
१९५	,, वेणीमाधव पाण्डेय	,,	,, ३९९
१९६	,, देवनाथ त्रिपाठी	,,	,, ३६६
१९८	,, गोपालप्रसाद	,,	प्रथम श्रेणी ५३२ [वि० यो० गणित]
१९९	श्रीमती स्नेहलता श्रीवास्तव	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१०००	श्री देवनारायणसिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३७२

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१००२	श्री सीताराम गुप्त	प्रयाग (सम्मे० कार्या०)	तृतीय श्रेणी ३२
१००५	” दुर्गाशंकर श्रीमाली	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१००६	” महावीरप्रसाद मिश्र	”	प्रथम श्रेणी ५४७ [वि० यो० गणि०]
१००९	” रामअभिलाष उपाध्याय	”	तृतीय श्रेणी ३६७
१०११	” कृपाशंकर मिश्र	”	प्रथम श्रेणी ५१५ [वि० यो० गणित]
१०१२	” अवधविहारीशरण द्विवेदी	”	द्वितीय श्रेणी ४११
१०१३	” राममूर्त्ति शुक्ल	”	तृतीय श्रेणी ३६७
१०१६	श्रीमती गिरिजादेवी अवस्थी	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१०१७	श्री द्वारकाप्रसाद	प्रयाग (हि० वि० पी०)	तृतीय श्रेणी ३१८
१०१८	” त्रियुगीनारायण त्रिपाठी	”	द्वितीय श्रेणी ४४७
१०१९	” रामदेव त्रिपाठी	”	तृतीय श्रेणी ३५२
१०२०	” रामकिशोर शुक्ल	”	द्वितीय श्रेणी ३९७
१०२२	” टी० सी० गोपाल	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१०२३	” रामचन्द्र शर्मा	”	तृतीय श्रेणी ३३७
१०२४	” पि० वि० सीतारामू शांतानंद	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१०२५	” वी० शिवरामकृष्ण	”	”
१०२६	” ए० राघवय्या चौधरी	”	”

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०३२	श्री प्रभात मिश्र	प्रयाग (दारा० हाई स्कूल)	द्वितीय श्रेणी ४०३
१०३४	" विश्वनाथ शुक्ल	"	" ४५१
१०३५	" गयादत्त शुक्ल	"	तृतीय श्रेणी ३५९
१०३६	" शेषधर द्विवेदी	"	द्वितीय श्रेणी ४२३
१०३७	" रामलोचन पाण्डेय	"	" ४२१
१०४०	" श्यामसुन्दर पाण्डेय	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१०४१	" देवनारायण शोकहा	"	"
१०४२	" जंगबहादुरसिंह	"	प्रथम श्रेणी ४८७
१०४३	" सरजूप्रसाद पाण्डेय	"	तृतीय श्रेणी ३९८
१०४५	श्री आत्माराम मिश्र	"	द्वितीय श्रेणी ४१६
१०४७	" दिनेश मिश्र	"	" ४३७
१०४८	" रामसूरत त्रिवेदी	"	तृतीय श्रेणी ३८०
१०४९	" रामबली मिश्र	"	" ३६६
१०५३	" अनिरुद्धप्रसाद मिश्र	प्रसण्डो	" ३४१
१०५७	" शुकदेव त्रिपाठी	परसागढ़	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१०६०	" रामाधार उपाध्याय	पांचाली	तृतीय श्रेणी ३६३
१०६१	" रामप्रसाद गुप्ता	"	" ३६८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०६२	श्री वैद्यनाथप्रसाद यादव	पांचाली	द्वितीय श्रेणी ४१
१०६३	" कपूरीलाल राठौर	पाढ़म	विभाजित प्रणाली अनुसार
१०६५	" किशोरीलाल कुलश्रेष्ठ	"	द्वितीय श्रेणी ४०
१०६६	" राजबहादुर गुप्ता	"	विभाजित प्रणाली अनुसार
१०६८	" राम विलास सिंह	पारू	प्रथम श्रेणी ४८० [वि० यो० धर्मशास्त्र
१०७०	" पंचानन तिवारी	"	द्वितीय श्रेणी ४००
१०७१	" रामबुझावनसिंह शर्मा	"	द्वितीय श्रेणी ४०१ [वि० यो० धर्म०]
१०७२	" श्यामानन्द त्रिपाठी	"	विभाजित प्रणाली अनुसार
१०७६	" भगवतीप्रसाद आचार्य	पिपलौदा	"
१०७७	" भगवतीलाल रावल	"	अध्याय ३ नियम ७ अनुसार
१०७९	" रामस्वरूप मिश्र	पिलानी	तृतीय श्रेणी ३८
१०८१	" श्यामसुन्दर शर्मा	"	" ३३६
१०८९	" यशवन्तशंकर गोडबोले	पूना	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१०९०	" काशीनाथ नारायण सोमण	"	"
१०९१	" भगवान नारायण कानड़े	"	"
१०९२	" गोपाल महादेवभट्ट	"	"
१०९३	" हरीशिवराम सहस्र बुद्धे	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०९४	श्री पाण्डुरंग शास्त्री गोस्वामी	पूना	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१०९५	" मोरेश्वर गजानन गपचूप	"	"
१०९७	" मल्हार लक्ष्मण कुलकर्णी	"	"
१०९९	" विनायक बाबूराव ओंकार	"	"
११०३	" कु० हीराबाई सुँढणाकर	"	"
११०४	" चिन्तामणी बाबूराव ओंकार	"	"
११०५	" राधकिशन इन्द्राणी	"	तृतीय श्रेणी ३४२
११०८	" दिगम्बर गोपाल दांडेकर	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१११०	" चौधरी राजनारायण शर्मा	पूसा	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११११	" कृष्ण देव सिंह	पोठिया	तृतीय श्रेणी ३५५
१११२	" जगदीशप्रसाद शर्मा	"	विभाजित प्रणाली के आनुसार
१११७	" जागेश्वरप्रसाद सिंह	"	"
१११८	" अनिरुद्ध प्रसाद सिंह	"	"
११२०	" छेदीप्रसाद यादव	,	तृतीय श्रेणी ३९४
११२२	" वासुदेवप्रसाद यादव बिहारी	"	" ३६८
११२३	" सत्यनारायण मण्डल	"	उत्तीर्ण ३१७
११२९	" नोखेलाल सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३६५

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
११३८	श्री हरिवल्लभ दीक्षित	पोहरी (आदर्श वि०)	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११४०	" कल्याणराय श्रीवास्तव	"	तृतीय श्रेणी ३६६
११४२	" ताराचन्द गर्ग	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११४५	श्रीमती विद्यादेवी दुबे	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
११५०	श्री गोविन्दप्रसाद शर्मा	पोहरी [सर्व० हि० वि०]	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११५३	" बालकराम	फर्रुखाबाद	उत्तीर्ण ३११
११५४	" त्रिभुवननाथ चतुर्वेदी	"	तृतीय श्रेणी ३२५
११५५	" चंद्रशेखर द्विवेदी	"	उत्तीर्ण ३०१
११६०	" ओ३म्प्रकाश अग्रवाल	फीरोज़ाबाद	" ३१२
११६४	" रामलाल मिश्र	फैजाबाद	द्वितीय श्रेणी ४०४
११६६	" बिहार पाठक	"	उत्तीर्ण ३००
११६७	" पारसनाथ त्रिपाठी	"	तृतीय श्रेणी ३४९
११६९	श्रीमती विद्योत्तमा शर्मा 'विदुषी'	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
११७२	श्री देवनारायण सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३५२
११८०	" पन्नेसिंह शेखावत	बगड़	उत्तीर्ण ३१२
११८२	" बिहारीलाल	बड़नगर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११८४	" हेमन्तकुमार श्रीवास्तव	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
११८५	श्री कु० सवाईसिंह सिसौदिया	बड़नगर	तृतीय श्रेणी ३७३
११८७	" मनोहरलाल शर्मा	बड़मेर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११९४	" रामचरनसिंह	बदायूँ	तृतीय श्रेणी ३३७
१२००	" हाकिमलाल रास	बन मनखी [सुमि०हा०स्कू०]	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१२०१	श्रीमती गोदावरी देवी	"	"
१२०२	श्री अनूपलाल पोद्दार	"	"
१२०३	" दशरथप्रसाद यादव	"	तृतीय श्रेणी ३८५
१२०४	" बलराम सिंह	"	" ३८७
१२०५	" कुशेश्वर यादव	"	" ३५३
१२१७	" तालुकदार सिंह	बम्बई (मा० वि०)	" ३६२
१२१८	" सत्यनारायण मिश्र	"	" ३७६
१२१९	" उदयभानु सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४७९
१२२१	" राजाराम पाण्डेय	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१२२४	" लक्ष्मीनारायण शर्मा	"	तृतीय श्रेणी ३२१
१२३१	" शारंगधर श्यामजी पहिलवान	बम्बई हि० प्र०सभा	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१२३३	" कृष्णगोपाल शर्मा	बम्बई (मा० क० हाई स्कूल)	तृतीय श्रेणी ३८३
१२३४	" प्रयागनारायण शुक्ल 'निर्भर'	"	" ३६७

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१२३५	श्री सुन्दरलाल जैन	बम्बई (मा० क० हाई स्कूल)	तृतीय श्रेणी ३७१
१२३६	,, भीकालाल धूत	,,	द्वितीय श्रेणी ४२३
१२३७	,, पन्नालाल जैन	,,	,, ४५१ [वि०यो० धर्म शास्त्र]
१२३९	,, रामलषण पाण्डेय	,,	द्वितीय श्रेणी ४५७
१२४०	,, गजानन्द बागला	,,	तृतीय श्रेणी ३४१
१२४१	,, परमेश्वरलाल बगड़का	,,	तृतीय श्रेणी ३८०
१२५१	,, महाबीरप्रसाद सिंह	बहदुरा	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१२५५	,, वेदानन्द ठाकुर 'विप्र'	,,	द्वितीय श्रेणी ४१०
१२५६	,, भगवतीप्रसाद सिंह	ब्यावर	उत्तीर्ण ३०१
१२५७	,, गजराजसिंह शर्मा	,,	तृतीय श्रेणी ३६१
१२५८	,, नकछेद त्रिपाठी	बरहज	,, ३७४
१२६०	,, केदारनाथ पाण्डेय	,,	,, ३२१
१२६१	,, रमाकान्त त्रिपाठी 'दिनेश'	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१२६२	,, रामअधार	,,	द्वितीय श्रेणी ४७
१२६५	,, केशवप्रसाद सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३४
१२६७	,, रामनारायणलाल श्रीवास्तव	,,	द्वितीय श्रेणी ४१
१२६८	,, नन्दकिशोर सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्तांक
१२७१	श्री हरकेश नारायण सिंह	बरहज	तृतीय श्रेणी ३९९
१२७३	,, माहेश्वरीदत्त चतुर्वेदी	,,	द्वितीय श्रेणी ४१५
१२७५	,, रामजी तिवारी	,,	तृतीय श्रेणी ३२२
१२७८	,, लालचन्दसिंह रावत	,,	,, ३३२
१२७९	रामनरेशसिंह	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१२८४	,, सीतारामसिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३५७
१२८५	,, गणेशमल्ल	,,	द्वितीय श्रेणी ४१२
१२८६	,, रामदेव दीक्षित	,,	तृतीय श्रेणी ३६६
१२८७	,, शिवपूजनप्रसाद	,,	द्वितीय श्रेणी ४३१
१२८८	,, बालेश्वरप्रसाद	,,	तृतीय श्रेणी ३५७
१२९०	,, विश्वनाथ उपाध्याय	,,	द्वितीय श्रेणी ४१३
१२९३	,, रामभरोसा पाण्डेय	,,	,, ४१९
१२९७	,, केदारलाल	बलिया (यमु०सं० पा०)	तृतीय श्रेणी ३५२
३०३	,, नित्यानन्द रेंडर	बरेली	द्वितीय श्रेणी ४३२
३०४	,, प्रेमनारायण चौरासिया	,,	,, ४०७
३०५	,, लखनदेवप्रसाद श्रीवास्तव	,,	तृतीय श्रेणी ३८४
३०६	,, रामस्वरूप जिज्ञासु	,,	द्वितीय श्रेणी ४१३

क्रम-संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१३०७	श्रीमती सरला कुमारी रावत	बरेली	तृतीय श्रेणी ३५८
१३१५	कुमारी सरस्वती गुप्त	,,	,, ३९२
१३१९	श्री प्रतिभाभूषण अग्रवाल	,,	,, ३४५
१३२०	,, श्यामसुन्दरदास	,,	,, ३६८
१३२१	,, त्रिलोचन	,,	,, ३७८
१३२२	श्रीमती कुन्ती देवी खन्ना	,,	,, ३४०
१३२३	श्री जयगोपाल शर्मा	,,	,, ३३१
१३२७	,, मनमोहन सिंह	बलबड्डा	द्वितीय श्रेणी ४०५
१३२८	,, विश्वनाथ झा	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१३२९	,, रमेशचन्द्र वर्मा 'बागी' साहित्य भूषण	,,	तृतीय श्रेणी ३३५
१३३४	,, ब्रजेशकुमार सिंह	बलिया (जु० संस्कृत कालेज)	द्वितीय श्रेणी ४००
१३३५	,, रामनरेशप्रसाद	,,	प्रथम श्रेणी ५०० [वि० यो० गणित]
१३३८	,, मुक्तेश्वरप्रसाद तिवारी	बस्ती	द्वितीय श्रेणी ४८५
१३३९	श्रीमती कलावती देवी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१३४१	श्री सत्यनारायणप्रसाद पांडेय	,,	,,
१३४३	,, रामलखन शर्मा	,,	तृतीय श्रेणी ३७१
१३४४	,, वीरेन्द्रप्रतापनारायण सिंह	बहराइच	,, ३५१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१३४७	श्री शिवनन्दन प्रसाद घोष	बाढ़	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१३५२	,, कमलाकान्त आर्य	,,	,,
१३६३	,, दुलीचन्द शर्मा	बारां	तृतीय श्रेणी ३५३
१३६५	,, देवीराम वर्मा	,,	,, ३४३
१३६६	,, देवीशंकर वर्मा	,,	,, ३९७
१३६७	,, रूपकिशोर भरद्वाज	,,	उत्तीर्ण ३१७
१३६८	,, श्रीनिवास गुप्ता	,,	प्रथम श्रेणी ४८४
१३७०	,, रामनारायण	,,	द्वितीय श्रेणी ४३४
१३७१	,, प्रभाशंकर	,,	,, ४०३
१३७३	,, श्यामलाल सिंह	बांसगाँव (हि० सा० वि०)	तृतीय श्रेणी ३८५
१३७५	,, बालकृष्ण झा	,,	अध्याय ३ नि०७ के अनुसार
१३७६	,, विनोद कृष्ण झा	बांसगाँव (ए० वी० स्कू०)	,,
१३७७	,, विक्रमादित्य त्रिपाठी	,,	द्वितीय श्रेणी ४२१
१३८०	,, तीर्थराज सिंह	,,	विभाजित प्रणाली के के अनुसार
१३८६	,, नारायण एस० त्रिवेदी	बांसबाड़ा	अध्याय ३ नि० ७ के अनुसार
१३९४	,, पूरणमल गोयनका	बीकानेर	प्रथम श्रेणी ५००
१३९५	,, सुरपति सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३८३

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्तां
१३९९	श्री चन्द्रिकासिंह गरिमापुरी	बेलागंज	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४००	” गदाधर सिंह	”	तृतीय श्रेणी ३७६
१४०२	” रामव्रतप्रसाद	”	” ३२१
१४०३	” रघुवीर मिश्र	बेगूसराय	द्वितीय श्रेणी ४६८
१४०४	” कोल्लिमल्लिकार्जुन राव	बैजवाड़ा	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१४०५	” जीरेड्डी चेन्नारेड्डि	”	”
१४०६	” वीरमाचनेनि सत्यनारायणराव	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४०७	” वर्धमान विश्वनाथ राव	”	”
१४०८	” वर्धमान लक्ष्मीनारायण	”	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१४१२	” सतीशचन्द्र शर्मा	भगवानपुर	”
१४१३	” जगतनन्दन सिंह	”	तृतीय श्रेणी ३८४
१४१४	” सूर्यदेवनारायण	”	द्वितीय श्रेणी ४०४
१४१५	” तोताराम ‘शुक’	भरतपुर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४१७	” मथुराप्रसादसिंह	भागलपुर	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१४१८	” तेजनारायण महतो	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४२०	” छोटेलाल मिश्र	”	द्वितीय श्रेणी ४२३
१४२५	” वंकिमचन्द्र बनर्जी	”	तृतीय श्रेणी ३९६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्तांक
१४२६	श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त	भागलपुर	तृतीय श्रेणी ३६८
१४२९	,, सुरेन्द्रनारायण चौधरी	,,	,, ३९०
१४३०	,, खगेश्वरप्रसाद शुक्ल	,,	,, ३६०
१४३२	,, शम्भूदयाल शर्मा	भेलसा	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४३३	,, बद्रीप्रसाद शर्मा	,,	,,
१४३५	,, रामगोपाल शर्मा	,,	तृतीय श्रेणी ३७४
१४३६	,, व्रजभूषण सक्सेना	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१४३७	श्रीमती ज्ञानवती	,,	,,
१४४५	श्री गिरीशनारायण जौहरी	मथुरा (गो॰ हि॰ वि॰)	द्वितीय श्रेणी ४१४
१४४८	,, नथ्थीमल 'मित्र'	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४५०	,, नारायणदास गुप्त	,,	तृतीय श्रेणी ३२३
१४५१	,, अम्बाप्रसाद शर्मा	,,	,, ३५२
१४५२	,, लालसिंह वर्मा	,,	,, ३५५
१४५३	,, जगदीशप्रसाद शर्मा	,,	,, ३८०
१४५४	,, गोपालप्रसाद चतुर्वेदी	,,	,, ३६५
१४५६	,, केशवदेव शर्मा	,,	,, ३६८
१४५७	,, शिवदानसिंह	,,	,, ३३६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्तां
१४५८	श्री रामचरण लाल गुप्त	मथुरा (गो० हि० वि०)	तृतीय श्रेणी ३२
१४६१	" क० रा० शेषकृष्ण	मदुरा	अध्याय ३ नि० के अनुसार
१४६२	" ए० कैलाश	"	"
१४६५	" वि० इ० शिवब्रह्मण्यन	"	प्रथम श्रेणी ५२ [वि० यो० संस्कृत
१४६६	" शिवनारायण	"	द्वितीय श्रेणी ४७ [वि० यो० संस्कृत
१४७१	" सूर्यनारायण चौधरी	मधुबनी	तृतीय श्रेणी ३७
१४७२	" आद्याचरण झा	"	" ३६
१४७४	" कमलाप्रसाद	मलाँव	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४७५	" शिवप्रसाद गुप्त	"	"
१४७६	" उमाशंकर राम त्रिपाठी	"	द्वितीय श्रेणी ४
१४८०	" अनिरुद्ध मिश्र	महदेवा	अध्याय ३ नि० के अनुसार
१४८२	" सदाशिव शैलगांव कर	महित्पुर	तृतीय श्रेणी ३५
१४८४	" रामनिवास शर्मा व्यास	मांगरोल	" ३३
१४८७	" महादेवप्रसाद पाठक	मांडले	" ३८
१४८९	" अलबेले लाल	मिर्जापुर	" ३७
१४९४	" कुंजबिहारी मिश्र	मुगरा बादशाहपुर	" ३७
१४९५	" पारसनाथ तिवारी	"	" ३८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१४९६	श्री कामताप्रसाद तिवारी	मुगरा बादशाहपुर	तृतीय श्रेणी ३२०
१५०० (क)	" श्यामकिशोर श्रीवास्तव	"	" ३७३
१५०० (ख)	" राधेश्याम चतुर्वेदी	"	" ३९३
१५०१	" राजमणि त्रिपाठी	"	" ३९०
१५११	" बाबूलाल झा	मुगेर (टाउन हाई स्कूल)	" ३९२
१५१२	श्रीमती चन्द्रावती	मुजफ्फरनगर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१५१५	श्री द्वन्दबहादुर सिंह	मुजफ्फरपुर (सुहृद संघ)	तृतीय श्रेणी ३९८
१५१७	" श्यामनन्दन शर्मा	"	द्वितीय श्रेणी ४१४
१५१८	" राजेन्द्रप्रसाद शर्मा	"	" ४२२
१५१९	" चन्द्रशेखर शर्मा	"	तृतीय श्रेणी ३९५
१५२०	" श्यामनन्दन शर्मा	"	" ३९७
१५२३	" रघुनाथशरण सिंह	"	" ३६८
१५२५	" सूर्यदेव पाण्डेय	"	द्वितीय श्रेणी ४६१
१५२७	" कृष्णदेव सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३५१
१५३०	" देवनारायण सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४२२
१५३१	" सत्यदेव त्रिपाठी	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१५३२	" दिगम्बर झा	"	तृतीय श्रेणी ३९७

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५३८	श्री राधेकृष्ण	मुरादाबाद	तृतीय श्रेणी ३१७
१५४१	" मानिकचन्द त्रिवेदी	"	द्वितीय श्रेणी ४५३
१५४५	" आनन्दप्रकाश दीक्षित	मेरठ	तृतीय श्रेणी ३३७
१५४६	" जगदेव 'शान्त'	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१५४७	" जयनारायण	"	तृतीय श्रेणी ३६२
१५५१	" ब्र० वेदपाल	"	" ३८०
१५५५	" ब्र० राजेश्वर	"	द्वितीय श्रेणी ४२१
१५५८	" गुरुप्रसाद चौहान	मैनपुरी	तृतीय श्रेणी ३३५
१५६४	" सुरेन्द्रदेव	"	द्वितीय श्रेणी ४४३
१५६६	" लक्ष्मीनारायण पाठक	मोकामाघाट	तृतीय श्रेणी ३७५
१५६७	" इन्द्रदेवप्रसाद सिंह	"	" ३४५
१५६८	" सालिगराम लाल	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१५७०	श्रीमती सरस्वती देवी	मोरसण्ड	द्वितीय श्रेणी ४५५
१५७२	श्री कृष्णगोपालसिंह	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१५७३	" राजदेवसिंह	"	"
१५७४	" रतीश पाठक	"	द्वितीय श्रेणी ४५८
१५७५	" आनन्द किशोरप्रसाद नारायणसिंह	"	" ४१८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५७६	श्री रामरेखा तिवारी	मोरसण्ड	द्वितीय श्रेणी ४२०
१५७७	" जगन्नाथ सिंह	"	" ४०५
१५७८	" धरीक्षण सिंह	"	" ४००
१५८१	" वशिष्ट त्रिपाठी	मोहनिया	तृतीय श्रेणी ३४४
१५८३	" भालचन्द्र यावलकर	मण्डलेश्वर	" ३५७
१५८४	" शंकर तुलापुरकर	"	" ३७४
१५८६	श्रीमती विन्देश्वरी देवी	रक्सौल	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१५९१	श्री रघुनाथ झा	"	द्वितीय श्रेणी ४३०
१५९८	" हर्षवर्द्धन शर्मा धस्माना	रतनगढ़	तृतीय श्रेणी ३८३
१५९९	" राधाकृष्ण गौड़ 'काव्यतीर्थ'	"	द्वितीय श्रेणी ४२५
१६०४	" रामानन्द प्रसाद वर्मा	रतसंड	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६०८	" मुनीन्द्र नाथ देवधरिया	राँची ट्रे० स्कूल	"
१६०९	" सूर्य नारायण मिश्र	"	द्वितीय श्रेणी ४०७
१६१०	" रजनीकान्त तिवारी	"	तृतीय श्रेणी ३५४
१६१२	" चन्द्र शेखर शर्मा	"	द्वितीय श्रेणी ४०८
१६१४	" गोकुलप्रसाद त्रिपाठी	राजगढ़	" ४४८
१६१९	" देवी दयाल	राजापुर (बांदा)	तृतीय श्रेणी ३३०

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६२०	श्री सत्यनारायण शर्मा	राजापुर (बांदा)	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६४१	,, नथमल झुँझनू वाला	रानीगंज (बर्दवान)	,,
१६४३	,, सत्यनारायण खेतान	,,	,,
१६४४	,, काशी राम क्याल	,,	,,
१६४९	,, सरदार मल कोठारी	रामपुरा	,,
१६५०	,, रणधीर सिंह	रामासाँढ़	तृतीय श्रेणी ३१७
१६५१	,, इन्द्रदेव उपाध्याय	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६५२	,, सदा शिव उपाध्याय	,,	,,
१६५४	,, रामशरण लाल	रायपुर	द्वितीय श्रेणी ४५२
१६५७	,, विक्रमादित्यतिवारी	रीवाँ (वाल समिति)	तृतीय श्रेणी ३७०
१६५८	,, संकर्षण प्रसाद	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६५९	,, यज्ञनारायण मिश्र	,,	,,
१६६२	,, रामाधार राम मिश्र	,,	तृतीय श्रेणी ३५४
१६६३	,, रामभरोसा शर्मा	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६६७	,, रामरतन वर्मा	,,	प्रथम श्रेणी ४९५ [वि० यो० गणित]
१६६८	,, रामयश त्रिवेदी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६६९	,, रामलालशर्मा	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६७२	श्री लक्ष्मणप्रसाद पाण्डेय	रीवां (बाल समिति)	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६७३	,, गंगाप्रसाद शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ४०९
१६७४	,, स्वामीदीन त्रिपाठी	,,	,, ४४२
१६७५	,, सिराजुद्दीन सिद्दीकी	,,	,, ४२५
१६७६	,, राम शिरोमणि शुक्ला	,,	तृतीय श्रेणी ३४३
१६७७	,, भगवानप्रसाद	,,	द्वितीय श्रेणी ४०७
१६७८	,, ईश्वरदीन	,,	तृतीय श्रेणी ३६३
१६८१	,, रामराजसिंह वर्मा	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६८३	,, राजीवलोचन अग्निहोत्री	,,	प्रथम श्रेणी ५०९ [वि० यो० संस्कृत]
१६८६	,, जगन्नाथसिंह	रेवतीपुर	द्वितीय श्रेणी ४०५
१६८७	,, चन्द्रदेव त्रिपाठी	,,	,, ४४३
१६८८	,, उमाशङ्कर पाण्डेय	,,	,, ४०४
१६९१	,, शिवनाथराय शर्मा	,,	तृतीय श्रेणी ३५७
१६९३	,, चन्द्रदेव चौबे	,,	उत्तीर्ण ३१८
१६९५	,, बलिराज राम	,,	तृतीय श्रेणी ३६७
१६९६	,, बनमाली पाण्डेय	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१६९७	,, देवकृष्णलाल दास	रोसड़ाघाट	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६९८	श्री सूर्यदेव नारायण पोद्दार	रोसड़ाघाट	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६९९	" गौरीकान्त झा	"	"
१७००	" रामविलास पूर्वे	"	"
१७०१	" राजेन्द्र झा	"	"
१७०२	" रामजी मिश्र	"	"
१७०४	" राजबहादुर तिवारी	रंगून	द्वितीय श्रेणी ४४८
१७०५	" ब्रजलाल	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१७०७	" ओ३म्प्रकाश	"	"
१७१४	" विष्णुदत्त द्विवेदी	लखनऊ	प्रथम श्रेणी ५०६
१७१६	" हरीकृष्ण ओझा	"	द्वितीय श्रेणी ४२३
१७१७	" सूर्यकृष्ण शुक्ल	"	उत्तीर्ण ३१०
१७१८	" सुरेशचन्द्र मिश्र	"	तृतीय श्रेणी ३२१
१७१९	" सुन्दरलाल	"	द्वितीय श्रेणी ४०१
१७२३	" शारदाप्रसाद वर्मा	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१७२५	" रामावतार शुक्ल	"	द्वितीय श्रेणी ४४२
१७२६	श्रीमती राजरानी भार्गव	"	तृतीय श्रेणी ३६२
१७२९	श्री भुवनचन्द्र तेवाड़ी	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१७३२	श्री बाबूराम गिरि	लखनऊ	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१७३५	,, दुर्गाप्रसाद अवस्थी	,,	तृतीय श्रेणी ३९३
१७४०	श्रीमतीकुमारी ज्ञानवती वर्मा	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१७४१	,, कृष्णा वाजपेयी	,,	,,
१७४२	श्री आनन्दानन्द द्विवेदी	,,	,,
१७४५	,, मदन मोहन उपाध्याय	,,	द्वितीय श्रेणी ४२४ [वि० यो० संस्कृत]
१७४६	,, पतिपाल मिश्र	,,	प्रथम श्रेणी ४८८ [वि० यो० संस्कृत]
१७४९	,, पुत्तीलाल निगम	,,	तृतीय श्रेणी ३७५
१७५०	,, ओमप्रकाश गोविल	,,	द्वितीय श्रेणी ४४९
१७५१	,, महेन्द्र सिंह	लखावटी	तृतीय श्रेणी ३९१
१७५२	,, प्रहलाद सरन	,,	,, ३२६
१७५७	,, बल्लभ	लश्कर	,, ३८४
१७५९	,, सीताराम गुप्ता	,,	,, ३५६
१७६०	,, कृष्ण भगवंत भाले	,,	,, ३२०
१७६२	,, गौरी शंकर शर्मा 'पथिक'	,,	,, ३८७
१७६४	,, मदनमोहन गुप्ता	,,	,, ३४४
१७६५	,, कन्हैयालाल शर्मा	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१७७२	श्री गोविन्दसखाराम दातार	लश्कर	द्वितीय श्रेणी ४१२
१७७६	,, गणेशप्रसाद शर्मा	,,	उत्तीर्ण ३१५
१७७८	,, जर्नादन राव अग्नि होत्री 'राकेश'	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१७८२	,, शिवदत्तसिंह भदौरिया	,,	उत्तीर्ण ३०१
१७८४	,, अम्बिकाकान्त मिश्र	लहेरिया सराय	प्रथम श्रेणी ४९१
१७८५	,, रामबुझावन झा	,,	तृतीय श्रेणी ३९४
१७८७	,, वासुदेव मिश्र	लक्ष्मण गढ़	,, ३३८
१७८८	,, गुलाबचन्द्र पुजारी	,,	,, ३७१
१७९०	,, कन्हैयालाल उपाध्याय	,,	द्वितीय श्रेणी ४३९
१७९५	,, रामविलास ठाकुर	लालगञ्ज	,, ४२२
१७९९	,, गुलाब भेंडे	वर्धा	[वि०यो० संस्कृत] अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१८००	,, प्रभुदयाल विद्यार्थी	,,	तृतीय श्रेणी ३२६
१८०३	,, रामअत्रवाल कर	,,	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१८०९	,, दुर्योधन वर्मा	वृन्दावन	विभाजित प्रणाली से अनुसार
१८१०	,, शालिगराम वर्मा	,,	तृतीय श्रेणी ३३५
१८१३	,, चन्द्रभानु सिंह	वैद्यनाथ धाम (सा० वि०)	,, ३५४
१८१९	,, कुलदीप सहाय	शकर पुरा	,, ३५०

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१८२२	श्री रामविलास सनाढ्य	शाहजहांपुर	द्वितीय श्रेणी ४०८
१८२३	" रामअधीन मिश्र 'सैनिक'	"	प्रथम श्रेणी ४८५
१८३०	" जगतनारायण श्रीवास्तव	सतना	तृतीय श्रेणी ३७७
१८३४	" रामसुशील मिश्र	"	द्वितीय श्रेणी ४५६
१८३६	" छगनलाल स्वामी	सर्दारशहर	तृतीय श्रेणी ३८६
१८३७	" सुमन्तप्रसाद	सहजनवां	" ३६१
१८३८	" रामकृपाल द्विवेदी	"	" ३७७
१८३९	" अक्षयवरप्रसाद द्विवेदी	"	" ३८०
१८४२	" पद्मनाभ तैलंग	सागर (म्यु॰ हा॰)	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१८४३	" अनसूया हर्देकर	"	"
१८४५	" विन्ध्याचल मिश्र	सारनाथ	तृतीय श्रेणी ३४२
१८४६	" सेवाराम	"	[वि॰ यो॰ संस्कृत] तृतीय श्रेणी ३३५
१८४८	" रामपति द्विवेदी	सिंगरामऊ	" ३९५
१८५०	" राजदेव त्रिपाठी 'कमलेश'	"	[वि॰ यो॰ संस्कृत] तृतीय श्रेणी ३३१
१८५१	" रामप्रसाद गुप्त	"	" ३७१
१८५२	" विद्याप्रसाद उपाध्याय	"	" ३७९
१८५३	" विद्याधर मिश्र	"	" ३४६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१८५४	श्री माताभीख सिंह	सिंगरामऊ	तृतीय श्रेणी ३८
१८५५	" पारसनाथसिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४६ [वि० यो० संस्कृत
१८५७	" वृजभूषणसिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४३
१८५८	" दयाशंकरलाल	"	तृतीय श्रेणी ३३
१८५९	" पारसनाथ लाल	"	" ३४
१८६०	" रामाचार्य उपाध्याय	"	" ३४
१८६१	" श्रीरामगुप्त	"	द्वितीय श्रेणी ४३
१८६२	" गिरिजापति दुबे	"	" ४३ [वि० यो० संस्कृ
१८६३	" कृपाशंकर सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४
१८६६	" राधारमण झा	सिंगिया	तृतीय श्रेणी ३८
१८६७	" दीनानाथ झा	"	द्वितीय श्रेणी ४०
१८६८	" दामोदरलाल दास	"	" ४३६
१८६९	' रामनारायण सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३
१८७०	" त्रिवेणीप्रसाद सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ४
१८७१	" विक्रमादित्य प्र० सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३
१८७२	" दामोदर मिश्र	"	" ३
१८७३	" छेदीलाल कुँवर	"	" १

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१८७६	श्री रामकर्ण द्विवेदी	सिरसा	द्वितीय श्रेणी ४०२
१८७७	" देवनारायण मिश्र	"	उत्तीर्ण ३१३
१८८०	" ललनजी पाण्डेय	सीताकुण्ड	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१८८१	" रामनाथ राम	"	द्वितीय श्रेणी ४४९
१८८२	" राजाराम पाण्डेय	"	प्रथम श्रेणी ४९४ [वि० यो० संस्कृत]
१८८३	" बाबूराम गुप्त	सीतापुर	द्वितीय श्रेणी ४०३
१८८५	श्रीमती विपुलादेवी	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१८८६	श्री लालजीसिंह ठाकुर	"	"
१८८८	श्रीमती वेदकान्ती	"	तृतीय श्रेणी ३४४
१८८९	श्री शुकदेव यति	सीवान	" ३६३
१८९०	" रामनयन द्विवेदी	सुलतानपुर	द्वितीय श्रेणी ४१०
१८९१	कुमारी उर्मिला श्रीवास्तव	"	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१८९३	श्री रामाभिलाष पाण्डेय	"	तृतीय श्रेणी ३५८
१८९४	" बलराम त्रिपाठी	"	द्वितीय श्रेणी ४२८
१८९५	" कृष्णानन्द शर्मा	"	उत्तीर्ण ३०४
१८९६	" सुखदेवप्रसाद मिश्र	"	तृतीय श्रेणी ३५४
१८९९	" देवनारायण पाठक	"	द्वितीय श्रेणी ४५९

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१९००	श्री चन्द्रचूड़मणि त्रिपाठी	सुलतानपुर	प्रथम श्रेणी ५६८ [वि० यो० सं०]
१९०२	श्रीमती चन्दन लता	”	तृतीय श्रेणी ३२३
१९०३	श्री रत्नाकर चतुर्वेदी	”	” ३८४
१९०४	” उमाशंकर मिश्र	”	” ३२१
१९०५	” रामप्रताप त्रिपाठी	”	उत्तीर्ण ३१५
१९१२	” केदारनाथ त्रिपाठी	सुहवल	तृतीय श्रेणी ३१८
१९१३	” हरिदेव पाण्डेय	सूरजगढ़	” ३५३
१९१९	” रामखेलावन सिंह	सेवदह	उत्तीर्ण ३१४
१९२२	” बनारस चौधरी ‘वीरेश’	”	तृतीय श्रेणी ३७४
१९२४	” सुखदेवप्रसादसिंह	”	उत्तीर्ण ३१६
१९२७	” सदाशिव महतो	”	तृतीय श्रेणी ३४६
१९३२	” रामेश्वरप्रसादसिंह ‘प्रसून’	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१९३३	” भुवनेश्वरप्रसाद सिंह	”	तृतीय श्रेणी ३५४
१९४६	” रामदेवसिंह ‘तरल’	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१९५२	” कालीप्रसाद वर्मा ‘सुमन’	”	”
१९५४	” अमरबहादुर सिंह	सोराम	तृतीय श्रेणी ३४१
१९५६	” अनन्तराम त्रिपाठी	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१९५७	श्री सत्यनारायण शुक्ल	सोराम	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१९५८	" महरानी दीन शुक्ल	"	तृतीय श्रेणी ३३३
१९५९	" उमाशंकर मिश्र	"	द्वितीय श्रेणी ४११
१९६१	" छोटेलाल सिंह	"	तृतीय श्रेणी ३५०
१९६३	" सूरजप्रसाद गुप्त	हमीरपुर	" ३३३
१९७२	" गुरूदेव प्रसाद दुबे	हरदा	" ३३०
१९७३	" हितनारायण चौधरी	हरदी	द्वितीय श्रेणी ४४०
१९७६	" प्रतिपाल सिंह	हरदोई (क्ष० हा० स्कूल)	तृतीय श्रेणी ३४०
१९७९	" रघुनाथ सिंह वर्मा	"	उत्तीर्ण ३०१
१९८०	" मुरलीधर दीक्षित	"	तृतीय श्रेणी ३७२
१९८१	" साहबलाल वर्मा	"	" ३९८
१९८४	" उमामहेश अवस्थी	हल्दौर	द्वितीय श्रेणी ४३३
१९८८	" पन्नालाल मिश्र	हाथरस	" ४४३
१९८९	" शिवलाल	"	तृतीय श्रेणी ३११
१९९१	" शिवनाथ जोशी	"	" ३३३
१९९२	" राधाकृष्ण सारस्वत	"	द्वितीय श्रेणी ४०१
१९९३	" प्यारेलाल शर्मा	हापुड़	" ४१२

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१९९४	श्री राधाशरण घोष	हुसेनगंज (सारन)	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१९९८	,, चतुरलाल	होलीपुरा	द्वितीय श्रेणी ४१७
२००२	,, छोटेलाल प्रधान	हंडिया	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२००५	,, रघुवीर शर्मा त्यागी	मेरठ	तृतीय श्रेणी ३७०
२०११	,, महेश्वरीप्रसाद	मुँगेर (टाउन हाई स्कूल)	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
२०१२	,, बलदाऊ सिंह	प्रयाग [सम्मेलन कार्यालय]	द्वितीय श्रेणी ४२२
२०२३	,, बेचूपाठक	बम्बई (मा० वि०)	उत्तीर्ण ३०९
२०२५	श्रीमती विमला कुमारी	प्रयाग (सम्मेलन कार्यालय)	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
२०२६	श्री हरदयाल शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ४२१
२०२७	,, जागेश्वर झा	बहदुरा	तृतीय श्रेणी ३७४
२०२८	,, रमासेश्वर सिंह	,,	,, ३५८
२०२९	,, विद्याधर उपाध्याय	रमासांढ़	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२०३०	,, फतह बहादुर सिंह	प्रयाग (सम्मेलन कार्यालय)	,,
२०३२	,, अद्याचरण पाण्डेय	,,	तृतीय श्रेणी ३८६
२०३३	श्रीमती सरला देवी	सीतापुर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२०३४	श्री ललितकिशोरदास	रामासांढ़	प्रथम श्रेणी ५२२ [वि० यो० संस्कृत]
२०३६	,, महन्त द्वारिकादास	,,	द्वितीय श्रेणी ४११ [वि० यो० संस्कृत]

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०३८	श्री भागवत पोद्दार	प्रयाग (स० कार्या०)	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१०३९	श्रीमती नर्मदाबाई सरवटे	कोटा	अध्याय ३ नियम ७ के अनुसार
१५७१	श्री त्रिवेणीप्रसाद शर्मा	मोरसण्ड	विभाजितप्र०केअनुसार

वैद्य-विशारद परीक्षा

७	श्री बालमुकुन्द	आगर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८	,, प्रभुदयाल शर्मा	आगरा	,,
२१	,, ओंकारदत्त शर्मा	कांधला	प्रथम श्रेणी ५४७ [वि०यो०स्वा०वि० द्रव्यवि०औरमौखिक]
२६	,, प्रदीपनारायण	गया	तृतीय श्रेणी ४०९
३३	,, महावीरप्रसाद शर्मा	जयपुर	,, ४२६
४७	,, विश्वेश्वरप्रसाद	प्रयाग	विभाजित प्रणाली के के अनुसार
४९	,, कन्हैयालाल गुप्त	,,	,,
५३	श्रीमती रुक्मिणी द्विवेदी	,,	,,
५५	,, रामानुज त्रिपाठी	,,	,,
५७	,, ओंकारनाथ अवस्थी	प्रयाग (दा०हा० स्कू०)	प्रथम श्रेणी ५६८ [वि०यो०स्वा०वि०, शरीरवि०औररोगवि.]
५८	,, रुद्रमणि त्रिपाठी	,,	प्रथम श्रेणी ५४७ [वि.यो.स्वा.औरद्रव्य]
५९	,, शिवसिंहासन मिश्र	पांचाली	प्रथम श्रेणी ५९२ [स्वा.वि.औरमौखिक]

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६०	श्री हरनारायण कुलश्रेष्ठ	पाढ़म	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६१	श्रीमती रामबेटी शर्मा	"	द्वितीय श्रेणी ४८६
७१	" बकाराम	बैतूल	तृतीय श्रेणी ३९२
७८	" दीनदयाल प्रसाद शर्मा	राजनांद गांव	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८२	" वासुदेव सिंह	रंगून	"
८५	" मुनीश्वर सिंह	सिंगरामऊ	"
८८	" रामदेव मुंडेल	संगरिया	विभाजित प्रणाली के अनुसार
८९	" गोवर्धन लोमरोड़	"	"　"
९४	" चम्पालाल पाराशर	हरदा	द्वितीय श्रेणी ४७३
९५	" शिवचरण लाल	"	प्रथम श्रेणी ५६५ वि.यो.स्वा.औरमौलि

कृषि-विशारद परीक्षा

१	श्री मथुरानाथ तिवारी	आरा	तृतीय श्रेणी ३१२
३	" केशवदत्त पन्त	ताड़ीखेत	"　३०६
४	" गोपालदत्त उपाध्याय	"	"　३१५
५	" हनुमानप्रसाद राय	तेऊस	द्वितीय श्रेणी ३७१
८	" रामेश्वर शर्मा	पिलानी	तृतीय श्रेणी २६६
९	" परमेश्वरप्रसाद सिंह	बहदुरा	"　२९२

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०	श्री रामचन्द्र मिश्र	रतसण्ड	द्वितीय श्रेणी ४०२
११	" निजामुद्दीन खाँ	रतसण्ड	द्वितीय श्रेणी ३७९
१२	" श्रीकृष्णराय	"	" ३९६
१३	" मनवीर राय	"	" ३६९
१४	" सिराजुद्दीन खाँ	"	" ३६०
१५	" सरयूप्रसाद सिंह	हंडिया	तृतीय श्रेणी ३२१

प्रथमा परीक्षा

१	श्री भगवन्त राव	अइतानगर प्याले	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२	" बी सत्यनारायण चौधरी	"	"
४	श्रीमती बी० राजेश्वरी कुमारी	"	"
५	श्री मा. पिच्चया	"	"
९	" क० सीता रामय्या	"	"
१०	" रामभुजी	अकबरपुर (फर्रुखाबाद)	"
११	" मङ्गलीप्रसाद	"	"
१२	" फौजदार सिंह	"	"
१३	" रामचन्द्र चतुर्वेदीय	"	"
१४	" जगदीशशरण शुक्ल	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१७	श्री देवेन्द्रसिंह वर्मा	अकोला	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
१८	" मातुराय	"	"
१९	" ओंकारप्रसाद	"	"
२०	श्रीमती सौ० रमादेवी शर्मा	"	"
२१	श्री बृजमोहन तापड़िया	"	"
२४	" परमानन्द पचोरी	"	"
२५	" योगेन्द्रप्रसाद सिंह	अथरी	"
२६	" राधाकृष्णसिंह	"	"
२७	" मथुराप्रसाद सिंह	"	"
२८	श्रीमती प्रेमसागरदेवी 'पुष्प'	"	"
३१	श्री हरिप्रसाद	अनूपशहर	तृतीय श्रेणी २९८
३३	" घीसासिंह	अमरोहा	अध्याय ३ नि० १ के अनुसार
३५	" कल्याणसहाय पारीक	अलवर	तृतीय श्रेणी ३१३
३६	" दामोदरलाल सिंहल	"	द्वितीय श्रेणी ३२
३७	" रामकृष्ण 'मित्र'	"	" ३१८
३९	" बुधपालसिंह	अलीगढ़	" ३५१
४१	" रामरक्षपाल	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
४३	श्री अजयपाल वार्ष्णेय	अलीगढ़	तृतीय श्रेणी ३११
४४	" बनवारीलाल पांडे	"	" २७८
५०	" रामजी	आगरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५१	" हुकमसिंह	"	"
५२	" शिवचरनलाल शर्मा	"	"
५३	" भगवती प्रसाद	"	"
५४	" मुन्नीलाल तिवारी	"	"
५६	" केशवलाल	"	"
५७	" रामबाबू	"	"
५९	" भवासीलाल शर्मा	"	"
६०	" नन्दकुमार	"	"
६१	" ज्ञानचन्द जैन	"	"
६५	" रघुनन्दनप्रसाद	"	"
६६	" दाऊदयाल खंडेल वाल	"	"
६७	" रणजीत सिंह	आजमगढ़	"
७१	" प्रकाशनाथ	आबूरोड	द्वितीय श्रेणी ३९२ [वि० यो० स्वा०]
७२	" उदयनारायण राय	आरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
७४	श्री रामानन्द सिंह	आरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७५	,, राधाकृष्ण	,,	,,
७६	,, कमलकिशोर	इच्छावर	,,
८१	,, भगवती प्रसाद	,,	द्वितीय श्रेणी ३२८
८२	,, श्यामाकिशोर	इटारसी	तृतीय श्रेणी ३०४
८३	,, हीरालाल	,,	द्वितीय श्रेणी ३३७
८४	,, एरिक ह्यूबर्ट केलिव	,,	तृतीय श्रेणी २६१
८६	,, दत्तात्रय शिन्दे	,,	,, ३०५
८७	,, कमलकिशोर दुबे	,,	द्वितीय श्रेणी ३४६
९१	,, हरनाथराम शर्मा	इम्फाल	तृतीय श्रेणी २५२
९४	श्रीमती रुक्मिणीदेवी स्वामी	इन्दौर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
९५	श्री कन्हैयालाल यादव	,,	द्वितीय श्रेणी ३६८
९८	,, प्रयागसिंह	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
९९	श्रीमती कुमारी सरलादेवी शर्मा	,,	,,
१०४	श्री प्रभाकर	,,	,,
१०८	,, मालतीलता दुबे	,,	तृतीय श्रेणी २६१
११०	,, कुन्दनमल	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
११३	श्री परमात्मादीन तिवारी	इन्दौर	द्वितीय श्रेणी ३२७
११४	,, चन्दनलाल मेहता	,,	तृतीय श्रेणी २८९
११५	श्रीमती कुमारी कमलावती जैन	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१२०	,, कस्तूरी बाई	,,	तृतीय श्रेणी २५२
१२१	,, राधाबाई	,,	,, ३०३
१२२	श्री भगवानदीन	,,	,, २५५
१२३	,, चि० मदनमोहन जोशी	,,	,, ३११
१२४	,, सुरेन्द्रनारायण वागोरा	,,	द्वितीय श्रेणी ३२२
१२५	,, धरणीधर द्विवेदी	ईशीपुर	तृतीय श्रेणी ३१२
१२८	,, कृष्णराव लोकरे	उज्जैन	द्वितीय श्रेणी ३३२
१३०	,, भगवानदास अधिकारी	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३१	,, रतनसिंह	,,	,,
१३४	,, गोहथनलाल ओझा	,,	,,
१३७	,, बालकृष्ण जोशी	,,	तृतीय श्रेणी ३११
१४०	,, तख़्तमल इन्द्रावत	उदयपुर (सा० वि०)	द्वितीय श्रेणी ३३२
१४१	,, गणेश शर्मा	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४२	,, गोविन्द माधव	उदयपुर (हि० वि० पी०)	द्वितीय श्रेणी ३२२

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१४४	श्री विश्वेश्वरदयाल औदीच्य	उदयपुर (हि० वि० पी०)	तृतीय श्रेणी १७५
१४६	,, राजेन्द्रलाल सेठी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१४८	,, जमनालाल पोरवाल	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५०	,, हरिवल्लभ	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१५१	श्रीमती चन्द्रकला देवी विशेन	,,	,,
१५२	श्री अमृतलाल यादव	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५३	,, बाबूराम श्रीवास्तव	उरई	तृतीय श्रेणी २८
१५४	,, आत्माराम शुक्ल	,,	द्वितीय श्रेणी ३५२
१५६	,, मन्नीलाल	,,	,, ३७६ [वि० यो० गणित]
१५७	,, द्वारिकाप्रसाद	,,	द्वितीय श्रेणी ३५० [वि० यो० ड्रा०]
१५८	,, कुं० हाकिमसिंह कौशल	,,	प्रथम श्रेणी ४३१ [वि.यो.गणि.औरड्रा.]
१५९	,, यदुवंशभूषण खरे	,,	द्वितीय श्रेणी ३४
१६०	,, कल्लूसिंह	,,	,, ३३६
१६१	,, भूपसिंह	,,	,, ३१६
१६२	,, मुन्नालाल	,,	तृतीय श्रेणी ३१३
१६३	,, विद्याधर तिवारी	,,	द्वितीय श्रेणी ३८
१६४	,, सोहनसिंह सेंगर	,,	तृतीय श्रेणी २६६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६५	श्री मुरलीधर सक्सेना	उरई	द्वितीय श्रेणी ३८५
१६६	" ईश्वर सिंह	एलम	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६७	श्रीमती बलदेवी	"	द्वितीय श्रेणी ४११
१६८	श्री सूरजभान	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१७०	" रेवतीराम	ओयल	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७४	" रामशङ्कर	"	द्वितीय श्रेणी ३२९
१७५	" कु० उदयराजसिंह गौड़	"	" ३२६
१७६	" गोविन्दसिंह तड़ागी	"	तृतीय श्रेणी २९५
१७७	" गयाप्रसाद दीक्षित	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७९	" ए० वीरेन्द्र राव	कटनी	"
१८०	" द्वारकाप्रसाद अग्रवाल	"	"
१८१	" मातादीन स्वर्णकार	"	"
१८४	" गुलाबचंद चौदहा	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१८५	" सूर्यनाथ मिश्र	कटया	द्वितीय श्रेणी ३५२
१८६	" विश्वनाथ मिश्र	"	" ३५८
१८७	" महेश्वरी राय	"	" ३९०
१८८	" रामसुचित राय	"	" ३३९
१८९	" शिवप्रसाद तिवारी	"	" ३३४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१९०	श्री श्यामसुन्दर	कटिहार	द्वितीय श्रेणी ३३६
१९१	" मङ्गलचन्द	"	तृतीय श्रेणी २७३
१९२	" समरेन्द्रनाथसिंह	"	" २९७
१९५	" शक्तिप्रसाद भार्गव	कन्नौद	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१९६	श्रीमती सत्यवती भार्गव	"	"
१९८	" शीतलप्रसाद	"	"
२०२	" राजवल्लभसिंह	करनौती	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२०३	" पुण्यदेव ओझा	करसियांग	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
२०६	" कुन्दनमल कांकाणी	"	"
२०७	" रामस्वरूप पोद्दार	कलकत्ता (माहेश्वरी वि०)	"
२०८	" हीरालाल दमाणी	"	"
२०९	" रमाशंकर पांडे	"	"
२१०	' महावीरप्रसाद तोदी	"	"
२११	" सिद्धनाथसिंह सिद्धेश	"	"
२१२	" मुन्नालाल अग्रवाल	"	"
२१३	" सोहनलाल लोहिया	"	"
२१६	" पूरणमल मोर	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
२१७	श्री जटाशंकर तिवारी	कलकत्ता (माहेश्वरी वि०)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२२०	,, द्वारिकाप्रसाद सोमानी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२२१	,, लक्ष्मीनारायण हर्ष	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२२३	,, सीताराम केडिया	,,	,,
२२४	,, गोपाल सुरेका	कलकत्ता (तु० सा० वि०)	,,
२२६	श्रीमती कुमारी चम्पावती लाठ	,,	द्वितीय श्रेणी ३१६
२२८	श्री हुलास चन्द्र दुगड़	कलकत्ता (जैन श्वे०तेरा० वि०)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२२९	,, मिन्नालाल वरड़िया	,,	,,
२३०	,, गोपालसिंह कोचर	,,	,,
२३२	,, शिवकिशोर वाजपेयी	,,	,,
२३५	,, बनारसराय	कसाप	तृतीय श्रेणी २६९
२३६	,, अजबदयाल सिंह	,,	,, २५२
२३८	,, सिद्धनाथ गिरि	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२३९	,, बल्ल अक्कराजु	काकिनाडा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२४१	श्रीमती सुर्यमुखी देवी	कानपुर (सना० ध० का०)	,,
२४२	,, देवीप्रसाद वाजपेयी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
२४५	,, शीतलप्रसाद गुप्त	कानपुर(डी० ए० वी० का०)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
२४७	श्री संकठा प्रसाद शुक्ल	कानपुर(डी० ए० वी० का०)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२४८	" मोतीलाल शुक्ल	"	"
२४९	" वृन्दावन गुप्ता	"	"
२५०	" रामचन्द्र निगम	"	"
२५१	" मुन्नीलालमिश्र	"	"
२५२	" कु० कैलाशसिंह कुशवाहा	"	"
२५३	" श्यामलाल मिश्र	"	"
२५४	" महेशदत्त दीक्षित	"	"
२५५	" कालिकाप्रसाद श्रीवास्तव	"	"
२५६	" सूर्यपालसिंह	"	"
२५७	" रामत्रिपाठी	"	"
२५८	" विद्यासागर पाण्डेय	"	"
२५९	" रामकुमार मिश्र	"	"
२६२	" रामकामता दीक्षित	"	"
२६६	" सदरे आलम	कालिम्पोङ्ग	तृतीय श्रेणी २१
२६९	" नरेन्द्रप्रसाद कुमाई	"	" २१
२७०	" तुलसी बहादुर क्षत्री	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
२७८	श्री ठाकुरदत्त त्रिपाठी	काशी	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२७९	,, उमेश त्रिपाठी	,,	,,
२८०	,, फुन्दनसिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ३२४
२८१	,, रामललित द्विवेदी	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२८५	,, पुरुषोत्तमसिंह	,,	तृतीय श्रेणी २९१
२८८	,, शीतल झा	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
२८९	,, राजनारायणसिंह	,,	,,
२९३	श्रीमती इन्दिरा कुमारी	,,	,,
२९४	श्री शोभनाथ पाण्डेय	,,	द्वितीय श्रेणी ३४९ [वि० यो० ग०]
२९५	,, राजपति उपाध्याय	,,	द्वितीय श्रेणी ३३८
२९७	,, कुलदेवनारायण सिंह	काशी (उ०प्र०काले०)	,, ३३२
२९८	,, रघुवीर सिंह	,,	,, ३१८
३००	,, भीकमचन्द	किरावली	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
३०१	,, बाबूलाल कुलश्रेष्ठ	,,	,,
३०४	,, रामयज्ञ चौधरी	कुआँगढ़ी	द्वितीय श्रेणी ३२५
३०६	,, परशुराम मंडल	,,	तृतीय श्रेणी ३१२
३०९	,, राधेमोहन पाठक	,,	,, २९६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३१०	श्री लक्ष्मीनारायण पाठक	कुआँगढ़ी	तृतीय श्रेणी ३०२
३११	श्रीमती विद्यावती	कुरावली	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
३१२	श्री नरेन्द्रनाथ तिवारी	कुशीनगर	तृतीय श्रेणी २७४
३१४	,, गौरीशंकर	कुक्षी	तृतीय श्रेणी २४५
३१५	,, रामलाल वर्मा	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
३१६	,, राजमल जैन	,,	,,
३१७	,, रामगोपाल स्वामी	कोटरा	,,
३१८	,, बद्रीप्रसाद व्यास	,,	,,
३२१	,, रघुवीरप्रसाद व्यास	,,	,,
३२३	,, सरयूप्रसाद श्रीवास्तव	,,	,,
३२४	,, प्रेमचन्द्र	,,	तृतीय श्रेणी २८०
३२५	,, मगनलाल ओराठौड़	कोटा (भार० स०)	,, २७९
३२८	,, देवेन्द्र तिवारी	खगड़िया	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
३२९	,, रामदेव तिवारी	,,	,,
३३०	,, युगुलप्रसादसिंह	,,	,,
३३३	,, परमेश्वर झा	,,	तृतीय श्रेणी २९०
३३७	,, रामधनी	खजुहा	द्वितीय श्रेणी ३१६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३३८	श्री रामराज त्रिपाठी	खड़गपुर	तृतीय श्रेणी २५५
३३९	” श्यामराज पांडेय	”	” २८१
३४०	” खिम्मनलाल	”	” २६८
३४३	” रामदीन यादव	खपड़ाडीह	द्वितीय श्रेणी ३६२
३४४	” रामजियावन पाण्डेय	”	प्रथम श्रेणी ४४५ [वि.यो.भू०औरस्वा०]
३४६	” विक्रमादित्य शुक्ल	”	प्रथम श्रेणी ४२१ [वि० यो० स्वा०]
३४७	” लक्ष्मीनारायण पाण्डेय	”	द्वितीय श्रेणी ३४८ [वि० यो० स्वा०]
३४८	” श्रीकृष्ण मिश्र	गढ़बनैली	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
३४९	” कालिकानन्द झा	”	”
३५२	” रामशरणसिंह वर्मा	गया	द्वितीय श्रेणी ३३९
३५३	” गिरिजेश बहादुर सिंह	”	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
३५४	” गोविन्दास कठल	गाड़रवारा	”
३५५	” रामस्वरूप जायसवाल	”	”
३५७	” नित्यगोपाल नागायच	”	”
३५९	” मुरली मनोहर काबरा	”	”
३६०	” गोपीकृष्ण राठी	”	”
३६५	” अवधेशकुमार सिंह	गोरिया कोठी	द्वितीय श्रेणी ३३१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३६६	श्री अशर्फ़ीराम	गोरिया कोठी	द्वितीय श्रेणी ३२९
३६८	,, कमलदेव सिंह	,,	,, ३२२
३७०	,, चन्द्रकेतु नारायणसिंह	,,	,, ३२५
३७१	,, चन्द्रमाप्रसाद	,,	,, ३४१ [वि० यो० गणि०]
३७३	,, तृपितनारायण राय	,,	द्वितीय श्रेणी ३१६
३७४	,, पीताम्बर सिंह	,,	,, ३५६
३७५	,, वासुदेवप्रसाद	,,	,, ३६३
३७६	,, भगवती सिंह	,,	,, ३४१ [वि० यो० गणि०]
३७७	,, मधुवन तिवारी	,,	द्वितीय श्रेणी ३४९
३७८	,, रमाकान्त सिंह	,,	,, ३८४
३७९	,, राधाकृष्णसिंह	,,	,, ३२१
३८०	,, रामधरिक्षण सिंह	,,	,, ३३६
३८१	,, रामपूजन सिंह	,,	,, ३२३
३८२	,, रामप्रसन्न सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३०९
३८३	,, रामरत्न रावत (प्रसादराय)	,,	,, ३०३
३८४	,, रामसुरत महतो	,,	द्वितीय श्रेणी ३८९
३८५	,, हरिहर प्रसाद	,,	तृतीय श्रेणी २८९

म ंख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
८७	श्री नौरत्न सिंह	गौरिया कोठी	तृतीय श्रेणी ३०७
८८	,, त्रिगुण सिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ३५४
८९	,, मदनलाल अग्रवाल	चाईबासा	,, ३४७
९०	,, बासुदेवराम मास्टर	,,	,, ३५८
९१	,, नन्दलाल खीरवाल	,,	,, ३४१
९२	,, वाया जेराई	,,	,, ३५३ [वि० यो० गणित]
९३	,, खृष्ट जोय कण्डुलना	,,	तृतीय श्रेणी ३१२
०१	,, महावीरप्रसाद शर्मा	चिड़ावा	द्वितीय श्रेणी ३४८
०३	,, विष्णुदेव सिंह	चिरौरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
०४	श्रीमती ललिता देवी	चुरू	,,
०६	श्री राजेन्द्रप्रसाद सिंह	छपरा	,,
०७	,, रामप्रवेश सिंह	,,	,,
०८	,, कपिलदेव नारायण सिंह	,,	तृतीय श्रेणी ३०९
०९	,, अम्बिकाप्रसाद शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ३४०
१०	,, कन्हैयालाल	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११	,, विश्वनाथसिंह	,,	,,
१२	,, सतीशसिंह	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्तां
४१३	श्री मेहता जगनारायण	छपरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
४१४	" सुशीलकुमारसिंह	"	"
४१५	" शिवटहल रावत	"	"
४१७	" हरिशङ्कर उपाध्याय	"	"
४१८	" कालकाप्रसाद अवस्थी	छिन्दवाड़ा	"
४१९	" मोरेश्वर राव	"	"
४२०	" गंगाधर दास	जगदलपुर	द्वितीय श्रेणी ३१७
४२१	" वसन्तलाल झा	"	" ३३१
४२२	" लक्ष्मीचन्द जैन	"	तृतीय श्रेणी ३०८
४२४	" कमालुद्दीन	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
४२५	" ए० के० मुकर्जी	"	"
४२७	" यमुनादास	जन्दाहा	द्वितीय श्रेणी ३२६
४२८	" भोलाराम	जबलपुर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
४३४	" सरलादेवी तिवारी	"	"
४३५	" लाजपत शर्मा	जयपुर	द्वितीय श्रेणी ३४०
४३७	" गोपालचन्द्र पराशर	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
४३८	" रत्नाकर भारतीय	"	द्वितीय श्रेणी ४०१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३९	श्री हरिशंकर	जावद	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
४०	,, कन्हैयालाल नागोरी	,,	,,
४१	,, शङ्करलाल	,,	,,
४८	,, रघुवंशनारायण सिंह	जैतपुर	,,
४९	,, राणा राजेन्द्र सिंह	,,	,,
५०	,, जयनाथसिंह	,,	,,
५१	,, सीतारामसिंह	,,	,,
५२	,, रामस्वार्थसिंह	,,	,,
५३	श्रीमती जानकीबाई	जोधपुर	,,
५४	श्री सदाशङ्कर बोहरा	,,	द्वितीय श्रेणी ३२६
५५	,, अमृतराज	,,	,, ३२९
५६	,, गोविन्दलाल गोविल	,,	तृतीय श्रेणी २९३
५७	,, उगमसी मोदी	,,	,, ३०२
५८	,, पारसमल मुथा	,,	द्वितीय श्रेणी ३८१ [वि० यो० गणि०]
६०	,, भीष्मचन्द लुनिया	,,	द्वितीय श्रेणी ३५८
६१	,, प्रकाशलाल बापना	,,	,, ३६२
६२	,, सुख सम्पतराज मेहता	,,	,, ३५१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्रा
४६४	श्री श्रीलाल ओझा	जोधपुर	द्वितीय श्रेणी [वि० यो० कृ
४६९	,, रामबली	जौनपुर	अध्याय ३ नि ३ के अनुसा
४७०	,, भगलराम	,,	,,
४७२	,, रणधीर सिंह	झरिया	प्रथम श्रेणी [वि० यो० इति
४७३	,, जयन्तीलाल चावड़ा	,,	द्वितीय श्रेणी
४७४	,, शैलेन्द्रकुमार सिंह	,,	अध्याय ३ नि ३ के अनु
४७८	,, मनीराम गुप्ता	झांसी	,,
४७९	,, नथमल खेतान	झुंझनू	तृतीय श्रेणी
४८०	,, मालीराम टीबड़ेवाला	,,	द्वितीय श्रेणी
४८१	,, मोहनलाल पंसारी	,,	,,
४८४	,, शिवनाथ सिंह आर्य	,,	,,
४८६	,, कमलचन्द सिन्धानची	,,	,,
४८७	,, रणजीतसिंह वर्मा	,,	तृतीय श्रेणी
४८९	,, मातादीन कैड़िया	,,	द्वितीय श्रेणी
४९०	,, पुष्करलाल तुलस्यान	,,	,,
४९२	,, सत्यनारायण पाठक	,,	,,
४९५	,, बनवारीलाल गाड़िया	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
४९६	श्री विश्वनाथ गाड़िया	झुंझनू	द्वितीय श्रेणी ४०६
४९८	" महाबीरप्रसाद टिबड़ेवाला	"	" ३२६
४९९	" रामकिशन पंसारी	"	तृतीय श्रेणी २९४
५००	" कु० खेतसिंह	"	द्वितीय श्रेणी ३५८
५०१	" मनोहरलाल टण्डन	टाण्डा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५०२	" कुलदीपसिंह	"	द्वितीय श्रेणी ३३६
५०४	" विजयनारायण टण्डन	"	तृतीय श्रेणी ३१३
५०५	" नरेन्द्रनाथ मेहरोत्रा	"	" " २९२
५०६	' हनुमानप्रसाद	"	" २८४
५०८	" प्यारे मोहन शर्मा	"	द्वितीय श्रेणी ३१८
५०९	" सत्यनारायण शर्मा	"	" ४१२ [वि० यो० धर्म०]
५१०	श्रीमती प्रेमादेवी	टीकमगढ़	द्वितीय श्रेणी ३९०
५११	" शान्ती देवी	"	" ३३७
५१२	" मानकुँवर देवी	"	" ३३८
५१३	" शीलवती देवी	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५१७	श्री अखिलेश्वर झा	टीकापट्टी	तृतीय श्रेणी ३१४
५१८	" रामलाल मण्डल	"	द्वितीय श्रेणी ३५१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५१९	श्री हरदेवप्रसाद मंडल	टीका पट्टी	द्वितीय श्रेणी ३५५
५२०	" बदरीप्रसाद लाल	"	" ३२३
५२३	" सत्यदेवप्रसाद मंडल	"	तृतीय श्रेणी २४७
५२४	" सत्यदेव नारायणसिंह	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५२५	" अर्जुनलाल	"	"
५२६	" जयन्तीप्रसाद चौधरी	"	"
५२७	" एम० सत्यनारायण राजू	"	"
५२८	" रामप्रसाद साह	"	"
५२९	एन अच्युतन एषुतच्छन	"	"
५३०	" भगीरथप्रसाद साह	"	"
५३१	" विन्ध्येश्वरीप्रसाद सिंह	"	"
५३२	" मुंशीलाल माहेश्वरी	डिबाई	"
५३४	" बलवन्तसिंह	"	प्रथम श्रेणी ४६३ [वि० यो० भूगो०]
५३५	" लक्ष्मीपति चतुर्वेदी	"	द्वितीय श्रेणी ३५७
५३७	" गुलाबचन्द जैन	डिब्रूगढ़	तृतीय श्रेणी २६८
५३८	" शिवयत्नप्रसाद	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५३९	" माणिकचन्द वाकलीवाल	"	तृतीय श्रेणी २६२

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५४१	श्री नथमल वाकलीवाल	डिब्रूगढ़	तृतीय श्रेणी २७१
५४२	„ लक्ष्मणसिंह	„	„ २७३
५४३	„ जनकराज ओझा	डुमरांव	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५४५	„ हृदयानन्द सहाय	„	द्वितीय श्रेणी ३३८
५४९	„ द्वारकालाल	„	तृतीय श्रेणी ३०४
५५०	„ प्रतापसिंह	„	द्वितीय श्रेणी ३२८
५५१	„ ईश्वर दयाल सिंह	„	तृतीय श्रेणी २७९
५५२	„ हरि विलास गोस्वामी	„	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५५३	„ परमहंस पांडेय	„	द्वितीय श्रेणी ३१७
५५४	„ लाल नारायण सिंह	डुमरी	तृतीय श्रेणी २८१
५५५	„ वंशी सिंह	„	„ ३१०
५५६	„ दीपनारायण सिंह	„	„ २९४
५५८	„ जगत नारायण यादव	„	„ २७७
५६०	श्रीमती रामरती देवी	„	„ २९९
५६१	श्री हज़ारी सिंह	„	„ २९२
५६६	„ महादेव प्रसाद त्रिपाठी	ढिंगवस	„ ३०१
५६७	„ त्रिभुवननाथ द्विवेदी	„	द्वितीय श्रेणी ३५२ [वि० यो० गणि०]

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५६८	श्री भागवतदत्त मिश्र	ढिंगवस	द्वितीय श्रेणी ३२८
५६९	” महादेवप्रसाद मिश्र	”	” ३३२
५७०	” रामखेलावन शुक्ल	”	तृतीय श्रेणी ३०४
५७१	” महादेवप्रसाद शुक्ल	”	द्वितीय श्रेणी ३३४
५७२	” शीतलाप्रसाद त्रिपाठी	”	” ३३१
५७३	” चन्द्रभान त्रिपाठी	”	” ३४४ [वि० यो० गणि०]
५७४	” दुर्गादीन शुक्ल	”	द्वितीय श्रेणी ३३२
५७५	” विद्याभूषण शुक्ल	”	” ३९५ [वि० यो० गणि०]
५७६	” जगदीश बहादुरसिंह	”	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५७८	” विश्वम्भरनाथ	”	द्वितीय श्रेणी ४१६ [वि० यो० गणि०]
५७९	” अमरसिंह मन्सारी	ताड़ीखेत (अल्मोड़ा)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५८०	” लालसिंह गढ़िया	”	”
५८१	” कृष्णसिंह पड्यार	”	”
५८२	” नन्दसिंह स्योंत्री	”	”
५८३	” प्रेमवल्लभ शर्मा	”	”
५८४	” देवीदत्त नैलवाल	”	”
५८५	” वल्लभ पांडेय	”	”

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५८६	श्रीचन्द्रदत्त पंत	ताड़ी खेत (अल्मोड़ा)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५८७	,, प्रेमवल्लभ जोशी	,,	,,
५९२	,, गिरिजाशंकर अवस्थी	तिर्वा	तृतीय श्रेणी ३०५
५९३	श्रीमती शकुन्तलादेवी त्यागी	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५९४	श्री तुलसीराम	,,	प्रथम श्रेणी ४३६
५९५	,, देवीशंकर द्विवेदी	,,	द्वितीय श्रेणी ३४०
५९६	,, करनलाल	,,	तृतीय श्रेणी ३०६
५९७	,, सिद्धनाथ	,,	,, ३०२
५९८	,, नरेन्द्रनारायण शुक्ल	,,	द्वितीय श्रेणी ३९४
५९९	,, वटेश्वरदयाल वर्म्मा	,,	तृतीय श्रेणी ३०९
६००	,, जगदीशचन्द्र त्यागी	,,	द्वितीय श्रेणी ३६८
६०१	,, कनौजीलाल लोध क्षत्रिय	,,	,, ३३१
६०२	,, कृपाशंकर पाठक	,,	,, ३५८
६०३	,, जगदीशप्रसाद सिंह	तिलौथू	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
६१०	,, इन्द्रेश्वर द्विवेदी	,,	,,
६१२	,, रामकृपालुराय	तेऊस	तृतीय श्रेणी २६९
६१३	,, बीरेन्द्रप्रसाद	,,	,, २८३

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६१४	श्री कमल नयन सिंह	तेऊस	तृतीय श्रेणी २५५
६१६	" देवेन्द्रप्रसाद सिंह	"	" २७७
६१८	" शिवशंकर प्रसाद सिंह	"	" २८५
६२५	" रामदास सक्सेना	दतिया	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
६२९	" राम सेवक सक्सेना	"	"
६३०	श्रीमती ब्रजरानी श्रीवास्तव	"	"
६३१	श्री शिवराम त्रिपाठी	"	"
६३२	" नाथूराम	दवोह	"
६३८	" तुलसीदास दुबे	"	तृतीय श्रेणी २५९
६४१	" बशारत खां	"	" २८२
६४३	" राजेन्द्र प्रसाद	दलसिंगसराय	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
६४४	" युगल किशोरप्रसाद सिंह	"	"
६४५	" रामकरण चौधरी	"	"
६४६	" जगदीश प्रसाद चौधरी	"	"
६४७	" वाशिष्ट नारायण ठाकुर	"	"
६४८	" शिवदेव चौधरी	"	"
६५०	" सिद्धेश्वर सिंह	दानापुर	"
६५१	" रामावतार लाल	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६५४	श्री शिलानाथप्रसाद	दिघवारा	द्वितीय श्रेणी ३३७
६५५	" किशनलाल गुप्त	दिल्ली	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
६५६	" आनन्द स्वरूप शर्मा	"	"
६५७	" गुरबक्सलाल आनन्द	"	"
६५९	" राजेन्द्र गुप्ता	"	"
६६१	श्रीमती सत्यवती भार्गव	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
६६२	श्री फूलचन्द गोईल	दुर्ग	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
६६३	" नागेन्द्रप्रसाद सिंह	देव	"
६६७	" श्रवणकुमार सिंह	देवरिया	तृतीय श्रेणी २८३
६६८	" भीमसिंह	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
६६९	" विन्ध्याचलमणि त्रिपाठी	"	"
६७४	" घासीराम	देवास	द्वितीय श्रेणी ३३५
६७५	" रामखेलावनसिंह	"	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
६७६	" गङ्गाराम वर्मा	"	तृतीय श्रेणी २९६
६८०	" भगवतीप्रसाद	"	द्वितीय श्रेणी ३१७
६८२	श्रीमती रुक्मिणीबाई	"	तृतीय श्रेणी २६२
६८९	श्री प्रह्लादनारायण सुपेकर	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
६९०	श्री लक्ष्मणराव दुवे	देवास	तृतीय श्रेणी २८१
६९२	" भंवरलाल	"	द्वितीय श्रेणी ३३८
६९७	" रणसिंह	देहरादून (डी० ए०वी० काले०)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
६९८	" रामप्रसाद घिल्डियाल	"	"
६९९	" कृपालसिंह रावत	"	"
७००	" नन्दकिशोर गोयल	"	"
७०१	" दयानन्द	"	"
७०२	" भगवतप्रसाद	"	"
७०४	" चिंतामणि	"	"
७०५	" रामवृक्ष	दोहरीघीट	"
७०६	" सत्यराम	"	"
७०७	" बलदेवराय	धमौरा	तृतीय श्रेणी २५५
७११	" अभिमन्युराव	धूसी	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७१२	" रामभरोसा प्रसाद	"	"
७१३	" श्रीनिवास	"	तृतीय श्रेणी २७२
७१५	" काशीसिंह	"	" २८३
७१७	श्रीमती गुलायन्ती देवी	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
७२१	श्री गनेशीलाल	धौलागढ़	तृतीय श्रेणी २७३
७२२	,, नारायण प्रसाद	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७२३	,, श्रीकृष्ण दास	,,	तृतीय श्रेणी २५५
७२५	,, प्रेमनारायण मारवाड़ी	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७२८	,, भगवान लाल	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७२९	,, बल्देव प्रसाद	,,	,,
७३०	,, लखमीचन्द शर्मा	,,	तृतीय श्रेणी २९४
७३१	,, योगेन्द्र कुमार	नजीबाबाद	द्वितीय श्रेणी ३४९
७३२	,, लल्लूमल	,,	तृतीय श्रेणी २९६
७३४	,, ओमप्रकाश अग्रवाल	,,	द्वितीय श्रेणी ३५६
७३५	,, रघुवीर प्रसाद	,,	,, ३६८
७३६	,, शिवकुमार अग्रवाल	,,	,, ३५३
७३७	,, जोती प्रसाद	,,	,, ३२० [वि॰ यो॰ गणित]
७३९	श्रीमती जानकी देवी	,,	तृतीय श्रेणी ३००
७४०	,, शान्ती	,,	द्वितीय श्रेणी ३२१
७४२	,, वागीश मिश्र	नरकटियागंज	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७४५	,, परशुराम नेमा	नागपुर (हि॰ भा॰हा॰स्कूल)	द्वितीय श्रेणी ३५१

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
७४६	श्री रामकिशन तम्बोलिया	नागपुर (हि० भा० हा० स्कूल)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७५१	,, कृष्णपाल सिंह	नारायणगढ़	,,
७५२	,, विहारी शरण सिंह	नालन्दा	,,
७५४	,, वासुदेव सिंह	,,	तृतीय श्रेणी २७०
७५५	,, मैराज़उद्दीन कुरैशी	नाहरगढ़	द्वितीय श्रेणी ३२१
७५६	,, चन्द्र कुमार	,,	,, ३४८
७५७	,, देवनाथ मेहता	निरञ्जनपुर	,, ३७१
७५८	,, राम पदार्थ शर्मा	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७५९	,, पदम गोस्वामी	,,	तृतीय श्रेणी ३११
७६०	,, कुमार विजय सिन्हा	,,	द्वितीय श्रेणी ३३६
७६१	,, सैयद मुहम्मद सेल्लाउद्दीन	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७६३	श्रीमती कृष्णाकुमारी श्रीवास्तव	पटना	तृतीय श्रेणी २८०
७६४	श्री ज्वाला श्रीवास्तव	,,	द्वितीय श्रेणी ३७०
७६५	,, सरयूसिंह	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७६९	,, हरनारायण सिंह	पड़रौना	,,
७७०	,, सुरेन्द्र प्रसाद सिंह	,,	,,
७७१	,, विजय शंकर मल्ल	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
७७२	श्री हरिलाल सिंह	पड़रौना	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७७६	,, शिवनन्दन लाल	,,	,,
७७८	,, विश्वनाथ सिंह	,,	,,
७७९	,, राम परीक्षा सिंह	,,	,,
७८०	,, सुरेश लाल श्रीवास्तव	,,	तृतीय श्रेणी ३०३
७८२	,, रामचन्द्र मल्ल	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७८३	,, राजवंशी मिश्र	,,	,,
७८४	,, राजशरन शर्मा	पन्ना	तृतीय श्रेणी ३०२
७८६	,, सुरलीदास शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ३७०
७८८	,, बद्रीप्रसाद खरे	,,	तृतीय श्रेणी २५४
७८९	,, रामचरण खरे	,,	,, २७२
७९०	,, मङ्गलप्रसाद खरे	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
७९१	,, कुं० प्रतिपाल सिंह	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
७९४	,, मिट्ठूलाल	,,	तृतीय श्रेणी २७६
७९६	,, सुन्दरलाल गुप्ता	,,	,, २७७
७९७	श्रीमती कुमारी प्रभावती	प्रयाग (सम्मेलन कार्यालय)	,, ३०६
७९९	श्री रामअकबालसिंह	,,	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
८००	श्री रमाकान्त मालवीय	प्रयाग (सम्मेलन कार्यालय)	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
८०१	" बद्रीप्रसाद अग्रवाल	"	"
८०२	" कमला श्रीवास्तव	"	"
८०४	" रमादत्त शुक्ल	"	"
८१३	श्रीमती शकुन्तलादेवी द्विवेदी	"	"
८१४	श्री पी० के० अलक् राजू	प्रयाग (हि० वि० पी०)	"
८१५	" वाई० चन्द्रशेखरसिंह	"	"
८१६	" रामलाल तारे	"	"
८१९	श्रीमती शशिकला	प्रयाग (दारागञ्ज)	"
८२०	श्री कृष्णचन्द्र शर्मा	"	"
८२१	" दुःखहरणसिंह	प्रसन्डो	"
८२३	" यमुनाप्रसाद चौधरी	"	"
८२४	" नन्दकिशोर सिंह	"	"
८२५	" राणा गोरेलालसिंह	"	"
८२६	" चन्देश्वरप्रसादसिंह	परसागढ़	तृतीय श्रेणी ३०८
८२७	" ब्रह्मानन्दप्रसाद	"	द्वितीय श्रेणी ३२१
८२८	" सकलदीपसिंह	"	तृतीय श्रेणी २९४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
८२९	श्री महादेव शाह	परसागढ़	द्वितीय श्रेणी ३४९
८३१	,, गोपालप्रसाद	,,	तृतीय श्रेणी २९५
८३२	,, नन्दकिशोर गिरि	,,	द्वितीय श्रेणी ३६९
८३३	,, विश्वेश्वरप्रसाद सिंह	,,	,, ३६५
८३५	,, कु० कुसुमबाई असोलकर	परासिया	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
८४३	,, रामप्रताप वर्मा	पांचाली	,,
८४७	,, रामचन्द्र धानुका	,,	,,
८४९	,, महेश्वरसिंह	पारू	,,
८५२	,, लालबहादुरसिंह	,,	,,
८५५	,, इन्द्रदेव सिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ३३६
८५७	,, रामप्यारेसिंह	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
८५८	,, रामज्योति देवी	,,	,,
८५९	,, भीष्म ओझा	,,	तृतीय श्रेणी २८१
८६०	,, रामप्रसाद शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ३३६
८६७	,, रामचन्द्र झा	पुपरी	,, ३२२
८६८	,, महेशानन्द झा	,,	,, ३४२
८६९	श्री लक्ष्मेश्वरी शरण वर्मा	,,	तृतीय श्रेणी २९८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
८७०	श्री सोनेलाल मण्डल	पुपरी	द्वितीय श्रेणी ३२१
८७३	,, मुनीश्वरप्रसाद सिंह	पोठिया	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
८७४	,, धनेश्वरप्रसाद मण्डल	,,	,,
८७५	,, दुराय मण्डल	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
८७७	,, कृष्णकान्त वर्मा	पोहरी (आदर्श वि०)	,,
८७९	,, दत्ताजी राव पाटन कर	,,	,,
८८०	,, रेवतीप्रसाद शर्मा	,,	,,
८८३	श्रीमती सावित्री देवी गुप्त 'उषा'	,,	,,
८८४	,, मूर्तिदेवी श्रीनेत	,,	,,
८८७	श्री रामभरोसे	,,	,,
८९१	,, सन्तोषचन्द्र जैन	पोहरी (सर्व हि० वि०)	,,
८९३	,, युदागीप्रसाद सिंह	फतुहा (एंग्लो वै० स्कूल)	,,
८९५	,, सरयूसिंह यादव	,,	,,
८९७	,, संकठाप्रसाद राय	बक्सर	,,
८९८	,, वैकुंठनाथ श्रीवास्तव	,,	तृतीय श्रेणी ३०५
८९९	,, कालिकाप्रसाद	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
९००	,, भुवनेश्वर शर्मा	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०३	श्री रमाकान्तप्रसाद	वक्सर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०८	" रामेश्वर उपाध्याय	बकुल हर	तृतीय श्रेणी ३१३
११४	" प्रेमसिंह वर्मा	बगड़	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११६	" श्रीनारायण शर्मा	"	"
११७	" रामकरन दान	"	"
११८	" बजरंगीलाल शर्मा	"	"
११९	" अर्जुनलाल पाण्डेय	"	"
१२०	" जगमाल सिंह	"	"
१२१	" वृद्धिचन्द्र शर्मा	"	"
१२४	" तेरसिंह	बड़वानी	तृतीय श्रेणी २८३
१२६	" लीलादेवी निगम	"	" ३०४
१२७	" सुरेन्द्रनारायण सिंह	बनमनखी	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१२८	" गोपालजी लाल दास	"	"
१३०	" लम्बोदर झा	"	तृतीय श्रेणी ३१२
१३२	" भोलानाथ दत्त	"	द्वितीय श्रेणी ३२९
१३३	" विन्देश्वरीप्रसाद यादव	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३५	" रामचरित्र सिंह	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
९३६	श्री सुरेशप्रसाद सिंह	बनमनखी	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
९३७	,, भगवान भगत	,,	,,
९३८	,, रामकृष्ण यादव	,,	,,
९३९	,, हरिनन्दन सुतिहार	,,	,,
९४१	,, जीवछलाल साह	,,	द्वितीय श्रेणी ३२८
९४२	,, बंगाली मण्डल	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
९४३	,, चन्द्रिकाप्रसाद सिंह	,,	,,
९४४	,, सत्यदेवप्रसाद सिंह	,,	,,
९४५	,, धरणीधर मिश्र	,,	,,
९४८	,, बोधनारायण सिंह	,,	,,
९४९	,, कमलेश्वरप्रसाद यादव	,,	,,
९५०	,, विश्वनाथ यादव	,,	,,
९५१	,, परमेश्वर साह	,,	,,
९५२	,, चन्द्रिकानन्ददास	,,	,,
९५३	,, ताराचरण भगत	,,	,,
९५५	,, जनार्दन झा	,,	द्वितीय श्रेणी ३३१
९५६	श्रीमती शिमलादेवी उर्फ उषा रानी नन्दे	,,	अध्याय ३ नियम के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५७	श्री सरयूप्रसाद यादव	बनमनखी	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५८	" वीरनारायण सिंह	"	"
१५९	" लक्ष्मीप्रसाद चौधरी	"	"
१६०	" भुवनेश्वरप्रसाद सिंह	"	"
१६३	" चक्रधर तिवारी	"	"
१६५	" जगदम्बा राय	बम्बई (मार० वि०)	"
१६७	" मार्कण्डेयराय शर्मा	"	"
१६८	" सागरमल गुप्ता	बम्बई (मारवाड़ी कम० हाई स्कूल)	द्वितीय श्रेणी ३२७
१६९	" मदनलाल जैन	"	" ३८६
१७०	" कल्याणमल	"	" ३३३
१७४	" शिवमूर्ति सिंह	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७५	" देवी चन्द	"	द्वितीय श्रेणी ३७९
१७७	" ओंकारनाथ मिश्रा	"	" ३२६
१७९	" राधागोविन्द शर्मा	"	" ३५०
१८०	" नन्दकिशोर सिंहल	"	" ३७२
१८१	" दामोदर केडिया	"	" ३२१
१८२	" विश्वनाथ	"	" ३८३

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
९८३	श्री ओमप्रकाश निराला	बम्बई (मारवाड़ी कम० हाई स्कूल)	द्वितीय श्रेणी ३३०
९८८	" दयासागर आर्य	बरेली	तृतीय श्रेणी २८१
९९१	" विश्ववीर वर्मा	"	" ३१४
९९२	" शिव सुमिरनलाल जौहरी	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
९९४	" ऋषिदेव दुबे	बलवङ्घा	"
९९५	" जिच्छू शाह	"	"
९९६	" वीरेन्द्र स्वरूप	बलिया (यमुना संस्कृतपाठशाला)	"
९९७	" विजय बहादुर राय	"	द्वितीय श्रेणी ३४३
९९८	" मुक्तेश्वर हजारी	बहदुरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
९९९	" अनूपलाल मण्डल	"	"
१०००	" बोधनारायण मण्डल	"	"
१००१	" शिवनन्दन मण्डल	"	"
१००२	" रामानन्द सिंह	"	"
१००३	" जगदम्बा प्रसाद सिंह	"	"
१००४	" रामावतार यादव	"	"
१००५	" लीलाधर झा	"	"
१००८	" टेकचन्द जैन	बहराइच	तृतीय श्रेणी २८४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०१०	श्री रामकीर्त्ति त्रिवेदी	बहराइच	द्वितीय श्रेणी ३३७
१०१२	,, सिद्धनाथ खत्री (पूरे)	,,	तृतीय श्रेणी २७१
१०१३	,, कौलेश्वरप्रसाद त्रिवेदी	,,	,, २९७
१०१५	,, रामेश्वरप्रसाद	बांदा	द्वितीय श्रेणी ३६३
१०१८	,, प्रफुल्लचन्द वंशपाल	बालाघाट	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०१९	श्रीमती जयन्ती देवी	बांसगाव (सा० वि०)	,,
१०२४	श्री जयशंकर शुक्ल	बांसवाड़ा	तृतीय श्रेणी ३१०
१०२८	,, भट्ट वनेश्वर शर्मा	बिसाऊ	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०३०	,, बनवारीलाल जोशी	,,	तृतीय श्रेणी ३००
१०३१	,, रामेश्वर मिश्र	बिशौनी	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०३२	,, शिवनन्दन झा	,,	,,
१०३३	,, रामकिङ्कर झा	,,	,,
१०३४	,, सियाराम झा	,,	,,
१०३५	,, मथुरा ठाकुर	,,	,,
१०३६	,, महावीर ठाकुर	,,	,,
१०३७	,, गेन्दा गोप	,,	,,
१०३८	,, भिखारी ठाकुर	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०४०	श्री बाबूलाल झा	बिशौनी	अध्याय ३, नियम ३ के अनुसार
१०४३	,, देवशरणसिंह	बिहार शरीफ़	,,
१०४४	,, महन्त मनोहरदास	बीकानेर	,,
१०५०	,, जगदीशशरण	बुलन्दशहर	तृतीय श्रेणी ३१२
१०५४	,, चन्दनप्रसाद चौधुरी	बेतिया	,, २१६
१०५५	,, बजरंगवली पाण्डेय	बैतूल	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०६०	श्रीमती कुमारी कुसुमलता	भरतपुर	,,
१०६१	,, मिथिलेश कुमारी	,,	,,
१०६२	श्री महावीरप्रसाद राय	भवानीपूर	,,
१०६३	,, राधामोहन साह	,,	,,
१०६४	,, ननुकलाल मण्डल	,,	,,
१०६५	,, लखनलाल भगत	,,	,,
१०६६	,, गदाधरप्रसाद यादव	,,	,,
१०६७	,, तारिणीप्रसाद यादव	,,	,,
१०६८	,, बनारसीप्रसाद चौधरी	,,	द्वितीय श्रेणी ३१५
१०६९	,, सत्यनारायण झा	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०७१	,, माणिक्यचन्द्र वोहरा	भिण्ड	द्वितीय श्रेणी ३३८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१०७३	श्री गोवर्धनलाल आमेटा	भिण्डर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१०७४	,, बच्चूलाल	भेलसा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०७७	,, रघुनन्दन	,,	द्वितीय श्रेणी ३८४
१०७८	,, घीसूलाल गोयल	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०८१	,, शान्तिचन्द्र मेहता	भोपालगढ़	द्वितीय श्रेणी ३७८
१०९०	,, रामचन्द्र स्वर्णकार	भौरासा	तृतीय श्रेणी २६७
१०९४	,, गोवर्धनलाल त्रिवेदी	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१०९६	,, चन्द्रशेखर शर्मा	,,	,,
१०९७	,, दत्तात्रय दुबे	,,	,,
१०९८	,, गौरीशंकर दुबे	,,	,,
१०९९	,, नीलकण्ठ शुक्ल	,,	,,
११०२	,, महादेव दुबे	,,	,,
११०३	,, रामप्रसाद मिश्र	मगरौनी(सर्व हि० जैन पाठशाला)	,,
११०४	,, छितरिया प्रसाद	,,	,,
११०५	,, हर गोविन्द	,,	,,
११०६	,, हरप्रसाद पाण्डेय	,,	,,
११०९	,, मिश्रीलाल मिश्र	,,	तृतीय श्रेणी २७४

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
११११	श्री राधेलाल	मंगरौनी(सर्व हि० जैन पाठशाला)	तृतीय श्रेणी २८५
१११२	,, रामगोपाल	मथुरा(गो० हि० वि० पीठ)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१११३	,, सूरजभान शर्मा रावत	,,	,,
१११४	,, शिवचरन सिंह	,,	,,
१११५	,, रामनारायण	,,	,,
१११६	,, हरिप्रसाद	,,	,,
१११७	,, परमात्माप्रसाद	,,	,,
१११८	,, देवकीनन्दन	,,	,,
१११९	,, किशन स्वरूप	,,	,,
११२०	,, मिहीलाल	,,	,,
११२१	,, श्रीराम	,,	,,
११२२	,, श्यामसुन्दर	,,	,,
११२३	,, रूपकिशोर	,,	,,
११२४	,, राममूर्ति	,,	,,
११२५	,, पन्नालाल वर्मा	,,	,,
११२६	,, देवीदास दुबे	,,	,,
११२८	,, दुलीराम	,,	,,

क्रम ख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
११३३	श्रीमती प्रेमलता श्रीवास्तव	मथुरा (गो० हि० वि० पीठ)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११३४	श्री हरी बाबू	,,	,,
११३५	,, रतनलाल वर्मा	,,	,,
११३६	,, राधेश्याम	,,	,,
११३७	,, विष्णुदेव प्रसाद	मधीपुरा	,,
११३८	,, नन्दकिशोर प्रसाद मण्डल	,,	,,
११३९	,, दुर्गाकान्त झा	,,	द्वितीय श्रेणी ३८६ [वि०यो० गणि०]
११४२	,, भुवनेश्वर झा	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११४३	,, त्रिवेणीप्रसाद सिंह	,,	,,
११४५	,, बृजविहारी चौधरी	,,	,,
११५०	,, कृष्णमोहन सिंह	मलांव	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११५१	,, द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी	,,	,,
११५४	,, तुलासिंह गुप्त	मवाना (मेरठ)	द्वितीय श्रेणी ३४५ [वि० यो० गणि०]
११५७	,, अनिरुद्धप्रसाद सिंह	महदेवा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११५८	,, फूचोलाल पोद्दार	,,	,,
११५९	,, जलधर झा	,,	,,
११६०	,, रामरूपप्रसाद सिंह	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
११६८	श्री लाला चन्दालाल गुप्त	मांगरोल	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११६९	” शान्तिसागर औल	माण्डले	”
११७३	” सागरमल	मुकुन्दगढ़	”
११७४	” सूरजमल गुप्ता	”	”
११७५	” हुकुमसिंह वर्मा	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
११७६	” मो० उसमानअली खां	मुकामाघाट (पटना)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११७७	” जाह्नवीप्रसाद सिंह	”	तृतीय श्रेणी ३१३
११७८	” ब्रह्मदेवसिंह	”	” ३०८
११७९	” वीरेन्द्रप्रसादसिंह	”	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११८०	” सीताराम	”	द्वितीय श्रेणी ३७९
११८१	” रामचन्द्र शर्मा	”	” ३६७
११८२	” रामचन्द्रप्रसादसिंह	”	” ३७७
११८४	” इन्द्रदेव नारायणसिंह	”	” ३५३
११८५	” देवीप्रसाद शुक्ल	मुगरा बादशाह पुर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११८८	” आद्याप्रसाद तिवारी	”	”
११८९	” उदयभानसिंह	”	”
११९०	” शम्भूनाथ तिवारी	”	”

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
११९२	श्री श्रीनाथ पाण्डेय	मुगरा बादशाहपुर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
११९३	" राजाराम पाण्डेय	"	"
११९४	" जगदीश प्रसाद तिवारी	"	"
११९५	" ऋतुराज सिंह	"	"
११९६	" गङ्गानारायण तिवारी	"	"
११९८	" शोभनाथ शुक्ल	"	"
११९९	" शोभनाथ मिश्र	"	"
१२०१	" हवलदार सिंह	"	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१२०३	" बिश्वेश्वर मंडल	मुङ्गेर (टा० हा० स्कूल)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१२०८	" शुकदेव महतो	मुङ्गेर (लोकल बोर्ड)	"
१२०९	" वासुदेव दास	"	"
१२१०	" मक्खन साहु	"	"
१२११	" माखनलाल महतो यादव	"	"
१२१३	" ब्रह्मदेव झा	"	"
१२१४	" यदुनन्दन प्रसाद सिंह	"	"
१२१५	" महेन्द्रनारायण सिंह	"	"
१२१६	" लोभानन्द झा	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१२१७	श्री शालग्राम सिंह	मुंगेर (लोकल बोर्ड)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१२२१	" कुशेश्वर सिंह	"	"
१२२५	" महेश्वर प्रसाद सिंह	"	"
१२२८	" धुरन्धर झा	"	"
१२३२	" सत्यदेव झा	"	"
१२३३	" सहदेव राय	"	"
१२३५	" सत्यदेव नारायण सिंह	"	"
१२३६	" जगदम्बी मण्डल	"	"
१२३९	" चक्रधर पाठक	"	"
१२४४	" अधिकलाल सिंह	"	"
१२४५	" विरंची झा	"	"
१२४७	" नरसिंह ठाकुर	"	"
१२५२	" अयोध्याप्रसाद यादव	"	"
१२५३	" परमेश्वर झा	"	"
१२५४	" धनेश्वर महतो	"	"
१२५७	" रामावतार	"	"
१२६३	" चन्द्रप्रकाश कौशिक	मुजफ्फरनगर	द्वितीय श्रेणी ४१३

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१२६५	श्री योगेन्द्रराव यादव	मुजफ्फरपुर (सुहृद संघ)	तृतीय श्रेणी २७९
१२६९	श्रीमती कुमारी सुभद्रा सिनहा	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१२७६	श्री विद्यारत्न शर्मा	मेरठ	द्वितीय श्रेणी ३४१
१२७८	" रामसुन्दर चौबे	मेंहदी बागान	तृतीय श्रेणी २८९
१२८०	" दशरथ शुक्ल	मैनपुरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१२८२	" दूधनाथ सिंह	"	"
१२८४	" काशीनाथ पांडेय	"	"
१२८५	" राजदयालु मिश्र	"	"
१२८७	" जग्गूप्रसाद सिंह	मोहानियां	"
१२८८	" सत्यनारायण तिवारी	"	"
१२८९	" जयनन्दन सिंह	"	"
१२९०	" सूबेदार सिंह	"	"
१२९१	" कमलेश्वरीप्रसाद सिंह	"	"
१२९२	" लालजीलाल	"	"
१२९३	" धनञ्जयप्रसाद सिंह	"	"
१२९४	" छबिनाथ महतो	"	"
१२९५	" छेदी सिंह	"	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१२९६	श्री जोखनप्रसादसिंह	मोहानियां	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१२९७	” शिवमूरतराम	”	”
१२९९	” लक्ष्मीचन्द्र दीक्षित	मौरावां	तृतीय श्रेणी २९८
१३००	” शिवकुमार त्रिपाठी	”	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३०१	” गुलाबचंद सेठ	”	तृतीय श्रेणी २७८
१३०४	” निवासप्रधान	मौलासर	” ३१२
१३०५	” रामेश्वर गुप्ता	मंडलेश्वर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३०६	” भगवानप्रसाद वर्मा	”	”
१३०९	” वीरनारायण मिश्र	रक्सौल	तृतीय श्रेणी २९७
१३१२	” रमेश झा	”	द्वितीय श्रेणी ३४६
१३१९	” अनूपसिंह जोधा	रतनगढ़	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१३२६	” लालशङ्कर दुबे	राजगढ़	”
१३२९	” वल्लभदास व्यास	”	द्वितीय श्रेणी ३३१
१३३०	” चैनसिंह	”	” ३१८
१३३१	” कुँवर विश्ववीरसिंह	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१३३२	” विष्णुदास पचोली	”	”
१३३३	” श्याम सुन्दरदास नेमा	”	”

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१३३९	श्री नन्दूलाल	राजनांद गांव	तृतीय श्रेणी २६१
१३४४	” तीरथसिंह चौधरी	रानीगंज (वर्दबान)	” २६७
१३४५	” अयोध्याप्रसाद	”	द्वितीय श्रेणी ३२३ [वि० यो० गणि०]
१३४६	” नन्दलाल सराफ	”	तृतीय श्रेणी २९८
१३४७	” हरिश्चन्द्र मोदी	”	” २९८
१३४८	” श्यामसुन्दर मोदी	”	” २९९
१३५१	” दशरथ तिवारी	”	द्वितीय श्रेणी ३२५
१३५३	” सीताराम राजगढ़िया	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१३५४	” कृष्ण तिवारी	रामपुरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३५५	” संतोषमल चेलावत	”	”
१३५६	” परमानन्द दीक्षित	”	”
१३५७	” झलकसिंह	रामासांढ़	द्वितीय श्रेणी ४०९ [वि० यो० गणि०]
१३५८	” प्रभुनारायणसिंह	”	” ३९३
१३५९	श्रीमती सुमित्रादेवी	”	द्वितीय श्रेणी ३१५
१३६०	श्री राजेश्वरप्रसाद	”	” ३९४ [वि० यो० गणि०]
१३६२	” विद्या साहेब गुरु गोसाईं	रायपुर सी० पी०	तृतीय श्रेणी ३०७
१३६३	” शंकरलाल श्रीवास	रायपुर	” २९८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१३६४	श्री रामगोपाल अग्रवाल	रायपुर	द्वितीय श्रेणी ३३६
१३६५	श्रीमती सावित्री देवी	रायबरेली	द्वितीय श्रेणी ३५०
१३६६	श्री अमरसिंह	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३६७	,, राजकिशोर श्रीवास्तव	रीवाँ (बालसमिति)	,,
१३६८	,, रामदास मिश्र	,,	,,
१३६९	,, पंचमलाल	,,	,,
१३७३	,, पद्मनाभ वैदी रामनारायण	लखनऊ	,,
१३७४	श्रीमती कमलादेवी मिश्र	,,	,,
१३७५	श्री वृन्दाप्रसाद अवस्थी	,,	द्वितीय श्रेणी ३९७
१३७७	,, यमुनादीन	लखीमपुर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३७८	,, भगवतीप्रसाद शुक्ल	,,	,,
१३८०	,, केशवदत्त शर्मा	लखावटी	तृतीय श्रेणी २६६
१३८१	,, श्रीरामसिंह	,,	प्रथम श्रेणी ४२६ [वि.यो.इति.गणि.]
१३८४	,, गणेशदत्त गौड़	,,	द्वितीय श्रेणी ३८१
१३८५	,, ज्ञानसिंह	,,	,, ३८२
१३८७	,, रामेश्वर दयाल	लश्कर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१३९२	,, मिश्री मंडल	लहेरियासराय	तृतीय श्रेणी ३०१

क्रम ख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३९४	श्री भंवरसिंह वर्मा	लक्ष्मणगढ़	द्वितीय श्रेणी ३३०
३९५	” सत्यनारायण पोद्दार	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार [वि० यो० इति०]
३९६	” ज्ञानसिंह वर्मा शेखावत	”	तृतीय श्रेणी २८५
३९८	” महावीर चूड़ीवाला	”	तृतीय श्रेणी २९८
३९९	” मोतीलाल व्यास	”	” ३०९
४००	” विष्णुदत्त त्रिवेदी	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४०१	” गौरीशंकर शर्मा	”	”
४०५	” रामप्रताप नाथ	लालगंज	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
४०८	श्रीमती मालती थत्ते	वर्धा	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४०९	” कुमारी शान्तिदेवी	वसन्तपुर	द्वितीय श्रेणी ३४७
४१०	श्री रामसुभग यादव	”	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४११	” जयकिशोर सिंह	”	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
४१२	” हरिहरप्रसाद तिवारी	वारा सिवनी	द्वितीय श्रेणी ३५६
४१५	” हरवंशसिंह गिल्ल	”	” ४०३ [वि० यो० गणित]
४१६	” परसराम	”	” ३७१
४१७	” भीकमचन्द	”	द्वितीय श्रेणी ३७०
४१९	” शोभाराम	”	” ३२९

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१४२०	श्री क्षेत्रपाल जैरथ	वारा सिवनी	द्वितीय श्रेणी ३२२
१४२१	" प्रभुदयालसिंह ठाकुर	"	तृतीय श्रेणी ३११
१४२४	श्रीमती सूमाबाई	"	" २९१
१४२८	" चन्द्रमणीप्रसाद वर्मा 'अबोध'	वृंदावन	" ३०१
१४२९	" यदुनन्दनशरण	शकरपुरा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१४३०	" रामअवध सिंह	शाहगंज	द्वितीय श्रेणी ३४१
१४३१	" रामनारायण सिंह	"	" ३५५
१४३२	" रामकलप सिंह	"	" ३३७
१४३३	" रामछबीले सिंह	"	" ४०१
१४३४	" गोवर्धनदत्त शुक्ल	"	तृतीय श्रेणी ३०९
१४३५	" रामअधार सिंह	"	द्वितीय श्रेणी ३४६
१४३६	" प्रसिद्धनारायण सिंह	"	" ३९५
१४३८	" हलीनालाल	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१४३९	" गुलाम हसन	"	"
१४४०	" वजरंगीलाल	"	द्वितीय श्रेणी ३८८
१४४१	" हीरासिंह	शिकारपुर	तृतीय श्रेणी २८९
१४४५	" महावीर सिंह	शिकोहाबाद	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१४४६	श्री रामगोपाल	शिकोहाबाद	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१४४७	" राजेन्द्रसिंह	"	"
१४४८	" कुं० लल्लूसिंह	"	"
१४४९	" ज्ञानेन्द्रप्रकाश कुलश्रेष्ठ	"	"
१४५४	" सुबोधनारायण सिंह	सब्बीहा	"
१४५५	" प्रबोधनारायण सिंह	"	"
१४५६	" नित्यानन्द सिंह	"	"
१४६२	" शिवदयाल श्रीवास्तव	सतना	"
१४६३	" हनुमान प्रसाद	"	"
१४६४	" सुमेश्वरसिंह	समोगर	"
१४६५	" केशवप्रसाद	"	तृतीय श्रेणी २९०
१४६८	" गौरीशंकर राव	"	" २७१
१४७०	" रामजीतन सिंह	"	" २६१
१४७५	" बुद्धमल	सरदार शहर	" २८८
१४७७	" राधाकृष्ण	"	" २८७
१४७८	" रामयश	"	द्वितीय श्रेणी ३२२
१४८०	" रामलाल	"	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१४८२	श्री गंगादत्त मिश्र	सरदार शहर	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१४८४	,, उदैराम शर्मा	,,	,,
१४८७	,, गणेशप्रसाद मिश्र	सलकिया	,,
१४८८	,, परमहंस पाठक	,,	,,
१४९०	,, रामाधार सिंह	,,	,,
१४९१	,, दिग्गजराम यादव	,,	,,
१४९२	,, गुनीलाल चौधरी	,,	,,
१४९३	,, मनोहरलाल अग्रवाल	,,	,,
१४९४	,, बेनीमाधव सिंह	,,	,,
१४९६	,, श्रद्धानन्दसिंह	,,	,,
१४९७	,, रामकृष्ण गुप्त	,,	,,
१४९८	,, देवधारीप्रसाद वर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ३४४
१४९९	,, कपिलदेव सिंह	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५००	,, विष्णुलाल कनोडिया	,,	,,
१५०२	,, हरिनाथप्रसाद वाजपेयी	,,	,,
१५०३	,, श्यामलाल अग्रवाल	,,	,,
१५०५	,, राजनलाल शर्मा	सहपऊ	तृतीय श्रेणी २९५

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५०६	श्री कैलाश चन्द्र	सहपऊ	तृतीय श्रेणी २७५
१५०७	,, सन्तकुमार जैन	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५०८	,, रणवीर सिंह	,,	तृतीय श्रेणी २८१
१५०९	,, अशर्फी मंडल	सहसी	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५११	,, बलदेवप्रसाद सिंह	,,	तृतीय श्रेणी २९७
१५१३	,, अवधेश्वरप्रसाद सिंह	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५१४	,, रघुनी साहू	,,	,,
१५१६	,, नर्मदाबाई देसाई	सागर (म्यू० हा० स्कूल)	,,
१५१९	,, कालीशंकर लाल	सारनाथ	,,
१५२०	,, जंगबहादुर पाठक	,,	,,
१५२१	,, मिट्ठनलाल गोविल	सिकन्द्राबाद	द्वितीय श्रेणी ३६०
१५२४	,, सूरजप्रसाद जाजू	सिकन्द्राराऊ	,, ३१५
१५२६	,, रघुराज सिंह	,,	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
१५३२	,, रामप्रकाश सक्सेना	,,	,,
१५३३	,, चन्द्रपाल गुप्ता	,,	,,
१५३५	,, घनीराम श्रीवास्तव	,,	,,
१५३६	,, श्याममुरारी सक्सेना	,,	,,

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५३७	श्री सूरजपाल	सिकन्दराराऊ	अध्याय ३-नियम ३ के अनुसार
१५३८	” शेषनारायण तिवारी	सिंगरामऊ	द्वितीय श्रेणी ३७६
१५३९	” शिवनाथ सिंह	”	” ३७४
१५४०	” जानकीप्रसाद गुप्ता	”	” ३७८
१५४१	” राजेन्द्रनारायण सिंह	”	तृतीय श्रेणी २९१
१५४२	” हीरामणि मिश्र	”	द्वितीय श्रेणी ३५१
१५४३	” संतप्रकाश सिंह	”	” ३२७
१५४४	” रमाशंकर सिंह	”	तृतीय श्रेणी ३०६
१५४५	” भगवानशंकर सिंह	”	” २७५
१५४६	” चन्द्रदेव सिंह	”	द्वितीय श्रेणी ३६६
१५४७	” रामबरन मिश्र	”	प्रथम श्रेणी ४३६
१५४९	” अनरुद्ध सिंह	”	तृतीय श्रेणी २९८
१५५०	” राजदेव तिवारी	”	द्वितीय श्रेणी ३४० [वि० यो० गणि०]
१५५१	” तीर्थराज उपाध्याय	”	द्वितीय श्रेणी ४१७ [वि० यो० इति०]
१५५२	” राजाराम यादव	”	द्वितीय श्रेणी ३९१
१५५४	” रामसुमेर पाण्डेय	”	तृतीय श्रेणी २९१
१५५५	” रामचन्द्र सिंह	”	द्वितीय श्रेणी ३६४

क्रम ख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
५५८	श्री जंगीराम दुबे	सिरसा (प्रयाग)	द्वितीय श्रेणी ३३४
५६०	” अनवरसिंह	सिरसागंज	अध्याय ३ नि० ३ के अनुसार
५६१	” निहालसिंह	”	”
५६२	” केदारनाथ	”	”
५६३	श्रीमती ओ३म् प्रभावती	”	तृतीय श्रेणी २४७
५६६	श्री छेदालाल	”	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५६८	” सनतकुमार	सिलचर	”
५६९	” मुसाफिर तिवारी	”	तृतीय श्रेणी २८६
५७०	” दत्तात्रय मिश्र	”	” २८२
५७१	श्रीमती अतुलादेवी	सीतापुर	विभाजित प्रणाली के अनुसार
५७७	श्री पुण्यदेव मिश्र	सीवान	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५७८	” बाबूराम पाण्डेय	”	द्वितीय श्रेणी ३५२
५७९	” रनविजयकुमार अस्थाना	”	तृतीय श्रेणी ३११
५८०	” हरेन्द्रनारायण वर्मा	”	” ३०६
५८१	” जाकिर हुसेन	”	द्वितीय श्रेणी ३३०
५८२	श्रीमती लक्ष्मीदेवी	”	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
५८३	श्री उदयलाल शर्मा	सुखेड़ा	तृतीय श्रेणी ३०३

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५८६	श्री मुरलीसिंह	सुखेड़ा	तृतीय श्रेणी २६५
१५८८	श्रीमती शान्ताकुमारी	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५८९	,, राधिका देवी	सुरही	द्वितीय श्रेणी ३८७
१५९०	श्री कान्तराय	,,	तृतीय श्रेणी २९९
१५९१	,, धर्मवीर राय	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१५९२	,, सर्वजीतराय	,,	,,
१५९३	,, शिवकुमार राय	,,	,,
१५९६	,, रामसूरतसिंह	सुल्तानपुर	तृतीय श्रेणी ३०१
१५९८	,, ब्रजनाथ यादव	,,	द्वितीय श्रेणी ३७०
१६०५	श्रीमती सिद्धेश्वरी देवी	सुहवल	तृतीय श्रेणी २७०
१६१४	श्री द्वारिकाप्रसाद सिंह	सेवदह	द्वितीय श्रेणी ४०१
१६१८	,, त्रिवेणीसिंह	,,	तृतीय श्रेणी २४४
१६२०	,, रामवरणसिंह	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१६२३	,, रामलखनसिंह	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१६२७	,, दिनेशचंद्र बागची	सोनाली	,,
१६२८	,, श्यामनारायण सिंह	,,	,,
१६२९	,, नित्यानन्द ठाकुर	,,	,,

म ख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
३०	श्री अनन्तलाल गोप	सोनाली	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
३१	,, यमुनाप्रसाद मंडल	,,	,,
३२	,, भोलानाथ सिंह	,,	,,
३३	,, परमेश्वरी मंडल	,,	,,
३४	,, बनारसीलाल विश्वास	,,	,,
३५	,, कृष्णमोहन झा	,,	,,
३६	,, मुक्तिनाथ झा	,,	,,
४१	,, लक्ष्मीनारायण शर्मा	संगरिया	विभाजित प्रणाली के अनुसार
४२	,, रामनारायण	,,	द्वितीय श्रेणी ३४२
४३	,, वंशीधर	,,	,, ३४८
४५	,, किशनलाल गार्गव	हरदा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
४६	,, कालूराम	,,	,,
४७	,, रामव्यास	,,	,,
४९	,, शिवनारायण शुक्ल	,,	,,
५०	,, रविशंकर पाण्डेय	,,	,,
५१	,, श्याम बिहारीलाल	हरदी	तृतीय श्रेणी २४६
५२	,, बजरंग बहादुरसिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ३२६

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६५६	श्री रामचन्द्रप्रसाद	हवेली खड़गपुर	अध्याय ३ नियम के अनुसार
१६५८	,, गुलाबसिंह राजपूत	हाथरस	तृतीय श्रेणी ३०२
१६५९	,, रघुवरदयाल जैन	,,	द्वितीय श्रेणी ४१४
१६६१	,, नौनिहाल सिंह	,,	,, ३२५
१६६२	श्रीमती भगवान देवी	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१६६३	श्री रामेश्वरदयाल शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ४०३
१६६४	,, रामजीलाल	,,	प्रथम श्रेणी ४५७ [वि० यो० भूगो०]
१६६५	श्री शकुन्तला देवी	हापुड़	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१६६७	श्री ओ३म्प्रकाश शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ३३३
१६६९	,, हरिशंकर शर्मा	,,	तृतीय श्रेणी २९९
१६७१	,, गणेश तिवारी	हुगली	,, २८२
१६७२	,, गणेशदत्त शर्मा	,,	द्वितीय श्रेणी ३८८
१६७३	,, रामदीप गिरी	,,	,, ३३३
१६७५	,, धर्मदेव यति	,,	तृतीय श्रेणी २८७
१६७८	,, रामेश्वरप्रसाद सिनहा	हुसेनगंज	,, २८
१६७९	,, अयोध्याप्रसाद वर्मा	,,	,, २६६
१६८०	,, शुकदेवसिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ३७

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१६८१	श्री भागवतप्रसाद श्रीवास्तव	हुसेनगञ्ज	तृतीय श्रेणी २९५
१६८३	,, केवलराम	हैदराबाद (धन्व० वि०)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१६८६	,, राजनारायण	होलीपुरा	,,
१६८८	,, नेमीचन्द गुप्त	,,	,,
१६९०	,, प्यारेलाल शर्मा	,,	,,
१६९२	,, सोहनलाल गुप्त	,,	तृतीय श्रेणी २७७
१६९४	,, हुब्बलाल चतुर्वेदी	,,	,, २९८
१६९६	,, भोलानाथ	,,	,, २३४
१६९७	,, परमेश्वरीदास	,,	,, २६१
१६९९	,, बच्चाराम	हंडिया	,, २७९
१७००	,, लाल बहादुर सिंह	,,	,, २७२
१७०२	,, अशर्फीलाल	,,	,, ३१२
१७०३	,, काशीप्रसाद सिंह	,,	द्वितीय श्रेणी ३२३
१७०४	,, शिवधारी सिंह	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार
१७०५	श्रीमती श्यामकुमारी देवी प्रधान	,,	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७०६	,, सरस्वती देवी श्रीवास्तव	,,	,,
१७०७	श्री इन्द्रनारायण	,,	तृतीय श्रेणी २५८

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१७०९	श्री हरिनाथ पाण्डेय	हँडिया	तृतीय श्रेणी २६६
१७१०	,, सेहत बहादुरसिंह	,,	तृतीय श्रेणी २९५
१७११	,, रमाकान्त	,,	,, २८६
१७१३	,, राधाकान्त पाण्डेय	,,	द्वितीय श्रेणी ३१६
१७१५	,, केदारनाथ पाण्डेय	,,	तृतीय श्रेणी ३१२
१७१६	,, दातादीन	,,	द्वितीय श्रेणी ३८०
१७१७	,, रघुनाथप्रसाद	,,	तृतीय श्रेणी २६०
१७१८	,, हीरालाल	,,	द्वितीय श्रेणी ३५८
१७२१	,, नागेश्वरप्रसाद श्रीवास्तव	,,	तृतीय श्रेणी २६९
१७२२	,, रामदेव मिश्र	,,	,, २९८
१७२३	,, ओंकारनाथ पांडेय	,,	,, २६५
१७२५	,, कामतासिंह	,,	,, ३०९
१७२६	,, राजाराम त्रिपाठी	,,	प्रथम श्रेणी ४३७
१७२९	,, जगदीश स्वरूप	नानपारा	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७३०	,, श्यामलाल	,,	,,
१७३२	,, यदुनन्दनप्रसादसिंह	बहदुरा	,,
१७३३	,, कृष्णबल्लभ सिंह	,,	विभाजित प्रणाली के अनुसार

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१७३५	श्री अर्जुनलाल दास	रानीगंज (पूर्णियां)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७३६	" सहदेवप्रसाद	"	"
१७३७	" रामव्रत सिंह	"	"
१७३८	" रामकृष्ण नायक	"	"
१७४१	" जनकलाल सिंह यादव	"	"
१७४२	" शहादत अली	दबोह	"
१७४४	" हरिहर ठाकुर	भवानीपुर	द्वितीय श्रेणी ३४४
१७४५	" विश्वनाथ बहादुर	मुजफ्फरपुर (सुहृदसंघ)	तृतीय श्रेणी २८९
१७४७	" भील चन्द्र गुप्त	धार	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७४८	" बलराम	संगरिया	तृतीय श्रेणी २९३
१७४९	" शिव प्रताप सिंह	बम्बई (मारवाड़ी वि०)	अध्याय ३ नियम ३ के अनुसार
१७५०	" रामस्वरूप सिंह	"	"

मुनीमी परीक्षा

५	श्री पदमचन्द खजानची	ओसियाँ	द्वितीय श्रेणी १६७
११	" चार्ल्सचांदा	नसीराबाद	अध्याय ७ नियम ६ के अनुसार
१२	" सूरजप्रसाद शर्मा	"	"
१४	" माताप्रसाद	प्रयाग	"

क्रम संख्या	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	श्रेणी तथा प्राप्ताङ्क
१५	श्री महावीर गौड़	ब्यावर	द्वितीय श्रेणी १७९
१६	" रतनलाल	"	प्रथम श्रेणी २३१
१८	" गोकुलचन्द्र	"	तृतीय श्रेणी १५२
२०	" उम्मेदसिंह	"	द्वितीय श्रेणी २१०
२१	" रतनलाल	"	" १७०
२२	" यशवन्त सिंह	"	" १६८
२३	" मदनलाल	"	" १६८
२४	" धनराज	"	" १६७
२५	" मदनसिंह गोखरू	"	प्रथम श्रेणी २२० [वि० यो० गणि०]
३२	" लादूराम सोमानी	मौलासर	द्वितीय श्रेणी १७०
३५	" बद्रीप्रसाद	रतनगढ़	अध्याय ७ नियम ६ के अनुसार
४१	" बसन्तीलाल	सुखेड़ा	द्वितीय श्रेणी १९३

दयाशङ्कर दुबे एम० ए०
परीक्षा मंत्री
हिन्दी विश्वविद्यालय

संवत् १९९७ (सन् १९४०) की पदक सूची

संवत् १९९७ (सन् १९४०) की परीक्षाओं के परिणाम के अनुसार म्नलिखित परीक्षार्थियों को पदक दिये जायंगे—

उत्तमा परीक्षा

ीधर पदक (स्वर्ण)—क्रम सं० ५७५ श्री प्रेमनारायण शुक्ल, केन्द्र—कानपुर (सनातन धर्म कालेज)।

ोहनलाल चौबे पदक (रौप्य)—क्रम सं० १०३ श्री मागीलाल जैन, केन्द्र—इन्दौर।

मध्यमा परीक्षा

ट्ट पदक (स्वर्ण)—क्रम सं० १९०० श्री चन्द्रचूड़मणि त्रिपाठी, केन्द्र—सुलतानपुर।

मध्य भारत हिन्दी सा० स० पदक (रौप्य)—क्रम सं० १३५ श्री कैलाशनारायण चौधरी, केन्द्र—इन्दौर।

श्री भगवानदेवी बाजोरिया पदक (स्वर्ण)—क्रम सं० १५७० श्रीमती सरस्वती देवी, केन्द्र—मोरसंड।

आगरा नागरी प्र० सभा पदक (रौप्य)—क्रम सं० ६९ श्री प्रकाश सक्सेना, केन्द्र—आगरा।

विजयेन्द्र पदक (रौप्य)—क्रम सं० १६१४ श्री गोकुलप्रसाद त्रिपाठी, केन्द्र—राजगढ़।

त्रिलोकीनाथ वर्मा पदक (रौप्य)—क्रम सं० ६९ श्री प्रकाश सक्सेना, केन्द्र—आगरा।

भारतेन्दु पदक (रौप्य)—क्रम सं० ५६८ श्री टीकमचन्द्र जैन, केन्द्र—कोटा।

प्रथमा परीक्षा

पूर्ण पदक (स्वर्ण)—क्रम सं० ५३४ श्री बलवन्तसिंह, केन्द्र—डिबाई।
शिवदेवी पदक (रौप्य)—" ९५ श्री कन्हैयालाल यादव, " इन्दौर।
विजयेन्द्र " " " १३३० श्री चैनसिंह, " राजगढ़।
हनुमन्त पदक " " ५७ श्री रामबाबू, " आगरा।
भारतेन्दु " " " ३२५ श्री मगनलाल ओराठौड़, केन्द्र—कोटा।

वैद्य विशारद परीक्षा

आयुर्वेद प्रचारिणी सभा पदक (रौप्य)—क्रम सं० ५९ श्री शिवसिंहासन मिश्र, केन्द्र—पांचाली।

दयाशङ्कर दुबे, परीक्षामंत्री।

हिन्दी विश्वविद्यालय

की

संवत् १९९७ की परीक्षाएँ

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य भिन्न भिन्न उपायों से सर्वमान्य राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार करना और उसके साहित्य को सब प्रकार से समुन्नत करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सम्मेलन द्वारा संस्थापित हिन्दी विश्वविद्यालय की ओर से उत्तमा, मध्यमा, प्रथमा, वैद्य विशारद, कृषि विशारद, शीघ्रलिपि विशारद, मुनीमी, आरायजनवीसी और राष्ट्रभाषा प्रचार इत्यादि परीक्षाएँ ली जाती हैं। उत्तमा और मध्यमा परीक्षाओं में उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को क्रमशः 'रत्न' और 'विशारद' की उपाधियाँ दी जाती हैं। इन परीक्षाओं की एक विशेषता यह है कि ये हिन्दी माध्यम द्वारा ही ली जाती हैं। अतः अँग्रेजी न जानने वाले व्यक्तियों को भी इन परीक्षाओं में उत्तीर्ण होकर अपनी योग्यता बढ़ाने का सुअवसर प्राप्त होता है।

राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षाओं की व्यवस्था परीक्षासमिति की उपसमिति द्वारा वर्धा से होती है। इन परीक्षाओं तथा शीघ्रलिपि की परीक्षा को छोड़कर इस वर्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन की समस्त परीक्षाएँ ता० ९ नवम्बर सन् १९४० को आरम्भ होकर ता० २० नवम्बर सन् १९४० को समाप्त हुईं। परीक्षाफल पर विचार करने के लिए हिन्दी विश्वविद्यालय परिषद की बैठक ता० २३ फरवरी को हुई। मध्यमा और उत्तमा परीक्षाओं के कुछ परीक्षकों से उनकी अस्वस्थता के कारण परीक्षाफल हमें अधिक विलम्ब से प्राप्त हुआ। अतः उसे हम क्रमशः ता० २५ फरवरी और ता० ४ मार्च को पत्रों में प्रकाशित कर सके। राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षाओं को छोड़कर संवत् १९९६ में सम्मेलन परीक्षाओं में सम्मिलित होने वाले परीक्षार्थियों की संख्या ३१७५ थी। इस वर्ष (संवत् १९९७) के परीक्षार्थियों की संख्या ३९६१ रही। गत वर्ष परीक्षा शुल्क की आय १७८१४) थी। इस वर्ष शुल्क की आय १८२१५) रही। संवत् १९८२ तक तो कुछ न कुछ वृद्धि होती रही किन्तु संवत् १९८३ से परीक्षार्थियों की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई है। संवत् १९८३ से लगातार सं० १९९७ तक के परीक्षार्थियों

की संख्या हम नीचे दे रहे हैं। इससे पाठकों को परीक्षाओं की प्रगति का ज्ञान भली भाँति हो जायगा:—

संवत्	परीक्षार्थियों की संख्या	
	जिनके आवेदनपत्र आये	जो सम्मिलित हुए
१९८३	१५५६	१०३५
१९८४	२०५६	१३२६
१९८५	२३६६	१४३५
१९८६	२४५८	१६९२
१९८७	१७८३	१२६९
१९८८	१४७१	११६६
१९८९	१३७०	१११६
१९९०	१४१९	१२३१
१९९१	१५३५	१३१८
१९९२	१६५९	१४४९
१९९३	२०४७	१७७३
१९९४	२५२४	२०२८
१९९५	३००९	२४१७
१९९६	३९६१	३१७५
१९९७	४३५८	३५१४

इस कोष्टक के देखने से स्पष्ट है कि परीक्षार्थियों की संख्या और परीक्षा शुल्क में जैसी वृद्धि संवत् १९९७ में हुई है वैसी सम्मेलन के इतिहास में कभी नहीं हुई। इसका मुख्य कारण यह है कि सम्मेलन परीक्षाओं के प्रचार के लिए इस वर्ष सब प्रकार के उपायों से उद्योग किया गया है। इस कार्य में हिन्दी समाचारपत्रों के सम्पादकों ने भी गतवर्ष से अधिक हमारी सहायता की। परीक्षा विभाग से जो सूचनाएँ प्रकाशनार्थ उनके पास भेजी गईं उन्होंने अपने पत्र में उन्हें सहर्ष स्थान देने की कृपा की। इस कृपा के लिए सम्मेलन की ओर से हम उन्हें अनेक धन्यवाद देते हैं और आशा करते हैं कि वे इसी प्रकार की कृपा भविष्य में करते रहेंगे।

संवत् १९९७ में ४३५८ परीक्षार्थियों में से ३५१४ परीक्षाओं में सम्मिलित हुए और २३२७ उत्तीर्ण हुए। विभिन्न परीक्षाओं के परीक्षार्थियों की संख्या नीचे लिखे अनुसार थी :—

परीक्षा	आवेदन पत्र आये	सम्मिलित हुए	उत्तीर्ण	प्रतिशत
उत्तमा	४१०	२९७	२१७	७३
मध्यमा	२०४०	१५८०	१०३५	६५
प्रथमा	१७५१	१५००	१०२५	६८
वैद्य विशारद	९७	९०	२२	२४
कृषि विशारद	१५	१३	१२	९२
मुनीमी	४२	३२	१६	५०
आरायज़ नवीसी	३	२	×	×
	४३५८	३५१४	२३२७	६६

सब परीक्षाओं में मिला कर इस वर्ष ६६ प्रतिशत परीक्षार्थी उत्तीर्ण हुए हैं। परीक्षाओं के स्टैण्डर्ड को ऊँचा रखते हुए जितना उत्तम परीक्षाफल गत पाँच वर्षों से हो रहा है उतना पिछले वर्षों में कभी नहीं रहा। इसका मुख्य कारण केवल यही है कि गत वर्षों से परीक्षाओं के प्रचार के लिए प्रत्येक उपाय से प्रयत्न किया जा रहा है। उत्तमा परीक्षा में भी जितने अधिक परीक्षार्थी गत चार वर्षों से सम्मिलित हो रहे हैं और जितना अच्छा परीक्षाफल गत चार वर्षों से हो रहा है उतना कभी नहीं हुआ। सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा यू० पी० के इन्टर-मीजिएट बोर्ड द्वारा सम्मानित हो चुकी है। अर्थात् मध्यमा परीक्षा में उत्तीर्ण परीक्षार्थी यू० पी० बोर्ड की हाई स्कूल परीक्षा

केवल अँग्रेज़ी विषय लेकर दे सकेंगे। बिहार सरकार ने सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा को हाई स्कूल के बराबर, मध्यमा को इंटर के बराबर और उत्तमा परीक्षा को बी० ए० के बराबर स्वीकार कर लिया है। अर्थात् बिहार सरकार सरकारी नौकरियों में जो सुविधाएँ हाई स्कूल, इएटर और बी० ए० परीक्षाओं में उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को देती है वे ही सुविधाएँ वह क्रमशः सम्मेलन की प्रथमा, मध्यमा और उत्तमा परीक्षाओं में उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को देगी। मध्य प्रान्त की सरकार, जोधपुर दरबार तथा झालावाड़ और छतरपुर राज्यों ने भी सम्मेलन परीक्षाओं में उत्तीर्ण अध्यापकों के वेतन में वृद्धि करने का निश्चय किया है। हमें आशा है कि राजपूताना बोर्ड और अन्य देशी राज्यों से भी इसी प्रकार की सुविधाएँ शीघ्र मिलेंगी। अतः परीक्षार्थियों को अधिकाधिक संख्या में सम्मिलित होकर सम्मेलन परीक्षाओं के प्रचार कार्य में हमारा हाथ बँटाना चाहिये।

उत्तमा परीक्षा के भारतवर्ष भर में १३ केन्द्र हैं। आगरा, इन्दौर, कलकत्ता, जबलपुर (राबर्टसन कालेज), काशी, कानपुर (एस० डी० कालेज), पटना, प्रयाग, लखनऊ, लाहौर, वर्धा और विजगापाटम। आगरा तथा इन्दौर में तो परीक्षार्थियों की शिक्षा का उत्तम प्रबन्ध पहिले ही से था। पिछले पांच वर्षों से प्रयाग में भी परीक्षा के दिनों में परीक्षार्थियों की सुविधा के लिए भिन्न-भिन्न विषयों के व्याख्यान कराये जाते हैं।

उत्तमा परीक्षा में पहिले निबन्ध लिखने का प्रतिबन्ध था। संवत् १९८४ से यह प्रतिबन्ध हटा दिया गया है। संवत् १९८४ तक केवल वे ही परीक्षार्थी इस परीक्षा में सम्मिलित हो सकते थे जो सम्मेलन की विशारद परीक्षा उत्तीर्ण होते थे। अब उन परीक्षार्थियों को भी इस परीक्षा में सम्मिलित होने का अधिकार दिया जाता है जो भारतीय विश्वविद्यालयों से हिन्दी लेकर बी० ए० अथवा किसी भी विषय में एम० ए०, एम० एस-सी०, संस्कृत कालेज काशी की आचार्य और पञ्जाब की हिन्दी प्रभाकर, हिन्दी विद्यापीठ देवघर की साहित्य भूषण, आन्ध्र विश्व विद्यालय की भाषा प्रवीण तथा मद्रास विश्वविद्यालय की विद्वान परीक्षाएं उत्तीर्ण होते हैं। अतः इस सुविधा के कारण परीक्षार्थियों की संख्या में और भी वृद्धि हो गई है। हम उत्तमा परीक्षा का स्टैण्डर्ड ऊँचा बनाए रखने का पूर्ण प्रयत्न कर रहे हैं। युक्तप्रांत की सरकार द्वारा उसे एम० ए० के बराबर स्वीकार किये जाने के लिये प्रयत्न जारी है। नीचे दिये हुए अङ्कों से पाठकों को विदित होगा कि गत १३ वर्षों से उत्तमा परीक्षा के परी-

क्षार्थियों की संख्या में किस प्रकार वृद्धि हुई है।

सम्वत्	परीक्षार्थियों की संख्या
१९८४	३२
१९८५	२९
१९८६	५४
१९८७	२५
१९८८	३७
१९८९	४१
१९८९	३८
१९९०	४८
१९९१	७३
१९९२	७३
१९९३	९४
१९९४	११०
१९९५	२११
१९९६	३३७
१९९७	४१०

परीक्षा केन्द्रोंकी संख्या में भी बराबर वृद्धि हो रही है। संवत् १९८४ से लगाकर संवत् १९९७ तक में परीक्षा केन्द्रों की संख्या में क्रमशः जो वृद्धि हुई है उसकी तालिका नीचे दी गई है :—

संवत्	केन्द्रों की संख्या
१९८४	१९०
१९८५	२२०
१९८६	२८०
१९८७	२७२
१९८८	२६७
१९८९	२५५
१९९०	२५१
१९९१	२५७
१९९२	२५७
१९९३	४१०

१९९४	५३४
१९९५	५३२
१९९६	५१४
१९९७	५२०

इस वर्ष केन्द्रों की संख्या और भी अधिक होती, यदि वे ४८ केन्द्र न तोड़ दिये गये होते जिनमें गत दो वर्षों से पाँच से कम विद्यार्थी सम्मिलित हुए हैं।

प्रत्येक प्रान्त के अनुसार इस समय परीक्षा केन्द्रों की संख्या नीचे लिखे अनुसार है :—

संयुक्त प्रान्त	२०३	केन्द्र
बिहार	१३६	,,
मध्य प्रान्त	४१	,,
बंगाल	७	,,
मद्रास	६	,,
आसाम	१	,,
ब्रह्मा	२	,,
पञ्जाब	६	,,
बम्बई	४	,,

मध्य भारत

इन्दौर राज्य	४०	,,
ग्वालियर राज्य	१९	,,
बड़नगर, रीवां और भोपाल	१०	,,

राजपूताना

बीकानेर राज्य	९	,,
जयपुर राज्य	९	,,
झालावाड़	३	,,
अन्य राज्य	२४	,,

केन्द्रों की तालिका से स्पष्ट है कि अभी भारत के कई प्रान्त और देशी राज्यों में सम्मेलन परीक्षाओं के केन्द्र स्थापित कर उनके प्रचार की बहुत

आवश्यकता है। यह तभी हो सकता है जब भिन्न-भिन्न प्रान्तों के हिन्दी प्रेमी सज्जन इस कार्य में हमारी यथेष्ट सहायता करें। इस वर्ष के लिये नवीन केन्द्र स्थापित कराने की अन्तिम तिथि ३१ जुलाई सन् १९४१ है। जो सज्जन सम्मेलन परीक्षाओं के इस प्रचार कार्य में हमारी सहायता करना चाहते हैं वे यथासम्भव शीघ्र ही हमें लिखकर केन्द्र स्थापना के लिए आवेदन-पत्र का फार्म मँगा लें। यहाँ हम यह भी लिख देना आवश्यक समझते हैं कि सम्मेलन परीक्षाओं के केन्द्र अब किसी प्रतिष्ठित स्कूल या कालेज में उसके प्रधानाध्यापक की अध्यक्षता में ही स्थापित किये जाते हैं। अतः आवेदन-पत्र का फ़ार्म भरते समय प्रार्थियों को इसका ध्यान रखना चाहिये।

परीक्षा केन्द्रों का सञ्चालन और उनकी सुव्यवस्था केन्द्र व्यवस्थापकों की कार्य तत्परता पर ही निर्भर रहती है। पाठकों से यह छिपा नहीं है कि व्यवस्थापकों का कार्य कितना महत्वपूर्ण होता है। प्रश्नपत्रों को परीक्षा-भवन में ठीक समय में खोलना, उत्तर पुस्तकों को समयानुसार यथास्थान भेजना और परीक्षा-भवन में परीक्षार्थियों को अनुचित सहायता न लेने देना व्यवस्थापक के मुख्य कर्तव्य हैं। मुझे यह सूचित करते हुएँ हर्ष होता है कि हमारे व्यवस्थापकों ने अपने उत्तरदायित्व को भली भाँति निबाहा है। इसके लिए मैं उन्हें परीक्षा समिति की ओर से अनेक धन्यवाद देता हूँ।

गत वर्ष की भांति इस वर्ष भी ८० केन्द्रों में निरीक्षक भेजकर परीक्षा केन्द्रों का निरीक्षण कराया गया था। जिन केन्द्रों में त्रुटियाँ पाई गई थीं वे परीक्षा समिति के आदेशानुसार तोड़ दिये गये हैं।

हमारे परीक्षकों ने भी बड़ी तत्परता और लगन के साथ इस वर्ष हमारी सहायता की है। परीक्षक का कार्य कितना उत्तरदायित्व पूर्ण, कठिन और नीरस होता है उसे वे ही सज्जन जानते हैं जिन्होंने कभी इस कार्य को किया है। हमारे परीक्षकों ने अवैतनिक रूप से जिस तत्परता और लगन के साथ हमारी सहायता की है उसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं और परीक्षा समिति की ओर से उन्हें अनेक धन्यवाद देते हैं। इस वर्ष भारतवर्ष का 'इतिहास भाग १ और २' नामक दो पुस्तकें प्रत्येक परीक्षक को भेंट रूप में दी गई हैं। कुछ परीक्षकों ने अपनी रिपोर्ट में परीक्षार्थियों का ध्यान कुछ ख़ास ख़ास बातों की ओर आकर्षित किया है। परीक्षार्थियों की सुविधा और जानकारी के लिए हम उनका सारांश इसी पत्रिका में प्रकाशित कर रहे हैं। उसे हम यथा सम्भव शीघ्र ही पत्रों में भी प्रकाशित करेंगे।

सम्मेलन की ओर से हिन्दी विद्यापीठ में पढ़ाई की व्यवस्था

सर्व साधारण को सूचित करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष होता है कि महेवा-विद्यापीठ, प्रयाग, महेवा के प्रसिद्ध आश्रम में गत वर्ष से पुनः खुल गया है। यह आश्रम ६० एकड़ भूमि में यमुना नदी के दाहिने किनारे पर अवस्थित है। इसकी प्राकृतिक छटा अत्यन्त मनोहर एवं दर्शनीय है। उपाध्यायों तथा विद्यार्थियों के रहने के लिए सुन्दर आवास बने हुये हैं। यहाँ प्रथमा, मध्यमा तथा उत्तमा तीनों परीक्षाओं की पढ़ाई का प्रबन्ध है। विद्यार्थियों के लिए केवल निःशुल्क शिक्षा तथा छात्रावास का प्रबन्ध हैं। अभी विद्यापीठ के पास इतना द्रव्य नहीं है कि वह विद्यार्थियों को किसी प्रकार की आर्थिक सहायता और छात्रवृत्ति आदि दे सके। अतः भोजनादि तथा अन्य सब आवश्यक व्यय उन्हें अपने पास से ही करना होता है। विद्यार्थियों को चाहिये कि वे सम्मेलन द्वारा दी गई इस सुविधा से लाभ उठावें।

दयाशङ्कर दुबे एम० ए०, एल० एल० बी०
परीक्षा मन्त्री
हिन्दी विश्वविद्यालय, प्रयाग

हिन्दी विश्वविद्यालय
के
परीक्षकों के वक्तव्यों का सारांश

उत्तमा (हिन्दी साहित्य)

पाठ्य पुस्तकों का गम्भीर अध्ययन होना चाहिये। समालोचनात्मक प्रश्नों के लिए आनुषंगिक ग्रन्थों को पढ़ना और स्वयं समीक्षात्मक दृष्टि से विचार करना आवश्यक है। भाषा दोष और प्रयोग शैथिल्य तो 'रत्न' के परीक्षार्थियों के लिए कलंक हैं। प्रान्तीय दोष, व्याकरण दोष, वर्णानुक्रम की अशुद्धि आदि अनेक विचित्र दोष भरे पड़े हैं। इनको सुधारने का प्रयत्न होना चाहिये।

उत्तर के कलेवर वृद्धि की ओर अधिक ध्यान न होकर संयत भाषा तथा सुसम्बद्ध विचारों की ओर परीक्षार्थियों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया जाना चाहिये।

वाक्य विन्यास और शब्दों के उचित प्रयोग की ओर भी विद्यार्थियों को ध्यान देना चाहिये।

व्याकरण तथा हिज्जे की अशुद्धियां अधिक हैं जो उत्तमा परीक्षा के परीक्षार्थियों के लिए क्षम्य नहीं हैं। कुछ अशुद्धियों के नमूने—पूर्वात्य (प्राच्य के बदले), परवतेश्वर, संसकृति, वातावर्ण, संक्षेपता (संक्षेपतः), वर्णात्मक (वर्णनात्मक), अतयन्त (अत्यन्त), परिश्रकृत (परिष्कृत), भारती (भारतीय), प्रशन्न (प्रसन्न), कारन (कारण)। उत्तर लिखने का अभ्यास बहुत कम किया गया है। इससे उत्तर का ढंग, भाषा, विचारों का सम्बन्ध इत्यादि बातें बहुत दोष युक्त हैं। सबसे कम ध्यान लिपि की स्पष्टता पर दिया गया है।

निबन्ध में विचारों का क्रम विन्यास होना चाहिये। लेख लिख कर उसका पुनः पारायण करने से अशुद्धियां कम रह जाती हैं। भाषा को प्रान्तीय प्रयोगों से बचाकर उसकी विशुद्धता का ध्यान रखा जाय तो अङ्क अधिक मिल सकते हैं।

मध्यमा परीक्षा

साहित्य १—(१) लिखने की अशुद्धियां विशेषकर 'ने' विभक्ति का दुष्प्रयोग, व और ब का अविचार तथा विराम चिन्हों

का अभाव मध्यमा के परीक्षार्थियों के लिए अल्पज्ञता सूचित करती है।

(२) समालोचनात्मक प्रश्नों का सम्यक ज्ञान विद्यार्थी नहीं रखते। उन्हें पूर्ण अध्ययन के पश्चात् परीक्षा में सम्मिलित होना चाहिये।

(३) अर्थ लिखने में यदि संदर्भ, अर्थ और साहित्यिक विशेषता का अवतरण अलग-अलग रक्खा जाय तो अधिक आकर्षक होगा। सम्मिश्रण से अल्पज्ञता प्रदर्शित होती है।

(४) परीक्षार्थी पदों का विभाजन नहीं करते। मुहावरों और शब्दों का प्रयोग एवं वाक्य विन्यास संबंधी त्रुटियां अधिकांश परीक्षार्थियों ने की थीं। व ब और श तथा ष में बहुत से परीक्षार्थी अन्तर नहीं जानते।

साहित्य २—बहुत कम परीक्षार्थियों के उत्तर उच्च श्रेणी के थे। आलोचनात्मक ढङ्ग के प्रश्न विशेष संतोषजनक नहीं किये गये। लिखने का अभ्यास अधिक होना चाहिये। व्याकरण व भाषा सम्बन्धी त्रुटियों पर भी विशेष ध्यान देना आवश्यक है। 'कहानी कला' और 'कहानी की विशेषताओं' का अर्थ एक ही समझा गया। उत्तर लिखने में निरर्थक विस्तार न बढ़ाना चाहिये। कविताओं के उद्धरण ठीक और शुद्ध होना वांछित है। वे अपूर्ण और अशुद्ध न होने चाहिये। दृढ़ के स्थान पर ढड़, कवी (कवि), गद्ध (गद्य) इत्यादि अशुद्धियां अत्यंत निन्दनीय हैं। विराम चिह्नों का उचित उपयोग भी आवश्यक है। अनुस्वार और ब, व का भी ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है।

साहित्य ३—भाषा हिन्दी होनी चाहिये। इसमें ग्रामीण भाषा का सम्मिश्रण नहीं होना चाहिये। उद्देश्य के साथ क्रिया का ध्यान रहना चाहिये। उर्दू शब्दों का प्रयोग अधिक विद्यार्थियों ने किया है। परीक्षार्थी अधिक लिखने के लिए लालायित न हों वरन जितना पूछा जावे उतना ही लिखें। यह अभ्यास से हो सकता है।

ये लोग अनुवाद··········शुरू किये। आप·········

सेवा किये । वे भी·········उल्लेख किया है । बहुत से पत्रिका निकली । इन त्रुटियों के कारण व्याकरण के ज्ञान का अभाव ही कहा जा सकता है इससे भाषा में विकार आ जाता है । विशेष ध्यान की आवश्यकता है ।

साहित्य ४—(१) जबतक हिन्दी संस्कृत का शब्द प्राप्य हो तब तक फ़ारसी आदि शब्दों को त्याज्य ही समझना चाहिये ।

(२) वाक्य छोटे-छोटे गठे हुए नहीं हैं । इसका प्रयोग सीखना चाहिये ।

(३) लम्बी और निरर्थक भूमिका न बांध कर तुरन्त ही विषय पर आना चाहिए ।

(४) जिस विषय पर लेख लिखना अभीष्ट है उसे भली प्रकार समझ लेना चाहिये । मातृ भाषा पर लिखते लिखते हिन्दी की राष्ट्रीयता पर कूद जाना अवांछनीय है ।

इतिहास—पाठ्यक्रम में दी हुई इतिहास की पुस्तकों का ठीक-ठीक ज्ञान होना चाहिये । परीक्षार्थियों को इतिहास का अध्ययन इस दृष्टि से करना चाहिये कि वे पढ़ी हुई घटनाओं के विषय में अपना एक स्वयं मत अथवा विचार स्थिर कर सकें ।

योरोप के इतिहास की परीक्षार्थियों को उचित जानकारी नहीं थी। भारतीय इतिहास के उत्तर भी संतोषप्रद नहीं थे ।

परीक्षार्थियों को परीक्षक से किसी प्रकार का निवेदन नहीं करना चाहिये एक परीक्षार्थी ने लिखा है कि "जीवन सफल होने के कर्णधार केवल एक आप हैं । आपकी कृपा होगी तो मैं पार हो जाऊंगा......मैं गरीब शिक्षक ब्राह्मण हूँ और बीमारी से केवल यही एक पेपर बिगड़ रहा है ।" इन सब लेखों से कोई लाभ नहीं होता ।

भूगोल—परीक्षार्थियों को मानचित्र बनाने का पर्याप्त अभ्यास होना चाहिये । कहीं कहीं पर प्रश्नों को बेकार बढ़ाया गया है । जैसे गंगानदी का भौगोलिक महत्व न देकर उसकी पौराणिक उत्पत्ति बताने का ७५ प्रतिशत विद्यार्थियों ने प्रयत्न किया है ।

र्मशास्त्र—कुछ परीक्षार्थी विषय का ज्ञान तो रखते हैं, परन्तु प्रश्नों के उत्तर विशद रूप से लिखने की योग्यता प्रदर्शित नहीं कर सकते। कुछ परीक्षार्थी ऐसे भी हैं जिनको विषय ज्ञान बिलकुल नहीं या बहुत ही कम है; पर अपनी वावदूकी से व्यर्थ का विस्तार प्रकट करते हैं।

षिशास्त्र—परीक्षार्थी पुस्तकों का अध्ययन गम्भीरता से करें। कल्पना के घोड़े दौड़ाने का प्रयत्न न करें। कृषिशास्त्र के गणित विभाग पर अधिक ज़ोर देने की आवश्यकता है। प्रयोगात्मक अध्ययन ही लाभदायक हो सकता है। प्रश्नों के उत्तर सार पूर्ण तथा संक्षिप्त होने चाहिये।

ंस्कृत—अधिकांश विद्यार्थियों को पाठ्य ग्रन्थों का बिलकुल ज्ञान नहीं है। उन्होंने केवल मनोविनोदार्थ परीक्षा फ़ार्म भर दिया है। संस्कृत ऐसे विषय के लिए अनुमान अथवा काल्पनिक चित्र सर्वथा हास्यास्पद है। बहु संख्यक छात्रों को व्याख्या तथा अनुवाद का भेद ज्ञान नहीं है। अनुवाद में संदर्भ आदिक अनावश्यक बातें देना केवल निष्फल प्रयास मात्र है।

ंगरेज़ी—परीक्षार्थी प्रायः अध्ययन की ओर ध्यान नहीं देते। उत्तर पत्रों के अवलोकन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि पाठ्य पुस्तकों का यथावत अवलोकन भी नहीं किया गया है। वाक्यों का परस्पर सम्बन्ध भी कहीं कहीं नहीं है। विराम चिन्ह और व्याकरण सम्बन्धी भूलें बहुत अधिक हैं। कई परीक्षार्थियों ने व और ब की बहुत भूलें की हैं।

जनीति—पाठ्य पुस्तकों का अध्ययन उचित रूप से करना चाहिये। केवल अखबारी बातों से शास्त्रीय सिद्धान्तों का ज्ञान होना असम्भव है।

र्थशास्त्र—गत वर्ष से उत्तर अधिक संतोषप्रद थे। पत्र पत्रिकाओं को पढ़ने और वर्त्तमान हलचल के सम्पर्क में रहने तथा हाल की मुद्रित अर्थशास्त्र पर पुस्तकों को पढ़ने से और भी अधिक लाभ की सम्भावना है।

विज्ञान—कई परीक्षार्थी अंग्रेजी के शब्द बिना प्रयोजन भरने का प्रयत्न करते हैं। इससे कदाचित वे अपना बड़प्पन समझते हैं। परन्तु यह उनकी भूल है। उनको चाहिये कि जिन अंग्रेजी शब्दों के लिए हिन्दी में शब्द मौजूद हैं उनको अंग्रेजी में न लिखें। इसी में मातृभाषा का गौरव है। हाँ, जिनके लिए उपयुक्त शब्द नहीं हैं उनको अंग्रेजी में लिख सकते हैं। एक परीक्षार्थी ने रिफ्लेक्शन के नियम के साथ Laws of Reflection भी लिख दिया है। इन अंग्रेजी शब्दों की बिलकुल आवश्यकता नहीं थी। कुछ ने इन्द्र धनुष के रंगों के नाम अंग्रेजी में लिखे हैं जिनके लिए हिन्दी शब्द अच्छी तरह प्रचलित हैं। समानान्तर, प्रति रूप, आदि शब्दों की जगह Parallel, image लिखना उचित नहीं है। कुछ परीक्षार्थियों ने आवश्यक बातें बहुत कम परन्तु इधर उधर की बातें खूब बढ़ाकर लिखी हैं।

ज्योतिष—अधिकांश परीक्षार्थी लिखने में ह्रस्व दीर्घ का ध्यान नहीं देते और निष्प्रयोजन लेख का विस्तार किया करते हैं।

वैद्य विशारद परीक्षा

मालूम पड़ता है कि अधिकांश परीक्षार्थियों ने गुरु मुख से उचित शिक्षा प्राप्त नहीं की है और पाठ्य ग्रन्थों का मनन भी नियमपूर्वक नहीं किया है।

यह आवश्यक है कि परीक्षार्थी प्रत्येक प्रश्न आरम्भ करने से पूर्व प्रश्न संख्या अवश्य लिखें।

प्रश्नों के उत्तर शुद्ध और समुचित ही लिखने चाहिये। व्यर्थ की बातें लिखना अपनी मन्द बुद्धि का परिचय देना है। कुछ विद्यार्थियों ने इन्फल्यूएञ्जा को प्लेग और मोती झरा लिखा है जो कि सर्वथा असम्बद्ध और प्रलाप मात्र है।

कृषि विशारद परीक्षा

परीक्षार्थियों को कृषि के यंत्रों तथा कार्यों का व्यावहारिक ज्ञान ग्रहण करना आवश्यक है। सामयिक पत्रों और कृषि सम्बन्धी अन्य साहित्य के अध्ययन की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

प्रथमा परीक्षा

ाहित्य १—कुछ परीक्षार्थियों ने कुछ को 'कुच्छ' लिखा है। एक परीक्षार्थी ने अलंकार को भी पिङ्गल मानकर उसका लक्षण लिखा है। इससे पता लगता है कि परीक्षार्थी बिना अध्ययन किये ही परीक्षा में सम्मिलित हो जाते हैं। 'विराम' का प्रयोग कहीं कहीं बिलकुल नहीं है। नवीन कवियों के सम्बन्ध में अधिक जानकारी की आवश्यकता है। ह्रस्व और दीर्घ की भूलें अधिक हैं। जैसे सूरदास को 'सुरदास'। परीक्षार्थियों ने पुल्लिंग और स्त्रीलिङ्ग में भी भूलें की हैं। एक परीक्षार्थी ने पं० सुमित्रानन्दन पन्त को सुलेखिका लिखा है।

ाहित्य २—लिपि सौष्ठव, वर्ण विन्यास तथा वाक्य-योजना पर बिलकुल ही ध्यान नहीं दिया गया। साधारणतया प्रश्नोत्तर-प्रणाली असंतोष दायिनी प्रतीत हुई। सुपाठ्य एवं सुबोध लिपि का तो सर्वथा अभाव सा ही रहा, जो प्रथमा परीक्षा के परीक्षार्थियों के लिये सर्वथा अनुपेक्षणीय है। कई छात्रों ने तो प्रश्न संख्या ही नहीं लिखी, अथवा उसके लिए समुचित स्थान का व्यवहार भी नहीं किया।

ाहित्य ३—अधिकांश परीक्षार्थी निबन्ध का ढांचा बनाना नहीं जानते। निबन्ध में व्यर्थ की बातें न लिखी जावें। शब्दों और वाक्यों में बहुत भूलें थीं। विषय और उसकी मुख्य बातों पर लक्ष्य नहीं रखा गया। बहुत बढ़ाकर लिखने की अपेक्षा थोड़ी और सार बात लिखनी चाहिये।

तिहास—परीक्षार्थी रटने का प्रयत्न बहुत करते हैं। अतः थोड़ी सी बात भूलने पर उनका पूरा प्रश्न बिगड़ जाता है। अधिकांश परीक्षार्थियों ने अटकल पच्चू उत्तर देने का प्रयत्न किया है। 'अलाउद्दीन', 'कनिष्क', 'अशोक' आदि नामों के लिखने में अनेक परीक्षार्थियों ने गलती की है। हिन्दी भाषा में ऐसी अशुद्धियां अक्षम्य हैं।

भूगोल—भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न भागों के मानचित्र पर विशेष ध्यान

देना चाहिये। अधिकांश परीक्षार्थियों ने तो दूसरे प्रश्न में भारतवर्ष का नकशा भी ठीक नहीं खींचा है। प्राकृतिक भूगोल का ज्ञान बहुत कम है।

गणित--क्रिया में केवल अङ्कों के रख देने से गणित का मुख्य उद्देश्य सिद्ध नहीं होता है। इसमें लिखकर समझाने की आवश्यकता होती है। परन्तु इसका अभाव दिखलाई पड़ा। उत्तर लिखने में परीक्षार्थी असावधानी दिखलाते हैं।

स्वास्थ्य रक्षा--परीक्षार्थियों ने पुस्तकों का अवलोकन सुचारु रूप से नहीं किया। प्रश्नों का उत्तर ठीक-ठीक नहीं लिख सके हैं। एक परीक्षार्थी ने धूम्र पान को धूप पान लिखा है।

संस्कृत--परीक्षार्थी शुद्ध हिन्दी लिखने का प्रयत्न नहीं करते। भाषा में प्रान्तीयता कहीं कहीं बहुत अनुचित मालूम होती है।

दयाशंकर दुबे
परीक्षा मंत्री

कार्यसमिति की द्वितीय बैठक

कार्यसमिति की बैठक गुरुवार, १८ वैशाख संवत् १९९८, तारीख १ मई १९४१ को ६ बजे सायंकाल से सम्मेलन के कार्यालय में श्रीयुत पंडित अमरनाथ झा के सभापतित्व में हुई। कुल १० सदस्य उपस्थित थे। कार्यवाही का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

१—पिछली बैठक की कार्यवाही स्वीकृत हुई।

२—सम्मेलन के कर्मचारियों के लिए निम्नलिखित छुट्टी के नियम स्वीकृत हुये—

(१) किसी भी कर्मचारी को छुट्टी का अधिकार न होगा। कार्यालय की सुविधा के अनुसार ही छुट्टी दी जा सकेगी।

(२) कर्मचारियों को एक वर्ष काम कर लेने पर एक महीने तक की रिआयती छुट्टी पूरे वेतन पर मिल सकेगी। यह छुट्टी प्रतिवर्ष कर्मचारी के हिसाब में तीन वर्ष तक सञ्चित होती जायगी। तीन वर्ष से अधिक यह छुट्टी सञ्चित नहीं रहेगी।

(३) कर्मचारियों को बीमारी के लिए वर्ष भर में १५ दिन तक की छुट्टी पूरे वेतन पर और उसके बाद दो महीने तक की आधे वेतन पर दी जा सकेगी।

विशेष—बीमारी की छुट्टी के लिए प्रार्थी को किसी सम्मानित डाक्टर अथवा वैद्य का प्रमाणपत्र देना आवश्यक होगा। यदि सम्मेलन के अधिकारियों की राय में किसी विशेष चिकित्सक का प्रमाणपत्र आवश्यक समझा जाय तो बिना ऐसे प्रमाणपत्र के प्रार्थी को बीमारी की छुट्टी न मिल सकेगी। यदि प्रधान मन्त्री के विचार में चिकित्सक का प्रमाणपत्र देना किसी कर्मचारी के लिए सम्भव न हो तो उन्हें अधिकार होगा कि ऐसे कर्मचारी को उपर्युक्त १५ दिन तक की छुट्टी बिना किसी प्रमाणपत्र के ही दे दें।

(४) कर्मचारियों को वर्ष भर में १५ दिन तक की आकस्मिक छुट्टी पूरे वेतन पर दी जा सकेगी।

विशेष—आकस्मिक छुट्टी रिआयती, बीमारी की, या अन्य किसी साधारण छुट्टी के साथ किसी ओर भी न जोड़ी जा सकेगी।

(५) किसी कर्मचारी को, जिसे सम्मेलन में काम करते हुए कम से कम तीन महीने न हो चुके हों, उपर्युक्त किसी प्रकार की सवेतन छुट्टी पाने का अधिकार न होगा।

(६) लेखकों की छुट्टी सहायक मन्त्री तथा विभागीय मन्त्री की सिफारिश पर और माली तथा चपरासियों की छुट्टी सहायक मंत्री तथा प्रबन्ध मन्त्री की सिफारिश पर, प्रधान मन्त्री स्वीकृत या अस्वीकृत करेंगे।

(७) ये नियम १ वैशाख सं० १९९८ से लागू होंगे और इस समय सम्मेलन में छुट्टी के जो नियम प्रचलित हैं वे सब इन नियमों द्वारा निरस्त समझे जायँगे। किन्तु इन नियमों के स्वीकृत होने से पहिले कर्मचारियों की जो रिआयती छुट्टी सञ्चित हो चुकी हो उस पर इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

३—बम्बई की उपनगर-हिन्दी-प्रचार-केन्द्र-सभा की सम्मेलन से सम्बद्धता स्वीकृत हुई।

४—श्री दिनेशनारायण उपाध्याय की साधारण सदस्यता स्वीकृत हुई।

५—सेवदह के राजेन्द्र साहित्य विद्यालय के व्यवस्थापक की आर्थिक सहायता विषयक प्रार्थना पर विचार किया गया और १००) की सहायता दी जानी स्वीकृत हुई।

६—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की सुविधानुसार आय व्यय के हिसाब के लिए उसका वर्ष १ जुलाई से ३० जून तक का स्वीकृत हुआ।

७—प्रचारक के पद पर श्री श्रीकृष्णदास एम० ए० की नियुक्ति स्वीकृत हुई।

रामप्रसाद त्रिपाठी
एम० ए०, डी० एस्सी०
प्रधान मंत्री।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के नवीन प्रकाशन

बुद्ध चरित्र—चरयिता पं० रामचंद्र शुक्ल मूल्य २॥) महात्मा बुद्ध का उज्जवल चरित्र, सुन्दर ब्रजभाषा काव्य। इस पुस्तक की महत्वपूर्ण भूमिका में ब्रज, खड़ी और अवधी भाषाओं का व्याकरण विवेचन किया गया है।

सोवियत-भूमि—ले० महापंडित राहुल सांकृत्यायन, मूल्य ५) रूस के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिये हिन्दी में अद्वितीय ग्रंथ।

मूर्तिकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) भारतवर्ष की मूर्तिकला की आदि से अंत तक तात्विक व्याख्या।

चित्रकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) चित्रकला पर सर्वोत्तम पुस्तक

बाल-मनोविज्ञान—ले० पं० लालजीराम शुक्ल मूल्य १।) हिन्दी में बाल-मनोविज्ञान संबंधी सर्वश्रेष्ठ रचना।

मआसिरुल् उमरा, भाग १ और २—अनु० बाबू ब्रजरत्नदास, मूल्य ४) प्रति भाग। मुगल शासनकाल के सरदारों की सब से प्रामाणिक जीवनियां।

बिहार में हिन्दुस्तानी—ले० पं०चंद्रबली पाण्डेय, मूल्य।) बिहार प्रांत में हिन्दी हिन्दुस्तानी समस्या की तात्विक व्याख्यान।

भाषा का प्रश्न—ले० पं० चंद्रबली पांडेय, मूल्य ॥) भाषा सम्बन्धी प्रश्नों का विस्तृत और विवेचनापूर्ण उत्तर।

कचहरी की भाषा और लिपि—ले० पं० चंद्रबली पांडेय मूल्य ।॥) अदालतों की भाषा और लिपि का विस्तृत विवेचन।

मध्य प्रदेश का इतिहास—ले० रायबहादुर डा० हीरालाल बी० ए०, १॥)

हिन्दी साहित्य का इतिहास— ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य ५) प्रवर्द्धित संस्करण हिन्दी साहित्य का सब से अच्छा और विस्तृत इतिहास।

रघुनाथ रूपक—सम्पादक महताबचंद खारैड, मूल्य २) डिंगल भाषा का अत्युत्तम काव्य।

नैपोलियन बोनापार्ट—ले० लाला राधामोहन गोकुलजी, मूल्य १)

सिक्खों का उत्थान और पतन—ले० पं० नन्दकुमार देव, मूल्य १)

भीष्म पितामह—(जीवनी)ले० गणपति जानकी राम दुबे, मूल्य १)

आदर्श और यथार्थ—ले० बाबू पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव, मूल्य ।॥) काव्य में आदर्शवाद और यथार्थवाद का बहुत स्पष्ट और ऐतिहासिक विवेचन।

मालती माला—(कहानी) ले० श्रीमती मालती शर्मा, मूल्य ॥)

त्रिवेणी—ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य १) सूर, तुलसी और जायसी पर लेखक के आलोनात्मक निबंधों के विशिष्ट अंशों का संग्रह।

मिलने के पते—प्रत्येक नगर के प्रतिष्ठित पुस्तक-विक्रेता
अथवा नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा

सभा का नव निर्वाचन

आगरा नागरी प्रचारिणी सभा की प्रबन्ध समिति और उसके पदाधिकारियों का आगामी वर्ष १९४१ व ४२ के लिए नव निर्वाचन ता० २० अप्रैल १९४० ई० रविवार को सायंकाल ४ बजे से हुआ। सभा के प्राण तथा सभा के भूतपूर्व मन्त्री श्री महेन्द्र जी ऐन चुनाव के अवसर पर भारत रक्षा कानून में गिरफ़्तार कर लिये गये थे, फिर भी चुनाव कार्य बड़ी शान्ति और निर्विघ्नता पूर्वक हो गया। सभा के उपसभापति प्रो० जगन्नाथ तिवारी एम० ए० शास्त्री के सभापतित्व में चुनाव सभा का कार्य हुआ। अधिकतर पदाधिकारी निर्विरोध ही चुने गए। सभा के साढ़े चार सौ सदस्यों में से लगभग १०० सदस्यों के उपस्थिति थी।

निर्वाचित पदाधिकारी

सभापति—१ प्रो० पं० हरप्रसाद बागची एडवोकेट।

उपसभापति १—श्रीयुत महेन्द्र जी २—प्रो० जगन्नाथ तिवारी एम० ए० शास्त्री, ३—पं० हरिशङ्कर शर्मा कविरत्न ४—डा० राजाराम व्यास।

प्रधान मंत्री—पं० ब्रजमोहन रावत एम० एस० सी० एल-एल० बी० आनरेरी मजिस्ट्रेट।

उपमन्त्री १—बा० शर्मनलाल अग्रवाल साहित्यरत्न, एम० ए० २—प्रो० टीकमसिंह तोमर एम० ए० ३—पं० जगन्नाथप्रसाद स्काउट मास्टर।

आडीटर—प्रो० चम्पाराम चतुर्वेदी।

प्रबन्ध समिति के सदस्य

सर्वश्री १—बा० गुलाबराय जी एम० ए०, २—प्रो० पी० एम० भम्मानी, ३—प्रो० न० म० अन्टानी, ४—बा० लक्ष्मीनारायण गर्ग, एडवोकेट, ५—कुँ० तारासिंह धाकरे साहित्यरत्न, ६—प्रो० प्रकाशचन्द्र, गुप्ता, ७—पं० प्यारेमोहन चतुर्वेदी, ८—प्रो० विश्वम्भरदयाल मानव, ९—पं० गोविन्दप्रसाद चतुर्वेदी, १०—पं० श्रीराम शर्मा सम्पादक विशालभारत ११—प्रो० अम्बिकाचरण शर्मा, १२—कुं० बलवानसिंह, १३—बा० कृष्णप्रसाद भार्गव बैंकर, १४—रायसाहब पं० ब्रजनाथ गोस्वामी, १५—पं० विष्णुराम जानी।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा

प्रकाशित कुछ पुस्तकें

(१) सुलभ साहित्यमाला

१ भूषण ग्रन्थावली	२)
२ हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	॥)
३ भारत गीत	≡)
४ राष्ट्रभाषा	॥)
५ शिवाबावनी	≡)
६ सरल पिंगल	।)
७ भारतवर्ष का इतिहास भाग १	२॥)
८ ” ” ” ” २	२।)
९ ब्रजमाधुरीसार	२॥)
१० पद्मावत पूर्वार्द्ध	१), १।)
११ सत्य हरिश्चन्द्र	।-)
१२ हिन्दी भाषा सार	॥।)
१३ सूरदास की विनय पत्रिका	≡)
१४ नवीन पद्यसंग्रह	॥।)
१५ कहानी कुञ्ज	॥=)
१६ विहारी संग्रह	≡)
१७ कवितावली	॥।)
१८ सुदामा चरित्र	।)
१९ अलंकार प्रकाश	।=)
२० कबीर पदावली	॥।=)
२१ हिन्दी गद्य निर्माण	१॥)
२२ हिन्दी साहित्य की रूप रेखा	।)
२३ सती कण्णकी	॥)
२४ हिन्दी पर फारसी का प्रभाव	॥=)
२५ पार्वती मङ्गल	।)
२६ सूर पदावली	॥=)
२७ नागरी अंक और अक्षर	≡)
२८ हिन्दी कहानियाँ	१॥)
२९ ग्रामों का आर्थिक पुनरुद्धार	१।)
३० तुलसी दर्शन	२॥)
३१ भूषण संग्रह भाग १	।-)
३२ भूषण संग्रह भाग २	॥=)

(२) साधारण पुस्तकमाला

१ अकबर की राज्यव्यवस्था	१)
२ प्रथमालंकार निरूपण	≡)

(३) वैज्ञानिक पुस्तकमाला

१ सरल शरीर विज्ञान	॥), ॥।)
२ प्रारम्भिक रसायन	१)
३ सृष्टि की कथा	१)

(४) बाल साहित्यमाला

१ बाल पद्यरत्न	॥)
२ वीर सन्तान	।=)
३ बिजली	=)

(५) ओझा अभिनन्दन ग्रन्थ

१६)

रजिस्टर्ड नं० ए० ६२१

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अभूतपूर्व साहित्य प्रकाशन

प्रेमघन-सर्वस्व

(प्रथम भाग)

'दो शब्द' लेखक, माननीय श्री पुरुषोत्तमदास जी टंडन

परिचय-लेखक, आचार्य पंडित रामचंद्र जी शुक्ल

आधुनिक हिन्दी के निर्माता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति स्वर्गीय उपाध्याय पंडित बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की सम्पूर्ण कविताओं का विशाल संग्रह-ग्रंथ। हिन्दी में प्रथम और अपूर्व काव्य। लेखक के चित्रों से सुसज्जित और सजिल्द। मूल्य ४।।)

बाल साहित्यमाला

बालभारती
श्रीयुत श्रीनाथसिंह
मूल्य ।=)

वीर शतमन्यु
श्रीयुत 'स्वर्णसहोदर'
मूल्य ।)

बालकथा
सौ० श्रीमती कमलाबाई किबे
मूल्य ।।)

छत्रपति शिवाजी
श्रीयुत गुर्ती सुब्रह्मण्यम् एम० ए०
मूल्य ।)

बाल कवितावली
श्री सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ
मूल्य ।)

साधारण पुस्तकमाला

चित्ररेखा
श्रीरामकुमार वर्मा एम० ए०
मूल्य १।।)

गोरख बानी
डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल एम० ए०,
डी० लिट्०

डिंगल में वीररस
श्री मोतीलाल मेनारिया एम० ए०
मूल्य १।।।)

आधुनिक कवि—१
श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए०
मूल्य १।।)

वीर काव्य संग्रह
श्री उदयनारायण तिवारी एम० ए०
श्री भगीरथप्रसाद दीक्षित 'साहित्यरत्न'
मूल्य २)

साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

मुद्रक—गिरिजाप्रसाद श्रीवास्तव, हिन्दी साहित्य प्रेस, प्रयाग।
प्रकाशक—साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

गु. पुस्तकालय

आषाढ़-श्रावण, संवत् १९९८

सम्मेलन पत्रिका

[भाग २८, संख्या ११, १२]

संपादक

श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल

साहित्यमंत्री

हिन्दी साहित्य सम्मेलन

प्रयाग

१) वार्षिक

प्रति संख्या ।)

विषय-सूची

१—चार नई पुस्तकें [ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल] ... १
२—हिन्दी में विविध विषयक जैन साहित्य [लेखक—श्री अगरचन्द नाहटा, सं० 'राजस्थानी'] ९
३—कविवर 'प्रसाद' का आँसू [लेखिका—कुमारी सरस्वती देवी गुप्त, विशारद] १९
४—कला की निष्पत्ति और टाल्सटाय [लेखक—साहित्यरत्न श्री बिसाहूलाल सराफ़ बी० ए० एल० एल० बी०] ... २३
५—क्या कबीर रामानन्द के शिष्य थे ? [लेखक—श्री परमानन्द शर्मा, 'साहित्यरत्न'] २६
६—हिन्दी के मुसलमान कवि और उनकी विशेषता [लेखक—श्री दिनेश नारायण उपाध्याय 'प्रेमनिधि'] ... ३०
७—हिन्दी और विराम चिह्न [लेखक—श्री किशोर साहू बी० ए०] ४२
८—प्राप्ति स्वीकार [लेखक—श्री रामनिधि शर्मा, बी० ए०] ४६
९—प्राप्त पत्रों का सार ५४
१०—परीक्षा समिति की तीसरी बैठक ६५

'राष्ट्रभाषा-समाचार'

[राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा, का मुखपत्र]

हर महीने की १५ तारीख़को निकलता है । इसमें प्रचारकों तथा केन्द्र-व्यवस्थापकों के लिये आवश्यक एवं उपयोगी ताज़ी सामग्री रहती है ।

वर्धा-कार्यालय तथा परीक्षा-विभाग की सभी सूचनायें और राष्ट्रभाषा-प्रचार की तमाम प्रान्तीय हलचलें निकलती हैं ।

'प्रारंभिक' से 'कोविद' तक के परीक्षार्थियों की कठिनाइयों को दूर करने के लिये समय समय पर परीक्षा-संबंधी लेख भी प्रकाशित होते हैं ।

इसका वार्षिक चंदा सिर्फ़ १० आना है । मनी-ऑर्डर से भेजकर 'राष्ट्रभाषा-समाचार' के ग्राहक ज़रूर बनिये ।

व्यवस्थापक,
'राष्ट्रभाषा-समाचार', वर्धा

सम्मेलन पत्रिका

भाग २८] आषाढ़, श्रावण १९९८ [संख्या ११, १२

चार नई पुस्तकें

[ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल]

हिन्दी में इधर कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। साहित्य, राजनीति, अर्थशास्त्र, समालोचना, कहानी, कविता तथा स्त्री शिक्षा संबंधी कई रचनायें ऐसी हैं जिनका उल्लेख आवश्यक है। इन पुस्तकों द्वारा जहाँ हिन्दी के भांडार की वृद्धि होती है वहाँ उसके विभिन्न अंगों की पूर्ति में भी सहायता मिलती है।

पहली पुस्तक का नाम है—प्रेमचन्द। इसके लेखक डाक्टर राम विलास शर्मा और प्रकाशक, सरस्वती प्रेस काशी हैं। साहित्य के पाठक इस बात को भली भांति जानते हैं कि किसी साहित्यिक युग का निर्माण उसके महारथी के द्वारा ही होता है। यह इसलिये कि लेखक परिस्थितियों के अनुसार सदैव ही बदलता रहता है। परिस्थितियों पर वह अपनी एक स्पष्ट छाप डाल देता है। इसलिये उसके मरने के बाद भी उसका युग कुछ वर्षों तक चलता ही जाता है। लेखक की महानता की यही एक कसौटी है और स्वर्गीय श्री प्रेमचन्द जी इस पर पूरी तरह खरे उतरते हैं। उन्होंने हिन्दी उपन्यास साहित्य में जिस युग को जन्म दिया है, उनकी मृत्यु के बाद उसकी समाप्ति अब लगभग होने को है। परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ प्रेमचन्द का साहित्यिक युग भी समाप्त हो रहा है। यथार्थवाद धीरे धीरे साहित्य के अंग प्रत्यंग में प्रवेश कर रहा है। कितने ही लेखक तो सामाजिक, राजनीतिक तथा वैयक्तिक परिस्थितियों के आगे के चित्र खींचने के कारण प्रगतिशील कहे जा रहे हैं।

आज के युग को देखते हुए यदि हम प्रेमचन्द जी के साहित्य का अध्ययन करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वे एक प्रगतिशील—वर्तमान से आगे थे। प्रगतिशीलता के भीतर आदर्शवाद या सिद्धान्तवाद—चाहे विश्वास के ही रूप में क्यों न हो, अपने आप ही वृद्धि प्राप्त करने लगता है। प्रेमचन्द जी भी यथार्थवादी थे। यथार्थवाद और रोमांटिसिज़्म दोनों की पृथक् धाराओं को प्रेमचन्द जी के अनुभवों के कूलों के बीच बहना था। प्रेमचन्द जी के आदर्शवाद का विकास भी क्रम से ही हुआ। 'सेवासदन' में उनके सामाजिक आदर्शों का चित्र है, 'प्रेमाश्रम' में किसान-जमींदार की समस्या है, 'कर्मभूमि' में अछूतों की समस्या और 'रंगभूमि' भावों को उन्नत बनाने के लिये नये उद्योग-धन्धों पर प्रकाश डालने वाली एक प्रकाश रेखा है। 'गोदान' किसान और महाजन के वातावरण को लेकर आगे बढ़ा है। इस प्रकार यदि हम देखते हैं तो पता चलता है कि प्रेमचन्द जी ने जिन प्रवृत्तियों को लेकर साहित्य-रचना की है, वे ही बाद में समाज की एक समस्या बन गई हैं। किसी भी लेखक की यह एक बड़ी सफलता है। एक बात और ध्यान देने की है कि ऐसे लेखक अन्यान्य साहित्य में भी अधिक नहीं मिलेंगे जिनकी प्रत्येक पुस्तक एक भिन्न समस्या की परिचायिका हो, किंतु प्रेमचन्द जी की गिनती ऐसे लेखकों में की जाती है जिनको जीवन के कितने ही स्तरों का अच्छा अनुभव था और इसका अन्दाज़ उनकी विभिन्न रचनाओं से लगाया जा सकता है। 'प्रेमचन्द' पुस्तक में प्रेमचन्द की इन्हीं प्रवृत्तियों पर पूरा प्रकाश डाला गया है।

पुस्तक में ग्यारह निबंध हैं जो प्रेमचन्द की रचनाओं के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालते हैं। लेखक के विचार से प्रेमचन्द जी उग्र समाज सुधारक थे। उन्होंने समाज के आंतरिक कोढ़ को दूर करने के लिये जिन पहलुओं का चित्रण किया वे अत्यन्त प्रभावोत्पादक और जीवित हैं। लेखक ने यह भी बतलाया है कि समाज सुधारक प्रेमचंद से कलाकार प्रेमचंद का स्थान कम नहीं है। उनका लक्ष्य जिस सामाजिक समस्या और परिवर्तन-क्रम को चित्रित करना रहा है उसमें वे पूरी तरह सफल हुए हैं। साथ ही लेखक ने लिखा है कि 'प्रेमचन्दजी का गद्य देहाती भाषा की पृष्ठभूमि पर निर्मित है, कहावतें, मुहावरे और उपमायें उन्होंने वहीं से ली हैं। भाषा की सरलता के लिये भी उन्हें वहीं प्रेरणा मिली है। प्रेमचन्द की कला का रहस्य एक शब्द में उनका देहातीपन भी है।'

डाक्टर शर्मा का अध्ययन ऊँचा और आलोचक के नाते दृष्टि पैनी है। मनोवैज्ञानिक गुत्थियाँ सुलझाने में वे पूरी तौर से सफल हुए हैं। आलोचना करते समय नियमन का पूरा ध्यान रखा गया है। थोड़े में पते की बातें कह जाना आलोचक की शैली की विशेषता मालूम पड़ती है। विषय को देखते हुए भाषा सरल और स्पष्ट है। सब मिलाकर 'प्रेमचन्द' नामक पुस्तक प्रेमचन्द की रचनाओं के अध्ययन में सहायक सिद्ध होगी।

(२)

दूसरी पुस्तक का नाम है 'खाली बोतल'। इसके लेखक हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानीकार श्री भगवतीप्रसाद बाजपेयी हैं। पुस्तक नेशनल लिटरेचर कम्पनी, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित हुई है। पुस्तक में इनरटाइटिल के मोटो के अनुसार 'पीड़ित मानवता के चीत्कार और जागरण की कलापूर्ण' दस कथायें संग्रहीत हैं। बाजपेयी जी की कहानियाँ कोमल, भावुक और कलापूर्ण होती हैं। कहानियों की पृष्ठ भूमि कोमल भावना और रोमांस है पर भावुक होने के नाते उन्हें हर बात में निराशा और दर्द का ही अनुभव होता है। इसीलिये कहानियों में भी निराशा और दर्द की अधिकता प्राप्त होती है।

कला के विकास के लिए उसकी पृष्ठ भूमि को किसी आदर्श पर न खड़ी होनी चाहिए। उसे वैयक्तिक मनोविज्ञान को ही अपनाना पड़ता है। बाजपेयीजी की कहानियों को आदर्श की लौह शृङ्खलाओं में बँधकर छटपटाना नहीं पड़ता। उनके पात्र परिस्थिति विशेष के साथ बढ़ चलते हैं। उनका लेखक सूत्रधार नहीं बल्कि परिस्थितियाँ ही उनकी निर्माता हैं। उनके पात्र उनके हाथों की कठपुतली नहीं हैं। यही कहानी लेखक की सफलता है। बाजपेयी जी मानव-हृदय की प्रवृत्ति लेकर उसी के आस-पास अपनी कहानी का निर्माण करते हैं। 'खाली बोतल' कहानी का नायक केवल अपने एक पहलू के साथ ही हमारे सामने आता है और अत्यन्त निकट जान पड़ता है। नौकर कहता है—

“उन्हें रात को ही भेज आये थे। मैं भी साथ में था। वे लगातार रोती रहीं किन्तु बाबू जी बराबर उन्हें समझाते रहे। इतना सामान दिया कि बुक कराने में बीस रुपया देना पड़ा।” फिर खाली बोतल के टुकड़ों का ढेर दिखाई पड़ता है तो हमारे हृदय में भी एक दर्द पैदा हो जाता है।

'तन का सौदा' करने वाली नारी में भी क्या नारीत्व होता है, इसका

कितना खरा उत्तर अँधेरी रात की नायिका कजली देती है—"जो अपराध तुमने मुझ पर लगाये हैं, उनकी सफाई मुझ पर पड़ी हुई काली नीली मिट्टी और बनी रेखाओं से पूछो, घावों के निशानों और जली हुई खाल की सफ़ेदी से पूछो। रो मैं सकती नहीं, नहीं तो आंसुओं से भी कुछ बता सकती। इतने पर भी विश्वास न हो तो पुलीस के पुराने कागजों में दर्ज आत्मघात के मेरे प्रयत्नों से पूछो।" यहीं पर यह संदेह होता है कि लेखक भावुक है या कलाकार? 'कबाड़ी' कहानी हर दृष्टि से यथार्थवादी है। इसमें कहानीकार ने एक जीते जागते चित्र को चित्रित किया है। कला की दृष्टि से आत्म प्रकाश इस कहानी की विशेषता है।

इस पुस्तक की कहानियों में हारजीत, ट्रेनपर और मैना भी हैं। सबकी पृष्ठ भूमि रोमांस और करुणा से ओतप्रोत हैं। सारे संग्रह में 'गमनागत' सबसे अच्छी कहानी कही जा सकती है। कजली का चरित्र लेखक के श्रेष्ठ कहानी लेखकों में गिने जाने के लिए पर्याप्त है। सब मिलकर प्रस्तुत पुस्तक वाजपेयी जी की प्रतिनिधि कहानियों का संग्रह कहा जा सकता है।

(३)

तीसरी पुस्तक का नाम है–विश्व की महिलायें। इसके लेखक श्रीराजेन्द्रसिंह गौड़ और प्रकाशक साहित्य भवन लिमिटेड हैं! किसी भी देश का इतिहास उस देश की महिलाओं के इतिहास के बिना अधूरा ही समझा जाता है। महिलाओं के इतिहास तथा उनके चरित्र से उस देश के आंतरिक जीवन का पता चलता है जिस पर समाज का निर्माण निर्भर है। संसार के विभिन्न देशों में ऐसी साहित्यिक, राजनीतिज्ञ, समाज सुधारक और वीर स्त्रियों का समय समय पर उदय होता आया है, जिनके गौरवमय चरित्र के प्रभाव से एक ऐसे युग का निर्माण हुआ है जो आज भी स्वर्णांकित हैं। एक समय था जबकि हमारे देश में भी सीता, सावित्री ऐसी धर्मपरायण, अनुसुइया और विदुला ऐसी सती तथा अहिल्याबाई ऐसी समाज सुधारक स्त्रियाँ उत्पन्न हो चुकी हैं। फिर समय की गति ने ऐसा पलटा खाया कि हम अपने आदर्श से च्युत हो गये। किन्तु अब फिर समय आया है कि विद्या के प्रचार तथा देश की उन्नति के साथ ही हमारी आंखों के सामने से अंधविश्वास और कुरीतियों का कुहासा दूर हो गया है। अब हम अनुभव करने लगे हैं कि किसी देश की उन्नति तभी संभव है जब वहाँ के स्त्री और पुरुष दोनों कंधे

ने कंधा मिला कर प्रत्येक क्षेत्र में काम करने लगेंगे। इस ध्येय तक पहुँचने के लिये नवयुवतियों के सामने ऐसे आदर्श और सुंदर चरित्रों के रखने की आवश्यकता है, जो अपनी वीरता, त्याग, सेवा, भक्ति और साहित्यिक एवं वैज्ञानिक कार्यों से गौरव पूर्ण स्थान प्राप्त कर चुकी हैं। आज भी संसार की महिलायें समाज को जिस प्रकार गौरवान्वित बना रही हैं, यह पुस्तक उसी विचार से प्रेरित होकर लिखी गई है।

इस पुस्तक में संसार के भिन्न-भिन्न देशों की बाईस प्रमुख और आदर्श नारियों का जीवन चरित्र लिखा गया है। भारत के आठ तथा और अन्य देशों के चौदह चरित्र हैं। भारत से संबंध रखने वाली आदर्श देवियों में अहिल्याबाई, लक्ष्मीबाई, दुर्गावती, रजिया वेगम, चांदबीबी, नूरजहाँ आदि के आदर्श चरित्रों का चित्रण किया गया है। इन देवियों ने अपने जीवन में समाज सुधार और देश हित के जो कार्य किये थे उनका भी उल्लेख इनके चरित्रों में किया गया है, जिससे आज भी हमारे हृदयों को स्फूर्ति मिलती है। विदेशी महिलाओं में एलिजवेथ, देवी कैथारिन, लुई माइकेल, संगीताचार्य जेनी, मैडम क्यूरी, साध्वी गेयों, देवी जोन और चीन की तीन वीर महिलाओं के चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। इन देवियों ने समाज, विद्या और मानसिक उन्नति के लिये जो आदर्श उपस्थित किया है, वह आज भी इतिहास के पन्नों पर अमिट है। इनके आदर्श चरित्र को पढ़ कर या उस पर चलकर बालिकायें आदर्श माता, आदर्श पत्नी और आदर्श देशसेविका एवं समाज सुधारक बन सकती हैं। यही नहीं उनके भावी पथ निर्माण और कार्य शैली में भी पूरी सहायता मिल सकती है। इन चरित्रों द्वारा उन देवियों के जीवन के कार्यों पर तो प्रकाश पड़ता ही है साथ ही उनकी उदारता, न्यायप्रियता, दानशीलता और वीरता का आदर्श भी उपस्थित होता है। अहिल्याबाई समाज सुधार में, दुर्गावती और चांदबीबी वीरता में, रजिया बेगम गार्हस्थ्य जीवन में, नूरजहाँ शासन प्रबंध में, जेनी संगीत विद्या में और चीन की मैडम च्यांगकाई शेक, अपने देश की रक्षा में जो आदर्श संसार में स्थापित कर चुकी हैं, वह किसी भी देश या जाति के लिये मार्ग-दर्शक हैं। इनकी प्रतिभा, शौर्य और औदार्य आदि गुणों का मूल्य आंका नहीं जा सकता। इन्होंने अपनी दिव्य मातृत्व-शक्ति से संसार को कल्याण-पथ पर चलाने की चेष्टा की है। ऐसी महिलायें किसी एक देश की ही नहीं वरन् समस्त संसार की विभूति और संपत्ति मानी जाती हैं।

पुस्तक रोचक और सुंदर है। भाषा शैली सरल और सुबोध है।

(४)

चौथी पुस्तक है 'अंकुरिता'। यह हिन्दी की प्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती विद्यावती 'कोकिल' की कविताओं का संग्रह है। इसका प्रकाशन आनंद प्रेस प्रयाग ने किया है। श्रीमती 'कोकिल' अभी कुछ ही वर्ष से हिन्दी क्षेत्र में आई हैं किन्तु थोड़े ही समय में उन्होंने हिन्दी के प्रगतिशील कवियों तथा कवियत्रियों में अच्छा स्थान बना लिया है। अब तक 'कोकिल' के सुमधुर काव्य-सङ्गीत से हिन्दी वाले विशेष परिचित थे किंतु 'अंकुरिता' द्वारा अब उनकी कविताओं की आंतरिक समीक्षा भी की जा सकती है। इस पुस्तक में लेखिका की ४६ कविताओं का संग्रह है। सभी सङ्गीत-ताल से युक्त और भली भांति गेय भी हैं। स्त्री हृदय की वेदना का आभास पुस्तक की कविताओं में प्रायः मिलता है।

हिन्दी नवीन काव्य साहित्य अधिकांश रूप से निराशावाद से, प्रेरित है। 'कोकिल' की कवितायें भी इसके प्रभाव से नहीं बच पाई हैं। निराशा के साथ ही प्रेम और स्नेह की पुट भी काव्य में जीवन डाल देती है। 'कोकिल' अनुभूति और आन्तरिक प्रेरणा से उद्भूत संगीत लहरियों को ही कविता समझती है। वह उसे कलित कल्पना के रंगमहल तक ही सीमित नहीं रखना चाहती। आपकी राय में 'कविता का स्वयं अन्त नहीं है। कविता एक साधन है क्योंकि शब्दों का ध्वन्यात्मक ही नहीं अर्थात्मक पक्ष भी तो उसका उपकरण है और अर्थ का विकास रचनात्मक विचार की एक प्रतिक्रिया है जो स्वयं किसी ससीम चेतना का धर्म है। यदि कवि की चेतना असीम होती तो कविता स्वयं अपना अन्त होती और कविता की सृष्टि ही न हो पाती। उससे परे उसकी अभिव्यक्ति आवश्यक है।' इससे यह जान पड़ता है कि लेखिका काव्य में अभिव्यक्ति को प्रधानता देती है और इसी अभिव्यक्ति का साकार रूप 'अंकुरिता' की पंक्तियों में दिखाई देता है। छन्द, मात्रा, तुक, गति को आप भाव, अनुभूति और अभिव्यक्ति से अधिक महत्व नहीं देती। तभी तो वह लिखती हैं—

खेल खेल ही में हो चलते, उमड़ हृदय के भाव।
जब रख सकतें नहीं जगत से वे कुछ और दुराव।

मैं मुग्धा सी रह जाती तब उस आग्रह पर मौन।
नहीं जानती रच जाता है ये कवितायें कौन?

पुस्तक की कविताओं में कई तो इतनी सुन्दर हैं कि काव्य की दृष्टि से उनका महत्व है। किसी भी कवि के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह जितना भी लिखे वह सभी कलात्मक ही हो। किन्तु उसकी दो-चार कलात्मक और अनुभूति पूर्ण रचनायें उसके सफल कवित्व को व्यक्त कर देती हैं। इस पुस्तक की कुछ कवितायें तो सचमुच ऐसी हैं जिससे लेखिका की प्रतिभा की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जाता। 'परिचय' रचना मेरी राय में पुस्तक की सबसे सुन्दर कविता है।

साक़ी मुझे पहचान ले!
इस हार में उस जीत में,
नव वेदना की रीति में,
इन प्रेमियों की भीड़ में अपना पराया जान ले।
वंशी न दे, वीणा न दे,
हाला न दे प्याला न दे,
मेरे सुनहले गान ले, साक़ी मुझे पहचान ले।

कविताओं में 'रजकण' 'पुलक' 'मेरा सुख' 'दुविधा' 'कैसे जिया करे' 'घासवाली' और 'साधना' वेदना, प्रेम, भाव और अनुभूति से ओत प्रोत हैं।

सभी कविताओं की समीक्षा करने के बाद तात्पर्य यह निकलता है कि कवयित्री अपनी पीड़ा को, अपनी अनुभूति को प्राणी मात्र में व्याप्त कर देना चाहती हैं। तभी उसे संसार से उपेक्षित नगण्य प्राणी में भी अपनत्व दिखाई पड़ता है। 'घासवाली' की मूक पीड़ा को देखकर कवयित्री का हृदय पूछ पड़ता है– 'मौन क्यों हो घासवाली!' इसी समय जब कवयित्री का अपनत्व प्राणी मात्र में व्याप्त होने जा रहा है तभी पुरुष के प्यार का एक और झोंका आता है और उसी समय जैसे उसे कुछ ध्यान आता है और वह कह उठती है—

दया करो, दया करो दूर रहो,
अब न मुझे प्यार करो।

इस प्रकार 'कोकिल' की कविता जीवन के क्रम में उलझी हुई

चलती है। उनका नारीत्व उभर कर कुछ कहने के लिए उत्सुक है। नारी क्या चाहती है यह 'अंकुरिता' की कवयित्री के सम्मुख अभी अस्पष्ट सा है। किन्तु जो कुछ वह चाहती है उसे प्रगट करने का प्रयत्न अवश्य करती है।

पुस्तक की कविताओं द्वारा कवयित्री की कविताओं के विकास-क्रम पर भी प्रकाश पड़ता है। साथ ही विभिन्न परिस्थितियों, प्रवृत्तियों तथा अनुभूतियों का भी पूर्ण प्रभाव प्रकट होता है। संगीत और भाव की प्रधानता मानकर तुक-ताल छन्द की कहीं कहीं परवाह नहीं की गई, इससे कवयित्री के स्वतन्त्र व्यक्तित्व की एक स्पष्ट रेखा दिखाई पड़ती है। कोकिलजी की कवितायें शैशवावस्था से यौवन की ओर अग्रसर हो रही हैं, सम्भवतः इसी दृष्टि से पुस्तक का नामकरण भी किया गया है। इसलिये यदि हमें इस सुन्दर काव्य रचना में कहीं कहीं शैथिल्य दिखाई पड़े तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्योंकि कवितायें शैशव अवस्था को पार करके योवन और प्रौढ़ अवस्था में ही अपना वास्तविक मूल्यांकन करा सकती हैं। सब मिलाकर 'अंकुरिता' हिन्दी प्रेमियों के पढ़ने और काव्य की संगीत लहरियों में उन्हें आनन्द विभोर करने वाली है।*

---

*आल इन्डिया रेडियो लखनऊ से यह आलोचना गत ५ अगस्त १९४१ को ब्राडकास्ट की गई थी।

———

हिन्दी में विविध विषयक जैन साहित्य

[लेखक—श्री अगरचंद नाहटा, सं० 'राजस्थानी', बीकानेर]

जैन विद्वानों ने भारत की सभी प्रधान भाषाओं में ग्रन्थादि रचकर भारतीय साहित्य की महती सेवा की है। उनकी रचनाएं प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, गुजराती, कन्नड, तामिल, मराठी, सिन्धी, राजस्थानी और बँगला आदि विविध भाषाओं में एवं काव्य, नाटक, व्याकरण, अलंकार, ज्योतिष, वैद्यक, न्याय, दर्शन, मंत्रतंत्र, संगीत, कथा, उपाख्यान इत्यादि विविध विषयों की, गद्य पद्यात्मक सभी प्रकार की उपलब्ध हैं। किसी प्रधान भारतीय भाषा के उपयोगी विषय को उन्होंने अछूता नहीं छोड़ा। पर भारतीय विद्वानों ने अद्यावधि उनका यथोचित आदर नहीं किया। साहित्य के संग्रह, संरक्षण, पठन-पाठन एवं रचना में जैनों की सदा उदारवृत्ति रही है। इनके भण्डारों में आज भी ऐसे ऐसे जैनेतर ग्रन्थ संग्रहीत हैं जो अन्यत्र दुर्लभ एवं अप्राप्य हैं। जैनेतर ग्रन्थों पर टीकाएँ भी अधिक संख्या में एवं महत्व की हैं। अतः जैनेतर विद्वानों का भी कर्त्तव्य हो जाता है कि वे जैन साहित्य के अन्वेषण, पठनपाठनादि में सक्रिय भाग लें और उन रचनाओं का उपयुक्त आदर करें।

हिन्दी भाषा में जैन साहित्य कम नहीं है, ५०० गद्य पद्य दिगम्बर जैन हिन्दी ग्रन्थों की तालिका तो करीब २० वर्ष पूर्व श्रीयुत् नाथूरामजी प्रेमी ने अपने "दि० जैन ग्रन्थकर्त्ता और उनके ग्रन्थ" ट्रैक्ट में प्रकाशित की थी, अन्वेषण करने पर और भी सैकड़ों ग्रन्थ मिलेंगे।

इसी प्रकार श्वेताम्बर जैन विद्वानों द्वारा रचित सैकड़ों हिन्दी ग्रन्थ मिलते हैं। पर मुझे तब दुःख होता है जब हिन्दी साहित्य के इतिहास में उनका कोई स्थान नहीं मिलता। हिन्दी साहित्य के विद्वान एवं पाठक सैकड़ों जैन कवियों में से सिर्फ बनारसीदास को छोड़ कर दूसरों से प्रायः अपरिचित से ही है। कई विद्वानों ने यहाँ तक लिख दिया है कि जैन रचनाएँ जैनधर्म के विषय की हैं, अतः साहित्य में उनको स्थान नहीं मिल सकता। मैं इस लेख में पाठकों को यह बताने का प्रयत्न करूँगा कि जैन हिन्दी साहित्य केवल जैन सम्बन्धी ही नहीं है वरन् सार्वजनिक एवं लोकोपयोगी भी है। जिसे वे

जैनधर्म सम्बन्धी बतलाकर टाल देते हैं उसमें भी सर्वजन उपयोगिता की काफी सामग्री है।

जैन धर्म निवृत्ति प्रधान धर्म है। अतः उसके साहित्य में शान्त रस की प्रधानता अवश्य रहेगी पर शांत रस भी तो नव रसों में ही है! अतः साहित्य में उसका उचित स्थान अवश्य है। वास्तव में देखा जायँ तो लोक-कल्याण कर, जितना वह साहित्य है उतना अन्य कोई भी नहीं। पर आज कल न मालूम विश्व में पार्थिव सुखों की ओर इतनी अधिक रुचि क्यों हो गयी है कि आध्यात्मिक साहित्य की उपेक्षा सी होने लगी है।

हिन्दी साहित्य में सन्त साहित्य जिस प्रकार सन्तों की अमर देन है उसी कोटि की जैन रचनाएँ प्रचुरमात्रा में हैं। श्वे० श्रीमद् आनन्दघनजी,[१] चिदानन्दजी,[२] ज्ञानसारजी,[३] यशोविजयजी,[४] विनयविजयजी[५], ज्ञानानन्दजी,[६] इसी प्रकार दिगम्बर भूधर आदि अनेक कवियों के पद-संग्रह[७] छप चुके हैं। वे पद आत्मानुभव एवं आत्म जागृति के लिये बहुत ही महत्व के हैं। ऐसे अमर साहित्य का जितना अधिक प्रचार होगा उतना ही जनता का कल्याण-मार्ग सुगम होगा। इसी प्रकार जैनों का हिन्दी कथा साहित्य भी धार्मिक भावना से ओतप्रोत होने के कारण लोक कल्याणकारी है।

१—२ इन दोनों के पद संग्रह अलग अलग एवं साथ साथ मूल और गुजराती विवेचन सहित प्रकाशित हो चुके हैं, जो अहमदाबाद बम्बई भावनगर से प्राप्य हैं।

३—इनके ४०-५० पद कई वर्ष पूर्व छपे थे, नया संस्करण शीघ्र ही छपनेवाला है।

४-५-६—के यशविलास, विनयविलास और ज्ञानविलास के दो संस्करण छप चुके हैं, जिनमें तीनों विद्वानों के पद एक साथ हैं।

७—जैन ग्रंथरत्नाकर कार्यालय, बम्बई से जैनपद संग्रह के कई भाग प्रकाशित हुए हैं, जिनमें १२४ पद दौलतरामजी के, ८७ पद भागचंदजी के, ८० पदादि भूधरदासजी के, ३२३ पद द्यानतराय के, २४३ पद बुधजन जी के एवं जिनेश्वर हीराचंदादि के भी पद हैं। चंद के ५२ पद एवं अर्थ; कवियों के पद जिनवाजी प्रचारक कार्यालय कलकत्ते से भी प्रकाशित हो चुके हैं। वृन्दाबन एवं बनारसीदास आदि के बनारसी विलास और वृन्दावन विलास आदि छप चुके हैं।

इस लेख में शांत रस एवं जैन तत्व-ज्ञान को छोड़कर अन्य विविध विषयक कतिपय हिन्दी जैन रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

छंद

छंद शतक—गा० ११८ कर्त्ता वृन्दावन र० सं० १८९८ माघ कृ० २ को समाप्त, पोष कृष्णा १४ प्रारंभ, अर्थात् कवि ने १८ दिन में यह ग्रन्थ अपने पुत्र अजितदास के लिये बनाया है। यह ग्रन्थ पं० नाथूरामजी प्रेमी संपादित वृन्दावन विलास में प्रकाशित हो चुका है। 'हिन्दी जैन साहित्य के इतिहास' में इस ग्रन्थ के विषय में श्री प्रेमी जी लिखते हैं—अब तक इसके जोड़ का सरल, सुपाठ्य और थोड़े में बहुत प्रयोजन सिद्ध करनेवाला दूसरा छोटा छन्द-ग्रन्थ नहीं देखा गया।

माला पिंगल—गा० १५४ कर्त्ता श्रीमद् ज्ञानसारजी, र० सं० १८७६ फा० व० ९ विशेष जानने के लिये देखिये हमारा 'श्रीमद् ज्ञानसारजी और उनका साहित्य' नामक लेख जो 'हिन्दुस्तानी' वर्ष ९ अं० २ में प्रकाशित हो चुका है।

लघु पिंगल—कर्त्ता ऋद्धिविजय शिष्य चेतन, सं० १८४७ पो० सुदी २, पत्र ३। इसकी प्रति यति ऋद्धिकरणजी भंडार, चुरु में है।

छंद प्रकाश—कर्त्ता मेघराज (पंजाब जैन भं० सूची ग्रन्थ नं० ९८८)

कोष

नाममाला—धनंजय कृत नाममाला का हिन्दी पद्यानुवाद। कर्त्ता बनारसीदास गा० १७१ सं० १६७० आश्विन शुक्ल १० श्रावण नक्षत्र, मित्र नरोत्तमदास के लिये रचित। इसकी प्रति भी चुरु के यति ऋद्धिकरणजी के संग्रह के (१ गुटके) में है। शब्दों का ज्ञान करने के लिये यह अत्यन्त सरल एवं उपयोगी है।

एक दोहा—काल्पवान कोविद कुशल, सुमन दक्ष धीमान।
ज्ञाता सज्जन वह्मविद तज्ञ गुनीजन सान।

अलङ्कार

लखपति जस सिन्धु—कर्त्ता तयागच्छीय कनककुशल शिष्य कुँवर कुशल रचित। आदि का छंद है—

सकलदेव सिर सेस्टा, परम करत परकास।
सिविता कविता दै सफल, इच्छित पूरै आस ॥ १ ॥

अंत का छंद इस प्रकार है—

कवि प्रथम जे जे कहै, अलंकार उपजाय ।
कुँवर कुशल ते ते लहै, उदाहरन सुखदाय ॥ ८२ ॥

इति श्रीमन्न महाराज लक्षपति आदेशात् सकल भट्टारक पुरन्दर भ० श्री कनक कुशल सूरि शि० कुंअर कुशल विरचिते, लक्षपति जससिन्धु शब्दालङ्कारार्थलङ्कार त्रयोदश तरंग (पत्र ५३ गुटका, चुरु वृद्धकरणजी भंडार)

अलंकार आशय—भंडारी उत्तमचन्द सर्वत्र प्रसिद्ध हैं ।

रस प्रकाश—दीवान लालमणि, हिन्दी जैन साहित्य के इतिहास में उल्लेख है ।

नायिका-भेद

भाषा कवि रसमंजरी—कविमान । समय १७ वीं शताब्दी का शेषार्द्ध, आदि इस प्रकार है—

सकल कल्पनिधि वादि गज, पञ्चानन परधान ।
श्री शिवनिधान पाठक चरण, प्रणमि वदै मुनि मान ॥ १ ॥
नव अंकुर जोवन भई, लाल मनोहर होइ ।
कोपि सरल भूषण ग्रहि, चेष्टा मुग्धा सोइ ॥ २ ॥

इसके बाद नायिकाओं का भेद है । और अन्त इस प्रकार है—

नारि नारि सबको कहै, किउँ नाइका सुहोइ ।
निज गुणपति मति रीति धरि, मान ग्रन्थ अवलोइ ॥१०७॥

इति नायका नामार्थः । इतिभाषाकविरसमञ्जरी नायका ८ नायक ४ दूती ४ दूती १७ भेद समाप्ताः । (दो प्रतियाँ हमारे संग्रह में हैं)

संयोगाद्विंत्रिंशिका—कर्त्ता कवि मान । आदि देखिये—

बुद्धि वचन वर दायिनी, सिद्धि करन सुभ काम ।
सारद सों माननि सखर, हिय की पूरै हाम ॥ १ ॥
राग सुभाषत रमम रस, तिहुन मैं ओ गूढ़ ।
जो जोगीसर जंगली, न लहै तिनको मूढ़ ॥ २ ॥

इसके निम्नोक्त दो उल्लास हमारे संग्रह में हैं । प्रतिलिपि लिखते छोड़ दी गई है । अतः संभवतः कई अधिकार और भी होंगे ।

१ इतिश्रीमन्मान कवि विरचताणा संजोगद्वात्रिंसिकायां स्त्रीरूप वर्णन प्रथमोल्हास।

२ पञ्च सांयोगातन्मध्ये चतुर्थ संयोग वर्णनौ द्वितीयो उल्हास।

काव्य

ऐतिहासिक काव्य—सुप्रसिद्ध राजविलास काव्य एवं बिहारी सतसई के टीकाकार कवि मान विजवगच्छ के जैन यति थे। यह काव्य नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित हो चुका है। वीर रस के काव्यों में इसका उल्लेखनीय स्थान है। कर्त्ता के सम्बन्ध में विशेष विवेचना मैंने अपने स्वतंत्र लेख में की है।

वीर एवं प्रेम-काव्य—कवि जटमल नाहर हिन्दी साहित्य में विशेष प्रसिद्ध हैं। उन्होंने वीररस की गोरा बादल की कथा और प्रेम विलास चौपाई नामक प्रेम काव्य की रचना की है। इन दोनों ग्रन्थों का परिचय जटमल के अन्य ग्रन्थों के साथ हमने अपने 'कवि जटमल नाहर और उनके ग्रन्थ' लेख में किया है जो हिन्दुस्तानी भा० ८ अं० २ में छप चुका है।

प्रेमलता चौपाई के विषय में श्रीयुत सूर्यकरण पारीक का एक लेख 'वीणा' के श्रावण १९९५ में छप चुका है।

सतसई

कुशल सतसई—कर्त्ता कुशलचन्द्रजी, आदि इस प्रकार है—

नमन करूं महावीर को, जग जन तारण हार।
कुसल गुरु कुशलेंदु को, देहू सुमति सुविचार।१।
जिन वानी हिरदें धरी, करहुँ गच्छ हितकार।
जिहिं ते कर्म कषाय का, नाश होत ततकार।२।
ज्ञानचन्द्र गुण गणरमण, भए सन्त श्रुतधार।
उनके चरनन में रही, रचहु सतसई सार।३।

इस ग्रन्थ के १३ दोहे मुझे खाँमगांव के यतिवर्य श्री बालचन्द्राचार्य ने भेजे थे। उन्होंने बीकानेर के यति मोहन जी के पास उक्त ग्रन्थ की प्रति देखी थी। पर ग्रन्थ अभी तक हमारे अवलोकन में नहीं आया। रचना प्रशस्त मालूम होती है।

वर्षा विज्ञान

मेघमाला—कर्त्ता मेघ ऋषि, र० सं० १८१७। इस ग्रन्थ की प्रति बीकानेर के श्री पूज्य जी के संग्रह एवं पंजाब भंडार में है।

शकुन

शकुन परीक्षा—कर्त्ता लक्ष्मीचंद, र० सं० १७६२ पद्य १११ (पंजाब भंडार सूची नं० २४७५)

सामुद्रिक

सामुद्रिक भाषा—कर्त्ता रामचंद, सं० १७२२ माघ कृ० ६ मेहरा स्थान। ग्रन्थ में दो प्रकाश हैं, प्रथम नर लक्षण में पद्य ११७ और द्वितीय नारी लक्षण में पद्य ९४, कुल २११ पद्यों की सं० १७९९ की लिखित १३ पत्रों की प्रति बीकानेर बड़े ज्ञान भंडार के अन्तर्गत जिन हर्षसूरि ज्ञान भंडार के बंडल नं० १६ में है। इसका आदि इस प्रकार है—

सरसति समरूं चित्त धर, सरति वचन दातार।
नर नारी लच्छन कहुं, सामुद्रक अणुसार ॥१॥
सामुद्रक ग्रन्थ में कही, अगम निगम की बात।
इसहिं जाण जो नर हुवै, ते होइ जग विख्यात ॥२॥
आदि अंत नर नारि की, सुख दुःख बात सरूप।
कहुँ अनेक प्रकार विध, सुणी एकांत अनूप ॥३॥
प्रथम पुरुष लक्षण सुनौ, मस्तक पद पर्यंत।
छत्र कुंभ सम सीस जसु, तें हुवे अवनी कंत ॥४॥

अंत इस प्रकार है—

वनवारी बहु बाग प्रधान, वहै विहस्था नही सुथान।
च्यार वर्षा तिंहा चतुर सुजान, नगर मेहरा श्रीयुग प्रधान ॥
बड़े २ पातिसाह नरिंदा, जाकी सेव करे जन कंदा।
पातिसाह श्री और गंगाजी, गए गनीम दिसौ दिसभाजी ।८९।
जाकै राज ग्रन्थ एकीनै, संस्कृत शास्त्र सुगम करि दीनै।
संवत सतरै से बानीसा, माघ कृष्ण पक्ष छठि जगीसा ।९०।
गिरंवर माहे सुमेर विराजै, ज्योति चक्र जिंन सूरज छाजै।
गच्छ माहे खरतर गच्छ राजा, जाकै दिन दिन अधिकदिवाजा ।९१।
श्री जिनसिंह सूरि सुखकारी, नाम जपै सब सुर नरनारी।
जाकै शिष्य सिरोमणि कहियै, पद्य कीर्ति गुरु वर जसु लहियै ।९२।
विद्या च्यार दस कंठ बखाणै, वेद च्यार को अरथ पिछानै।
पद्यरंग मुनिवर सुखदाई, महिमा ताकी कही न जाई ।९३।

रामचंद मुनि इन परि भाख्यौ, सामुद्रिक भाषा करि दाख्यौ ।
जाल गिरहिज्यो सूरिज चंदा, पठहु पंडित लहु आणंदा ।९४।

वैद्यक

वैद्यक के विषय में तो जैन कवियों ने बहुत से बड़े २ ग्रन्थ हिन्दी-पद्य में बनाये हैं । अद्यावधि मुझे ऐसे १२ ग्रन्थों का पता चला है जिनके विषय में स्वतंत्र लेख लिखा गया है ।

रत्न परीक्षा—अचल रत्नशेखर रचित सं० १७६० । इसका आदि इस प्रकार है—

ऊँकार अनेक गुण, सिद्धि रुप परगास ।
पञ्चपद यामैं प्रगट, सुमरिन पूरन आस ।१।
अलख रूप यामै बसै, अनहद नाद अनूप ।
ब्रह्मरंध्रआसन सजैं, स्यों अनादि सरुप ।२।
सुमिरिन याकौ साधिकै, रचिहुँ ग्रंथ मति आनि ।
रत्नपरीक्षा देखिकें, भाषा करहु बखानि ।३।
आंन कवीसर के लिये संस्कृती सब ग्रन्थ ।
तातैं हमां मन में भई, भाषा रसगुन ग्रन्थ ।४।

अन्त इस प्रकार हैं—

अञ्चल गछपति श्री अमर सागर सूरि सुजान ।
ताके पछि पछिवाचक रतन शेखर इति अभिधान ।८२।
तिनि कीनी भाषा सरस, पढ़त होत बहु मान ।
प्रथम लेख सुंदर लिख्यौ, विबुध कपूर सज्ञांन ।८३।
रवि शशि मंडन मेरु महि, जो लौहुअ आकाश ।
पढ़ै सो तौ लुविरल है, लीला हमारी विलास ।८४।

इति श्री वाचक रत्नशेखर विरचिते रत्न व्यवहार सारे श्री मनछी शङ्करदास प्रियेण मणि व्यवहारो नामाष्टम वर्गः । इति रत्नपरीक्षा सम्पूर्ण ।

(पत्र ३९ । २१ दो प्रति महिमा भक्ति भण्डार ब० ६८ में है और १ प्रति हमारे संग्रह में भी प्रति न० ४०३८ है)

स्वरोदय—कर्त्ता-चिदानन्द सं० १९०५ आषाढ़ कृष्ण १० शुक्र, गा० ४५३ । आदि इस प्रकार है—

नमो आदि अरिहंत, देव देवन पतिराया,
जास चरण अवलंब गणाधिप गुण निज पाया ।

धनुष पञ्चसत मान, सप्तकर परिमित काया,
वृषभ आदि अरु अंत, मृगाधिप चरण सुहाया।
आदि अंत युत मध्य, जिन चौवीश इम ध्याइए,
चिदानंद तस ध्यान थी, अविचल लीला पाइए।१।

अंत इस प्रकार है—

कह्यो एह संक्षेप थी, ग्रन्थ स्वरोदयसार।
भले गुणे जे जीव कुं, चिदानंद सुखकार।४५२।
कृष्णा साडी दसमी दिन, शुक्रवार सुखकार।
निधि इन्दु सर पूरणता, चिदानंद चितधार।४५३।

(स्वतन्त्र एवं चिदानन्द सर्व संग्रह में प्रकाशित)

संगीत

रागमाला—हीरचंद कृत सं० १६९१ मांडलिनगर में रचति, ग० ६१। आदि इस प्रकार है—

अकल अरुप अभेय गुन सुन्दर है जसु दीन।
परम पुरुष पय लग्गि कै, रागमाल यह कीन ॥१॥
ब्रह्मादिक हरि सुर सबैं, अहनिसि सब जग जाहि।
कोडिकलप युग बीति गए, भेद न पायो ताहि ॥२॥
सुर नर मुनिवर गुण असुर, नाद ध्यान सब लीन।
आप आपुनी बुद्धि तैं, है कोइ नांही हीन ॥३॥
जौ रागिनि जिन राग की, ते करीयैं तसु सत्थि।
अवर राग कै संगतै, पातक लगेगो हत्थि ॥४॥
जौ समय जिन राग कौ, जो फुनि की जै जांणि।
वर आंवितु रागहिं करैं हौत अचिंती हाणि ॥५॥

इसके बाद रागस्वरूप, भैरव, मालव कौसिक, हिंडोल, श्रीराग, मेघमल्हार राग और उनके परिवार का वर्णन है। अंत इस प्रकार है—

संवत सौले एकानवैं, मांडलि नगरि मझारि।
राग रागनी भेव कीव, गुणीजन लेहु विचारि ॥६॥
सब जन कारन यह रची, रागमाल सुचि भेव।
हीरचंद कवि सुचि कीयै, नागरि जनकै हेव ॥७॥
इति श्री रागमाला समाप्ता।

नीति

भर्तृहरि शतक त्रय पद्यानुवाद—कर्त्ता विनय लाभ, आदि देखिये—

जाही कु राखत हो मनमें, तिमसौ तिय मौंसों रहे विरची।
वा जिनकौ नित ध्यान धरै, तिन तौ फुनि और सौं राम रची।
हम सौं नित चाह धरै कोइ और, सुतौ बिरहानल मैं जुन की।
धिग ताही कुं ताकुं मदन्न कुं मोकुं इते परवात कछु न बची।१।

नीति शतक के अन्त में—

प्रथम शतक यह नीति के विनय लाभ सुभ वैंन।
भाषा करि शुभ बरणयौ, सुरवानी तैं ऐंन।१-२
नीति पंथ अरु संत मग, दानी ज्ञानी और।
परम दयाल कृपाल के, कुन वरणे इहि ठौर।१-३

द्वि० शृङ्गार शतक के अंत में—

यह सिंगार की वरणनां सतक दूसरै मांहि।
विनय लाभ शुभी वैंन सौ, वरणी विविध बनाहिं।१-२

तृतीय शतक की गा० ९१ तक हमारे प्रति में है।

समालोचना

चन्द चौपइ-समालोचना—मोहनविजय रचित चन्द चौपई की समालोचना श्रीमद् ज्ञानसार जी ने ४१३ दोहों में की है। काव्य ग्रन्थ की समालोचना कविता में करने का यह एक ही उदाहरण है। दोहे भी बड़े सरस एवं लालित्य पूर्ण हैं। विशेष परिचय हमारे "श्रीमद् ज्ञानसारजी और उनका साहित्य" शीर्षक निबन्ध में दिया गया है।

आत्मचरित्र

अर्द्ध कथानक—कर्त्ता कवि बनारसीदास, सं० ६७३ दोहा चौपाइ। इसमें कविवर ने अपने ५५ वर्ष की आयु तक के चरित्र का बड़ी ही सत्यता के साथ वर्णन किया है। हिन्दी साहित्य में यह अपने ढङ्ग का एक अनूठा ग्रन्थ है। इसका सार प्रेमीजी ने 'बनारसी विलास' में दिया है। मूल ग्रन्थ भी वे शीघ्र ही प्रकाशित करने वाले हैं।

हिन्दी जैन कथा साहित्य के सैकड़ों ग्रन्थ उपलब्ध हैं, जिनमें कई कई तो बहुत ही मनोहर एवं कवित्व पूर्ण हैं। जैन ग्रन्थों की टीका बचनिकी के—

रूप में हिन्दी का गद्य साहित्य जैनों का बहुत विशाल है। उन सबका अन्वेषण एवं अध्ययन अवश्य होना चाहिए।

फुटकर सर्वजनोपयोगी बावनी आदि की रचना तो जैन कवियों ने प्रचुर परिमाण में की है। रसिक प्रिया, विहारी सतसई आदि हिन्दी के कई ग्रन्थों पर जैन विद्वानों ने टीकाएँ भी लिखी है। अवकाशानुसार अन्य साहित्य पर भी प्रकाश डाला जायगा। इस लेख में तो सहज ज्ञात कतिपय विविध विषयक जैन ग्रन्थों का ही उल्लेख किया गया है। खोज करने पर और भी ऐसे अनेक ग्रन्थों का पता चल सकता है। हिन्दी जैन साहित्य का विशेष अन्वेषण एवं अध्ययन करने पर अनेकों जैन सुकवियों का पता चलेगा जिनका उल्लेख हिन्दी साहित्य के इतिहास में होना परमावश्यक है।

हिन्दी प्रचार में

दक्षिण भारत सबसे पुराना व पुरोगामी है

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा

सात करोड़ हिन्दी प्रेमियों की एक मात्र हिन्दी संस्था है
उसके अंतर्गत

६०० वर्तमान केन्द्र	१७०० पुराने केन्द्र
२०००० वर्तमान परीक्षार्थी	१००००० पुराने परीक्षार्थी
५०० पाठशालायें	१२०० प्रचारक

काम कर रहे हैं।

इनका एक विस्तृत, सुव्यवस्थित संगठन समूचे
प्रान्त में एक जाल सा बिछा हुआ है।

इस महान राष्ट्रीय संस्था का हाल
और
दक्षिण के हिन्दी प्रचार का विवरण
आप

सभाके मुखपत्र

"हिन्दी प्रचार समाचार" में पढ़िये।

सालाना चंदा—सिर्फ दो रुपये

व्यवस्थापक,
पत्रिका विभाग,
पता—दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
त्यागरायनगर, मद्रास।

कविवर 'प्रसाद' का 'आँसू'

[लेखिका—कुमारी सरस्वती देवी गुप्त 'विशारद']

आधुनिक हिन्दी के प्रसिद्ध कवि स्वर्गीय श्री जयशंकर प्रसाद का 'आँसू' उच्चकोटिकी एक काव्य-पुस्तक है। 'आँसू' में उसका नायक 'मैं' अपने हृदय के करुण उद्गारों को प्रकट करता है। किसी समय में उसने छवि भार से दबी हुई एक मूर्ति का दर्शन किया था। उससे स्नेह किया और अन्त में मिला वियोग। उसी वियोग वह्नि में उठती हुई ज्वालाऐं 'आँसू' की लड़ी में पिरोई गई हैं। कवि स्वयं कहता है :—

"जो घनीभूत पीड़ा थी मस्तक में स्मृति-सी छाई,
दुर्दिन में आंसू बनकर वह आज बरसने आई।"

उसके हृदय की करुण पुकार भी इधर भटक रही थी। उसको सुनने वाला इस उन्मत्त संसार के बीच कोई न था फिर भी वह अपनी विचार तंत्री में उलझा हुआ अतीत की बातें सोच रहा था।

आज वह विस्मृत को स्मृत कर अपने दुःख की छाया प्रकृति में भी पाता है। मानो उसका दुःख 'ऊषा की मृदु पलकों में छलक तथा सुख संध्या की घन अलकों में उलझ रहा था। उसको समस्त प्रकृति अपने दुःख से दुःखी प्रतीत होती थी।

वह विरह से कातर जीवन को व्यर्थ समझता है। हृदय मरुस्थल बना हुआ है पर फिर भी पवन तो चल ही रहा है। मरुस्थल में चलती हुई पवन उसे व्यर्थ सी जान पड़ती है। वह कह उठता है :—

'सुख आहत शाँत उमंगे, वेगार साँस ढोने में,
यह हृदय समाधि बना है रोती करुणा कोने में।

प्रसाद जी ने नायक को प्रियतम के मनोहर रूप की स्मृति में गोते खाने के लिये छोड़ रखा है। वह भव-सागर में डूबता उतराता उसका स्मरण करता है। उसका प्रियतम कैसा है :—

"घन में सुन्दर बिजली सी, विजली में चपल चमक सी,
आंखों में काली पुतली, पुतली में श्याम झलक सी।"

नायक के जीवन का सुख, उसके जीवन रुपी प्याली की मदिरा, उसके

प्रियतम द्वारा छीन ली गई। उस निर्मोही से यह भी न देखा गया कि कुसुम कली स्वयं ही अपना जीवन समाप्त करके गिरती वरन् बीच में ही उसे तोड़कर अपनी सफलता चाहता है।

अन्त में आँसू बहाता हुआ नायक भी समझने लगा कि यदि एक बार सारी वेदना भूल जाय तो वह निश्चिन्त हो जाय। अतः वह कहता है :—

"विस्मृति समाधि पर होगी वर्षा कल्याण-जलद की,
सुख सोए थका हुआ सा चिन्ता छुट जाय विपद की।"

इस काव्य का कथा सूत्र अथवा भाव सूत्र उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है। इस काव्य में कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो विशेष रूप से आकर्षित करती हैं।

प्रसाद जी ने नायक के मनोभावों द्वारा कई प्रकार से प्रकृति चित्रण किया है। प्रकृति में नायक के दुःखों की छाया दिखाती है :—

"व्याकुल उस विपुल सुरभि से मलयानिल धीरे धीरे,
निश्वास छोड़ जाता है फिर विरह तरङ्गिनि तीरे।"

नायक जब अपने प्रियतम से मिला था उस समय प्रकृति कैसी थी :—

"हिलते द्रुमदल कल किसलय, देती गलबाहीं डाली,
फूलों का चुम्बन, छिड़ती, मधुपों की तान निराली।"

यद्यपि समस्त काव्य नायक के हृदयोद्गार ही हैं फिर भी किसी किसी पद से प्रसाद जी का उत्कट मनोवैज्ञानिक परख का परिचय मिलता है। वियोग-प्रसूत बेचैनी का यथार्थ चित्र देखिये:—

"अभिलाषाओं की करवट, फिर सुप्त व्यथा का जगना
सुख का सपना हो जाना, भीगी पलकों का लगना।"

सौन्दर्य चित्रण के लिये कदाचित् निम्नलिखित पद ही पर्याप्त होगा :—

बांधा है विधु को किसने, इन काली जंजीरों से,
मणि वाले फणियों का मुख, क्यों भरा आज हीरों से।"

मुख तो चन्द्र है ही साथ ही उस पर लहराती हुई जंजीर रूपी अलकों ने उसका सौंदर्य दुगना कर दिया है।

यह काव्य करुणरस प्रधान है। ऐसे काव्यों की उत्कृष्टता से यदि

करुणरस सब रसों में श्रेष्ठ कहा जाय तो अयुक्ति न होगी। करुणरस की अनुमति के लिये ही कवि के हृदय का एक तार झंकृत होकर पदों के रूप में आया है। विषम वेदना है, कसक है, पीड़ा है। इतना होते हुए भी उस वेदना को याद करने में ही सुख है। यह सुख ही करुणा से प्रस्फुटित होकर भाव पूर्ण बन जाता है।

करुण रस के साथ ही साथ भाव प्रेषणीयता भी है। कवि कदाचित् उस स्मृति सुख में स्वयं ही न रह कर पाठक को भी उसका आस्वादन कराना चाहता है। वह अपने प्रयास में कहाँ तक सफल होता है :—

"अवकाश भला है किसको, सुनने की करुण कथाएँ,
वेसुध जो अपने सुख से, जिनकी हैं सुप्त व्यथाएँ।"

यद्यपि कवि का कथन है कि उसकी करुण कहानी कोई नहीं सुनता, पर वह अपनी करुण रागिनी छेड़ कर मन की सुप्त कथाएँ जागृत करने में सफल हुआ है।

यद्यपि कवि के भाव करुणा के सागर में ही लहरें ले रहे हैं फिर भी हम देखते हैं कि वह दुख सुख का समन्वय कर देना चाहता है। उसको दुःख सुख दोनों इसी प्रकार प्यारे थे जैसे मालती कुञ्ज को चन्द्रिका और अँधेरा। वह लिखता हैः—

"लिपटे सोते थे मन में, सुख दुख दोनों ही ऐसे,
चन्द्रिका अंधेरी मिलती, मालती कुंज में जैसे।
मानव जीवन वेदी पर परिणय है विरह मिलन का।
दुख सुख दोनों जायेंगे है खेल आँख मन का।"

नायक के अपने प्रियतम का चित्र खींचने में यदि नख सिख वर्णन का आभास कहें तो कदाचित् अयुक्ति न होगी। उस चित्र में हम आँखों के मनोहर कज्जल, भौं की कुटिलता, दाँतों की पंक्तियां, वाहु-लता आदि कई अंगो का वर्णन पाते हैं। यथा :–

'है किस अनङ्ग के धनु की, यह शिथिलशिञ्जनी दुहरी
अलवेली वाहु-लता या, तन-छवि सर की है लहरी।"
"विद्रुम-सीपी सम्पुट में, मोती के दाने कैसे'
है हंस न शुक यह, फिर क्यों, चुगने की मुद्रा ऐसे।"

इस कथा सूत्र अथवा भाव सूत्र के साथ साथ इस काव्य में आँसू भी अपनी करुण कहानी कहता हुआ प्रतीत होता है। आँसू कहता हैः—

"मेरे क्रन्दन में बजती, क्या वीणा जो सुनते हो।
धागों से इन आँसू के, निज करुणा-पट बुनते हो।"

यह तो हुआ काव्य का भाव पक्ष अब कला पक्ष की ओर ध्यान देने पर हम देखती हैं कि प्रसाद जी इस छोटे से काव्य में भी उसका पूर्ण निर्वाह कर सके हैं।

अलंकार गौण रहते हुए भी बड़ी उत्तमता के साथ सम्मुख आते हैं। एक उत्प्रेक्षा है—

उच्छ्वास और आँसू में विश्राम थका सोता है।
रोई आंखों में निद्रा, बन कर सपना होता है।

कवि कल्पना करता है मानों उच्छ्वास और आँसुओं में ही विश्राम का निवास है।

पदों में एक विशेष संगीत ध्वनि है जो पाठक को अपनी ओर विशेषतया खींचती है। संस्कृत मयी तथा सौष्ठवपूर्ण है। सरसता और भाव प्रवाह ने तो उसको अनुपम बना दिया है। ऐसी करुण रागिनी को ऐसी चमत्कार पूर्ण भाषा में व्यक्त करना कवि के कौशल का द्योतक है।

सारांश में यही कहना पड़ता है कि 'आँसू' प्रसाद, जी की करुण रस प्रधान भावपूर्ण, तथा सरस, एक अति उत्तम कृति है। इससे जिस भाव की छाप पाठक के हृदय पर शेष रह जाती है वह उसे यदि भावुक है तो और भी अधिक भावुक बना देने तथा रसास्वादन कराने को यथेष्ट है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की पुस्तकों
तथा
'सम्मेलन पत्रिका'
का प्रचार करना प्रत्येक हिन्दी प्रेमी का
कर्त्तव्य है।

कला की निष्पत्ति और टाल्सटाय

[लेखक—साहित्यरत्न श्री बिसाहूलाल सराफ बी० ए० एल० एल० बी०]

विशेषज्ञता की प्राप्ति अमित उपासना का वरदान है। भावी विशेषज्ञ प्रारम्भ ही से उपासक होता है। मनोवृत्ति के अनुकूल अभीष्ट विषय का अनुसंधान उसकी उपासना का प्रारम्भिक स्वरूप है। विषय प्राप्ति के पश्चात् उसके अध्ययन-सम्बन्धी उपादानों का संग्रह उपासना की दूसरी अवस्था का कार्य है। वास्तविक उपासना का प्रारम्भ तीसरी अवस्था से होता है। कालान्तर में सफलता और ध्येय की प्राप्ति का समय आता है। प्रत्येक परिस्थिति का सफल निर्वाह करने वाला साधक समाज के लिये कल्याणकारी संदेश देकर अमर विभूति बन जाता है।

टाल्सटाय की विशेषज्ञता उनकी अप्रतिम उपासना की सिद्धि थी। वे सिद्ध-काम उपासक थे। अपने वैभव पूर्ण जीवन काल में टाल्सटाय ने अनेक विषयों का अध्ययन किया। कहने की आवश्यकता नहीं कि उनकी साधना अध्ययन तक ही सीमित नहीं रही। जिस उपासना का श्री गणेश अध्ययन से हुआ उसकी निष्पत्ति तद्विषयक विवेचना में हुई। अन्यान्य विषयों की तरह टाल्सटाय का ध्यान कला की ओर आकर्षित हुआ। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रस्तुत विषय उनकी प्रवृत्ति के अनुकूल सिद्ध हुआ। अतएव उन्होंने कला-विषयक विशेषज्ञता की प्राप्ति भी जीवन का लक्ष्य बना लिया। पन्द्रह वर्ष पर्यन्त सतताभ्यास, मनन एवं चिन्तन के पश्चात् वे अभीष्ट की विवेचना की ओर अग्रसर हुए।

उनके अनुसार कला का जन्म अनुभूति और चिन्तन से होता है। कलाकार अवसर विशेष पर अमुक विषय का अनुभव करता है। अनुभव की भिन्न भिन्न परिस्थिति में उसका कलाकार से तादात्म्य स्थापित होता है। अनुभूति की तीव्रतर अवस्थामें अभीष्ट विषयसे पूर्ण-रूपेण साक्षात्कार होता है। उस पर चिन्तन करने पर कलाकार की तद्विषयक धारणा निश्चित हो जाती है। मनुष्यमात्र में विद्यमान रहनेवाली आत्माभिव्यंजन की प्रवृत्ति उसे अपनी धारणा व्यक्त करने के लिये प्रेरित करती है। फलतः कला की अभिव्यक्ति होती है। वह अपनी पूर्णता की अन्तिम कक्ष पर उस समय पदार्पण करती है जब कि उसमें दूसरों के साथ तादात्म्य स्थापित करने की शक्ति आ जाती है।

कला के वस्तु-विवेचन के सम्बन्ध में विभिन्न सिद्धान्त प्रचलित हैं। प्रवृत्त्यात्मक सिद्धान्त के पोषकों का कथन है कि कला की आत्मा विषय की महानता है। जिस कला का सम्बन्ध महान् से महान् विषय से होगा वह कला की उच्चात्युच्च श्रेणी को गौरवान्वित कर सकेगी। विषय की उच्चता और उसकी परिष्कारिता ही कला का मूल्य निर्धारित करती हैं। सौन्दर्य-सिद्धान्त के उपासक कला के सौन्दर्य-पक्ष पर विशेष ज़ोर देते हैं। उनकी शुभ सम्मति में कला में विषय की महानता हो या न हो किन्तु अनुरंजनकारी उपादानों का विद्यमान रहना अत्यन्तावश्यक है। उसकी रूपरेखा का स्वरूप बांछनीय होना चाहिये, ताकि लोग उसकी ओर आकर्षित हो सकें। यथार्थवादियों के दृष्टिकोण में कला को सत्य और वास्तविकता का चित्रण होना चाहिये।

यदि वास्तविक दृष्टि से विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि उक्त तीनों सिद्धान्त कला की एकांगी विवेचना तक ही पहुँच पाते हैं। उसमें विषय की उच्चता, यथार्थता और सौंदर्य तीनों का समावेश होना आवश्यक है। विषय की महत्ता से अर्थ उसकी तादात्म्य स्थापित करनेवाली शक्ति से है। जिस कला में शीघ्रातिशीघ्र विषय को साक्षात्कार कराने की क्षमता होगी वह उतने ही अधिक व्यक्तियों पर जादू का सा असर डाल सकेगी। हृदय पटल पर उसकी गहरी छाया पड़ना भी अवश्यम्भावी है। अनन्तकाल तक उसके स्मृति मानसिक तृप्ति के कारण होने में सन्देह का स्थान नहीं है। यह बात भी विचारणीय है कि अमुक व्यक्ति विषय विशेष के साथ उस समय तक एकता का अनुभव नहीं कर सकता जब तक कि उसमें यथार्थता की मात्रा विद्यमान न हो। तथ्यहीन वस्तु हृदयंगम नहीं हो पाती। यदि किसी प्रकार उसका हृदय पर असर भी पड़े तो वह स्थायी नहीं हो सकता। सौंदर्य के विषय में इतना कहना पर्याप्त है कि जो सत्य है उसे सुंदर होना चाहिये। अतएव यह निर्विवाद सिद्ध है कि विषय की महानता, यथार्थता और सौंदर्य तीनों का समावेश कला में होना वांछनीय है।

पाश्चात्य देशों में माना जाता है कि "कला कला के लिये" है। इससे ध्वनि निकलती है कि कला उद्देश्य हीन है। भारतीय दृष्टि कोण इससे बिलकुल भिन्न है। यहां तो "कला जीवन के लिये" वाला सिद्धान्त मान्य है। उक्त दोनों सिद्धान्तों का यहाँ पर तथ्यातथ्य निरूपण करना विषयान्तर होगा। हां, इतना निर्देश करना आवश्यक है कि कला का अन्तिम लक्ष्य तो कुछ न कुछ होता ही है। आखिर कलाकार कला की

अभिव्यक्ति दूसरे व्यक्तियों के लिये करता है। कम से कम उसकी धारणा होती है कि उसकी अभिव्यक्ति से लोगों का कुछ न कुछ कल्याण हो। अल्प समय के लिये यदि यह भी मान लिया जाय कि कलाकार के अतिरिक्त दूसरे लोग उससे किसी भी स्वरूप में अल्पात्यल्प लाभ उठावें तो कला की सार्थकता स्वयं सिद्ध हो जाती है। यदि कल्पना की जाय कि कलाकार आत्म-तुष्टि के लिये उसकी अभिव्यक्ति करता है तो भी स्पष्ट है कि कला अपने जनक की तुष्टि का कारण हो सकती है। ऐसी अवस्था में उसे दूसरों की आत्म-तृप्ति करने में समर्थ होना चाहिये। ऐसी सम्भावना के अभाव में कला का अस्तित्व नहीं माना जा सकता। कारण स्पष्ट है। महात्मा टाल्सटाय के अनुसार यदि पाठक लेखक के हृदय की स्थिति से प्रभावित होता है और भावनाओं तथा उनके सम्बन्ध को समझता है, तो इस प्रकार जिस परिणाम की सिद्धि होती है वही कला है।

कतिपय विद्वानों की धारणा है कि पाश्चात्य मतानुसार कलाकार एक विशेष व्यक्ति है। उसकी कला को हृदयंगम करना सर्वसाधारण का कार्य नहीं है। लब्धप्रतिष्ठ सज्जन ही उसका मूल्य समझ सकते हैं। रूसी महात्मा का इस विषय में मतभेद है। उन्हें यह स्वीकार नहीं कि कला का अनुभव सर्वसाधारण के पहुँच की बात नहीं है। जिस प्रकार उनकी धारणा है कि साधारण से साधारण विषय में कला की अभिव्यक्ति हो सकती है। उसी प्रकार वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि कला का अनुभव प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। एलमर माड लिखते हैं—यही कारण है कि एक किसान एक बचा और यहां तक कि जंगली मनुष्य भी कला के प्रभाव से प्रभावित हो सकता है। किन्तु अयथार्थवादी एक विद्वान मनुष्य भी उसके प्रभाव से विल्कुल वंचित रह सकता है।

कला नर-सृष्टि की महान रचना है। उससे जाति, समाज और देश का कल्याण हो सकता है। उससे व्यक्तिगत जीवन का मंगल हो सकता है। उससे आनंद की सृष्टि हो सकती है तथा कलाकार उसकी सहायता से सेवा का महान से महान आदर्श प्रस्तुत कर सकता है। उसकी अन्तिम निष्पत्ति विश्व के कल्याण के लिये होती है। कल्याण का मूल विश्व-बन्धुत्व का भाव है। उसकी उत्पत्ति देश, समाज व जाति के मानसिक एकीकरण से हो सकती है। एकीकरण की भावना कला की सहायता से स्थापित हो सकती है। उसमें विभिन्न मतावलम्बियों, एक दूसरे के विपक्षियों, परस्पर उदासीन रहने वालों तथा कट्टर से कट्टर शत्रुओं के हृदय प्रेम-पाश एवं ऐक्य-सूत्र से संगठित कर देने की संजीवनी शक्ति है।

क्या कबीर रामानन्द के ही शिष्य थे ?

[लेखक—श्री परमानन्द शर्मा, 'साहित्य रत्न']

भारतीय संस्कृति में सत् और चित् का ही अत्यधिक महत्व है। वाह्य पर ध्यान न देकर, तथ्य पर ही अधिक ध्यान दिया गया है। आधुनिक काल में ऐतिहासिक दृष्टिकोण पर अधिक दृष्टि रक्खी जाती है और वह और भी अधिक आर्थिक व्याख्या में बदल रहा है। सूक्ष्म दृष्टि से विवेचना की जाय, तो ज्ञात होगा कि इन परिवर्तनों में जीवन ग्रहण की ही चेष्टा अधिक है। आज कल परिवर्त्तन के मूल में जीवन-रक्षा का दृष्टि कोण मैटिरियल-प्रधान है; पूर्वकाल में आध्यात्म-प्रधान था। अपने अपने समय और परिस्थिति के अनुसार सबकी उपयोगिता होती है। क्योंकि; जीवन-रक्षा तथा जीवन-विकास को कोई नहीं छोड़ सकता।

प्राचीन साहित्य की व्याख्या अथवा-अन्वेषण करते समय, काल तथा परिस्थिति का अवश्य ध्यान रक्खा जाना चाहिए। सन्त साहित्य में वाह्य-जगत से जीवन का जहाँ तक संबंध है, कम ध्यान दिया गया है अर्थात् उसमें भौतिक जगत की नश्वरता के पार, जीवन को असीमता की ओर ले जाने की सतत चेष्टा है। कबीर इसी असीम-अनन्त जीवन के उपासक या साधक थे।

कबीर की देन भारतीय संस्कृति के अनुकूल है। जो लोग उसकी खण्डनात्मक वृत्ति से व्याकुल होते हैं, उनसे मेरा एक निवेदन है। कबीर के भीतर प्रवेश करने पर यह साफ़ मालूम हो जाता है कि उसने कोई नई वस्तु नहीं कही। हमारे दार्शनिक ग्रन्थों में जो वर्ण्य विषय है, उसको ही कबीर ने भी गाया है। खण्डन का ढङ्ग अवश्य कुछ अपना है। मनोयोगपूर्वक कबीर को पढ़ने पर, प्रकट हो जाता है, कि अद्वैतवाद में ब्रह्म के अतिरिक्त सब मिथ्या है, अथच सब का खण्डन हो जाता है। कबीर ने स्पष्ट इसी को कहा है। कबीर का ध्येय है, कुछ भी करो, उसमें उलझो मत; सीधे अनन्त तक पहुँचो। कबीर के लिये वही सत्य है।

सगुण की सेवा करो, निर्गुण का करु ज्ञान।
निर्गुण सगुण के परे, तहैं हमारा ध्यान॥

कबीर के इस कथन का तात्पर्य यह है कि संसार में सगुणोपासना करो; परन्तु उसमें भीतर से निर्गुण का ज्ञान प्राप्त करो। जहाँ ज्ञान की भी सीमा समाप्त हो जाती है, वहाँ पर परमात्मा की उपलब्धि होती है। कबीर कहते हैं, ध्यान को वहाँ तक बढ़ाओ। भारतीय संस्कृति के विरुद्ध कहीं कबीर नहीं जाते। "साईं के सब जीव हैं, कीरी कुञ्जर दोय।"

जहाँ कबीर ने खण्डन किया है; वहाँ अद्वैतवाद की चरम सीमा है। अद्वैतवाद से सम्बन्ध रखने वाले जितने दार्शनिक ग्रन्थ हैं; सबने एक ब्रह्म को छोड़, सबको मिथ्या बतलाया है, ब्रह्म के अतिरिक्त किसी वस्तु की स्थिति ही नहीं मानी गई है। योगवासिष्ठ भारतीय दर्शन का एक प्रतिष्ठित ग्रन्थ है। वशिष्ठ जी ने रामचन्द्र को समझाया है कि

पाताले भूतले स्वर्गे तृणे प्राण्यम्बरेऽपिच।
दृश्यते तत्परं ब्रह्म चिद्रूपं नान्यदस्ति हि॥

अर्थात् "पाताल में, पृथ्वी पर, स्वर्ग में, प्राणियों में और आकाश में जो कुछ भी दिखाई पड़ता है, वह सब चित-रूप परम ब्रह्म ही है; अन्य कुछ भी नहीं है।" और देखिये:—

"मायेयं स्वप्नवद् भ्रान्तिर्मिथ्या रचित चन्द्रिका।
मनोराज्य मिवा लोल सलिलावर्त्त सुन्दरी॥"

"यह सृष्टि माया है, स्वप्न के समान भ्रम है, मिथ्या रचे हुए चक्र के समान है। मनोराज्य (कल्पना) के समान चञ्चल है, जल के भंवर के समान सुन्दर दिखाई पड़ने वाली है। फिर गौर कीजिये:—

"अलीकमिद मुत्पन्नमलीकं च विवर्धते।
अलीकमेव स्वदते, तथालीक विलीयते॥"

अर्थात् "जगत की उत्पत्ति झूठी है, जगत की वृद्धि झूठी है; जगत का स्वाद झूठा है, जगत का लय होना भी झूठा है।"

अद्वैत वेदान्त का सर्व विदित सिद्धान्त है,—"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या।" इससे अधिक कबीर ने कहा है क्या? इन्हीं सिद्धान्तों को दुहराया है। सिर्फ उनके कहने का ढंग नया है और कोई नवीन बात नहीं।

एक बात यहाँ विशेष रूप से विवेचनीय है। आजकल हिन्दी के कुछ साहित्यकारों को शङ्का हो रही है कि कबीर स्वामी रामानन्द के शिष्य थे। यदि वह स्वामी रामानन्द के शिष्य थे तो उन्होंने उनके सिद्धान्त के विरुद्ध आचरण क्यों किया? उनकी निगाह में तो गुरु का पद गोविन्द से भी बढ़

कर है। गत माघ फाल्गुन १९९६ वि० की सम्मेलन पत्रिका में एक लेख—“हम कैसे मानलें, कि कबीर रामानन्द के शिष्य थे ?” शीर्षक छपा है। लेखक महोदय को एतराज है, ‘‘हम कैसे मानलें, कि रामानन्द के मत का जोरदार खण्डन करने वाले कबीर ने ‘पंडितवाद वदन्ते झूठा, कहते समय रामानन्द को अपने लक्ष्य में नहीं रक्खा होगा ? हम कैसे मानलें, कि कबीर में रामानन्द के प्रति, रामानन्द के सिद्धान्तों के प्रति इतनी स्पष्ट भर्त्सना होते हुए भी उन्होंने रामानन्द के लिये अपने हृदय में गुरु भावना की एक क्षीण रेखा को भी उदय होने दिया होगा ?’

इस सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि गुरु शिष्य का सम्बन्ध जितना हल्का मान लिया गया है उतना भारतीय सिद्धान्त के अनुसार नहीं होता। भारतीय दृष्टि कोण यह है कि गुरु शिष्य का सम्बन्ध ज्ञानजन्य होता है। ज्ञान की उसी ऊँची भूमि पर, वह उसे गोविन्द से भी महान (केवल भावना द्वारा) मान कर चलता है। जब ज्ञान के परे पहुँचता है—जहाँ परमात्मा में तत्त्वों की चरम परिणति है—वहाँ गुरु की भी भावना मिट जाती है। एकमेक हो जाता है। यहाँ के सच्चे ज्ञानी गुरु सगुण या निर्गुण उपासना के केवल बीज बोते हैं। अपने सिद्धान्त प्रचार के लिये भेंड़ नहीं इकट्ठा करते। जो इकट्ठा करते फिरते हैं, उन्हीं के लिये है, “पण्डित वाद बदन्ते झूठा।” यहां जितने आचार्य हुए हैं; सब ऐसे ही ज्ञानी गुरु थे, रामानन्द भी। यहाँ सगुणोपासना भी, ऐसे ही ज्ञान की ऊँची भूमि पर स्थित है।

हम कुछ उदाहरणों द्वारा भी इस बात की पुष्टि करते हैं। दक्षिणेश्वर कलकत्ता (कलकत्ता) के परमहंसदेव रामकृष्ण को आज कौन नहीं जानता ? वे शाक्त मत के सगुणोपासक भक्त महात्मा थे। उन्हीं के शिष्य विवेकानन्द (पूर्वनाम नरेन्द्र) को आज सारा विश्व जानता है परमहंसदेव काली की मूर्ति के उपासक एक पहुँचे हुए महात्मा थे। वे अन्त तक काली की उपासना करते रहे। उन्हीं के शिष्य थे, विवेकानन्द जी। उन्होंने अपने एक सगुणोपासक गुरु से शिष्यत्व ग्रहण किया; लेकिन कभी न तो मूर्तिपूजा की न सगुणोपासना। वे भक्त थे। अपने व्याख्यानों में उन्होंने विशुद्ध अद्वैतवाद का प्रचार किया है। यहाँ तक कि प्रत्येक भारतीय के लिये, वे कहा करते थे,—अपने को आर्य, हिन्दू, भारतीय या हिन्दुस्तानी कहने के बजाय सब लोग “वेदान्ती” कहा करें

लेकिन अपने गुरुदेव के प्रति कबीर की तरह उनकी भी श्रद्धा-भक्ति थी। उनकी एक पुस्तक है "मदीयाचार्य"। उसे पढ़ने पर पता चलता है कि उनकी गुरु के प्रति कितनी महान भावना थी ? ये सिद्धान्त के बाहरी अन्तर कभी गुरु शिष्य में अन्तर नहीं उपस्थित कर सकते।

स्वामी रामतीर्थ के पत्रों का जो संकलन, उनकी ग्रन्थावली में किया गया है; उससे पता चलता है, स्वामी रामतीर्थ के गुरु भी बड़े संकीर्ण हृदय के थे। अपने पत्रों में जो जो बातें स्वामी जी को उन्होंने लिखी हैं, उससे कोई भी संसारी पुरुष विचलित हो सकता था; लेकिन रामतीर्थ की भावना गुरु के प्रति वैसी ही महान और उदार रही। ऐसे कितने ही उदाहरण दिये जा सकते हैं। दत्तात्रेय जैसे महर्षि ने २४ गुरुओं को माना। वे गुरु कौन थे ? क्या उन्होंने गुरुओं के सिद्धान्त की डफली बजाई ? नहीं; केवल भावना ही प्रत्यक्ष बात है। दत्तात्रेय के गुरुओं ने भी चेताया ही था, कि आलस्य छोड़ो, परमात्मातत्त्व का चिन्तन करो। यह दत्तात्रेय की भावना ही थी। इसलिये कैसे मान लिया जाय कि "रामानन्द चेताये" कबीर कथन नहीं है। इसलिये यह भी नहीं माना जा सकता कि कबीर रामानन्द के शिष्य नहीं थे। इस प्रबन्ध में कोई खोजपूर्ण तर्क उपस्थित किया जाय तो इस संबन्ध में निर्णय हो सकता है। जब तक कोई जबर्दस्त दलील सामने नहीं आती; तब तक कबीर थे, रामानन्द के ही शिष्य थे, इसे कौन इनकार करेगा ?

हिन्दी के मुसलमान कवि और उनकी विशेषता

[लेखक—श्री दिनेशनरायण उपाध्याय "प्रेमनिधि"]

हिन्दी के मुसलमान सहयोगियों का इतिहास, एक विचारणीय विषय है। भाषा का सम्पर्क उतना ही प्रभावशाली है जितना कि जाति का, और यदि यह कहा जाय कि इन दोनों का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है तो कोई अत्युक्ति न होगी। इसी विचार से ही मैंने यहाँ पर हिन्दी साहित्य के उन महान कवियों के ऊपर एक आलोचनात्मक प्रकाश डालने का विचार किया है जिन्हें मुसलमान कहा जाता है। मेरे इस लेख में इस विषय पर अधिक विचार किया जायगा कि हमारे साहित्य के इन कवियों का हमारे साहित्य पर क्या प्रभाव पड़ा तथा उनका हमारे साहित्य में क्या स्थान बना है।

हिन्दी का विकास अपभ्रंश के समय से मानना पड़ता है, यह समय विक्रम की दसवीं सदी के अन्तिम चरण में माना गया है, सम्वत् ९९० में देवसेन नामक एक जैन ग्रन्थकार हुए थे और उनकी भाषा जो उनके श्रावकाचार नामक ग्रन्थ में है उससे यह ज्ञात होता है कि वह भाषा अपभ्रंश का अधिक प्रचलित रूप लिये हुए है। पर इस परम्परा से हमारा सम्बन्ध दिन प्रतिदिन प्रगाढ़ होता गया। इसी के समय से हमें हिन्दी कविता में मुसलमानों का सहयोग भी मिलने लगा और अमीर खुसरो ने सर्व प्रथम हिन्दी में कविता करना प्रारम्भ की। खुसरो ने हिन्दी में बहुत से छन्द, पहेलियाँ मुकरियाँ लिखी हैं। जिनका प्रचार इस समय भी पूर्ण रूप से है। उसी समय से हिन्दी फारसी का मेल प्रारम्भ हुआ और यहीं से खड़ी बोली का जन्म भी हुआ। खुसरो की भाषा में हमें फारसी शब्दों का आधिक्य पूर्ण रूप से दिखाई पड़ने लगा पर यह परम्परा खुसरो ही तक थी. आगे चलकर हमें यह प्रणाली नहीं मिलती है क्योंकि जायसी आदि कवियों ने अवधी आदि भाषाओं का प्रयोग किया। खुसरो ने भी अपनी मुकरियों में कुछ खड़ी बोली मिश्रित रखी है और कुछ व्रजभाषा मिश्रित। फारसी मिश्रित इनकी एक कविता यह है।

ख़ालिक वारी सिरजन हार, वाहिद एक विदा करतार।
रसूल पैगम्बर जानि वसीठ, यार दोस्त बोलै जो ईठ॥

और

आदि कटे से सब को पालै, मध्य कटे से सबको घालै।
अंत कटे से सब को मीठा, सो खुसरो मैं आँखन दीठा।

अमीर खुसरो के समय के उपरान्त हमें हिन्दी भाषा में सूफी कवियों की बाढ़ दिखाई पड़ने लगी। उस समय हमें हिन्दी के जीवन में उस परम्परा का स्वर्ण प्रभात हुआ जिससे हिन्दी साहित्य में कई श्रोत बहे और सबों ने अपना निकास स्थान वहीं से पाया। वे सूफी निगुर्ण उपासक थे और प्रेमगाथाओं द्वारा प्रेम तत्व का वर्णन किया है। इनका प्रेमी अलौकिक ईश्वर है और उनकी आत्मा उस अपने परम प्रिय के खोज में विलखती विरहिणी है। इस समय हमें जिस प्रकार प्रबन्ध काव्यों की सृष्टि हुई उसी प्रकार दोहा चौपाई आदि छंदों का प्रयोग भी मिला जिससे हिन्दी के महा कवि तुलसी ने भी ग्रहण किया।

अस्तु हमें सम्वत् १५५० में हिन्दी में एक दूसरे मुसलमान कवि मिले जिनका नाम था कुतवन––ये चिश्ती वंश के शेख बुरहान के शिष्य थे, और शेरशाह के पिता हुसैनशाह के आश्रित थे। आपने मृगावती नामक कहानी चौपाई दोहा में लिखा है जो सम्वत् १५५८ में लिखी गई है और जिसमें सूफियों के प्रेम-तत्व पर आभास डाला गया है।

आपके बाद हिन्दी के एक महारत्न की गणना करनी है और वे हैं मलिक मोहम्मद जायसी जो सेरशाह के समय के कवि थे और जिनका सम्वत् १५९७ था। हिन्दी के आपही सर्व प्रथम ऐसे कवि हैं जिन्होंने हमारे इतिहास में प्राचीन प्रणाली, प्रथा और विचारधारा के समन्वय से सर्व प्रथम एक महा काव्य लिखा जो भारतीयता के साथ साथ शास्त्रीय भी है। इस कवि ने हमें हमारी प्राचीन विचारधाराओं, हमारी प्राचीन संस्कृति के साथ अपने धर्म का जो समन्वयमय दृष्य रखा है वह फिर किसी भी मुसलमान कवि द्वारा नहीं हुआ, अस्तु हम आपको हिन्दी के उन महान कवियों के साथ रख सकते हैं जिनके साहित्य पर हिन्दी को गर्व है। जैसे तुलसी।

मलिक मोहम्मद जायसी ने सम्वत् १५९७ के लगभग पद्मावत की रचना की। आपने अपने पद्मावत के अतिरिक्त भी दो ग्रन्थ लिखे जिनके नाम हैं अखरावट और आखीरी कलाम। अखरावट में जीव, सृष्टि, ईश्वर प्रेम आदि की कवितायें हैं। पर जायसी का महान काव्य तो पद्मावत है। इसके अन्तर्गत कवि ने अपने हृदय की पीर का वर्णन किया है, चाहे आप उसे लोक पक्ष

का समझिए चाहे आध्यात्म पक्ष का। उसमें गूढ़ता, गंभीरता, सरसता, विलक्षणता कूट कूट कर भरी है। ये मुसलमान होकर हिन्दू जीवन से कितने मिले थे? हिन्दू जीवन की दशाओं का वर्णन जिस रूप में इस मुसलमान कवि ने किया वैसा किसी हिन्दू द्वारा होना कठिन साध्य है। कबीर ने केवल प्रतीत होती हुई परोक्ष सत्ता की एकता का आभास दिया है, प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता बनी थी, यह जायसी द्वारा पूरी हुई। इस कहानी में इतिहास के साथ कल्पना का जो जोग है, वह परम मनोहारी और विचारणीय है। इस कहानी का पूर्वार्ध तो कल्पित है और उत्तराद्ध ऐतिहासिक है।

प्रेम के उत्पन्न होने की चार प्रथायें पाई जाती हैं।

(१) विवाह से प्रारम्भ होने वाला।

(२) परस्पर मिलन के कारण विवाह होने पर प्रेम।

(३) कथा सुनकर अनुरागित होना जैसे उषा और अनिरुद्ध का उदाहरण है।

(४) रंग महल के भीतर ही उत्पन्न प्रेम।

इसमें से जायसी ने परस्पर मिलन का ही सहारा लिया है।

प्रेम के संयोग और वियोग दोनों पक्षों का जायसी ने पूर्ण निर्वाह किया है। यदि एक ओर जायसी ने विरह वर्णन का अद्वितीय वर्णन किया है तो दूसरी ओर संयोग का भी--वियोगिनी नागमती कितने मार्मिक शब्दों में कह रही है!

"लागेऊं जरै जरै जेस भारु फिर फिर भूजेसि तजि उन वारू"

आगे फिर विरह में पागल नागमती रोती है!—

"कुहुंकि कुंहुकि जस कोइल रोई, रक्त आंसु धुधुची वन बोई।

इस विरह वर्णन में जायसी ने स्वाभाविकता का ही आधार ग्रहण किया है। उसने अपने नागमती को एक प्रिय विहीन साधारण स्त्री के रूप में देखा है। उसकी नागमती रानी नहीं है। अतएव उसे वर्ष में उन सारे व्यवधानों की आवश्यकता है जिसको यदि उसका पति होता तो करता जैसे मकान का छप्पर छाना। क्योंकि नागमती कहती है।

"पुष्प नखत गिर ऊपर आवा, है बिनुनाह मंदिर को छावा"

इसके ठीक विपरीत सब में पद्मावती ने संभोग शृङ्गार का आनन्द प्राप्त किया। क्योंकि नागमती को छोड़कर रतनसिंह पद्मावती के प्रेम में

फँस गया था इस प्रकार से हम यह देखते हैं कि जायसी ने वियोग में वास्तविकता का वर्णन तो किया ही है पर संयोग में उससे भी अधिक पटुता दिखलाई है उदाहरणार्थ—

“रंगराती पीतम संग जागी, गरजे घन चौकि गर लागी”

इस प्रेकार प्रेम मय आख्यान को कवि ने वह सुन्दर आध्यात्मिक रूप प्रदान किया है कि सराहनीय है। संसार में लिप्त व्यक्ति के प्रति यह पंक्ति कितनी प्रभाव शाली है :—

“तबहु न जागा गा तू सोई, जोग भेट न सोये होई”

इस प्रकार इस महान कवि के उपरान्त हम उन मुसलमान कवियों के ऊपर विचार करेंगे जिनके द्वारा हिन्दी को उनका सहयोग प्राप्त हुआ।

अब हमें यह ज्ञात हो गया कि हिन्दी से मुसलमानों का स्नेह दिन प्रति दिन प्रगाढ़ता पकड़ता गया और सं० १६०० में हिन्दोस्तान के बादशाह अकबर ने भी शुद्ध ब्रज भाषा द्वारा हिन्दी कविता में अपना हाथ बटाया। अकबर सम्राट के काव्य फुटकर रूप में ही मिलते हैं और कहीं इनका संग्रह नहीं मिलता है। अपने प्रिय मित्र वीरबल के मृत्यु के ऊपर अकबर का यह दोहा प्रत्येक हिन्दी ज्ञाता का पूर्ण रुपेण प्रिय है —

दीन जान सब दीन, एक दुरायो दुसह दुख।
सो अब हमको दीन, कछु नहिं राख्यो वीरवर।

या

साहि अकव्वर वाल की बाँह, अचिन्ति गही चलि भीतर भौने।
सुन्दरि द्वारहि दीठि लगाय कै, भागिवै को भ्रम पावत गौने।
चौकति सी चहुँ ओर बिलोकति, सेक संकोच रही मुख मौने।
यौ छवि नैन छबीली के छाजत, मानौ बिछोह परे मृग छौने॥

अकबर के ही समकालीन अबदुल रहीम ख़ानखाना का कविता काल भी ठीक इसी समय है, आपका जन्म सं० १६१० में हुआ था। इनका हृदय इतना महान था कि कितने ही बार इन्होंने अपने मित्रों के संदेश देने पर द्रव्य से याचकों की सहायता की। एक बार जब इनके पास कुछ भी नहीं रहा और याचक को कुछ नहीं दे सके। तब यह दोहा लिखा—

तवहीं लौं जीवो भलो दैवो होय न धीम।
जग में रहिबो कुँचित गति उचित न होय रहीम॥

तुलसीदास जी ने एक बार एक ब्राह्मण को कन्या विवाह के हेतु धन याचनार्थ उनके पास यह पंक्ति लिख कर भेजी। चट उसी समय उन्होंने उसे रुपया दिया और दोहे का दूसरा चरण लिखकर भेज दिया।

तुलसीदास ने लिखा था—

सुरतिय, नर तिय, नाग तिय, यह चाहत सुत होय।

रहीम ने लिखा—

गोद लिये हुलसी फिरै, तुलसी सो सुत होय।

इस प्रकार से हमें रहीम में जीवन की अनुभूतियों के सच्चे चित्र मिलते हैं। आपके दोहे, वृन्द, गिरधर के ही समकक्ष हैं। पर ये उन सब से कहीं अच्छे हैं। उनकी मार्मिकता, उनकी व्यंजना, उनकी विचारधारा सब उनकी ही थी, और प्रसाद गुण के ही कारण वे इतने लोक प्रिय हुए। भाषा पर इनका तुलसी ही सा अधिकार था। उन्होंने ब्रज भाषा, अवधी—(पश्चिमी और पूर्वी) दोनो में ही लिखा है। आपके ग्रंथ हैं:— रहीम सतसई, बरवै नायिका भेद, शृङ्गार सोरठा, रासपंचाध्यायी तथा रहीम रत्नावली नामक मायाशंकरजी का संग्रह।

इन्होंने भाषा को जितना सुन्दर रूप दिया है, वह परम विचारणीय है। तुलसी के बाद भाषा लिखने में आपका ही भक्तिकाल में स्थान आता है।

शेख अबुल फजल के भाई शेख कादिर बक्स स० १६३५ में हरदोई में उत्पन्न हुए, ये सैयद इब्राहीम के शिष्य थे परन्तु आपने सामयिक परिस्थितियों का परम सुन्दर चित्र खींचा है। आप का यह कवित्त परम प्रसिद्ध है।

गुन को न पूछै कोऊ औगुन को बात पूछै, कहा भई दई कलयुग यों खरानो है
पोथी औ पुरान ज्ञान ठट्ठन में डारि देत चुगल चवाइन को मान ठहरानो है।
कादिर कहत याते कछू कहिबो की नाई, जगत की रीति देखि चुप मन मानो है।
खोलि देखौ हियो सब भांतिन सो भांति भांति गुन न हेरानो गुन गाहक हेरानो है।

उनके बाद हिन्दी के परम उत्कृष्ट कवि रसखान का समय आता है। दोसौबावन वैष्णवों की वार्ता में इन्हें दिल्ली का एक पठान बतलाया है।

इनकी कथायें, इनकी कविताएँ परम प्रसिद्ध और लोक विदित हैं। इससे "मानुष हौं तो वही रस खानि', समझ कर उन कवियों की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक समझता हूँ जिन्हें इतिहासकार भी भूल बैठते हैं।

स० १६४३ में सैयद मुबारक अली बिलग्रामी का जन्म हुआ। आप अरबी, फ़ारसी और संस्कृत के बड़े अच्छे विद्वान थे। आप के बारे में ज्ञात होता है कि आपने १० अंगों पर सौ सौ दोहे बनाये जिनमें अलक-शतक और तिलशतक प्रकाशित हो चुके हैं।

अलक मुबारक तिय वदन लटकि परीयों साफ।
खुस नवीस मुनसी मदन लिख्यो कांच पर काफ।१
सब जंग पेरत तिलन को थक्यो चित्त यह हेरि
तुव कपोल को एक तिल सब जग डार्‍यो पेरि ।२

इसके बाद अकबर बादशाह के पुत्र शाह दानियाल भी एक हिंदी के कवि हुए हैं, और आपका कविता काल स० १६६० के आस पास समझना चाहिए। पर आप साधारण ही कवि थे।

१६७७ में हमें जायसी के समान एक विशेष प्रतिभा का दर्शन हुआ पर खेद यह है कि शेख हसन के पुत्र उसमान ने अपने चित्रावली नामक प्रबन्ध काव्य में जायसी की जो परम्परागत शैली ग्रहण की उसका इतना आदर न हुआ जितना पद्मावत काव्य का। पर ग्रन्थ अवलोकनीय है। उदाहरणार्थः—

"आदि बखानौ सोइ चितेरा, यह जग चित्र किन्ह जहि केरा।
कीन्हेस चित्र पुरुष अरु नारी, को जल पर अस सकइ संवारी।"

इसी परम्परा के जमाल और वारक दो कवियों का उल्लेख और मिलता है पर इनका कोई ग्रन्थ हमें अभी तक न मिला।

इनके उपरान्त सं० १६७८ में ताहिर कवि ने कोकसार नामक ग्रन्थ बहुत आम छन्दों में बनाया। रस, भाव, और माधुर्य का उसमें पूर्ण प्रसार है। यथा—

पदुम जाति तनु पदमिनी रानी, कंज सुबास दुवादस बानी।
कंचन बरन कमल की वासा, लोयन भंवर न छाड़इ पासा।
अलप अहार अलप सुख बानी, अलप काम अति चतुर सयानी।
झीन बसन महँ झलकइ काया, जस दरपन मह दीपक छाया।

आपके बाद सं० १६८० में दिलावर कवि का समय आता है, और

आप के समकालीन शेख नजीर ने ज्ञान दीपक नामक ग्रन्थ का निर्माण किया। परन्तु सं० १७०० में ताज नामक कवियित्री ने अपनी ओज भरी कविता से हिन्दी कविता में मुसलमानी भावनाओं का हिन्दू विचार धारों के साथ ऐसा सुन्दर समन्वय दिखाया है कि प्रत्येक व्यक्ति उसकी कविता से प्रभावित हो जाता है। उनकी भाषा पंजाबी और खड़ी बोली की मिश्रित भाषा है और उसी से उनके निवास स्थान के विषय में मेरी यह धारणा है कि, ये पंजाब और संयुक्तप्रान्त के सरहद्द पर की रहने वाली थीं, क्योंकि एक ओर इनकी भाषा में पंजाबी टंकार की ध्वनि है, और दूसरी ओर खड़ी बोली मिश्रित उर्दू का पुट है। उदाहरण के लिये इनका यह छंद लीजिए।

"सुनौ, दिल जानी मेरे दिल की कहानी,
तुम इस्म ही बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
देव पूजा ठानी मैं निवाजहू भुलानी,
तज कलमा कुरान सारे गुनन गहूँगी मैं॥
श्यामला सलोना सिरन ताज सिर कुल्लेदार
तेरे नेह दाग मैं निदाघ ह्वै दहूँगी मैं।
नंद के कुमार कुरबान ताणी सूरत पै,
तांण नात प्यारे हिन्दुआनी ह्वै रहूँगी मैं॥

आलम का नाम हिन्दी के उन कवियों की श्रेणी में गिना जाता है, जिनसे हिन्दी कविता को प्रेम की उच्च भावना के कलुषित विचारधाराओं का नाश और अन्तरात्मा की अन्तर्तम भावनाओं का स्पष्टीकरण हुआ है, उनके जीवन का ध्येय प्रतिबिम्ब ग्रहण का न था वरञ्च ये तथ्य के प्रदर्शक कवि थे। आलम केलि उनकी कविता का अत्यन्त सुन्दर संग्रह ग्रन्थ है। आलमकेलि के साथ ही आपका दूसरा ग्रन्थ "माधव-नल काम कंदला" है। जिसके प्रेम का अद्वितीय रूप हमें श्रृङ्गार के उचतम शिखर पर विराजमान मिलता है। उत्प्रेक्षा, शब्द वैचित्र्य, अनुप्रास के प्रेम की ऐसी पीर आपके हृदय से निकलती थी कि प्रत्येक व्यक्ति आपके हृदय तत्व की भावनाओं से मुग्ध हो जाता है।

कैधौं मोर सोर तजि गएरी अनत भाजि,
कैधौं उत दादुर न बोलत है; ए दई।

कैधौं पिक चातक महीप काहू मारि डारे,
कैधौं बकपांति उत अंत गति ह्वै गई।
आलम कहैं, हा आली ! अजहूँ न आये प्यारे,
कैधौं उत रीति विपरीति विधिने दई।
मदन महीप की दुहाई फिरवेते रही,
जूझि गए मेघ कैधौं बीजुरी सती भई।

इस स्थान पर इनकी प्रेयसी शेख रंगरेजिन जिनके पीछे इन्होंने ब्राह्मण जाति का परित्याग कर यवन-धर्म का आश्रय लिया उसके कवित्व शक्ति के ऊपर भी कुछ कहना आवश्यक है। आलम के दोहे की पूर्ति किस प्रकार उसने की है यह परम मनोहर कहानी है। कहने का तात्पर्य यह है कि शेख की कविता में ऐसी व्यापक प्रेम की भावना और दिलकी कसक थी कि आलम को मुसलमान होना पड़ा। वास्तव में वह दोहा भी कितना अच्छा है—

"कनक छरी सी कामिनी काहे को कटि छीन।"—आलम
"कटि को कंचन काटि विधि कुचन मध्य धरि दीन।"—शेख

समय का कितना सुन्दर प्रतिबिम्ब हमें इस छन्द में मिलता है:—

रतिरन विषय जे रहे हैं पति सनमुख,
तिन्हें बकसीस बकसी है मैं बिहसि कै।
करन को कंकन उरोजन को चन्द्रहार कटि,
मांहि किंकिनी रही है कटि लसि कै
शेख कहै आनन को आदरसो दीन्हों पान,
नैनन में काजर बिराजै मन बसि कै।
ऐरी वीर वार ये रहे हैं पीठ पाछे याते
वार वार, बांधति हौं बार बार कसि कै।

१७६१ में पठान सुलतान राजगढ़, भूपाल, के नवाब ने भी कविता की थी और चन्द कवि को आश्रय दिया था, इनकी रचना मधुर और सुपाठ्य होती है।

गडी क़रीली भौंह केस निरवारति प्यारी।
तिरछी चितवन चितै मनो उर हनति कटारी॥

अबदुल रहमान कवि औरंगजेब के पुत्र बहादुरशाह के मनसबदार थे, इन्होंने यमक श्लेष, के योग से १०७ दोहे बनाये हैं। इनके देखने से

आप के संस्कृत के ज्ञान का भी पता चलता है—

पलकन मैं राख्यौ पियहि पलक न छाड़ौ संग।
पुतरी सौ तै होहि जिन डरपत अपने अंग॥

१७६१ में महबूब कवि का भी जन्म काल ज्ञात होता है। इनका कोई ग्रन्थ तो नहीं मिलता है पर छन्द बहुत देखने को मिलते हैं इनकी रचना में अनुप्रास की सुन्दर छटा रहती है। यथा—

मृग मद गन्ध मिलि चन्द सुगंध बहै,
केसर कपूर धूरि पूरत अनंत है।
मोर मद गलित गुलाबन बलित भौर,
भनै महबूब तौर और दरसन्त है।
रच्यो परपंच सरपंच पंचसर जूने,
करले कमान तान विरही हनन्त है।
छीनी छित ताई नीरित, राजत समाज नइ,
उनई फिरत गई सिसिर बसन्त है।

इनके उपरान्त याकूब खां ने सं० १७७५ में रसभाषण ग्रन्थ रचा और केशव की रसिक प्रिया टीका भी बनाई है। इस समय में सैयद गुलाम नबी बिलग्रामी उपनाम रसलीन कवि हुए। आपने अंगदर्पण, रस, प्रबोध नाम के दो ग्रन्थ बनाये। अंगदर्पण सं० १७८४ में नख सिख का एक सुन्दर ग्रन्थ बना, इसमें दोहा छन्द का प्रयोग किया गया है। उपमायें, बड़ी मार्मिक हैं। इससे भी बड़ा ग्रन्थ आपका रस प्रबोध है जिसमें ११५५ दोहे हैं। इसके के भाव, विभाव, नायिका भेद इत्यादि विषयों का इसमें पूर्ण वर्णन है। जितनी परिशुद्ध ब्रजभाषा आपने लिखी है वह परम उत्कृष्ट है आचार्यत्व का आप में पूर्ण आभास मिलता है।

तिय सैसव जोबन मिले भेद न जान्यो जात।
प्रात समै निसिदौस के दुवौ भाव दरसात॥

सं० १७८७ में अलीमुद्दीन खाँ उपनाम प्रीतम हास्य रस में वेनी के जोड़ के कवि हुए। ब्रज भाषा में लिखा हुआ आपका खटमल वाइसी नामक काव्य अपने ढङ्ग का बे जोड़ है। हास्य रस को लेकर रीतकाल में खाँ साहब ही सर्व प्रथम कवि हमारे समक्ष आये। इस ग्रन्थ में हास्य आलम्बन प्रधान रस है। आलम्बन मात्र का ही वर्णन इस रस में पर्याप्त होता है और हमें अपने साहित्य में इस परम्परा की यह रूढ़ि आप में स्पष्ट

रूप से दिखाई पड़ती है। जिस प्रकार संस्कृत नाटकों में पेट कंजूस आदि विषय आलम्बन के रूप में हैं, वैसे ही आपने खटमल को अपना आलम्बन माना है और इनकी इस नवीन सूझ के लिए हिन्दी-साहित्य ने इन्हें एक स्थान प्रदान किया है जो खटमल के सदृश अमर है :—

बाघन पै आयो, देखि वनन में रहे छपि,
साँपन में गयो, ते पताल ठौर पाई है।
गजन पै गयो, धूल डालत है सीस पर,
वैदन पै गयो काहू दारू ना बताई है।
जब हहराय हम हरि के निकट भए,
हरि मोसो कही तेरी मति भूल छाई है।
कोऊ ना उपाय भटकत जनि डोलै सुन,
खाट के नगर खटमल की दुहाई है॥

१७८२ सं० में जुल्फिकार खाँ बुन्देलखंड के शासक ने जुल्फिकार सतसई बनाई, जो अवलोकनीय है। दोहों की पदावली ललित होते हुए भी शैथिल्यता के कारण कहीं कहीं खटक जाती है।

सं० १८०० में नूरमुहम्मद नाम के एक कवि हुए जिन्होंने पदमावत के समान एक ग्रन्थ इन्दावती लिखा। इसका प्रथम भाग नागरी प्रचारणी सभा द्वारा निकल चुका है, आपकी भाषा संस्कृत और फारसी दोनों ही के मेल की थी, यदि एक ओर बा वैला शब्द मिलता है तो दूसरी ओर तृनिष्टय :—

जब लग नैन चारि रहु चारी, राज कुवर कहँ ठग अस मारी।
बहेउ पवन लट पर अनुरागे, लट छितराति पवन के लागे।
परी वदन पर लट सरकारी, तपी दिवस भय निसि अँधियारी।
मोहि परा दरसन कर चेरा, हना बान धन आँखिन केरा।

मोगल काल में हिन्दी की जो उन्नति हुई वह अद्वितीय और सराहनीय थी। यदि जायसी आदि ने प्रेम-कथा द्वारा हिन्दी को एक अनुपम ग्रंथों का आगार बनाया तो रसखान, रहीम आदि ने भी अपनी विशेष प्रतिभा से हिन्दी को अपूर्व वस्तुएँ प्रदान कीं। हिन्दी साहित्य का महमूद गजनवी के आक्रमण के समय से ही मुसलमानों का सम्पर्क बढ़ा पर यह देखने में आता है कि कुतवन मंझन, जायसी आदि ने अपनी धाक पूर्ण रूप से जमा ली और जिसकी छाया बाद के सगुण शाखा के कवियों पर भी पड़ी, यहाँ तक कि तुलसी भी उस परम्परा से प्रभावित हुए। मुसलमान

कवियों ने अपनी आख्यानों में प्रेम की जो पीठिका रखी है कि वह हमारे साहित्य की सर्व प्रथम इन्हीं लोगों की देन सी मालूम होती है। इसके बाद मोगल काल में वैमनस्य का झन्डा जब दूर हुआ तब अकबर के समय में लोगों को हमारे साहित्य की अभिरुचि हुई और फिर हमारे साहित्य में विजातीय कवि हुए, पर युगल काल के अवनति के बाद फिर इनकी संख्या न्यून होने लगी और फिर उन्नति की कम आशा दिखाई पड़ने लगी।

जब अवध के नवाबों का समय आया उस समय हमें हिन्दी के कुछ विशेष प्रतिभा वाले मुसलमान कवि मिलते हैं। सर्व प्रथम हम अवध के दूसरे बादशाह मिर्जा कैवां जाह बहादुर जो कि उर्दू पर्शियन के विद्वान थे उनका स्मरण करते हैं। इनका समय वाजिद अली शाह का समय था। आपका जन्म सन् १८३६ था और आपने १९०२ सन् में मृत्यु प्राप्त कर लिया था। आपकी शृङ्गार की बड़ी सुन्दर उक्तियां हैं —

दिल के जलने पर, धुआं नहीं, पर ठन्डी सांस
चाहत हैगी बुरी वला, करत है सब का नास
है अचंभा जिया जले औ निकसै ठन्डी सांस।

लखनऊ की यदि ठुमरी सुनी जाय तो अब भी हमें सनद पिया कदर पिया कानन उन गीतों में सुन पड़ता है, ये गायक थे और सुन्दर गाना बनाते और गाते थे, जिस तरह विन्दा की ठुमरी प्रख्यात है वैसे इन दो व्यक्तियों की भी। कदर पिया की एक यहां मैं लिखता हूँ।

कुछ भी अब तो वन नहीं आवत विना मोहे जी खोए
कदर मिया ने हमरे लिए तो कैसे ये विस बोए।
बरसों से वे आये नाहीं, रही अकेले सोए।
तड़पत रोवत रोवत बैठी रही मैं, असुअन से मुख धोए।
जो मैं ऐसा जानती, कि प्रीति किए दुख होए
नगर ढिढोरा पीटती कि प्रीत न करियो कोय।

यहां पर इतने ही कवियों के विषय में लिख कर मैं इसी समय की एक और बात कहना चाहता हूँ, और वह यह है कि मुसलमानों ने कवितायें ही नहीं की हैं वरन् इन्होंने हिन्दी को अपने मसजिदों तक में खुदवाया है, और उसमें हिन्दी अक्षरों में अपने उपदेशों को लिखाया है। इससे यह ज्ञात होता है कि हिन्दी का इन लोगों ने पूर्ण प्रचार किया और हिन्दी को

सर्व मान्य भाषा मानी थी जिसके लिए यह अक्षरों के खुदवाने का प्रमाण है।

इस प्रकार से हमें यह स्पष्ट हो जाता हैं कि मुसलमानों द्वारा हिन्दी की बराबर सेवा होती रही और हिन्दी को इस प्रकार दो भाव धाराओं के समन्वय का संयोग मिला।

परीक्षाफल में भूल सुधार

(१) 'सम्मेलन पत्रिका' के गतांक में जो परीक्षा फल प्रकाशित हुआ है उसमें क्रम संख्या १५३, श्री विश्वप्रकाश दीक्षित ने, जो कानपुर केन्द्र से उत्तमा परीक्षा में सम्मिलित हुए थे, **आठवें प्रश्नपत्र (निबन्ध) में विशेष योग्यता प्राप्त की है।**—परीक्षा मंत्री

(२) सम्मेलन पत्रिका भाग २८ सं० ६, १० में ३० पृष्ठ पर नीचे की ओर से सातवीं पंक्ति में आय व्यय के स्थान पर अपव्यय छप गया है। पाठक कृपया अपव्यय के स्थान पर आयव्यय पढ़ें।

—सम्पादक

हिंदी और विराम चिह्न

[लेखक—श्रीयुत किशोर साहू बी० ए०]

किसी भी भाषा के लिखने में विराम चिह्नों (punctuation) का उपयोग बड़ा महत्व रखता है। अच्छे से अच्छा वाक्य आप बनाइए परन्तु अगर एक विराम किसी ग़लत स्थान पर आपने लगा दिया या कोई आवश्यक विराम कहीं से हटा दिया तो बस वह वाक्य अपना अर्थ ही खो बैठेगा; या उसके अर्थ में अंतर कम से कम अवश्य पड़ जायगा।

आज दिन जो हिन्दी लिखी जाती है और उसमें विराम चिह्नों का जिस तरह प्रयोग किया जाता है—जहां तक मैंने देखा है—बहुधा गलत ढंग पर किया जाता है। इसका मूल कारण तो यह है कि हमारे यहाँ सिवाय पूर्ण विराम के और कोई दूसरा चिह्न था ही नहीं। संस्कृत (जहाँ से हिन्दी उत्पन्न हुई है) में केवल पूर्ण विराम ही पाया जाता है। फ़ारसी और अरबी में भी, जिनसे हमारी हिन्दी ने कुछ शब्द लिए हैं और जिनका हिन्दी पर कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा है, पूर्ण विराम के सिवा और कोई चिह्न नहीं पाये जाते। यही हाल उर्दू का है। पाठक को अपनी समझ से काम लेकर पढ़ना होता है, वे लोग तो घसीटी में बिंदु आदि भी नहीं लगाते; और इसी कारण से उर्दू के संबंध में मज़ाक़ मशहूर है कि लिखा 'बाबा अजमेर गए' और पढ़ा 'बाबा आज मर गए'। जिस तरह कुछ नुक़तों के न लगाने से उर्दू ज़बान में क़यामत बरपा हो जाती है, उसी तरह विराम चिन्हों का न प्रयोग करने से, या ग़लत तौर पर प्रयोग करने से किसी भी भाषा का दम घोटा जा सकता है।

पूर्ण विराम के अलावा अल्पविराम, (Comma), स्वल्प[१] विराम, अर्ध[२] विराम, प्रश्नवाचक चिह्न, आश्चर्य बोधक चिह्न, आदेशक,[३] कोष्टक,

---

[१] हिन्दी में Semi colon (;) को अर्ध विराम कह दिया गया है, वास्तव में इसे स्वल्प विराम कहना चाहिए।

[२] Colon (:) का चिह्न हिन्दी में है ही नहीं। इसे अर्ध विराम कह कर अपनाना चाहिए।

[३] इसे (—) अँगरेज़ी में डैश Dash कहते हैं।

अवतरण चिह्न आदि सब हमने विदेशी (युरोपीय) भाषाओं से लिए हैं। या यों कहिए ले रहे हैं। मराठी ने तो ये सब चिह्न अपना लिए हैं, पर हिन्दी अभी इस बात में कुछ पिछड़ी हुई है। हिन्दी की कोई भी चार पत्रिकाएँ उठा लीजिए, आप देखेंगे कि हर एक का विराम चिह्न लगाने का क़ायदा पृथक्-पृथक् है। कई पत्रिकाओं के पास तो शायद कुछ चिह्न हैं ही नहीं। यह मैं मानता हूँ कि हर एक लेखक की लेखन शैली निराली होती है। उसी तरह विराम चिह्न देने का ढंग भी उसका निराला होगा। मगर केवल ढंग ही निराला होगा, क़ायदा नहीं। कोई लेखक अगर एक स्थान पर अल्प विराम देगा तो दूसरा शायद स्वल्प विराम देगा। कोई पूर्ण विराम की जगह अर्ध विराम से काम निकाल कर आगे बढ़ जायगा। इस तरह का अंतर अंगरेज़ी, रूसी और फ्रांसीसी के अच्छे लेखकों में भी पाया जाता है; और यह अंतर आवश्यक ही है। जैसा लेखक होगा वैसा ही उसका ढंग होगा। लेखक अपनी बात में जो अदा पैदा करना चाहता है, उसी अंदाज़ से चिन्ह का वह इस्तेमाल भी करता है, कोई उपवाक्यों को कोष्टक (Bracket) में रखता है, और कोई उसके दोनों सिरों पर आदेशक (Dash) लगाकर नज़ाकत पैदा करता है। जैसा अवसर हो। मगर इसका मतलब नहीं कि एक की जगह दूसरा चिन्ह लगा देने से कोई अंतर नहीं होता। होता अवश्य है, यद्यपि बहुधा वह बहुत ही सूक्ष्म होता है।

उदाहरणार्थः—

इसी रंग महल की चहार दीवारी के अंदर, बोदरा की अबलाओं की लाज, बोदरा के अन्नदाता के हाथों, बिकने वाली थी।

ऊपर लिखे वाक्य में से अगर अल्प विराम हटा दिए जाएँ या उनमें हेर-फेर किया जाय, तो वाक्य बिलकुल निकम्मा हो जायगा।

विद्यार्थी जीवन के पुराने प्यारे दिन—जिनमें वे थे और उनकी पुष्पा थी— उन्हें फिर से याद आने लगे।

ऊपर के वाक्य में आदेशक (Dash) के स्थान पर कोष्टक (Bracket) देकर भी काम चलाया जा सकता था, मगर आदेशक या कोष्टक दोनों हटा देना उनकी जगह केवल अल्प विराम देना हास्यास्पद होता।

अल्प या पूर्ण विरामों का उपयोग करना लोगों ने सीख लिया है। हमारे कविगण तो, सचमुच, इन चिन्हों को कमाल के साथ लगाते हैं। परन्तु

स्वल्पविराम (Semi colon) बहुत कम लेखक प्रयोग करते हैं। वे पाठकोंको झाँसा देकर अपना काम स्वल्पविराम के स्थान पर अल्प या पूर्ण विराम देकर निकाल लेते हैं।

अर्ध विराम (Colon) का उपयोग हिन्दी साहित्य में नहीं हुआ। हो सकता है कि मेरी दृष्टि में हिन्दी में यह चिन्ह न आया हो; पर अवश्य ही अर्ध विराम से हमारे पाठक अपरिचित दिखाई देते हैं। अर्ध विराम को हमें अपनाना चाहिए।

प्रश्नवाचक और आश्चर्य बोधक चिन्हों के प्रति मुझे कुछ नहीं कहना है। हिन्दी में इनका उपयोग अच्छा और ठीक होता है।

परन्तु मुझे कथानक तथा उक्तियों के लिखने के संबंध में कुछ सुझाना है। यहाँ हमें इकहरे या दुहरे अवतरण चिन्हों (Inverted commas) का अल्प, स्वल्प या अर्द्ध विराम के बाद उपयोग करना चाहिए। अक्सर देखा गया है कि लेखक आदेशक (Dash) देकर संबाद शुरू कर देते हैं। यह ढंग सही नहीं है। उदाहरणार्थः—

भामा चूल्हे में आग जला रही थी, बोली—अरे तो अब क्या संध्या को भी पढ़ते ही रहोगे ? ज़रा दम तो ले लो।

ब्रजनाथ—उठा तो न जायगा; बैठी बैठी वहीं से क़ानून बघार रही हो। अभी एक आध को पटक दूंगा तो वहाँ से गरजती हुई आओगी कि हाय ! हाय ! बच्चे को मार डाला।

वास्तव में इसे यों लिखना चाहिए :

भामा चूल्हे में आग जला रही थी, बोली —"अरे; तो अब क्या संध्या को भी पढ़ते ही रहोगे ? ज़रा दम ले लो।"

ब्रजनाथ ने कहा: "उठा तो न जायगा; बैठी-बैठी वहीं से क़ानून बघार रही हो। अभी एक-आध को पटक दूंगा तो वहाँ से गरजती हुई आओगी, 'हाय ! हाय ! बच्चे को मार डाला !"

पाठक देखेंगे कि 'बोली, के बाद सिर्फ़ आदेशक (Dash) न देकर मैंने अर्ध विराम (Colon) दिया है। (यहाँ पर अल्प या स्वल्प विराम से भी काम चलाया जा सकता था, अर्ध विराम देने की प्रथा सबसे अच्छी है।)भामा के उद्गार अवतरण चिन्हों के अंदर रखे हैं। 'अरे' के बाद भी अल्प विराम की ज़रूरत थी सो दे दिया है।

इसी तरह ब्रजनाथ के उद्गार में विराम चिन्हों का परिवर्तन किया गया है जो पाठक के ध्यान में सरलता से आजाएँगे।

अंत में एक बात मैं और सुझाऊँगा। हमारे यहाँ पूर्ण विराम का आकार एक खड़ी लकीर की भाँति है, जो दूसरे चिन्हों के मुक़ाबले में अधिक कुरूप और बेमेल लगता है। जब हमने दूसरे सब चिन्ह अंगरेज़ी भाषा से अपना लिये हैं, तो उनका पूर्ण विराम भी क्यों नहीं लिया जाय? या तो हमें कुछ भी नहीं लेना था या दिल खोलकर, बिना किसी झिझक के (जैसा कि मराठी ने किया है) अंगरेज़ी के सब चिन्ह ले लेने थे। जितनी स्याही में अंगरेज़ी के दस पूर्ण विराम बन जाते हैं, हमारा, खड़ी लकीर वाला, सिर्फ़ एक ही बन पाता है। अतएव हमें चाहिए कि अब हम अपनें पूर्ण विराम का आकार खड़ी लकीर के स्थान पर अंगरेज़ी के पूर्ण विराम की तरह, केवल एक बिंदु करदें।

हिन्दी इन दिनों बड़ी तेज़ी से उन्नति कर रही है। साहित्य में उबाल आया हुआ है। अंगरेज़ी के पैर उखड़े जा रहे हैं; और हिन्दी ही राष्ट्रभाषा बन रही है। इस अवस्था में हमें लकीर के फ़क़ीर ही न रह कर, अपनी हिन्दी को उसकी पुरानी रूढ़ि के चुँगल से छुड़ाना चाहिए, सँवारना चाहिए, उभारना चाहिये। आधुनिक संसार के नये-नये शब्दों का भाषांतर कर उन्हें हिन्दी के कोष में शामिल कर लेना चाहिए। हिन्दी साहित्य के महारथियों से मैं विनती करूँगा कि वे समालोचनाओं और लम्बे-लम्बे भाषणों में अपना समय नष्ट करने का अभ्यास छोड़ दें। अब वह वक्त आगया है कि हमारे विद्वान कुछ रचनात्मक कार्य करें—हिन्दी को आधुनिक बनाने का प्रयत्न करें, और उन संकीर्ण विचार वाले हिन्दी भाषा द्रोहियों को, जो कहते हैं कि हिन्दी राष्ट्रभाषा होने योग्य नहीं, मुँह तोड़ जवाब दें।

मैं आशा करता हूँ कि मेरे इस लेख से हिन्दी के प्रगति शील लेखक भाई अवश्य लाभ उठाएँगे; और हमारी साहित्यिक पत्रिकाएँ भी विराम चिन्हों को ठीक ढंग पर प्रचलित करने में पूर्ण सहयोग देंगी।

प्राप्ति स्वीकार

[ले०—श्री रामनिधि जी शर्मा, बी० ए०]

विकास—सेठ गोविन्ददास का हिन्दी के वर्तमान नाटककारों में मुख्य स्थान है। आपके नाटक भावना, विचार तथा मानवीय अनुभूतियों से ओतप्रोत होते हैं। लेखक के ही शब्दों में यह एक नाटकीय सम्वाद है जो पश्चिमी रंगमंचों के सदृश ही रंगमंच पर खेला जा सकता है। नाटक सामयिक और शिक्षाप्रद है। बुद्ध का त्याग, ईसा का बलिदान तथा गांधी की तपस्या ही विश्व में शान्ति और सुख की स्थापना कर सकती है, यही इस नाटक का आद्यन्त और सारांश है। भाषा शुद्ध, सरस एवं शैली आकर्षक है। अपने ढङ्ग की नयी पुस्तक है। प्रकाशक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग, मूल्य ||=)

भोजन और स्वास्थ्य—भोजन और स्वास्थ्य का जो घनिष्ठ सम्बन्ध है उसका महत्त्व आजकल लगभग प्रत्येक देश में मान्य हो रहा है। हिन्दी में इस विषय पर आवश्यकता से कम पुस्तकें हैं। प्रस्तुत पुस्तक के लेखक हैं डा० सत्यप्रकाश जी डी० यस० सी० एफ़० आई० ए० यस० तथा डा० संतप्रसाद टंडन एम० एस-सी० डी० फिल०। दोनों ही सज्जन इस विषय के पूर्ण ज्ञाता हैं। पुस्तक में भोजन विषय का वैज्ञानिक विवेचन है। देहातियों के भोजन पर सुन्दर प्रकाश डाला गया है और उन्हें सरलता से सुलभ होनेवाला लाभदायक भोजन प्राप्त करने की सुन्दर विधि बतलाई गई है। भोजनों के प्रकार तथा उनमें कितना पदार्थ प्राप्त है इसकी सुन्दर तथा संक्षिप्त तालिका दी गई है। दूध तथा उसके सम्बन्ध से माताओं और बच्चों के भोजन का अच्छा विवेचन है। मद्यपान की हानियों का भयंकर रूप तथा रोकने के उपाय भी लिखे गये हैं। कीटाणुओं का मनुष्य जीवन से क्या सम्बन्ध है इस पर भी विचार किया गया है। संक्षेप में पुस्तक मनुष्य जीवन के लिये अति उपयोगी सिद्ध होगी। पुस्तक गंगा-पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ से प्रकाशित हुई है। मूल्य १) है।

बिखरे विचार—देशभक्त श्री घनश्याम दास जी बिड़ला के व्यक्तिगत पत्रों और लेखों का संग्रह है। ये लेख समय समय पर "विश्वमित्र" "त्यागभूमि"

"विशालभारत" "हरिजन सेवक" "सरस्वती" तथा "बिड़ला कालेज मेगजीन" आदि में निकलते रहे हैं। सात लेख आपकी यात्राओं के सम्बन्ध में हैं। यात्राओं का सुन्दर वर्णन चित्र सा उपस्थित कर देता है। यात्राओं के वर्णन पढ़ते समय यह नहीं ज्ञात होता कि पुस्तक पढ़ रहे हैं प्रत्युत यह जान पड़ता है कि मानों कोई विचारक रोचकता के साथ अपना अनुभव प्रकट कर रहा है। श्री बिड़ला जी गाँधी जी के अनन्य भक्त हैं ही अतः महात्मा जी विषयक उनके लेख अत्यन्त ही सुन्दर हैं। उनमें बनावट का नाम तक नहीं है। गाँधी जी की आत्मा सी इनमें बोल रही है। गाँधी मत तथा गाँधी-स्वरूप को जितना ये लेख थोड़े से पृष्ठों में समझा सकते हैं उतना कदाचित गाँधी जी की आत्मकहानी भी न स्पष्ट कर सके। इसके अतिरिक्त कुछ लेख फुटकल विषयों पर हैं। कुछ लेखों में कला लाने का भी प्रयास है। "मुझसे सब अच्छे" 'पानी में भी मीन पियासी "शड़ की जड़ हाँसी" ऐसे ही लेख हैं। 'हिन्दी-प्रचार कैसे हो' लेख में आपकी पैनी दृष्टि है अवश्य पर आप "हिन्दुस्तानी" को ही प्रचार का एक मात्र उपाय समझते हैं। आप हिन्दुस्तानी के वास्तविक अर्थात् उर्दू वेष की ओर ध्यान नहीं देते केवल सिद्धान्त ही की ओर दृष्टिपात करते हैं। शैली तो अत्यन्त ही मनोरंजक है। यह बिड़ला जी की अपनी शैली है। भाषा का प्रवाह स्वाभाविकता से पोषित है और कम शब्दों में अधिक अनुभवों को स्पष्ट करने की क्षमता रखता है। पुस्तक का प्रकाशन भी श्यामलाल जी एम०ए० हरिजननिवास दिल्ली ने किया है पर पुस्तक सस्ता-साहित्य-मंडल-दिल्ली से मिलती है। मूल्य सजिल्द का दो रुपये तथा अजिल्द का डेढ़ रूपए हैं।

अभिनव मेघ—महाकवि कालिदास कृत 'मेघदूत' संसार का सर्वश्रेष्ट गीति काव्य है। कालिदास के समान प्रतिभाशाली कवि ही इसका सफल अनुवाद करने का दावा कर सकते हैं यही कारण है कि हिन्दी के अनेक कवि अनुवाद करने की अपनी चेष्टा को न रोक सकने के कारण अपने को असफल अनुवादक सिद्ध कर गए। प्रस्तुत ग्रन्थ लेखक का एक प्रयास है। इसके रचयिता कवि श्री अनिरुद्ध जी हैं। आप भाषा एवं साहित्य के पूर्ण ज्ञाता और कविता-कामिनी कान्त हैं। अतः आपका अनुवाद मौलिक सा जान पड़ता है। मूल का अवलोकन न करके भी पाठक

आनन्द प्राप्त कर सकता है। भाषा शुद्ध खड़ी बोली हिन्दी काव्योपयुक्त है। "अभिनव मेघ" सचमुच ही अपने ढङ्ग का अभिनव अनुवाद है। पुस्तक का प्रकाशन स्वतंत्र कार्यालय झाँसी से हुआ है और मूल्य केवल आठ आने हैं।

छत्तीस गढ़ी लोकगीतों का परिचय—भारतीय लोक-गीत वेदों ही के सदृश चिरकाल तक जन-समूह के श्रुति-पटल पर अङ्कित रहे हैं। अब हिन्दी-मर्मज्ञों का ध्यान इधर भी आकर्षित हुआ है और उन्हें ज्ञात हुआ है कि इनमें रसात्मकता से पोषित होती हुई अनेक ज्ञातव्य बातें प्राप्त हो सकती हैं। हिन्दी की उपभाषाओं में प्रत्येक के पास अपने ग्राम्य गीतों के कोष हैं। खड़ीबोली-व्रज अवधी के पश्चात् छत्तीसगढ़ी का भी अपना विशिष्ट स्थान है। अतः संग्रह-कर्ता श्री श्यामाचरण जी दुबे का यह प्रयास स्तुत्य है। संग्रहकर्ता ने प्रस्तुत पुस्तक में अपना कोष न उपस्थित करके केवल बानगी दी है और छत्तीस गढ़ी गीतों का वृहत् संग्रह जो "छत्तीस गढ़ी-लोक-साहित्य" नाम से निकलेगा, के लिए क्षेत्र तैयार किया है। पुस्तक ज्ञान-मन्दिर-छत्तीस गढ़ से प्रकाशित हुई है। मूल्य छः आने हैं।

तुलसी-चर्चा—गोस्वामी तुलसीदास जी के जन्म स्थान तथा जीवन की कतिपय घटनाओं पर मतभेद चला ही आ रहा है। सोरों की सामग्री ने इस क्षेत्र में बड़ा हलचल सा मचा रक्खा है। प्रस्तुत पुस्तक सोरों (सूकर क्षेत्र) से प्राप्त सामग्री को ही आधार मान कर उनके जीवन पर प्रकाश डालती है और बाबा वेणी माधवदास कृत 'मूल गोसाईं चरित' तथा महात्मा रघुवरदास कृत 'तुलसी-चरित' की सामग्री को अप्रामाणिक बतलाती है। साथ ही पुस्तक में गोस्वामी तुलसीदास जी के ही स्वरचित शब्दों के प्रमाण सोरों में दिखलाए गए हैं। गोस्वामी जी की धर्म-पत्नी रत्नावली के दोहों के संग्रह से भी प्रमाण संकलित किए गये हैं। सामग्री संदिग्ध है अवश्य परन्तु विवेचना वैज्ञानिक है। सोरों की सामग्री यद्यपि प्रमाणित सी प्रतीत होती है परन्तु फिर भी पाठकों को विशेष सचेत होने की आवश्यकता अवश्य है। लेखक हैं श्री रामदत्त भारद्वाज एम० ए० एल० एल० बी० तथा भद्रदत्त शर्मा शास्त्री। प्रकाशन लक्ष्मी प्रेस, कासगंज से हुआ है। पृष्ट संख्या २३८ और मूल्य २) है।

दुनिया की शासन प्रणालियाँ और आज का यूरोपीय युद्ध—प्रस्तुत पुस्तक जी० डी० यच० कोल की प्रसिद्ध पुस्तक 'माडर्न पालिटिक्स' के 'पालिटिकल सिस्टम आफ़ दि वर्ड' के आधार पर लिखी गई है। लेखक हैं श्री रामचन्द्र जी वर्मा। वर्मा जी हिन्दी के धुरन्धर लेखकों में से हैं। पुस्तक हिन्दी में अपने विषय की प्रथम पुस्तक है। इसमें ग्रेट ब्रिटेन, फ्रान्स, संयुक्त राज्य अमेरिका, इटली, जर्मनी, सोवियट रूस, टर्की, जापान और ब्रिटिस भारत की राजनीतिक-प्रणालियों का गवेषणात्मक विवेचन है। पुस्तक राजनीति-शास्त्र के विद्यार्थियों को बड़ी ही उपादेय है। दो भागों की पुस्तक की पृष्ठ संख्या २१९ है। मूल्य दोनों प्रति का डेढ़ रुपया। प्रकाशक सस्ता-साहित्य-मण्डल दिल्ली।

डायरी के कुछ पन्ने—दानवीर श्री घनश्यामदास जी बिड़ला इस पुस्तक के लेखक हैं। दूसरी गोलमेज़ परिषद में आप गांधी जी के साथ लन्दन गए थे। वहां के जो संस्मरण अपनी डायरी में साथ लाए थे उन्हीं को पुस्तकाकार में हिन्दी-जगत के समक्ष आपने प्रस्तुत किया है। यह पुस्तक गांधीजी के जीवन पर सुन्दर प्रकाश डालती है। भाषा चुस्त और "गागर में सागर" भरने वाली है। प्रकाशक सस्ता-साहित्य मण्डल दिल्ली है। पृष्ठ संख्या एक सौ सत्तावन मूल्य ।।।)

एक सत्यवीर की कथा—इस चालीस पृष्ठों की पुस्तिका के लेखक महात्मा गांधी जी हैं। दक्षिण-अफ्रीका में ही महात्मा जी ने इसकी रचना की थी। महात्मा सुकरात के महात्मा जी भक्तों में से हैं। महात्मा सुकरात राजधर्म में सन्निविष्ट पाखण्ड के विरोधी थे। इसी विरोध में वे राजधर्म के भंग करने तथा दूसरों को भड़काने के दोष में बन्दी किये गये और अन्त में उन्हें विष पान द्वारा प्राणदण्ड मिला। उन्होंने जो अपनी सफाई दी थी उसी को महात्मा जी ने हिन्दी में लिखा है और सत्य तथा सिद्धान्त पर मरने वाले सुकरात का गुण गाया है। मूल्य केवल एक आना। प्रकाशक सस्ता-साहित्य-मण्डल दिल्ली।

नवरत्न-नीति किम्वा आर्योपदेश रत्नमाला—के लेखक हैं हिन्दी तथा संस्कृत के धुरन्धर विद्वान् पण्डित गिरिधर शर्मा 'नवरत्न'। विद्वान् पण्डित ने नागरी वर्णमाला के वर्णों के प्रत्येक वर्ण से आरम्भ करके श्लोक

रचे हैं। उपदेश सुन्दर और विद्वत्तापूर्ण हैं। उनमें नीति तथा काव्य दोनों का सामञ्जस्य है। पृष्ठ संख्या १२, श्लोक संख्या १११ और मूल्य –)॥ है।

सरल नागरिक शास्त्र—वर्तमान युग उत्थान का है। सभी के हृदयों में ऊँचे उठने की जिज्ञासा का भाव जागृत हो गया है। अपने अधिकारों की सूझ सबको हो रही है। किन्तु इस जागृत भावना को उचित पथ प्रदर्शन के लिए नागरिक कर्तव्यों को ठीक रीति से पालन करने के लिए नागरिकता की समुचित शिक्षा एवं साहित्य की अत्यन्त आवश्यकता है। हिन्दी में इस विषय पर अभी बहुत थोड़ा लिखा गया है। किन्तु अब हिन्दी भाषा में भी नागरिक शास्त्र सम्बन्धी पुस्तकों की मांग बढ़ती जा रही है। श्री केला जी ने इसी आवश्यकता की पूर्त्ति में प्रस्तुत पुस्तक का निर्माण किया है। पुस्तक में नागरिकता के सम्बन्ध की सभी बातों का विशुद्ध सरल हिन्दी में वर्णन है। पुस्तक पढ़ने से ज्ञात होता है कि जाति, देश अथवा संसार के सभी आन्तरिक विवादों का मूल कारण नागरिक शास्त्र की अनभिज्ञता ही है। नागरिकता की व्यापक शिक्षा अन्तर्राष्ट्रीय कलह का भी अन्त कर सकती है। निसन्देह केला जी का "सरल नागरिक शास्त्र" प्रत्येक नागरिक के पढ़ने योग्य पुस्तक है। लेखक के गम्भीर ज्ञान एवं बर्षों के अनुभव के कारण पुस्तक बहुत ही सुन्दर बन पड़ी है। ६६४ पृष्ठों की यह पुस्तक दो भागों में विभक्त है। प्रकाशक हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मूल्य ३)

जयमल बंशप्रकाश—"इतिहास ही एक ऐसी वस्तु है जो गत महापुरुषों की कीर्ति को अजर अमर बना देता है। जिस जाति का इतिहास न हो उसका अस्तित्व नष्ट होने में कुछ भी सन्देह नहीं है। विद्वानों का कहना है कि यदि किसी राष्ट्र को सदैव पराधीन बनाये रखना हो तो उसका इतिहास नष्ट कर दिया जाय। पहले के विजेता ऐसा ही किया करते थे। यह तो शान्ति का युग है। प्रयास करने पर हमको लुप्त प्राय इतिहास भी मिल रहा है। आज का युग तो हमें अपने अपने पूर्वजों के वीर चरित्रों के सुनने के लिए आगे बढ़ा रहा है।" प्रस्तुत पुस्तक 'राज स्थान बदनौर का इतिहास' प्रथम भाग इन्हीं उपरोक्त भावनाओं का परिणाम है। श्री ठाकुर गोपाल सिंह जी ने प्रस्तुत पुस्तक की रचना करके अपने राजवंश का परम उपकार किया है तथा अन्य राजाओं एवं राजवंशों के लिए एक उदाहरण तथा आदर्श उपस्थित किया है। इसमें मेड़तिया राठोड़ों के विशाल-

राजकुल के मुख्य वंशधरों का इतिहास दिया गया है। ग्रंथ बड़ा ही उत्तम, शोधपूर्ण, प्रामाणिक और समस्त ऐतिहासिक गुणों से युक्त है। महामहोपाध्याय रायबहादुर पं० गौरीशङ्कर जी हीराचन्द जी ओझा की सम्मति है कि मेवाड़ के किसी दूसरे ठिकाने की इतने शोध से लिखी हुई तवारीख़ मेरे पास नहीं प्रहुँची है"। ग्रन्थ प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी के पढ़ने योग्य है। पृष्ठ संख्या २४२ मूल्य ४), ५)।

रूप-रश्मि—प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी के उदीयमान कवि श्री शभूनाथसिंह जी की विभिन्न कविताओं का संग्रह है। कविताओं में लेखक की अनुभूति ही की प्रधानता है। कवि ने जीवन में सुख-दुख आशा-निराशा तथा मिलन और विरह का आश्रय बताया है। लेखक अपने मनोभावों को सुचारु रूप से व्यक्त करने में समर्थ है। कविताएँ हृदयग्राही एवं आकर्षक हैं। प्रकाशक साधना मन्दिर काशी, पृष्ठ संख्या १०६ मू० १)

मन के भेद—प्रस्तुत पुस्तक में वर्णित विषय हिन्दी जनता के लिए एक नयी चीज़ है। 'मनोविज्ञान' यद्यपि भारतवर्ष की प्राचीन विद्या है किन्तु उसका साहित्य जो कुछ है संस्कृत भाषा में ही प्राप्त है। चित्त विश्लेषण मनोविज्ञान की एक नयी शाखा है। पाश्चात्य विद्वान् जिस प्रकार अन्य विज्ञानों के आविष्कार में अग्रसर हुए हैं उसी प्रकार 'मनोविज्ञान' के चित्त-विश्लेषण शाखा की सूझ का भी श्रेय उन्हीं को है। लेखक के शब्दों में "इसका प्रयोग बहुत व्यापक है और इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत होता जा रहा है। जीवन के अनेक अंगों की पुष्टि के लिए इससे कुछ न कुछ मसाला मिलता है और व्योहार के प्रत्येक क्षेत्र की न्यूनताओं की पूर्ति तथा दोषों के परिमार्जन के लिये इससे कुछ न कुछ सहायता मिल सकती है। इसका प्रयोग जीवन के प्रत्येक अंगों में क्रान्ति उपस्थित करने का दावा कर रहा है। वर्तमान जीवन के आधार भूत सिद्धान्तों को ही इसने कंपा दिया है और नये सिरे से उनका निर्माण करने का सन्देश दे रहा है। इसने मानस व्यापारों के सम्बन्ध में हमारे ज्ञान में बहुत बृद्धि करदी है, चित्त की बहुत सी अन्धकारमय भूमियों को प्रकाशित कर दिया हैं। जिन बातों को अब तक बहुत ही निरर्थक समझा जाता था उनमें ही इस विज्ञान ने जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध रखने वाला गूढ़ तात्पर्य खोज निकाला है। अव्यक्त चेतना की खोज ही इसका प्रधान विषय है"—"वैयाक्तिक मनो विज्ञान" इसी की एक उपशाखा

है जिसके सिद्धान्तों को लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक में वर्णित किया है। लेखन शैली गम्भीर एवं आकर्षक है। हिन्दी में इस पुस्तक को प्रकाशित करके अभिनव भारत ग्रन्थमाला ने एक अभाव की पूर्ति की है। पुस्तक प्रत्येक हिन्दी प्रेमी के पढ़ने योग्य है। पृष्ठ संख्या १३७। मूल्य सजिल्द केवल १।)

ब्रह्माण्ड और पृथ्वी—श्री रामस्वरूप जी चतुर्वेदी द्वारा लिखित प्रस्तुत पुस्तक भी अभिनव भारती ग्रंथमाला से प्रकाशित हुई है। इस ब्रह्माण्ड में पृथ्वी का क्या स्थान है, अन्य ग्रहों के साथ उसका क्या सम्बन्ध है, पृथ्वी चलती है या सूर्य घूमता है इत्यादि विषयों के सम्बन्ध में भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों की विचित्र प्रणालियों एवं सिद्धान्तों का दिग्दर्शन कराया गया है। पृथ्वी ही सूर्य के चारों ओर घूमती है इसके सम्बन्ध में लोगों को यही ज्ञात है कि यह पाश्चात्य मस्तिष्क की उपज है, किन्तु इस पुस्तक के पढ़ने से ज्ञात हो जायगा कि सैकड़ों वर्ष पहले ही हमारे भारतीय विद्वान आर्य भट आदि ज्योतिषियों ने भी इस प्रकार का मत प्रकट कर दिया था। इस पुस्तक में ब्रह्माण्ड का विस्तार, भूरचना, जीवन क्या है तथा जीवन के लिये आवश्यक परिस्थितियाँ या सृष्टि के बिकास का सिद्धान्त और जीवन रचना का प्रारम्भ आदि रहस्यपूर्ण एवं कौतूहल वर्धक विषयों का प्रतिपादन किया गया है। हिन्दी के प्रसिद्ध लब्ध प्रतिष्ट विद्वान श्री हजारी प्रसाद जी द्विवेदी ने इसका सम्पादन किया है, जिससे पुस्तक का महत्व और बढ़ जाता है। अपने विषय का साधारण ज्ञान कराने के लिये पुस्तक बहुत ही उत्तम है। पृष्ठ संख्या ९९ मूल्य सजिल्द १)

आधुनिक हिन्दी साहित्य—प्रस्तुत पुस्तक उन निबन्धों का संग्रह है जो साहित्य परिषद मेरठ में पढ़े गये या पढ़ने के लिए भेजे गये। "लेखों के विषय और उनका अनुभव देखने से पाठक जानेंगे कि पुस्तक में पहले आलोचना के सिद्धान्तों का विवेचन है, फिर जीवन और साहित्य के सम्बन्ध की साधारण पड़ताल, उसके बाद क्रमशः गल्प उपन्यास, नाटय और काव्य साहित्य का मूल्यांकन। प्रत्येक निबन्ध अनुभवी लेखकों द्वारा लिखे गये हैं इस लिये गम्भीर, विचार पूर्ण एवं प्रामाणिक हैं। छोटे २ निबन्धों में एक एक विस्तृत विषयों का बहुत सुचारु रूप से समावेश किया गया है। थोड़े समय में हिन्दी साहित्य की जानकारी के लिए पुस्तक बेजोड़ है।

परीक्षार्थियों के लिये तो यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है। पृष्ठ संख्या १८७ मूल्य १।) प्रकाशिक अभिनव भारती ग्रंथ माला १७१ ए० हरिसन रोड कलकत्ता।

सूर का पद अथवा सूर वंश निर्णय—हिन्दी कविकुल चूणामणि महात्मा सूरदास के वंश एवं जाति के संबंध में विभिन्न मत हैं। कोई इन्हें सारस्वत ब्राह्मण कहता और कोई ब्रह्मभट्ट मानता है। लेखक ने अन्तः साक्षी और बहिः साक्षी के द्वारा अंतरङ्ग व बहिरङ्ग परीक्षा भलीभाँति करके यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि सूरदासजी ब्रह्मभट्ट थे। पुस्तक परिश्रम के साथ अध्ययन के पश्चात् लिखी गई है। जिस प्रकार 'भारद्वाज' जी ने तुलसी के सम्बन्ध में सब मसाला इकट्ठा करके उनके जन्म स्थान आदि पर प्रकाश डालने की चेष्टा की है उसी प्रकार श्री कृष्णदेव शर्मा ने प्रस्तुत पुस्तक में सूर के सम्बन्ध की सभी उपलब्ध सामग्रियों का उपयोग करके हिन्दी जनता का बड़ा हित किया है। पुस्तक हिन्दी प्रेमियों को पढ़ने योग्य है। प्रकाशक सरस्वती मन्दिर गोवर्द्धन पृष्ठ संख्या २४ मूल्य =)

प्राप्त पत्रों का सार

बिहार प्रान्तीय सम्मेलन और हिन्दी

प्रयाग की 'सम्मेलन पत्रिका' तथा नागरी प्रचारिणी काशी से निकलने वाली 'हिन्दी' में बिहार प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन की कार्यकारिणी के उस निर्णय के सम्बन्ध में—या उसने हिन्दुस्तानी कमेटी के लिए हिन्दी रीडर तैयार करने के सम्बन्ध में किया है, कुछ भ्रमपूर्ण संवाद छपे हैं। उन संवादों का आधार चाहे जो हो, लेकिन जनता के सामने असली बातें रख देना आवश्यक है।

प्रान्तीय सम्मेलन तथा बिहार के प्रत्येक हिन्दी हितैषी शिक्षा के माध्यम के लिए ऐसी शैली का होना अनिवार्य समझते हैं जिसके द्वारा स्कूलों में पढ़ाई हो सके और उस शैली का कोई ऐसा नाम हो जो सब को स्वीकार हो। हिन्दुस्तानी को वे लोग कोई अलग भाषा नहीं मानते। वह हिन्दी की ही एक शैली है। जो लोग सम्मेलन का विरोध कर रहे हैं उन लोगों ने भी इस बात को स्वीकार किया है।

इस तरह पहला प्रश्न समाप्त हो जाता है। दूसरा प्रश्न आता है सम्मेलन का निर्णय! सम्मेलन की कार्यकारिणी ने कोई हिन्दी रीडर तैयार करने का निर्णय नहीं किया है। सम्मेलन हिन्दुस्तानी कमेटी के लिए एक हिन्दी का साहित्य-संग्रह तैयार कर रहा है जो दर्जा ४ से दर्जा ७ तक पढ़ाये जायँगे। इस संग्रह को तीन भागों में बाँटा गया है। (१) हिन्दी, (२) हिन्दुस्तानी (३) उर्दू। हिन्दी और हिन्दुस्तानी में हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वानों के चुने हुए गद्य और पद्य संग्रह रहेंगे। केवल शैली के अनुसार उनको हिन्दी और हिन्दुस्तानी दो श्रेणियों में डाल दिया जायगा। उदाहरण के लिये स्वर्गीय जयशङ्करप्रसाद, स्वर्गीय आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि के निबन्ध हिन्दी विभाग में रहेंगे। स्वर्गीय प्रेमचन्द, राजा साहब सूर्यपुरा आदि के निबन्ध या लेख हिन्दुस्तानी विभाग में रहेंगे। सम्मेलन कोई नई भाषा बनाने नहीं जा रहा है। आज तक हिन्दी संग्रहों में जो चीजें रहती आई हैं वही इसमें भी रहेंगी। केवल उर्दू का अंश नया रहेगा।

इसका भी एक इतिहास है। कई साल पहले की बात है। बिहार सरकार

ने बिहार के छोटे दर्जे के लिये समान भाषा में पुस्तकें चलाने का निर्णय किया। उस निर्णय की समीक्षा करने के लिये सम्मेलन ने सन् १९३४ में छपरा अधिवेशन के अवसर पर 'समान भाषा कमेटी' नाम की एक कमेटी बैठाई। उसके सदस्य थे—आचार्य बदरीनाथ वर्मा, श्री गंगाशरणसिंह, डा० जनार्दन मिश्र, स्वर्गीय बाबू कालिकाप्रसाद। इस कमेटी की सिफारिश इस प्रकार थी :—"हम लोग समान भाषा की आवश्यकता और उपयोगिता को स्वीकार करते हैं लेकिन उसका प्रयोग जिस प्रकार सरकार कर रही है उस प्रकार नहीं होना चाहिये। हम लोगों का विचार है कि समान भाषा की रीडरें बच्चा क्लासों के लिए तैयार कराने का प्रयास सरकार छोड़ दे। बल्कि दर्जा ४ से हिन्दी रीडरों में उर्दू के कुछ सरल पाठ देवनागरी लिपि में और उर्दू रीडरों में हिन्दी के कुछ पाठ उर्दू लिपि में दे दिये जायँ। कठिन शब्दों के अर्थ फुटनोट में दे दिये जायँ। इस तरह मैट्रिकुलेशन तक पढ़नेवाले सभी लड़के दोनों भाषाओं को सीख जायँगे और समान भाषा की समस्या आप से आप हल हो जायगी।"

समान भाषा कमेटी की यह सिफारिश प्रान्तीय सम्मेलन के पूर्णिया अधिवेशन में १९३६ में स्वीकृत हुई। इसी निर्णय के अनुसार नागरी लिपि में उर्दू के कुछ पाठ इस हिन्दी संग्रह में दिये जा रहे हैं।

इस निर्णय के विरोधी कौन लोग हैं? 'सम्मेलन पत्रिका' और 'हिन्दी' पत्र में रायबहादुर बा० श्यामनन्दन सहाय, बाबू चन्द्रेश्वरप्रसाद नारायणसिंह तथा कुमार गंगानन्द सिंह का नाम छपा है। वास्तव में इनमें से एक भी सम्मेलन के उपरोक्त निर्णय के विरोधी नहीं हैं। अखबारों में इन तीनों सज्जनों के नाम लेकर बाबू नीतीश्वरप्रसाद ने एक संवाद निकाला था। उस संवाद में रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय और कुमार गंगानन्द सिंह ने केवल मात्र इतना ही कहा है कि यह विषय गंभीर है इसलिये कार्यकारिणी के ही निर्णय को पर्याप्त न समझ कर स्थायी समिति से इसका निर्णय करा लेना चाहिये। बाबू चंद्रेश्वरप्रसाद नारायण सिंह ने कहा है—"समान भाषा की रीडरों को देखकर हिन्दुस्तानी के सम्बन्ध में हताश हो गया हूँ। सम्मेलन को बड़ी सावधानी से आगे कदम बढ़ाना चाहिये।" इसमें कहीं विरोध की गन्ध नहीं मिलती। तब इनका नाम क्यों लिखा जा रहा है? सम्मेलन के निर्णय का निम्न सज्जन विरोध कर रहे हैं—बाबू नितीश्वरप्रसाद सिंह, श्रीयुत व्रजनन्दन आजाद, बाबू उमानाथ, बाबू

113055

उमाशंकर, बाबू मुरलीधर श्रीवास्तव, बाबू पारसनाथ सिंह पण्डित कपिल देव शर्मा। विहार के लगभग आधे दर्जन सज्जन इस निर्णय के विरोधी हैं. इसके विरुद्ध विहार के सभी प्रमुख साहित्यिक जैसे सर्वश्री शिवपूजन, द्विज, केसरी, मनोरंजन, दिनकर, देवव्रत, रामधारी सभी सम्मेलन के निर्णय के पक्ष में हैं।

अब प्रश्न यह रह जाता है कि फिर विरोध क्यों किया जा रहा है? विरोध के दो कारण हैं। पहला कारण तो यह है कि विरोध मेरा किया जा रहा है इनमें से कतिपय सज्जन कुछ व्यक्तिगत कारणों से मुझसे असन्तुष्ट हैं।

गत अधिवेशन के समय में मेरे विरुद्ध यहाँ तक प्रचार किया गया कि मैं एक गैर विहारी हूँ और एक गैर विहारी सम्मेलन का प्रधान मंत्री क्यों बना रहे? लेकिन प्रतिनिधियों को यह विवाद उचित नहीं जान पड़ा।

असल बात तो यह है कि टेक्स्ट बुक कमेटी की उस समान भाषा का विरोध होना चाहिये था जहां से समान भाषा में बच्चों के लिये हिन्दी और उर्दू की पुस्तकें निकल रही हैं और जहाँ विनय हटाकर 'दुआ' रख दिया गया, 'रसोई बनाना' से 'रसोई पकाना' हो गया। कमसे कम हिन्दुस्तानी कमेटी साहित्य को तो नहीं छू रही है और न सम्मेलन ही ऐसा कोई काम कर सकता है, लेकिन विरोध किया जा रहा है सम्मेलन का।

विहार प्रादेशिक
हिन्दी साहित्य सम्मेलन
पटना

छविनाथ पाण्डेय बी० ए०
एल० एल० बी०
प्रधान मंत्री

(२)

वैज्ञानिक शब्द समिति की रिपोर्ट

केन्द्रीय सरकार की शिक्षा सलाहकार समिति ने भारतवर्ष के लिए एक समान वैज्ञानिक शब्दावली प्रस्तुत करने के प्रश्न पर पूर्ण रूप से विचार करने के हेतु गत वर्ष एक वैज्ञानिक शब्द समिति का निर्माण किया था। जिसके सदस्य देश के प्रमुख विद्वान् तथा शिक्षाचार्य थे। इस समिति ने विचार विनिमय करने के अनन्तर गत जनवरी में अपनी रिपोर्ट शिक्षा सलाहकार समिति के सामने रख दी और शिक्षा सलाहकार समिति ने कुछ थोड़े हेर फेर के बाद उसे स्वीकार कर लिया। वैज्ञानिक शब्द समिति की मुख्य सिफारिशें, जिस रूप में शिक्षा सलाहकार समिति द्वारा स्वीकृत हुई है, इस प्रकार है—

१—भारतवर्ष में वैज्ञानिक अध्ययन के विकास की वृद्धि के लिए यह

वांछनीय है कि यथाशक्य एक समान शब्दावली का प्रयोग हो और इस उद्देश्य को लेकर अब तक जो प्रयत्न किये गये हैं उनका पूरा आदर किया जाय।

२—भारतवर्ष के वैज्ञानिक विकास तथा दूसरे देशों के उसी प्रकार के विकासों में आवश्यक सम्पर्क बनाये रखने के निमित्त भारतवर्ष के लिए जिस वैज्ञानिक शब्दावली का प्रयोग हो उसमें यथासम्भव उन शब्दों को अपना लिया जाय जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय सामान्य स्वीकृति मिल चुकी है। किन्तु यह देखते हुए कि भारतवर्ष में कई विभिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं और वे सब भाषाएँ एक कुटुम्ब की नहीं हैं, यह आवश्यक होगा कि अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली के अतिरिक्त उन शब्दों का भी प्रयोग किया जाय जो उन दो प्रमुख भाषाकुलों से लिये गये हों जिनसे अधिकांश भारतीय भाषाएँ निकली हैं और उन शब्दों का भी प्रयोग हो जिनका अलग अलग भाषाओं के अन्दर सामान्य रूप से व्यवहार होता है। इस प्रकार भारतीय वैज्ञानिक शब्दावली के अन्तर्गत ये वस्तुएँ रहेंगी—

(१) अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली, अंग्रेज़ी रूप में, जिसका प्रयोग समस्त भारतवर्ष में होगा।

(२) अलग अलग भाषाओं में प्रयुक्त होने वाले शब्द जिन्हें सार्वजनिक शिक्षा के हित की दृष्टि से सुविदित होने के कारण रखना आवश्यक हो। शिक्षा की उच्चतर कक्षाओं में शनैः शनैः इन द्वितीय श्रेणी के शब्दों का स्थान प्रथम श्रेणी के शब्द ले लेंगे।

३—पूरे भारतवर्ष के लिए वैज्ञानिक शब्दावली का अविच्छिन्न तथा समान रूप से विकास हो इसके लिए यह वांछनीय है कि एक केन्द्रीय निर्देश समिति (बोर्ड आफ् रिफरेंस) रहे जिसकी विशेषज्ञ उपसमितियाँ हों। इन उपसमितियों के सामने लाये गये सामान्य प्रश्नों पर उनका मार्ग प्रदर्शन तथा विशेष प्रश्नों पर उनके निर्णय प्रान्तीय सरकारों तथा अन्य सम्बन्धित प्रादेशिक संस्थाओं को मान्य होंगे।

४—इस आधार पर कि भारतीय भाषाएँ (१) संस्कृतिक तथा (२) पर्सो-अरेबिक—इन दो मुख्य समूहों में बाँटी जा सकती हैं, प्रत्येक भाषा समूह के लिए उस समूह की सामान्य शब्दावली के विकास को लक्ष्य में रखकर पृथक पृथक समितियाँ बनाई जायँ।

५—समानता की दृष्टि से उर्दू में गणित सम्बन्धी प्रक्रियाएँ तथा सूत्र

(Mathematical processes and formulae) बायें से दायें को लिखे जायँ ।

६—स्वीकृत शब्दावली में समानता लाने और उसके अधिक से अधिक प्रयोग को प्रोत्साहित करने के लिए पाठ्यपुस्तकों को निर्धारित करने वाले अधिकारियों को इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि केवल वे ही पुस्तकें स्वीकृत की जाँय जिनमें उक्त शब्दावली का प्रयोग हो ।

नारायणदत्त पाण्डे एम० ए०, एल-एल० बी०
सहायक मन्त्री

(३)

उच्च साहित्य सम्मेलन, पूना

मराठी साहित्य में कादम्बरी (उपन्यास) लघु कथा (कहानी) तथा नाटकों की बाढ़ देखकर महाराष्ट्र के साहित्यिकों को उच्च साहित्य की कमी खटकने लगी और उन्होंने उच्च साहित्य को प्रोत्साहन देने के लिए उक्त सम्मेलन की स्थापना की । इसमें प्रति वर्ष उच्च साहित्य के निर्माण सम्बन्धी चर्चा होती है, तत्संबन्धी ग्रन्थों का प्रदर्शन तथा उनका संक्षिप्त परिचय दिया जाता है ।

अपने पूना प्रवास में मुझे इसके चतुर्थ अधिवेशन में सम्मिलित होने का अवसर मिला । काशी विश्व विद्यालय के अध्यापक श्री पुन्ताम्बेकर की अध्यक्षता में प्रथम दिन का अधिवेशन हुआ । प्रो० गोडबोले दूसरे दिन की सभा के अध्यक्ष थे । स्वागताध्यक्ष आहिताग्नि श्री राजवाड़ेजी ने अपने भाषण में इस बात पर खेद प्रकट किया कि लोगों में उच्च विषयों के साहित्य के प्रति अरुचि उत्पन्न हो गई है तथा वे तिलक, राजवाड़े, केलकर को साहित्यिक ही नहीं समझते । इसके विपरीति नाटक, कहानी लिखनेवाले तथा लैंगिक विषयों पर कलम चलाने वाले लोग शीघ्र ही साहित्य सम्मेलन के सभापति बन जाते हैं । । इतिहास पर दृष्टि पात करते हुए आपने बतलाया कि संस्कृत साहित्य का पतन भी तभी से हुआ जब उसमें तत्त्वज्ञान का विषय छोड़कर नाटक और काव्यों की प्रचुरता होने लगी ।

सभापतिजी का भाषण बहुत ही विचारपूर्ण तथा विद्वत्तामय था । उन्होंने पश्चिमी वैज्ञानिकों के उद्धरण देकर यह सिद्ध किया कि वे लोग भी अब इन्द्रिय

विषय बोध्य पार्थिव वस्तुओं की अपेक्षा मानसिक और आध्यात्मिक बातों का महत्त्व मानने लगे हैं। आज बुद्धिवादी लोगों में एक प्रकार की मानसिक अनिश्चितता आ गई है। उनमें एक ध्येय, एक मत नहीं दीख पड़ता। बुद्धिवादी यह सिद्ध करने लगे हैं कि संसार के मूल में कोई नियम नहीं हैं बल्कि लीला मात्र है। इतिहास की रचना में भी क्रान्ति की जा रही है। उच्च साहित्य ही के द्वारा जीवन में मनुष्यता का आविष्कार हो सकता है। उसीसे मनुष्य उच्च और समदर्शी बन सकता है। मनुष्य में आन्तरिक क्रान्ति उत्पन्न करना तथा उसे उच्च जीवन का संदेश देना ही साहित्यकों का कर्त्तव्य है। साहित्यकों का चरित्र जब तक उच्च न होगा, यह असंभव है। समाज की रचना व्यक्तियों से होती है, अतः व्यक्तित्व उच्च करना ही उच्च साहित्य का उद्देश्य होना चाहिये। दूसरे दिन उच्च साहित्य के ग्रंथों का परिचय दिया गया तथा उन पर चर्चा हुई। प्रस्ताव के बाद सभा का कार्य समाप्त हुआ।

जबलपुर
(मध्यप्रांत) ब्योहार राजेन्द्रसिंह एम० एल० ए०

(४)

महाराष्ट्र साहित्य परिषद

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के समान "मराठी भाषा व साहित्य की वृद्धि के के प्रयत्न करने, उपायों की योजना करने तथा उसके अभ्यास को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से" इस संस्था की स्थापना की गई थी। इसके अन्तर्गत प्रादेशिक और अखिल महाराष्ट्रीय साहित्य सम्मेलन हुआ करते हैं। २५ वाँ अधिवेशन इस वर्ष श्री खाण्डेकर की अध्यक्षता में शोलापुर में हुआ था। महाराष्ट्र भर में इसकी ३३ शाखाएँ कार्य कर रही हैं। मराठी साहित्य में व्याकरण, कोष, इतिहास, विज्ञान, समाजशास्त्र, कला तथा साहित्य सम्बन्धी ग्रन्थों को लिखवाकर प्रकाशित कराना संस्था का मुख्य कार्य हैं। शास्त्रीय विषयों की परिभाषा स्थिर करना भी इसका एक उद्देश्य है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से निर्मित पारिभाषिक शब्द समिति में भी इसकी ओर से एक प्रतिनिधि है। प्रसिद्ध लेखकों (मराठी तथा अन्य भाषाओं के) चरित्र तथा उनके साहित्य का प्रकाशन तथा अन्य भाषाओं की साहित्यिक संस्थाओं को सहायता देना भी इसके उद्देश्यों में है। इसकी पूर्ति के लिए १४ वर्ष से

'महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका' नामक त्रैमासिक पत्रिका भी निकल रही है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के समान साहित्यिक परीक्षाओं का संचालन भी परिषद् के द्वारा होता है। इन्हें प्राज्ञ, विशारद और आचार्य परीक्षा कहते हैं।

परिषद् के वर्तमान अध्यक्ष श्री नरसिंह चिन्तामणि केलकर, उपाध्यक्ष प्रो० दत्तो वामन पोतदार, कार्याध्यक्ष वामन मल्हार जोशी तथा मन्त्री डा० अमृत नारायण भालेराव हैं। जिस दिन मैं गया उस दिन कार्यकारिणी सभा की बैठक थी। अतः बहुत से साहित्यिकों से मिलने का सौभाग्य भी अनायास प्राप्त हो गया। पत्रिका के सम्पादक श्रीनारायण काल्वे एक योग्य सम्पादक हैं।

पूना में तिलक रोड पर परिषद् का कार्यालय बना हुआ है। परिषद् की सबसे मार्के की बात यह है कि वार्षिक सम्मेलन के सभापति तथा परिषद् के स्थायी अध्यक्ष अलग अलग व्यक्ति होते हैं जिससे वर्ष भर सुचारु रूप से कार्य चलाने में सहायता मिलती है। हि० सा० सम्मेलन में भी यदि यह नियम हो तो कार्य अधिक हो सकता है। सम्मेलन का सभापतित्व तो साहित्यिक कार्य के लिए सम्मानार्थ होना चाहिये और कार्य करने के लिए एक अलग अध्यक्ष का होना परमावश्यक है।

जबलपुर
मध्यप्रान्त

ब्योहार राजेन्द्रसिंह एम० एल० ए०

(५)

सहयोगी आलोचक मण्डल

हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में प्रतिमास पुस्तकों की जो आलोचनाएँ निकलती हैं उनसे हमारे लेखक, प्रकाशक, पाठक, आलोचक और स्वयं पत्र-संपादक, सभी असंतुष्ट रहते हैं। लेखकों और प्रकाशकों की शिकायत है कि आलोचक चुने हुए शब्दों में, पुस्तक बिना पढ़े ही, केवल भूमिका में इधर उधर झाँक-झूँककर उसकी आलोचना कर दिया करते हैं। कभी-कभी तो बार बार पत्र लिखने पर भी कई महीने तक आलोचना छपती ही नहीं। पाठकों की शिकायत है कि पत्र पत्रिकाओं में की हुई आलोचनाओं से हमें पुस्तक का यथार्थ मूल्य ज्ञात ही नहीं होता और उनके आधार पर पुस्तकें खरीदने में हमें सदा धोखा खाना पड़ता है। आलोचकों और पत्र संपादकों की अपनी कठिनाइयाँ हैं। आलोचकों का कहना है कि मुफ्त में हम पूरा ग्रंथ पढ़ने और आलोचना लिखने में अपना समय क्यों नष्ट करें? इसी प्रकार संपादक कहा करते हैं कि

हमारे पास तो इतना समय ही नहीं कि आलोचनार्थ आई हुई सभी पुस्तकों की हम स्वयं आलोचना कर सकें और दूसरी बात यह कि हमें ऐसे निष्पक्ष आलोचक मिलते ही नहीं जो यथासमय आलोचनाएँ भेजकर हमारी सहायता करते रहें।

इन सभी वर्गों की कठिनाइयों का हमें अनुभव है। हम यह भी जानते हैं कि ये सब इन कठिनाइयों को दूर भी करना चाहते हैं। इनके दूर हो जाने पर लाभ भी सभी वर्गों का होगा और आज आलोचना के नाम पर जो धाँधली हो रही है—अच्छी कृतियों का न तो विज्ञापन हो पाता है और न उचित प्रचार और आदर, पर व्यर्थ की पुस्तकों की खूब लंबी-चौड़ी आलोचना की जाती है—वह बहुत अंशों में दूर हो जायगी। इसी उद्देश्य को लेकर यहाँ एक योजना हिन्दी के लेखकों, प्रकाशकों, आलोचकों और पत्र-संपादकों के सम्मुख रखी जा रही है। हमें पूरा विश्वास है कि यदि इस योजना को कार्य रूप देने में हमारे साहित्य-सेवियों ने हमारी सहायता की, तो हिन्दी में एक सुगठित समालोचक-मंडल की शीघ्र स्थापना हो सकेगी।

निम्नलिखित विषयों और लेखकों की सूची हमने बनाई है। हिन्दी लेखक, आलोचक और संपादक इसे विस्तृत करने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र हैं :—

(१) अर्थशास्त्र—पंडित दयाशङ्कर दुबे, प्रयाग; डा० बाबूराम सकसेना, प्रयाग। (२) इतिहास—डा० रामप्रसाद त्रिपाठी, प्रयाग; श्री चंद्रगुप्त वेदालंकार, दिल्ली। (३) लेखन-कला—श्री सत्यजीवन वर्मा, प्रयाग। (४) गृह-विज्ञान—किसी विदुषी श्रीमती का नाम (५) तर्क और दर्शनशास्त्र—बा० गुलाबराय, आगरा; प्रो० छंगालाल मालवीय, लखनऊ। (६) भू-विज्ञान—पं० रामनारायण मिश्र, प्रयाग। (७) राजनीति—डा० बेनी प्रसाद, प्रयाग। (८) शिक्षा—बाबू कालिदास कपूर। (९) साहित्य (पद्य)—पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी, शांति निकेतन, प्रो० शिवपूजनसहाय, छपरा; पं०नंददुलारे बाजपेयी, काशी; पं० शान्तिप्रिय द्विवेदी, काशी; प्रो० सत्येंद्र, मथुरा; प्रो० नगेन्द्र, दिल्ली; पं० किशोरीदास, बाजपेयी, हरद्वार; पं० भोलानाथ शर्मा, बरेली। (१०) साहित्य (गद्य)—पं० श्रीधर पंत, बरेली; प्रो० गोपाललाल खन्ना, लखनऊ; पं० सद्गुरुशरण अवस्थी, कानपुर; पं० बनारसीदास चतुर्वेदी, टीकमगढ़; श्री प्रेमनारायण टंडन, लखनऊ।

कुछ लेखकों से इस संबंध में बातचीत करके हमने उनकी स्वीकृति

ले ली है। शीघ्र से निवेदन है इस योजना के संबंध में अपने विचार और आलोचक बनने के संबन्ध में अपनी स्वीकृति शीघ्र ही भेजने की कृपा करें।

रानी कटरा कालिदास कपूर एम० ए०
लखनऊ प्रेमनारायण टंडन एम० ए०

(६)

श्री राजेन्द्र-साहित्य-महाविद्यालय सेवदह

बिहार में शहर के चहल पहल से दूर सेवदह ग्राम के शान्त तथा पवित्र वातावरण में २५ जुलाई १९३७ ई० को श्री मथुराप्रसादसिंह जी के अथक परिश्रम तथा ग्राम वासियों के पूर्ण सहयोग से इस संस्था की स्थापना हुई।

अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए संस्था ने वर्त्तमान समय में दो प्रमुख कार्यों को अपनाया है। (१) शिक्षा और (२) ग्राम सुधार। प्रारम्भिक से उच्च श्रेणी तक हिन्दी माध्यम द्वारा शिक्षा दी जाती है सभी वर्गों में संस्था का अपना स्वतंत्र पाठ्य क्रम है। प्रथम श्रेणी से प्रथमा तक के वर्गों में हिन्दी-साहित्य इतिहास, भूगोल, गणित, राजनीति अंग्रेजी आदि विषयों की शिक्षा दी जाती है। मध्यमा में हिन्दी साहित्य तथा राजनीति की उच्च शिक्षा दी जाती है। अध्ययन करते हुए छात्र आसानी से मैट्रिक, प्रथमा मध्यमा और उत्तमा (हिन्दी विश्वविद्यालय प्रयाग) की परीक्षा दे सकेंगे। पुस्तकीय शिक्षा के साथ साथ छात्रों को स्वावलंबी बनाने के लिए उद्योग की शिक्षा अनिवार्य रखी गई है। धुनाई, कताई, मधुमक्खी पालन, कोल्हू, चक्की चलाना आदि में से कम से कम किसी एक विषय की जानकारी प्रत्येक छात्र को प्राप्त करनी पड़ेगी। कृषि सम्बन्धी प्राथमिक प्रयोग भी किया जाता है। अनिवार्य विषयों की शिक्षा निःशुल्क दी जाती है।

१५ प्रतिष्ठित व्यक्तियों की एक कार्यकारिणी सभा के द्वारा संस्था का प्रबन्ध हो रहा है, जिसके सभापति बिहार के प्रशस्त शिक्षाशास्त्री आचार्य श्री बदरीनाथजी वर्मा एम० ए०, प्रधान मन्त्री श्री बाबू देवशरणसिंहजी एडवोकेट तथा सहायक मन्त्री साहित्यरत्न श्रीलालसिंह "त्यागी" हैं।

प्रधानाध्यापक श्री मथुराप्रसादसिंह तथा साहित्यरत्न श्रीलालसिंह "त्यागी" के अथक-परिश्रम से ही संस्था का वर्तमान कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। यहाँ के वर्तमान अध्यापक मण्डल और कार्य कर्ताओं के नाम इस प्रकार हैं—

सर्वश्री मथुराप्रसादसिंह साहित्यरत्न (प्रधानाध्यापक), लालसिंह "त्यागी"

साहित्यरत्न (ग्राम सुधार ऑरगनाइजर), के० गोपाल साहित्यालंकार-साहित्यरत्न मथुराप्रसाद बी० ए०, मुन्नासिंह (आई० ए० तक), रामवृक्षसिंह "दिव्य" साहित्यरत्न, रामकृष्णसिंह "झा" साहित्यरत्न, रामदेवसिंह "तरल" विशारद, रामखेलावनसिंह विशारद, लक्ष्मीकान्त सिंह "कान्त" विशारद, कामताप्रसादसिंह (लेखक), नन्दनप्रसाद सिंह (चर्खा, मधुमक्खी पालन तथा कोल्हू विशेषज्ञ)

—व्यवस्थापक

(७)

सम्मेलन के इस वर्ष के पारितोषिक

उपर्युक्त पुस्तकें प्राप्त होने पर सं० १९९८ में सम्मेलन की ओर से निम्नलिखित पुरस्कार दिये जायँगे—

१—मंगलाप्रसाद पारितोषिक १२००) दर्शन (वेद, उपनिषद्, स्मृति, धर्म, ईश्वर, जीव और मन संबंधी मीमांसा, कर्तव्य मीमांसा और अध्यात्म) विषयक पुस्तक पर।

२—सेकसरिया महिला पारितोषिक ५००) मौलिक रचना पर। (केवल महिलाओं के लिए)

३—मुरारका पारितोषिक ५००) समाजवाद विषयक पुस्तक पर

४—जैन पारितोषिक ५००) ग्रामोद्योग विषयक पुस्तक पर

५—श्री राधामोहन गोकुलजी पुरस्कार २५०) समाज सुधार विषयक पुस्तक पर

६—नारंग पुरस्कार १००) भारतीय संस्कृति विषयक कविता पर (केवल पंजाब निवासी हिन्दी कवि को)

उपर्युक्त सभी पुरस्कारों के लिए केवल जीवित लेखकों की रचनाओं पर विचार किया जायगा। मंगलाप्रसाद पारितोषिक के लिए पुस्तकों की ८ प्रतियां तथा अन्य सभी पुरस्कारों के लिए सात सात प्रतियां आनी चाहिये। सभी पुरस्कारों के लिए पुस्तकें ३१ अगस्त सन् १९४१ तक सम्मेलन कार्यालय में अवश्य पहुँच जानी चाहिये। पुरस्कारों की अलग अलग नियमावलियां सम्मेलन कार्यालय से मँगाई जा सकती हैं।

रामप्रसाद त्रिपाठी एम० ए०, डी० एस-सी०
प्रधान मंत्री

एक पत्र—सम्मेलन पत्रिका की ९, १० संख्या के ३० पृष्ठ पर "सारन जिला सम्मेलन" छपा है। इस समाचार के मुद्रण के लिए हम

लोग परम कृतज्ञ है, किन्तु 'सारन जिला सम्मेलन' दूसरा है और उसके अनेक अधिवेशन हो चुके हैं। यह अधिवेशन "बसन्तपुर थाना हिन्दी साहित्य सम्मेलन (सारन)" का था। था तो यह थाना सम्मेलन किन्तु प्रान्तीय से कम समारोह किसी तरह भी नहीं था। हिन्दुस्तान में यही सर्व-प्रथम थाना हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ है।

—महेन्द्र शास्त्री
मन्त्री बसन्तपुर थाना हिन्दी सा० स०
पो० बसन्तपुर, सारन ,

तुलसी-जयन्ती—श्रावण शुक्ला सप्तमी को 'तिलक-स्मारक भवन' में 'तुलसी-जयन्ती' मनाने के लिये, भिवानी के बड़े बड़े साहित्यिक, विद्वान, हिन्दी प्रेमी तथा अन्य बहुत से सज्जन एकत्रित हुए, जिनमें निम्न महानुभाव विशेष उल्लेखनीय हैं :—

श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री, श्री छाजूराम जी शास्त्री, श्री पुष्करदत्तजी, श्री फूलचन्दजी आर्य दीनौदवाला, श्री कन्हैयालालजी मिन्डा, 'शान्तेश' (स० संपादक 'ग्राम सेवक') श्री मुरलीधरजी वकील दीनौदिया, श्री रूड़मलजी सेवारामका, श्री किरोड़ीमलजी अग्रवाल, आदि। सभा का कार्य श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री के सभापतित्व में रात्रि के ठीक ८॥ बजे प्रारम्भ हुआ, जिसमें भिवानी नगर के साहित्यकों तथा विद्वानों के श्रीमद्गोस्वामीजी के जीवन तथा उनके ग्रंथों पर रोचक तथा शिक्षाप्रद व्याख्यान हुए। अन्त में गोस्वामी जी की रचनाओं पर सभापतिजी का आलोचनात्मक तथा प्रभावशाली व्याख्यान हुआ।

संयोजक :—
हरियाणा-हिन्दी-प्रचार-समिति,
भिवानी (पंजाब)

परीक्षा समिति की तीसरी बैठक

परीक्षा समिति की तीसरी बैठक रविवार वैशाख सौर १३ संवत् १९९८, तदनुसार ता० २७–४–४१ को सायंकाल ५ बजे से श्री पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी के सभापतित्व में हुई।

कार्यक्रम का संक्षिप्त विवरण नीचे लिखे अनुसार है —

परीक्षामंत्री ने परीक्षा समिति के दूसरे अधिवेशन की कार्यवाही पढ़ी और वह सर्व सम्मति से स्वीकृत हुई।

२ – परीक्षामंत्री ने हिन्दी विद्यापीठ बम्बई की 'भाषा रत्न' परीक्षा में उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में सम्मिलित करने का विषय उपस्थित करते हुए श्री पुरुषोत्तमदास जी टण्डन और राष्ट्रभाषा प्रचार मंत्री श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल के बीच में हुए पत्रव्यवहार को पढ़ सुनाया। सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि टण्डन जी ने अपने पत्र में जिस नीति का निर्देश किया है उसका यह समिति अनुमोदन करती है और यह निश्चय करती है कि 'भाषा रत्न' परीक्षा में उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में सम्मिलित होने का अधिकार दिया जाय।

३—परीक्षामन्त्री ने दतिया केन्द्र के सम्बन्ध में श्री प्रधान मन्त्री जी के नाम से आये हुए श्री श्यामसुन्दरदास तथा श्री महेन्द्रसिंह के पत्रों को विचारार्थ उपस्थित किया। सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि इस विषय पर विचार हो चुका है। समिति की राय है कि जो मन्तव्य समिति ने इस सम्बन्ध में पहले स्वीकार किया है वह ठीक है। उसी आशय का उत्तर दोनों सज्जनों को दे दिया जाय।

४—परीक्षा मन्त्री ने उत्तमा परीक्षा के अर्थशास्त्र विषय के परीक्षार्थी श्री गिरीशदत्त पाण्डेय के 'भारत में सहकारिता आन्दोलन' शीर्षक निबन्ध के लिए परीक्षकों के निर्वाचन का विषय उपस्थित किया। सर्व सम्मति से इसके लिए दो परीक्षक निर्वाचित किये गये।

५—परीक्षामन्त्री ने काशी केन्द्र के व्यवस्थापक श्री श्रीकृष्ण शुक्ल विशारद की सिफारिश सहित उत्तमा परीक्षा में सम्मिलित होने का अधिकार प्राप्त करने के लिए श्री सूरजप्रसाद गोस्वामी का पत्र उपस्थित करते हुए सूचित किया कि इस परीक्षार्थी का प्रार्थनापत्र एक बार परीक्षा समिति के सामने उपस्थित हो चुका है, परन्तु समिति ने उसे स्वीकार नहीं किया। सर्व सम्मति से प्रार्थनापत्र अस्वीकृत हुआ और सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

दयाशंकर दुबे
परीक्षामन्त्री

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के नवीन प्रकाशन

बुद्ध चरित्र—रचयिता पं० रामचंद्र शुक्ल मूल्य २।।) महात्मा बुद्ध का उज्ज्वल चरित्र, सुन्दर ब्रजभाषा काव्य। इस पुस्तक की महत्वपूर्ण भूमिका में ब्रज, खड़ी और अवधी भाषाओं का व्याकरण विवेचन किया गया है।

सोवियत-भूमि—ले० महापंडित राहुल सांकृत्यायन, मूल्य ५) रूस के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिये हिन्दी में अद्वितीय ग्रंथ।

मूर्तिकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) भारतवर्ष की मूर्तिकला की आदि से अंत तक तात्विक व्याख्या।

चित्रकला—ले० राय कृष्णदास, मूल्य १।) चित्रकला पर सर्वोत्तम पुस्तक

वाल-मनोविज्ञान—ले० पं० लालजीराम शुक्ल मूल्य १।) हिन्दी में वाल-मनोविज्ञान संबंधी सर्वश्रेष्ठ रचना।

मआसिरुल् उमरा, भाग १ और २—अनु० बाबू ब्रजरत्नदास, मूल्य ४) प्रति भाग। मुगल शासनकाल के सरदारों की सब से प्रामाणिक जीवनियां।

बिहार में हिन्दुस्तानी—ले० पं०चंद्रबली पाण्डेय, मूल्य ।) बिहार प्रांत में हिन्दी हिन्दुस्तानी समस्या की तात्विक व्याख्यान।

भाषा का प्रश्न—ले० पं० चंद्रबली पांडेय, मूल्य ।।) भाषा सम्बन्धी प्रश्नों का विस्तृत और विवेचनापूर्ण उत्तर।

कचहरी की भाषा और लिपि—ले० पं० चंद्रबली पांडेय मूल्य ।।।) अदालतों की भाषा और लिपि का विस्तृत विवेचन।

मध्य प्रदेश का इतिहास—ले० रायबहादुर डा० हीरालाल बी० ए०, १।।)

हिन्दी साहित्य का इतिहास— ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य ५) प्रवर्द्धित संस्करण हिन्दी साहित्य का सब से अच्छा और विस्तृत इतिहास।

रघुनाथ रूपक—सम्पादक महताबचंद खारैड, मूल्य २) डिंगल भाषा का अत्युत्तम काव्य।

नैपोलियन बोनापार्ट—ले० लाला राधामोहन गोकुलजी, मूल्य १)

सिक्खों का उत्थान और पतन—ले० पं० नन्दकुमार देव, मूल्य १)

भीष्म पितामह—(जीवनी)ले० गणपति जानकी राम दुबे, मूल्य १)

आदर्श और यथार्थ—ले० बाबू पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव, मूल्य ।।।) काव्य में आदर्शवाद और यथार्थवाद का बहुत स्पष्ट और ऐतिहासिक विवेचन।

मालती माला—(कहानी) ले० श्रीमती मालती शर्मा, मूल्य ।।)

त्रिवेणी—ले० पं० रामचंद्र शुक्ल, मूल्य १) सूर, तुलसी और जायसी पर लेखक के आलोनात्मक निबंधों के विशिष्ट अंशों का संग्रह।

मिलने के पते—प्रत्येक नगर के प्रतिष्ठित पुस्तक-विक्रेता
अथवा नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

साहित्य सम्मेलन, प्रयाग का अंग तथा प्रमुख संस्था

साहित्य सदन, अबोहर (पंजाब) का प्रकाशन

वा० मू० २॥) **मासिक दीपक** एक प्रति ।)

राष्ट्रभाषा प्रचार, ग्रामोद्धार, समाज-सुधार आदि कार्यों द्वारा जनतामें जीवन-जागृति पैदा करने के उद्देश्य से स्थापित इस पत्र में हिन्दी भाषा, नवीन शिक्षा, स्वास्थ्य-रक्षा, कृषि व पशु पालन, प्रकृति व विज्ञान, सामयिक चर्चा आदि विषयों के अलावा 'महिला-मण्डल' व 'बाल-मन्दिर' स्तम्भों में स्त्री-बच्चों के लिए उपयोगी लेख, सुरुचिपूर्ण कहानियाँ तथा उद्बोधक कविताएँ रहती हैं।

१—**शिक्षा में नई दृष्टि**—इसमें वर्धा-योजना आदि शिक्षा विषयक महत्वपूर्ण विषयों पर गुजरात के सुप्रसिद्ध नवीन शिक्षा विशेषज्ञ श्री आचार्य हरभाई त्रिवेदी के मौलिक विचार पढ़िए। मूल्य ॥)

२—**सरल स्वास्थ्य साधन**—प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ साहित्य-भूषण डा० व्रजभूषण मिश्र एम० ए० ने वायु, जल, मिट्टी, सूर्य, वाष्प आदि चिकित्सा पद्धतियों के मानसोपचार द्वारा असाध्य रोगों के इलाज की सरल विधि बताई है। सौ से अधिक चित्र, मू० लगभग १।)

३—**आज का जापान**—आज के समृद्धिशाली जापान की उन्नति के साधनों का विस्तृत वर्णन। मू० १)

४—**बाल-गीत**—निर्भीक, सदाचारी भावी राष्ट्र निर्माता बनानेवाली बाल-जीवन सम्बन्धी लगभग १२५ विषयों पर स्फूर्तिदायक कविताएँ। मू० ॥)

५—**विश्व धाय**—गोपालन व रक्षण, दूध व नसल वृद्धि आदि ३० आवश्यक विषयों पर अनुभवी लेखक ने प्रकाश डाला है। ७ चित्र व ८० पृष्ठ, मू० ।) मात्र.

६—**ग्रामसुधार नाटक**—अत्याचार पीड़ित किसानों की दुर्दशा का सजीव चित्रण इसमें पढ़िए। मू० ॥=)

७—**ईसप नीति निकुंज**—महर्षि ईसप की नीति की शिक्षाप्रद ६१ कहानियों का पद्यानुवाद। मू० ॥)

८—**बाल गोपाल**—बच्चों के दैनिक जीवन सम्बन्धी रसीले, सरल गीत जिनमें एक भी संयुक्त अक्षर नहीं आया है। मू० =)॥

113055

'बापू' के बाद

श्री घनश्यामदास बिड़ला की दो और नवीन मौलिक पुस्तकें

'डायरी के पन्ने' :: 'बिखरे विचार'

'बापू' पुस्तक ने हिन्दी प्रकाशन-क्षेत्र में एक आश्चर्य उत्पन्न किया

गुजराती, मराठी, अंग्रेजी तामिल, तेलगू, कन्नड़ भाषाओं में
'बापू' का अनुवाद हो रहा है।

'बापू' के बाद ही बिड़लाजी की दूसरी पुस्तक

'डायरी के पन्ने'

हिन्दी संसार में आई। पहले संस्करण में इसकी कीमत ज्यादा रही, फिर भी १९४१ के शुरू में १००० प्रतियाँ छपीं और अप्रैल में फिर दूसरा सस्ता संस्करण छापना पड़ा। हिन्दी के कुछ विद्वानों ने तो इसे 'बापू' से भी श्रेष्ठ पाया है।

'बिखरे विचार'

बिड़ला जी के चुने हुए लेखों और पत्रों का संग्रह है। पर इसमें के कुछ लेख (जैसे 'मुझसे सब अच्छे', 'पानी में भी मीन पियासी', 'हम पराधीन क्यों हैं?' आदि) हिन्दी में पर्याप्त प्रसिद्ध हो चुके हैं। इन सबको संग्रह रूप में पाने से पाठकों को विचार, मनन, और मनोरंजन की भरपूर सामग्री मिलती है। यह निबन्धों का एक उत्कृष्ट संग्रह है।

ये तीनों पुस्तकें प्रत्येक पुस्तक-प्रेमी के घर होनी चाहिएँ। वे उसके पुस्तकालय की शोभा हैं।

'मण्डल' के प्रकाशन

'बापू' : मूल्य ।।=), सजिल्द १।), हाथ कागज की सजिल्द २)
'डायरी के पन्ने' : मूल्य ।।।) सजिल्द १।)
'मण्डल' से प्राप्य
'बिखरे विचार' : मूल्य १।।), २)

'मण्डल की'
नई पुस्तकें भी
मंगाइए

सस्ता-साहित्य मण्डल, कनाट सर्कस, नई दिल्ली

उसकी शाखाओं चर्खासंघ या खादी भण्डारों से लीजिये।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा
प्रकाशित कुछ पुस्तकें

(१) सुलभ साहित्यमाला

१ भूषण ग्रन्थावली	२)
२ हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	॥)
३ भारत गीत	≡)
४ राष्ट्रभाषा	॥)
५ शिवाबावनी	≡)
६ सरल पिंगल	।)
७ भारतवर्ष का इतिहास भाग १	२॥)
८ ” ” ” ” २	२।)
९ ब्रजमाधुरीसार	२॥)
१० पद्मावत पूर्वार्द्ध	१), १।)
११ सत्य हरिश्चन्द्र	।-)
१२ हिन्दी भाषा सार	।।।)
१३ सूरदास की विनय पत्रिका	≡)
१४ नवीन पद्यसंग्रह	।।।)
१५ कहानी कुञ्ज	॥=)
१६ विहारी संग्रह	≡)
१७ कवितावली	।।।)
१८ सुदामा चरित्र	।)
१९ अलंकार प्रकाश	।=)
२० कबीर पदावली	।।।=)
२१ हिन्दी गद्य निर्माण	१)
२२ हिन्दी साहित्य की रूप रेखा	।)
२३ सती कएणकी	॥)
२४ हिन्दी पर फारसी का प्रभाव	॥=)
२५ पार्वती मङ्गल	।)
२६ सूर पदावली	॥=)
२७ नागरी अंक और अक्षर	≡)
२८ हिन्दी कहानियाँ	१॥)
२९ ग्रामों का आर्थिक पुनरुद्धार	१।)
३० तुलसी दर्शन	२॥)
३१ भूषण संग्रह भाग १	।-)
३२ भूषण संग्रह भाग २	॥=)

(२) साधारण पुस्तकमाला

१ अकबर की राज्यव्यवस्था	१)
२ प्रथमालंकार निरूपण	≡)

(३) वैज्ञानिक पुस्तकमाला

१ सरल शरीर विज्ञान	॥), ।।।)
२ प्रारम्भिक रसायन	१)
३ सृष्टि की कथा	१)

(४) बाल साहित्यमाला

१ बाल पञ्चरत्न	॥)
२ वीर सन्तान	।=)
३ बिजली	=)

(५) ओझा अभिनन्दन ग्रन्थ

१६)

रजिस्टर्ड नं० ए० ६२

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अभूतपूर्व साहित्य प्रकाशन

प्रेमघन-सर्वस्व

(प्रथम भाग)

'दो शब्द' लेखक, माननीय श्री पुरुषोत्तमदास जी टंडन

परिचय-लेखक, स्वर्गीय आचार्य पंडित रामचंद्र जी शुक्ल

आधुनिक हिन्दी के निर्माता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति स्वर्गीय उपाध्याय पंडित बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की सम्पूर्ण कविताओं का विशाल संग्रह-ग्रंथ। हिन्दी में प्रथम और अपूर्व काव्य। लेखक के चित्रों से सुसज्जित और सजिल्द। मूल्य ४॥)

बाल साहित्यमाला

बालभारती
श्रीयुत श्रीनाथसिंह
मूल्य ।≈)

वीर शतमन्यु
श्रीयुत 'स्वर्णसहोदर'
मूल्य ।)

बालकथा
सौ० श्रीमती कमलाबाई किबे
मूल्य ॥)

छत्रपति शिवाजी
श्रीयुत गुर्ती सुब्रह्मण्यम् एम० ए०
मूल्य ।)

बाल कवितावली
श्री सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ
मूल्य ।)

साधारण पुस्तकमाला

चित्ररेखा
श्रीरामकुमार वर्मा एम० ए०
मूल्य १॥)

गोरख बानी
डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल एम० ए०, डी० लिट्०

डिंगल में वीररस
श्री मोतीलाल मेनारिया एम० ए०
मूल्य १।॥)

आधुनिक कवि—१
श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए०
मूल्य १॥)

वीर काव्य संग्रह
श्री उदयनारायण तिवारी एम० ए०
श्री भगीरथप्रसाद दीक्षित 'साहित्यरत्न'
मूल्य २)

साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

मुद्रक—गिरिजाप्रसाद श्रीवास्तव, हिन्दी साहित्य प्रेस, प्रयाग।
प्रकाशक—साहित्यमंत्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

Compiled
1999-2000

CC-0. In